राजपूताने का इतिहास

चौथी जिल्द, दूसरा भाग

जोधपुर राज्य का इतिहास

द्वितीय खंड

ग्रंथकर्त्ता—
महामहोपाध्याय रायबहादुर साहित्यवाचस्पति
डॉक्टर गौरीशंकर हीराचंद ओझा, डी० लिट्० (ऑनरेरी)

बाबू चांदमल चंडक के प्रबंध से
वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर में छपा

प्रथम संस्करण } विक्रम संवत् १९९८ { मूल्य रु० ६॥।

राठौड़ वीर दुर्गादास

जोधपुर राज्य के संरक्षक

परम राजनीतिज्ञ

अदम्य साहसी

निरभिमानी तथा निस्स्वार्थी

प्रसिद्ध वीर राठोड़ दुर्गादास

की

पवित्र स्मृति को

सादर समर्पित

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक मेरे राजपूताने के इतिहास के अन्तर्गत प्रकाशित जोधपुर राज्य के इतिहास का द्वितीय खंड है। पहले मेरा इरादा इस राज्य के इतिहास को केवल दो खंडों में समाप्त करने का था और ऐसा ही मैंने प्रथम खंड की भूमिका में लिखा भी था, परन्तु जोधपुर राज्य के इतिहास की सामग्री इतनी अधिक है कि यदि शेषांश को सिर्फ़ एक खंड में दिया जाता तो जिल्द बहुत बड़ी हो जाती, अतएव मैंने यही उचित समझा कि इसे तीन खंडों में निकाला जाय।

द्वितीय खंड में महाराजा अजीतसिंह से लगाकर महाराजा मानसिंह तक का विस्तृत इतिहास है। महाराजा तख़्तसिंह से लगाकर वर्तमान महाराजा सर उम्मेदसिंहजी तक का विस्तृत इतिहास, राजपूताना से बाहर के राठोड़ राज्यों का संक्षिप्त परिचय, जोधपुर राज्य के इतिहास का काल-क्रम, परिशिष्टों के अन्तर्गत अन्य ज्ञातव्य बातों का उल्लेख एवं वैयक्तिक तथा भौगोलिक अनुक्रमणिकाएं रहेंगी।

राजपूताना के इतिहास में राठोड़ों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और उनमें अनेक वीर, विद्वान् एवं गुणग्राहक नरेश हो गये हैं। इस दृष्टि से उनके प्रधान और प्राचीन राज्य जोधपुर के इतिहास का द्वितीय खंड भी पाठकों को अवश्य मनोरंजक प्रतीत होगा।

मैं उन ग्रंथकर्ताओं का, जिनके ग्रंथों से इस पुस्तक के लिखने में मुझे सहायता मिली है, अत्यंत अनुगृहीत हूं। उनके नाम यथाप्रसंग टिप्पणों में दे दिये गये हैं। विस्तृत पुस्तक सूची तृतीय खंड के अंत में दी जायगी।

अजमेर.
कार्तिकी पूर्णिमा.
वि० सं० १९९८

गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा.

विषय-सूची

दसवां अध्याय

महाराजा अजीतसिंह

विषय	पृष्ठाङ्क

विषय		पृष्ठाङ्क

ग्यारहवां अध्याय

महाराजा अभयसिंह से महाराजा बख़्तसिंह तक

विषय पृष्ठाङ्क

विषय			पृष्ठाङ्क

विषय पृष्ठाङ्क

विषय पृष्ठाङ्क

बारहवां अध्याय

महाराजा विजयसिंह से महाराजा मानसिंह तक

विषय | पृष्ठाङ्क

विषय	पृष्ठाङ्क

विषय | पृष्ठाङ्क

विषय | पृष्ठांक

विषय	पृष्ठाङ्क

		मूल्य
(१३) राजपूताने का इतिहास—दूसरा खंड	...	अप्राप्य
(१४) राजपूताने का इतिहास—तीसरा खंड	...	रु० ६)
(१५) राजपूताने का इतिहास—चौथा खंड	...	रु० ६)
(१६) भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास की सामग्री	...	॥)
(१७) ‡ कर्नल जेम्स टॉड का जीवनचरित्र	...	।)
(१८) ‡ राजस्थान-ऐतिहासिक-दन्तकथा—प्रथम भाग ('एक राजस्थान निवासी' नाम से प्रकाशित)	...	अप्राप्य
(१९) × नागरी अंक और अक्षर	...	अप्राप्य

सम्पादित

(२०) * अशोक की धर्मलिपियां—पहला खंड (प्रधान शिलाभिलेख)	...	रु० ३)
(२१) * सुलेमान सौदागर	...	रु० १।)
(२२) प्राचीन मुद्रा	...	रु० ३)
(२३) * नागरीप्रचारिणी पत्रिका (त्रैमासिक) नवीन संस्करण, भाग १ से १२ तक—प्रत्येक भाग	...	रु० १०)
(२४) कोशोत्सव स्मारक संग्रह	...	रु० ३)
(२५-२६) ‡ हिन्दी टॉड राजस्थान—पहला और दूसरा खंड (इसमें [illegible] सम्पादकीय टिप्पणियों-द्वारा टॉड-कृत [illegible] की अनेक ऐतिहासिक त्रुटियां शुद्ध की गई हैं)	...	रु० ४॥)
[illegible] प्रणीत 'पृथ्वीराजविजय महाकाव्य सटीक'	...	रु० ५)
[illegible] रचित 'कर्मचन्द्रवंशोत्कीर्तनकं काव्यम्'	...	यंत्रस्थ
[illegible] की ख्यात—दूसरा भाग	...	रु० ४)
[illegible] संकलन	...	रु० १।)
[illegible] संकलन	...	रु० ।॥)

‡ [illegible] द्वारा प्रकाशित।

× [illegible], प्रयाग द्वारा प्रकाशित।

* [illegible] सभा द्वारा प्रकाशित।

[illegible]

[illegible], पुरानीमंडी, अजमेर के यहां भी [illegible]

महाराजा अजीतसिंह

राजपूताने का इतिहास

चौथी जिल्द, दूसरा भाग

जोधपुर राज्य का इतिहास

द्वितीय खंड

दसवां अध्याय

महाराजा अजीतसिंह

जोधपुर खालसा करने के लिए बादशाह का सेना भेजना

महाराजा जसवंतसिंह और बादशाह औरंगज़ेब के बीच प्रायः विरोध ही बना रहता था और बादशाह उससे सख्त नाराज़ रहता था। इसीलिए उसने उसको बहुत दूर जमरूद के थाने पर नियुक्त किया था। महाराजा की मृत्यु[१] का समाचार मिलते ही, उसे उपयुक्त अवसर जानकर बादशाह ने जोधपुर राज्य को खालसा कर ताहिरखां को जोधपुर का फ़ौजदार, ख़िदमतगुज़ारखां को क़िलेदार, शेख़ अनवर को अमीन और अब्दुर्रहीम को कोतवाल बनाकर वहां का प्रबन्ध करने के

---

(१) एक स्थान पर टॉड ने लिखा है कि बादशाह ने जसवन्तसिंह को विष देकर मरवाया था (राजस्थान; जि० १, पृ० ४४१)।

महाराजा अजीतसिंह

राजपूताने का इतिहास
चौथी जिल्द, दूसरा भाग

जोधपुर राज्य का इतिहास
द्वितीय खंड

दसवां अध्याय

महाराजा अजीतसिंह

जोधपुर ख़ालसा करने के लिए बादशाह का सैन्य भेजना

महाराजा जसवंतसिंह और बादशाह औरंगज़ेब के बीच प्रायः विरोध ही बना रहता था और बादशाह उससे सख़्त नाराज़ रहता था। इसीसे उसने उसको बहुत दूर जमरूद के थाने पर नियुक्त किया था। महाराजा की मृत्यु[1] का समाचार मिलते ही, उसे उपयुक्त अवसर जानकर बादशाह ने जोधपुर राज्य को ख़ालसा कर ताहिरख़ां को जोधपुर का फ़ौजदार, ख़िदमतगुज़ारख़ां को क़िलेदार, शेख़ अन्वर को अमीन और अब्दुर्रहीम को कोतवाल बनाकर वहां का प्रबन्ध करने के

---

(१) इस स्थान पर टॉड ने लिखा है कि बादशाह ने जसवन्तसिंह को [illegible] देकर मरवाया था (राजस्थान, जि० १, पृ० ४४१)।

महाराजा अजीतसिंह

हि० स० १०८९ ता० २० ज़िलहिज (वि० सं० १७३५ फाल्गुन वदि ७=ई० स० १६७९ ता० २३ जनवरी) को बादशाह ने अजमेर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में से ता० ६ मुहर्रम (फाल्गुन सुदि ८=ता० ८ फ़रवरी) को उसने ख़ानजहां बहादुर[1] और हुसेनअलीख़ां आदि को भी सेना-सहित जोधपुर राज्य पर अधिकार करने के लिए भेजा। ता० १८ मुहर्रम (चैत्र वदि ५=

बादशाह को कुंवरों के जन्म की ख़बर मिलना

अजीतसिंह और दलथंभन—को दासियों-सहित ले चले। औरंगज़ेब की आज्ञा तथा उस प्रांत के सूबेदार से परवाना प्राप्त किये बिना ही उन्होंने राजधानी की ओर प्रस्थान किया। अटक पहुंचने पर, जब उनके पास परवाना न निकला तो उन्हें वहां के अफ़सर ने आगे बढ़ने से रोका। इसपर उसे मार तथा उसके कुछ साथियों को घायल कर वे जबरन नदी पारकर दिल्ली की ओर अग्रसर हुए (इलियट्; हिस्ट्री ऑव् इण्डिया, जि० ७, पृ० २९०)।"

(१) संभवतः यह जोधपुर राज्य की ख्यात में दिया हुआ बहादुरख़ां हो, जिसके विषय में उक्त ख्यात में लिखा है कि अजमेर पहुंचने पर बादशाह ने बहादुरख़ां को दस हज़ार फ़ौज देकर जोधपुर पर भेजा। यह ख़बर पाते ही जोधपुर से राठोड़ रूपसिंह, भाटी राम (कुंभावत), राठोड़ नरसिंहदास आदि थोड़े आदमियों के साथ सुलह करने के लिए उसके पास पहुंचे। बहादुरख़ां ने उनसे कहा कि सुलह करने की इच्छा थी तो सेना एकत्र कर बादशाह को चढ़ाई करने पर क्यों बाध्य किया। सरदारों ने कहा कि जो हो गया उसे जाने दें, अब तो हम बादशाह के सेवक हैं। तब नवाब (बहादुरख़ां) सबको साथ ले मेड़ते गया, जहां एक दिन सबसे क़ौल-क़रार लेकर उसने महाराजा के पुत्र होने पर उसे ही जोधपुर का राज्य दिलाने का वचन दिया और सरदारों को सिरोपाव दिये। पालासणी में चैत्र वदि १० (ई० स० १६७९ ता० २३ फ़रवरी) को उसका डेरा होने पर उसे कुंवरों के जन्म की सूचना मिली। अनन्तर चैत्र सुदि ६ (ता० ८ मार्च) को उसने जोधपुर राज्य पर बादशाही अधिकार स्थापित किया। फिर विभिन्न स्थानों में शाही अफ़सरों की नियुक्ति कर वह जोधपुर के सरदारों के साथ अजमेर पहुंचा पर उसके पहुंचने के पूर्व ही बादशाह का वहां से प्रस्थान हो चुका था। बहादुरख़ां को अजमेर में ही ठहरने का हुक्म था, अतएव उसने अपने पुत्र [illegible] के साथ सरदारों को दिल्ली भिजवाया और आप वहीं ठहर गया। उक्त ख्यात से यह भी पाया जाता है कि जोधपुर के सरदारों ने बहादुरख़ां को [illegible] रुपये देने का वचन दिया था, जिसके बदले उनकी इतनी सहायता कर रहा था (जि० १, पृ० [illegible])।

लिए भेजा[1]। इसपर महाराजा के साथ के सरदारों ने बादशाह से मेल बनाये रखने के लिए वहां का सारा हिसाब किताब मुसलमान अफ़सरों को समझा दिया और जोधपुर स्थित सरदारों को लिखा कि बादशाही अफ़सरों के पहुंचने पर वे बिना किसी प्रकार का बिगाड़ किये वहां का अधिकार उन्हें सौंप दें। उन्हीं दिनों बादशाह ने मुलतान से शाहज़ादे अकबर, आगरे से शाइस्ताखां, गुजरात से मुहम्मद अमीनखां और उज्जैन से असदखां को भी जाने के लिए लिखा। साथ ही उसने दक्षिण से राव अमरसिंह के पौत्र इन्द्रसिंह को भी जोधपुर का राज्य देने के लिए बुलाया[2]।

लाहोर में कुंवरों का जन्म

अनन्तर जोधपुर के सरदारों ने दोनों राणियों के साथ जमुर्रद (जमरूद) से प्रस्थान किया। अटक नदी पर पहुंचने पर उनके पास शाही परवाना न होने के कारण अफसरों ने उन्हें रोका। तब उनसे लड़ाई कर राठोड़ दल अटक को पार कर लाहोर पहुंचा[3]। वहां दोनों राणियों के कुछ घड़ियों के अन्तर से वि० सं० १७३५ चैत्र वदि ४ (ई० स० १६७९ ता० १९ फ़रवरी) बुधवार को क्रमशः अजीतसिंह और दलथंभन नाम के दो पुत्र हुए[4]।

---

(१) मुंशी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८०। वीरविनोद (भाग २, पृ० ८२८) में इन अफसरों के भेजे जाने का समय वि० स० १७३५ फाल्गुन सुदि १३ (ई० स० १६७९ ता० २१ जनवरी) दिया है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जिल्द २, पृ० १–२।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि जसवन्तसिंह के मरने पर सोजत और जैतारण बहाल रहने का फरमान तथा अटक पार उतरने की सनद सरदारों के पास भेजी गई थी, पर बीच में ही जब बादशाह से यह अर्ज़ की गई कि पठान मीरख़ां पहाड़ों में है और जोधपुर के लोगों के वापस आते ही पठान फिर उधर उपद्रव करने लगेंगे तो गुरज़बरदार जाकर अटक पार उतरने की सनद वापस ले आया। बाद में राजपूतों के निवेदन करने पर मीरख़ां ने वह सनद उन्हें दे दी। तब उन्होंने वहां से प्रस्थान किया (जि० २, पृ० ६-७)।

(४) वीरविनोद, भाग २, पृ० ८२८। ख़फ़ीख़ां कृत 'मुंतख़बुल्लुबाब में लिखा है—"राजा की मृत्यु के बाद उसके मूर्ख सेवक उसके छोटी उम्र के दोनों पुत्रों—

हि० स० १०८६ ता० २० ज़िलहिज (वि० सं० १७३५ फाल्गुन वदि ७= ई० स० १६७६ ता० २३ जनवरी) को बादशाह ने अजमेर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में से ता० ६ मुहर्रम (फाल्गुन सुदि ८= ता० ८ फ़रवरी) को उसने खानजहां बहादुर[1] और हुसेनअलीखां आदि को भी सेना-सहित जोधपुर राज्य पर अधिकार करने के लिए भेजा। ता० १८ मुहर्रम (चैत्र वदि ५=

बादशाह को कुंवरों के जन्म की खबर मिलना

अजीतसिंह और दलथंभन—को रानियों-सहित ले चले। औरंगज़ेब की आज्ञा तथा उस प्रांत के सूबेदार से परवाना प्राप्त किये बिना ही उन्होंने राजधानी की ओर प्रस्थान किया। अटक पहुंचने पर, जब उनके पास परवाना न निकला तो उन्हें वहां के अफ़सर ने आगे बढ़ने से रोका। इसपर उसे मार तथा उसके कुछ साथियों को घायल कर वे उक्त नदी पारकर दिल्ली की ओर अग्रसर हुए (इलियट; हिस्ट्री ऑव् इंडिया, जि० ७, पृ० २९७)।"

(१) संभवतः यह जोधपुर राज्य की ख्यात में दिया हुआ महाबतखां हो, जिसके विषय में उक्त ख्यात में लिखा है कि अजमेर पहुंचने पर बादशाह ने महाबतखां को दस हज़ार फ़ौज देकर जोधपुर पर भेजा। यह ख़बर पाते ही जोधपुर से राठोड़ रूपसिंह, भाटी राम (कुंभावत), राठोड़ नरसिंहदास आदि थोड़े आदमियों के साथ सुलह करने के लिए उसके पास पहुंचे। महाबतखां ने उनसे कहा कि युद्ध करने की इच्छा थी तो सेना एकत्र कर बादशाह को चढ़ाई करने पर बाध्य किया। सरदारों ने कहा कि जो हो गया उसे जाने दें, अब तो हम बादशाह के सेवक हैं। तब महाबत- (महाबतखां) सबको साथ ले मेड़ते गया, जहां एक दिन सबने [illegible] महाराजा के पुत्र होने पर उसे ही जोधपुर का राज्य मिलने का वचन दिया और [illegible] को सिरोपाव दिये। पालासणी में चैत्र वदि १२ [illegible] को उसका डेरा होने पर उसे कुंवरों के जन्म की सूचना मिली। [illegible] (ता० ८ मार्च) को उसने जोधपुर राज्य पर [illegible] फिर विभिन्न स्थानों में शाही थानों की नियुक्ति कर [illegible] अजमेर पहुंचा, पर उसके पहुंचने के पूर्व ही बादशाह [illegible] महाबतखां को अजमेर में ही ठहरने का हुक्म [illegible] के साथ सरदारों को दिल्ली [illegible] पाया जाता है कि जोधपुर के सरदारों ने महाबत[illegible] था, जिससे वह उनकी इच्छा [illegible]

ता० २० फरवरी) को अजमेर पहुंचकर ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की ज़ियारत करने के अनन्तर बादशाह दौलतखाने में ठहरा। इसके एक सप्ताह बाद भूतपूर्व महाराजा के वकील ने लाहोर में राजकुमारों के जन्म होने की सूचना बादशाह के पास पहुंचवाई[1]।

बादशाह का कुंवरों को दिल्ली बुलाना

लाहोर से चलकर राजपूत सरदार नवजात शिशुओं एवं राणियों के साथ तूतीग्राम, राजा का तालाब, फ़तियाबाद आदि स्थानों में ठहरते हुए श्रावणादि १७३५ (चैत्रादि १७३६) चैत्र सुदि ११ (ई० स० १६७९ ता० १३ मार्च) को सतलज पार कर गांव लेधाणा में ठहरे। वहां रहते समय बादशाह का इस आशय का पत्र उनके पास पहुंचा कि मैं महाराजा के पुत्रों के जन्म से अत्यन्त खुश हूं। मैं अब अजमेर से दिल्ली जा रहा हूं। तुम लोग भी उन्हें लेकर वहां आओ ताकि मनसब आदि प्रदान कर उनका उचित सम्मान किया जावे[2]।

बादशाह का दिल्ली पहुंचना

ता० ७ सफ़र (चैत्र सुदि ८ = ता० १० मार्च) को बादशाह ने अजमेर से प्रस्थान किया और ता० १ रबीउल्‌अव्वल (वैशाख सुदि ३ = ता० ३ अप्रेल) को वह दिल्ली पहुंचा[3]।

जोधपुर के सरदारों का दिल्ली पहुंचना

इसके दो दिन बाद ही राजपरिवार और कुंवरों के साथ राजपूत सरदार भी दिल्ली पहुंचे। वैशाख सुदि ७ (ता० ७ अप्रेल) को नौशेरखां के साथ भाटी रघुनाथसिंह और पंचोली केसरीसिंह आदि भी अजमेर से दिल्ली पहुंच गये।[4]

---

(१) मुंशी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८०-१।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि कुंवरों के जन्म का समाचार मिलने पर बादशाह ने हंसकर कहा कि बंदा क्या चाहता है और खुदा क्या करता है (जि० २ पृ० ३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १४।

(३) मुंशी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८२।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १५।

अनन्तर नौशेरखां वैशाख सुदि १४ (ता० १४ अप्रेल) को कतिपय सरदारों के साथ बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ। जोधा रणछोड़दास गोयंददासोत (खैरवा) तथा राठोड़ सूरजमल नाहरखानोत (आलोप), दीवान असदखां और बख़्शी सरबुलन्दखां के पास जाया करते थे। उन्होंने एक दिन उन (राठोड़ सरदारों) से कहा कि बादशाह महाराजा के पुत्रों को ५०० सवारों से चाकरी करने के एवज़ में सोजत और जैतारण देने को प्रस्तुत है। अन्य राजपूत सरदारों को अलग मनसब दिया जायगा, पर उक्त सरदारों ने यह शर्तें स्वीकार न कीं। बादशाह की तरफ़ से कोई आशा न देखकर राजपूत सरदारों ने बहादुरखां को लिखा। इसपर उसने बादशाह के पास अर्ज़ कराई कि यदि जोधपुर का राज्य वापस न किया गया तो मैं अपना मनसब त्याग दूंगा। बादशाह ने अपने अफसर काबुलीखां से कहा कि वह उस(बहादुरखां)को वहीं रहने के लिए लिखे, पर पीछे से काबुलीखां की सलाह के अनुसार उसने बहादुरखां को पीछा बुला लिया, जो द्वितीय ज्येष्ठ वदि ११ (ता० २५ मई) को दिल्ली पहुंचा[1]।

राठोड़ सरदारों का बादशाह से मिलना

ता० २५ रबीउस्सानी (द्वितीय ज्येष्ठ वदि १२ = ता० २६ मई) को बादशाह ने जसवंतसिंह के बड़े भाई नागोर के स्वामी अमरसिंह के पौत्र, रायसिंह के पुत्र इन्द्रसिंह को जोधपुर का राज्य, राजा का ख़िताब, ख़िलअ़त, जड़ाऊ साज़ की तलवार, सोने के साज़-सहित घोड़ा, हाथी, झंडा और नक्कारा दिया। उसने भी बादशाह को छत्तीस लाख रुपये पेशकशी देना

इन्द्रसिंह को जोधपुर का राज्य दिया जाना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ५५-५६। मुंशी देवीप्रसाद कृत "औरंगज़ेबनामे" में द्वितीय ज्येष्ठ वदि ११ (ता० २५ मई) को खानजहां बहादुर का जोधपुर से कई गाड़ियां मूर्तियों से भर के लाना लिखा है। बादशाह ने उसकी बड़ी प्रशंसा की और मूर्तियां दरबार के जिलोखाने (चौक) तथा जुमा मस्जिद की सीढ़ियों के नीचे डाली जाने की आज्ञा दी। मूर्तियां जड़ाऊ, सोने, चांदी, तांबे, पीतल, पत्थर आदि की बनी थीं (भाग २, पृ० ८३)।

क़बूल किया[1]।

इसी बीच जब बादशाह ने राठोड़ों को राज़ी होते न देखा तो उसने उनसे हिसाब देने को कहा। हिसाब किताब ठीक तो था ही नहीं, ऐसी दशा में जोधपुर के कर्मचारी पंचोली केसरीसिंह ने अपने ऊपर इसका सारा भार ले लिया। जब वह भी हिसाब न दे सका तो बादशाह ने उसे क़ैद में डाल दिया, जहां वह २५ दिन बाद ज़हर खाकर मर गया[2]।

केसरीसिंह का ज़हर खाकर मरना

जोधपुर के सारे राठोड़ सरदार राणियों और दोनों कुंवरों-सहित दिल्ली में किशनगढ़ के राजा रूपसिंह की हवेली[3] में ठहरे हुए थे। बादशाह की नीयत अपनी तरफ़ साफ न देखकर राठोड़ रणछोड़दास, भाटी रघुनाथ (सुरताणोत), राठोड़ रूपसिंह (परागदासोत), राठोड़ दुर्गादास[4] (आसकरणोत) आदि ने सलाह कर सबसे कहा कि यहां रहकर मरने से कोई

राजकुमारों को गुप्तरूप से बाहर करना

(१) मुंशी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८३। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८२८-९। जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि पहले सब राठोड़ सरदार जोधपुर की हवेली में ठहरे थे। इन्द्रसिंह को राज्य मिलने के बाद बादशाह की आज्ञा से वे वह हवेली ख़ाली कर कृष्णगढ़ की हवेली में चले गये (जि० २, पृ० १७)।

(४) वीर दुर्गादास का नाम राठोड़ वंश के इतिहास में अमर रहेगा। उसने असामान्य वीरता और रण चातुरी के अतिरिक्त आदर्श स्वामिभक्ति और देश-प्रेम का परिचय दिया। उसके पिता आसकरण ने, जो जसवन्तसिंह की चाकरी करता था, उसकी माता के साथ प्रेम न होने के कारण दोनों (पत्नी और पुत्र) को अलग कर दिया था। इसके बाद माता के साथ लूणावे गाव में ही रहकर छुटपन ही से वह होनहार बालक खेती-बारी करके उदर पोषण करने लगा। एक बार उसने कहा-सुनी हो जाने के कारण अपने खेत में से सांढनियां ले जाने पर सरकारी राइके को मार डाला। जब इसकी पुकार महाराजा के पास हुई तो इसके बारे में आसकरण से पूछा गया। उसने साफ कह दिया कि मेरे तो सब पुत्र राज की सेवा में उपस्थित हैं, गांव में मेरा कोई बेटा नहीं

लाभ नहीं, यदि जीते रहेंगे तो झगड़ा कर भूमि ले सकेंगे। ऐसे तो यहां पहरा बैठ जायगा और फिर हम निकल न सकेंगे। इस तरह बहुत समझा-बुझाकर उन्होंने राठोड़ सूरजमल, महेशदास के पौत्र राठोड़ संग्रामसिंह (आऊवा), चांपावत उदयसिंह (लखधीरोत, सामूजा), ऊदावत प्रतापसिंह (देवकर्णोत, बगड़ी), राठोड़ गजसिंह (दलपतोत) आदि बड़े-बड़े सरदारों और खोजा फ़रासत को जोधपुर को रवाना कर दिया[1]। अनन्तर दुर्गादास तथा चांपावत सोनिंग (विट्ठलदासोत) आदि अजीतसिंह को लेकर मारवाड़ की तरफ़ चले गये[2]।

है। तब महाराजा ने दुर्गादास को बुलाकर पूछा। उसने अपराध स्वीकार करते हुए कहा कि राइके ने श्रीनाजी के ज़िले को धोला ढूंगा कहा और यह भी कहा कि उसपर छत्र (छप्पर) नहीं है। उसकी इस ढिठाई के कारण मैंने उसकी हत्या कर दी। इसपर यह जानकर कि वह आसकरण का ही पुत्र है महाराजा ने आसकरण से पूछा कि तुम तो कहते थे कि मेरा कोई बेटा नहीं है? आसकरण ने उत्तर दिया—"कपूत को बेटों में नहीं गिनते।" महाराजा ने कहा—'यह अनल है। यही कभी डगमगाते हुए मारवाड़ को थांभेगा।' इसके बाद उसने दुर्गादास को अपनी सेवा में रख लिया। पीछे से महाराजा के विश्वास को उसने सदा ही सम्पादित किया। मारवाड़ का राज्य खालसा किये जाने पर उसने राठोड़ों की तरफ़ से औरंगज़ेब से कई युद्ध कर मारवाड़ का राज्य सुरक्षित रखने में बड़ी मदद पहुंचाई। उसकी प्रशंसा में मारवाड़ के कवियों आदि ने अनेक कविताएं भी की हैं। इस सम्बन्ध में राव भाट के एक ... का निम्नांकित दोहा बड़ा प्रसिद्ध है—

ढंमक ढंमक ढोल बाजै, दे दे ठोर नगारां री।
आसे घर दुर्गो नहीं होतो, सुन्नत होती सारां री॥

[illegible]

[illegible]

(1) [illegible]

(2) [illegible]

[illegible]

वि० सं० १७३५ फाल्गुन वदि २ (ई० स० १६७९ ता० १९ फ़रवरी) को रानी के एक लड़का हुआ, जिसका नाम अजीत रक्खा गया। राठोड़ उसको तथा राज-परिवार के अन्य लोगों को साथ लेकर स्वदेश की ओर चले, परन्तु उनके दिल्ली पहुंचने पर बादशाह ने जसवन्त का कर्ज़ा उनसे वसूल करने के इरादे से यह आज्ञा दी कि अजीत को मेरे हरम में दे दिया जाय। उसने इसके बदले में राठोड़ सरदारों में मारू (मारवाड़) का विभाजन करने का भी वचन दिया, पर राठोड़ों ने इसे स्वीकार न किया। उनके इस आचरण से अप्रसन्न होकर औरंगज़ेब ने सेना भेजकर उन्हें घेर लिया। ऐसी परिस्थिति देखकर राठोड़ों ने मिठाई के टोकरे में कुमार को रखकर वहां से निकाल दिया (राजस्थान; जि० २, पृ० ९९३)।

मुहम्मद हाशिम (ख़फ़ीख़ाँ) कृत "मुन्तख़बुल्लुबाब" नामक ग्रन्थ से पाया जाता है—"बादशाह की नाराज़गी जसवन्तसिंह पर पहले से ही थी। राजपूतों के (फाटक पर के) आचरण से उसकी नाराज़गी बहुत बढ़ गई। उसने कोतवाल को राजपूतों का डेरा घेर लेने और उनपर नज़र रखने की आज्ञा दी। इसके कुछ दिनों बाद कुछ राजपूतों ने स्वदेश जाने की आज्ञा मांगी, जिसकी औरंगज़ेब ने तुरन्त स्वीकृति दे दी। इसी बीच राजपूत उन कुमारों की अवस्था के दो बालक ले आये और उन्हें वास्तविक राजकुमारों के वस्त्रों से विभूषित कर उन्होंने कुछ दासियों को रानियों की पोशाक पहना कर उनके पास रख दिया। फिर वास्तविक रानियां मर्दों के बाने में दो विश्वासपात्र सेवकों और कई स्वामिभक्त राजपूतों के साथ रात्रि के समय वहां से बाहर भेज दी गईं (इलियट्, हिस्ट्री ऑव् इंडिया; जि० ७, पृ० २९७)।"

मुन्शी देवीप्रसाद-कृत "औरंगज़ेबनामे" में लिखा है कि एक लड़का (दल-थंभन) तो पहले ही मर गया दूसरा (अजीतसिंह) शाही सेना द्वारा राजपूतों के घेरे जाने पर एक घोसी के पास छिपा दिया गया (भाग २, पृ० ८४ ५)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन नहीं दिया है, पर उसमें लिखा है कि खींची मुकुन्ददास कलावत दोनों राजकुमारों (अजीतसिंह तथा दलथंभन) को गुप्त रूप से दिल्ली से निकाल ले गया। उनमें से दलथंभन मार्ग में ही मर गया (जि० २, पृ० ३२)।

ये सब कथन विश्वसनीय नहीं कहे जा सकते। इस सम्बन्ध में मूल में दिया हुआ "वीरविनोद" का ही वर्णन अधिक माननीय है। "वंशभास्कर" से भी पाया जाता है कि दुर्गादास अजीतसिंह को निकाल ले जानेवाले सरदारों के साथ था और भाटी गोइंददास कालबेलिये का रूप धर दोनों राजकुमारों को पिटारों में रखकर घेरे से बाहर निकाल ले गया था (भाग ३, पृ० २८८६, छन्द १६)।

बादशाह ने सख्त हुक्म दिया कि कोतवाल फौलादखां और सैयद हामिदखां ख़ास चौकी के आदमियों तथा हमीदुखां, कमालुद्दीनखां, ख्वाजा मीर आदि शाहज़ादे सुल्तान मुहम्मद के रिसाले-सहित जाकर रानियों व जसवन्तसिंह के बेटे को कृष्णगढ़ के राजा रूपसिंह की हवेली से हटाकर नूरगढ़ में पहुंचा देवें। यदि वे सामना करें तो उन्हें सज़ा दी जावे। जैसा कि ऊपर लिखा गया है दुर्गादास तथा सोनिंग आदि राठोड़ पहले दिन ही अजीतसिंह को लेकर मारवाड़ की तरफ़ रवाना हो गये थे। शेष रहे हुए राजपूतों ने बादशाही अफ़सरों का मुकाबला किया और वीरतापूर्वक लड़कर रानियों-

राठोड़ों का शाही सेना से लड़कर मर जाना

(१) रानियों के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न पुस्तकों में भिन्न भिन्न बातें लिखी हैं। टॉड के अनुसार युद्धारम्भ के पूर्व ही दोनों रानियों को स्वर्ग भेज दिया गया [illegible]

[illegible]

सहित काम आये[1]।

बादशाह को जब युद्ध में महाराजा जसवन्तसिंह के परिवार के मारे जाने और राजकुमारों के भगाये जाने का समाचार मिला तो उसने राजकुमारों को, जहां से भी हो, खोजकर दरबार में उपस्थित करने की आज्ञा निकाली। हर-तरह तलाश करने पर भी जब कुमारों का पता न लगा तो कोतवाल ने एक फ़र्ज़ी लड़का पकड़ लेजाकर बादशाह को सौंप दिया[2], जिसने उसका नाम मोहम्मदीराज रखकर अपनी पुत्री ज़ेबुन्निसा बेगम को परवरिश करने के लिए दे दिया[3]।

राजकुमारों की खोज में शाही अफसरों की असफलता

दूसरे दिन फ़ौलादखां ने उस लड़के के कुछ ज़ेवर भी ढूंढ निकाले, परन्तु राजा और दोनों राणियों तथा अन्य राजपूतों का माल-असबाब इस बीच लुटेरों ने लूट लिया और जो सरकार में आया वह बादशाह के हुक्म से "बैतुलमाल[4]" के कोठे में जमा किया गया[5]। जोधपुर के फ़ौजदार ताहिरखां ने भागे हुए राजपूतों को रोकने में पैर नहीं जमाया था, जिससे वह

राज्य का यह कथन कि बीस हज़ार सवारों ने किशनगढ़ की हवेली पर तोपख़ाने के साथ धावा किया और दुर्गादास दिल्ली में ही रहकर शाही सेना के साथ लड़ा माना नहीं जा सकता, क्योंकि जैसा ऊपर लिखा गया है वह तो अजीतसिंह को लेकर पहले ही चला गया था।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ३६-७। मुन्शी देवीप्रसाद-लिखित "औरंगज़ेबनामे" से पाया जाता है कि कोतवाल फौलादखा राठोड़ों-द्वारा छिपाये हुए राजकुमार का हाल जान गया था, जिससे वह उसे घोसी के यहां से ले आया। राजा की लौंडियों को दिखाये जाने पर उन्होंने भी यही कहा कि यह महाराजा का बेटा है (भाग २, पृ० ८५)।

(३) मुन्शी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८६।

(४) भंडार।

(५) मुन्शी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८६।

नौकरी से अलग कर दिया गया और साथ ही उसका ख़िताब भी छीन लिया गया[1]।

बादशाह का जोधपुर पर और सेना भेजना

ता० २० रज्जब (भाद्रपद वदि ८ = ता० १८ अगस्त) को बादशाह ने ख़िज़राबाद के बाग में मुकाम होने पर वहां से सरबलंदख़ां की अध्यक्षता में एक अच्छी फ़ौज जोधपुर पर रवाना की[2]।

अजमेर के फ़ौजदार तहव्वरख़ां के साथ राठोड़ों की लड़ाई

ता० २६ रज्जब (भाद्रपद वदि १४ = ता० २४ अगस्त) को बादशाह से अर्ज़ हुई कि राजा के नौकरों में से राजसिंह[3] ने बहुतसी सेना-सहित अजमेर के फ़ौजदार तहव्वरख़ां से लड़ाई की। तीन दिन तक दोनों में ख़ूब लड़ाई होती रही, तीर और बंदूक से लड़ते-लड़ते तलवार, बर्छी, छुरी और कटारी की नौबत पहुंची। बहुत देर तक मार-काट जारी रही और दोनों तरफ़ लाशों के ढेर लग गये। आख़िर तहव्वरख़ां जीता और राजसिंह वीरतापूर्वक लड़कर मारा गया[4]।

---

(१) मुंशी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८६। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि दिल्ली की लड़ाई की ख़बर श्रावण मास के अन्तिम दिनों में जोधपुर पहुंची। इसपर राठोड़ों ने ताहिरख़ां आदि को घेर लिया, जिसने माल-असबाब राठोड़ों के सिपुर्द कर अपनी जान बचाई। इसके बाद राठोड़ों ने मेड़ते में मार-काट मचाई और फिर सिवाने का गढ़ छीन लिया (जि० २, पृ० ६७)।

(२) मुंशी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८८

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में मेड़तिया राजसिंह प्रतापसिंहोत और [illegible] राजसिंह बलरामोत ये दो नाम दिये हैं, पर इनमें से इस लड़ाई में [illegible] प्रथम राजसिंह ही था, अतएव यही फ़ारसी तवारीख़ का राजसिंह होना चाहिये [illegible] आलणियावासवालों का पूर्वज था।

(४) मुंशी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८६-७।

जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार यह लड़ाई भाद्रपद वदि ११ को हुई। उस समय तहव्वरख़ां का डेरा पुष्कर में था। उक्त ख्यात के अनुसार मेड़तिये इस लड़ाई में बड़ी वीरता से लड़े और तहव्वरख़ां भाग गया (जिल्द २, पृ० [illegible])।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि बादशाह ने इन्द्रसिंह को जोधपुर का स्वामी मानकर उधर का प्रबन्ध करने के लिए भेजा था, परन्तु उससे न तो वहां का प्रबन्ध ही हुआ और न वह उधर होनेवाले उपद्रव को ही शान्त कर सका, जिससे बादशाह ने उसे वापस बुला लिया[1]।

इन्द्रसिंह का वापस बुलाया जाना

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि दुर्गादास, सोनिंग आदि राजकुमारों को लेकर गुप्त रूप से दिल्ली से बाहर चले गये थे। छोटे राजकुमार दलथंभण का तो मार्ग में देहांत हो गया। अजीतसिंह को साथ लेकर राठोड़ सरदार मारवाड़ की तरफ़ चले, परन्तु सम्पूर्ण जोधपुर राज्य पर बादशाह का अधिकार हो गया था। इससे दुर्गादास, सोनिंग आदि बड़े चिन्तित हुए और उन्होंने अर्ज़ी लिखकर महाराणा राजसिंह से अजीतसिंह को शरण में लेने की प्रार्थना की। महाराणा के स्वीकार करने पर वे अजीतसिंह को साथ लेकर उसके पास गये और ज़ेवर-सहित एक हाथी, ११ घोड़े, एक तलवार, रत्नजटित कटार, दस हज़ार दीनार (चांदी का

राठोड़ों का अजीतसिंह को लेकर महाराणा के पास जाना

(१) मुंशी देवीप्रसाद, औरंगज़ेबनामा, भाग २, पृ० ८६। सरकार ने भी लिखा है कि केवल दो मास बाद ही उसकी अयोग्यता के कारण बादशाह ने इन्द्रसिंह को राज्यच्युत कर दिया (शार्ट हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, पृ० १७२)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि इन्द्रसिंह के जोधपुर पहुंचने पर उसकी तरफ़ से कूंपावत सुदर्शन भावसिंहोत, जोधा रतन हरीसिंहोत आदि गढ़ में गये। उन्होंने वहां के सरदारों से कहा कि अभी महाराजा (स्वर्गीय) के पुत्र की पक्की ख़बर नहीं है और इन्द्रसिंह भी महाराजा गजसिंह का पौत्र ही है, ऐसी दशा में उसको जोधपुर का शासक मान लेना असगत नहीं है। इसपर जैतावत प्रतापसिंह देवकर्णोत, राठोड़ हरनाथ गिरधरदासोत आदि ने रातानाड़ा जाकर, जहां इन्द्रसिंह ठहरा हुआ था, उसकी अधीनता स्वीकार करली। तब वि० सं० १७३६ भाद्रपद सुदि ७ (ई० स० १६७९ ता० २ सितम्बर) मंगलवार को इन्द्रसिंह ने बड़े जलूस के साथ जोधपुर के गढ़ में प्रवेश किया। पीछे से वि० सं० १७३७ में ग़ैरचाकरी के कारण बादशाह ने उसे जोधपुर से अलग कर दिया (जि० २, पृ० ३८ और ४३)।

सिक्का, रुपये) उसकी नज़र किये। महाराणा ने अजीतसिंह को बारह गावों सहित केलवे का पट्टा देकर वहां रक्खा[1] और दुर्गादास आदि राठोड़ों से कहा कि बादशाह सीसोदियों और राठोड़ों के सम्मिलित सैन्य का आसानी से मुकाबिला नहीं कर सकता, आप निश्चिंत रहिये[2]।

बादशाह ने जब अजीतसिंह के, जिसे वह कृत्रिम समझता था[3], महाराणा के पास पहुंचने की ख़बर सुनी तब उसने महाराणा के पास फ़रमान

---

(१) मान कवि, राजविलास, विलास ९, पद्य १७१-२०६ (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी का संस्करण)। इस पुस्तक की रचना का प्रारम्भ महाराणा राजसिंह की विद्यमानता में वि० सं० १७३५ (ई० स० १६७८) में हुआ और यह वि० सं० १७३७ में समाप्त हुई। टॉड, राजस्थान, जि० १, पृ० ४४२ (दुर्गादास की देख रेख में अजीत का केलवे में, जो उसे महाराणा की तरफ़ से जागीर में मिला था, रहना लिखा है)। रूपाहेली के ठाकुर राठोड़ चतुरसिंह-कृत "चतुरकुल-चरित्र" (प्रथम भाग, पृ० १००, ई० स० १९०२ का संस्करण) में भी इसका उल्लेख है।

(२) वीरविनोद, भाग २, पृ० ४६३।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि महाराजा जसवन्तसिंह के उमराव उसकी कुछ राणियों को उनके पीहर पहुंचा आये थे। हाडी और चौहान राणियां बूंदी गईं, शेखावत खंडेला गई, देवड़ी सिरोही गई, भटियाणी जैसलमेर गई और जादम उदयपुर राणा के पास गई जहां उसे उसने एक गांव दिया था। बाघेली राणी मुहणोत नैणसी की हवेली में जा रही थी, जिसकी परवरिश का इन्द्रसिंह ने जोधपुर पहुंचने पर समुचित प्रबन्ध किया (जि० २, पृ० ३८-३९)।

(३) मुन्शी देवीप्रसाद कृत "औरंगज़ेबनामे" में लिखा है कि जो राजपूत मारे जाने से बचे थे जोधपुर पहुंचकर दुर्गा और अन्य दुश्मनों के बहकाने से दो जाली लड़कों—दलथंभन (जो मर गया) और अजीतसिंह—को महाराजा जसवन्तसिंह का पुत्र प्रकाशित कर फसाद करने लगे (भाग २, पृ० ८६) इससे स्पष्ट है कि औरंगज़ेब उन दोनों लड़कों को फ़र्ज़ी ही मानता था। सर जदुनाथ सरकार ने भी लिखा है कि औरंगज़ेब तब तक अजीतसिंह को फ़र्ज़ी समझता रहा, जब तक कि मेवाड़ के राजदरबार में उसका विवाह नहीं हुआ (हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब जि० ३, पृ० ३२७—द्वितीय संस्करण)।

बादशाह का महाराणा से अजीतसिंह को मांगना

भेजकर अजीतसिंह को मांगा, परन्तु महाराणा ने उसपर ध्यान न दिया। फिर चार फरमान भेजकर अपनी आज्ञा पालन करने के लिए बादशाह ने महाराणा को लिखा, परन्तु उसने अजीतसिंह को सौंपना स्वीकार न किया। इसपर बादशाह ने तुरंत उसपर चढ़ाई कर दी[1]।

महाराणा के कृष्णगढ़ की कुंवरी चारुमती से, जिससे बादशाह का संबंध स्थिर हो चुका था, विवाह करने, श्रीनाथजी आदि की मूर्तियों को

महाराणा पर बादशाह की चढ़ाई

अपने राज्य में रखने और जज़िया के विरोध में पत्र लिखने से औरंगज़ेब उसपर पहले ही नाराज़ था, ऐसे में उसकी इच्छा के विरुद्ध अजीतसिंह को आश्रय देने से बादशाह की उसपर नाराज़गी बढ़ गई और उसने हि० स० १०६० ता० ७ शाबान (वि० सं० १७३६ भाद्रपद सुदि ८ = ई० स० १६७६ ता० ३ सितम्बर) को मेवाड़ पर चढ़ाई करने के लिए एक बड़ी सेना के साथ दिल्ली से प्रस्थान किया। उसी दिन उसने शाहज़ादे अकबर को अजमेर में पहले पहुंचने के लिए पालम कसबे से रवाना किया। बादशाह १३ दिन में अजमेर पहुंचा और आनासागर पर के महलों में ठहरा[2]।

महाराणा ने बादशाह के दिल्ली से मेवाड़ पर चढ़ने की खबर पाकर अपने कुंवरों, सरदारों आदि को एकान्त में बुलाकर उनसे सलाह की कि बादशाह से कहां और किस प्रकार लड़ना चाहिये। उस समय कुंवरों और अन्य सरदारों आदि के अतिरिक्त राठोड़ दुर्गादास और राठोड़ सोनिंग भी

---

(१) राजविलास, विलास १०, पद्य २२-४।

(२) वीरविनोद, भाग २, पृ० ४६३। मुंशी देवीप्रसाद-कृत "औरंगज़ेबनामे" में ता० २१ शाबान (आश्विन सुदि १ = ता० २५ सितम्बर) को बादशाह का अजमेर पहुंचना लिखा है (भाग २, पृ० ८८)। जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७३६ के मार्गशीर्ष मास में बादशाह का अजमेर पहुंचना और वहां से महाराणा राजसिंह पर चढ़ाई करना लिखा है (जि० २, पृ० ३१), जो ठीक नहीं है।

दरबार में उपस्थित थे[1]। बादशाह के पास सेना अधिक थी, अतएव पहाड़ियों मे रहकर युद्ध करने का निश्चय हुआ, जिसके अनुसार महाराणा राजसिंह अपने सामन्तों आदि को साथ लेकर पहाड़ों की तरफ़ चला गया[2]। मुग़लों ने उदयपुर में प्रवेशकर उसे खाली पाया और वहां के मन्दिर आदि तोड़े। इसके बाद उन्होंने राजपूत सेना की तलाश में पहाड़ियों में प्रवेश करना प्रारम्भ किया। चित्तोड़ पर मुगल सेना का अधिकार होने के पश्चात् उदयपुर के निकट देवारी में कुछ दिनों रहने के बाद फ़रवरी मास के अन्त में बादशाह स्वयं वहां (चित्तोड़) लौटा। वहां से वह अजमेर लौटा और मेवाड़ में शाहज़ादा अकबर सैन्य-परिचालन के लिए रह गया। मुग़ल थाने दूर-दूर स्थापित होने और मेवाड़ एवं मारवाड़ के बीच अरावली की पहाड़ियां होने के कारण, जिसमें महाराणा अपनी सेना-सहित था, मुग़ल सेना को राजपूतों के साथ लड़ने में बड़ी असुविधा का सामना करना पड़ता था। जब कई बार मेवाड़ में रक्खी हुई मुग़ल-सेना का राजपूतों ने बहुत नुकसान किया तो बादशाह ने नाराज़ होकर अकबर को मारवाड़ की तरफ़ भेज दिया और उसके स्थान में शाहज़ादे आज़म की नियुक्ति की[3]।

शाहज़ादे अकबर का मारवाड़ में पहुचना

चित्तोड़ से बदले जाने पर वि० सं० १७३७ श्रावण सुदि ३ (ई० स० १६८० ता० १८ जुलाई) को शाहज़ादा अकबर सैन्य-सहित सोजत (मारवाड़) पंहुचा। मार्ग में राजपूतों ने उसे मौके-मौके पर हैरान किया, पर वे हटा दिये गये और तहव्वरख़ां ने, जो मुग़ल सेना के हरावल में था, ब्यावर और मेड़ता में जमकर सामना करनेवाले कितने ही राठोड़ों को गिरफ़्तार भी

(१) मान कवि, राजविलास, विलास १०, पद्य ५४-६७।

(२) मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास, जि० २, पृ० ५५८।

(३) सर जदुनाथ सरकार, शॉर्ट हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, पृ० १७२-५। इस चढ़ाई के विस्तृत विवरण के लिए देखो मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास, जि० २, पृ० ५५४-६२।

किया। राठोड़ों की टुकड़ियां देश में इधर-उधर फैलकर, जहां मुग़लों का थाना कमज़ोर देखतीं, वहां अचानक आक्रमण कर देतीं, पर जमकर कहीं भी लड़ाई नहीं हुई। मारवाड़ के प्रत्येक भाग में, दक्षिण में जालोर एवं सिवाना में, पूर्व में गोड़वाड़ में, उत्तर में नागोर में और उत्तर-पूर्व में डीडवाणा तथा सांभर में अजीतसिंह के अनुयायी हर जगह अचानक आक्रमण करते रहे।

अकबर को यह आज्ञा मिली कि वह सोजत को सुरक्षित कर नाडोल (जो उस समय मेवाड़ के अधिकार में था) पर अधिकार करे और वहां से तहव्वरख़ां की अध्यक्षता में अपने हरावल सैन्य को नारलाई के पासवाले देसूरी के घाटे से होकर मेवाड़ में भेजे तथा कमलमेर (कुंभलमेरु, कुंभलगढ़) के ज़िले पर आक्रमण करे, जहां महाराणा और हारे हुए राठोड़ ठहरे हुए थे और जहां से वे इधर-उधर आक्रमण किया करते थे, परन्तु इस आज्ञा की पूर्ति में कई महीने लग गये। मृत्यु का आलिंगन करनेवाले राजपूतों का आतङ्क शत्रुदल पर ऐसा छा गया था कि तहव्वरख़ां नाडोल जाने के लिए आगे बढ़ने से इन्कार कर अपने सैन्य-सहित खरवे (? खरवा) में ठहर गया और एक मास पीछे नाडोल पहुंचा, पर राजपूतों का भय उसे पूर्ववत् ही बना रहा। रसद आदि की समुचित व्यवस्था कर शाहज़ादा अकबर मार्ग में थाने बैठाता हुआ सोजत से चलकर सितम्बर के अंत में नाडोल पहुंचा, परन्तु तहव्वरख़ां ने पहाड़ों में जाना स्वीकार न किया जिससे अकबर को अपने उस डरपोक अफ़सर पर दबाव डालना पड़ा। ता० २७ सितम्बर (आश्विन सुदि १४) को तहव्वरख़ां देखभाल करने के लिए घाटे के द्वार की ओर चला। महाराणा के दूसरे पुत्र भीमसिंह ने पहाड़ों से निकलकर उससे लड़ाई की, जिसमें दोनों पक्षों की बहुत हानि हुई[1]। इसी बीच महाराणा का वि० सं० १७३७ कार्तिक सुदि १० (ई० स० १६८० ता० २२ अक्टोबर) को ओड़ा गांव में विष देने से देहांत हो गया

(१) सर यदुनाथ सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३४६-५० (प्रथम संस्करण)। इस लड़ाई का वृत्तान्त गुजरात के नागर ब्राह्मण ईश्वरदास ने 'फ़ुतूहात-इ-आलमगीरी' (पत्र ७७ पृ० २–पत्र ७८ पृ० २) में लिखा है।

और उसका पुत्र जयसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ[1]। उसने भी बादशाह के साथ की लड़ाई जारी रक्खी।

यह सब होते हुए भी शाही सेना का सामना करना राजपूतों के लिए कठिन कार्य था, अतएव उन्होंने युक्ति से काम लेकर पहले शाहज़ादे मुअज़्ज़म को (जो देबारी के पास उदयसागर पर ठहरा हुआ था) बादशाह के विरुद्ध करने का प्रयत्न किया। इसके लिए राव केसरीसिंह चौहान, रावत रत्नसिंह (चूंडावत), राठोड़ दुर्गादास और सोनिंग आदि सरदारों ने उससे बात-चीत शुरू की, परन्तु अजमेर से मुअज़्ज़म की माता नवाबबाई ने उसे राजपूतों से मेल-मिलाप न रखने की सलाह दी, जिससे वह राजपूतों के बहकाने में न आया[2]। तब राजपूतों ने शाहज़ादे अकबर को अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न किया। उन्होंने उससे कहा कि राजपूतों को नाराज़ कर औरंगज़ेब अपने सारे राज्य को नष्ट कर रहा है। इस समय तुम्हें चाहिये कि स्वयं बादशाह बनकर अपने पूर्वजों की नीति का अवलम्बन करो और राज्य को फिर समृद्ध बनाओ। तहव्वरख़ां के जीलवाड़े में रहते समय महाराणा जयसिंह ने राठोड़ दुर्गादास तथा अन्य कई सरदारों को गुप्त रूप से अकबर के पास भेजा। अकबर ने महाराणा को कुछ परगने और अजीतसिंह को जोधपुर का राज्य देने का वचन दिया, जिसके बदले में उन्होंने उसे सहायता देना स्वीकार किया। फिर सब बातें तय होने पर ई० स० १६८१ ता० २ जनवरी (वि० सं० १७३७ माघ वदि ८) को अजमेर में बादशाह पर आक्रमण करने के लिए प्रस्थान करने का निश्चय हुआ[3]।

शाहज़ादे अकबर का राजपूतों से मिल जाना

(१) मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास, जि० २, पृ० ५७७-८ तथा ५८१।

(२) मुंतख़बुल्लुबाब—इलियट्, हिस्ट्री ऑफ़् इंडिया, जि० ७, पृ० ३००।

(३) सरकार, हिस्ट्री ऑफ् औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३५५-५६। मुंतख़बुल्लुबाब—इलियट्; हिस्ट्री ऑफ् इंडिया, जि० ७, पृ० ३००-१। मुंशी देवीप्रसाद;

ई० स० १६८१ ता० १ जनवरी (वि० सं० १७३७ माघ वदि ७) को अकबर ने अपने को बादशाह घोषित किया। इस अवसर पर उसने अपने सरदारों और अमीरों को खिताब दिये तथा तहव्वरखां को अपना मुख्य मंत्री बनाकर उसे सात हज़ारी मनसब दिया। अकबर के साथ के सरदारों में से कुछ तो स्वयमेव उसके साथी बन गये और कुछ को बाध्य होकर उसका साथ स्वीकार करना पड़ा। जिन्होंने उसका विरोध किया वे क़ैद में डाल दिये गये। केवल शहाबुद्दीनख़ां ने, जो कुछ पीछे रह गया था, शीघ्रता से औरंगज़ेब को शाहज़ादे के विद्रोह की सूचना दे दी। औरंगज़ेब की दशा उस समय बड़ी शोचनीय थी, क्योंकि अधिकांश सेना चित्तोड़ आदि में रहने के कारण उसके पास बहुत कम सेना रह गई थी, जब कि सीसोदियों और राठोड़ों की सेना-सहित अकबर का सैन्य ७०००० के क़रीब था। बादशाह ने सब मनसबदारों और अपने शाहज़ादों को शीघ्र अजमेर पहुंचने के लिए लिखा। उधर युवा अकबर, जो स्वभावतः सुस्त और विलासी था, अपने बादशाह बनने की खुशी में नाचरंग में मस्त रहने लगा।

शाहज़ादे अकबर की औरंगज़ेब पर चढ़ाई

औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० १०० तथा टि० १।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में भिन्न वर्णन मिलता है। उसमें लिखा है—"वि० सं० १७३७ कार्तिक सुदि १० को महाराणा राजसिंह का देहांत होगया और जयसिंह गद्दी पर बैठा। इसके बाद दुर्गादास गोरम के पहाड़ों से होकर मार्गशीर्ष मास में मेड़ते गया, जहां उसने व्यापारियों आदि से बहुतसा धन वसूल किया। फिर उसने डीडवाणा से भी रुपये लिये। बादशाह ने उसके पीछे फ़ौज भेजी, जिसने उसका बहुत पीछा किया। नागोर से बादशाही सेना लौट गई। गांव जीलवाड़े से शाहज़ादे अकबर के सेवकों—ताजमुहम्मद और चौहान भावसिंह—ने राठोड़ों के पास जाकर कहा—'तुम हमारे शामिल हो जाओ। जोधपुर राजा (जसवन्तसिंह) के लड़के को मुबारक कर दिया जायगा।' गांव चांचोड़ी में तहव्वरख़ां का पुत्र मिर्ज़ा मानी राठोड़ रामसिंह (रतनोत) के पास जाकर राठोड़ों को साथ ले गया। गोड़ में शाहज़ादे ने तख़्त पर बैठकर दरबार किया और माघ वदि ५ को राठोड़ों को सिरोपाव, घोड़े, हाथी, तलवार और हज़ार मोहरें दीं (जि० २, पृ० ७७-८)।"

उसने १२० मील का सफर करने में १५ दिन लगा दिये, जबकि प्रत्येक घंटे की देरी के कारण औरंगज़ेब की स्थिति दृढ़ होती जा रही थी। क्रमशः शहाबुद्दीनखां और हमीदखां सैन्य सहित बादशाह के पास पहुंच गये। साथ ही शाहज़ादे मुअज्ज़म के भी प्रस्थान करने की खबर पहुंची। स्थिति सुधरते ही बादशाह ने अजमेर को चारों ओर से सुरक्षित कर लिया। ता० १४ जनवरी (माघ सुदि ५) को वह अजमेर से ६ मील दूर दोराई में जाकर ठहरा। अकबर की सेना का अग्रभाग कुड़की नामक स्थान में था, पर अकबर के डेरों में उस समय निराशा और विद्रोह का साम्राज्य था। ज्यों-ज्यों वह आगे बढ़ने लगा, उसकी तरफ़ के मुग़ल सैनिक अधिकाधिक संख्या में उसका साथ छोड़कर बादशाह से मिलने लगे। हां, ३०००० राजपूत उसके साथ अवश्य बने रहे। ता० १५ जनवरी (माघ सुदि ६) को बादशाह आगे बढ़कर चार मील दक्षिण में दोराहा (? डुमाड़ा) नामक स्थान में ठहरा। अकबर भी उससे तीन मील दूर जा डटा। इसी बीच शाहज़ादा मुअज्ज़म सेना-सहित जाकर अपने पिता के शामिल हो गया[1]।

अकबर के बहुत से अफ़सर उस समय तक बादशाह से जा मिले थे। अब बादशाह ने उसके मुख्य सेनापति तहव्वरखां को उसके ससुर इनायतखां (बादशाह का सेनापति) के द्वारा इस आशय का ख़त लिखाकर अपने पास बुलाया कि यदि वह चला आयगा तो उसका अपराध क्षमा किया जायगा नहीं तो उसकी स्त्रियां सब के सामने अपमानित की जावेंगी और उसके बच्चे कुत्तों के मूल्य पर गुलामों के तौर बेच दिये जावेंगे। इस धमकी से डरकर तहव्वरखां सोते हुए अकबर तथा दुर्गादास को सूचना दिये बिना ही औरंगज़ेब के पास चला गया, जहां शाही नौकरों ने उसको मार डाला[2]।

---

(१) सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३३८-३९।

(२) वही जि० ३, पृ० ३३९-४२। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख भिन्न प्रकार से दिया है। उसमें लिखा है— बादशाह ने [illegible] के तहव्वरखां की [illegible] और दुर्गा को मारने के लिए [illegible]। इसकी [illegible] [illegible] के

इसके बाद अकबर और उसके सहायक राजपूतों में विरोध पैदा करने के लिए औरंगज़ेब ने एक चाल चली। उसने एक जाली पत्र अकबर के नाम इस आशय का लिखा कि तुमने राजपूतों को खूब धोखा दिया है और उन्हें मेरे सामने लाकर बहुत अच्छा काम किया है। अब तुम्हें चाहिये कि उन्हें हरावल में रक्खो, जिससे कल प्रातःकाल के युद्ध में उनपर दोनों तरफ से हमला किया जा सके। यह पत्र किसी प्रकार राजपूतों के डेरे में दुर्गादास के पास पहुंचा दिया गया, जिसको पढ़ते ही उसके मन में खटका हो गया। वह अकबर के डेरे पर गया, पर अर्द्धरात्रि का समय होने से वह सो रहा था और उसे किसी भी दशा में जगाने की आज्ञा सेवकों को न थी। तब दुर्गादास ने अपने डेरे पर लौटकर तहव्वरख़ां को बुलाने के लिए अपने आदमी भेजे पर वह तो पहले ही बादशाह के पास जा चुका था। यह खबर मिलते ही राजपूतों का सन्देह विश्वास में परिणत हो गया और उन्हें उस पत्र पर अविश्वास करने का कोई कारण न रहा। प्रातःकाल होने के पूर्व ही वे अकबर का बहुतसा सामान आदि लूटकर मारवाड़ की तरफ़ चल दिये। ऐसी अव्यवस्थित दशा से लाभ उठाकर औरंगज़ेब के पक्षपाती, जो शाहज़ादे के पास कैदी थे तथा अन्य मुसलमान भी भागकर बादशाह के पास चले गये[1]।

औरंगज़ेब का छल और दुर्गादास का शाहजादे का साथ छोड़ना

अपने जंवाई (तहव्वरख़ां) को भेज दी। इसपर तहव्वरख़ां ने राठोड़ों से कहलाया कि अब हमारा आपका मेल नहीं रहा और वह बादशाह के पास चला गया, जहां वह मार डाला गया (जि० २, पृ० ४३)।" टॉड के कथनानुसार तहव्वरख़ां ने इस आशय का पत्र लिखकर दूत के हाथ राठोड़ों के पास भिजवाया—"मेरे ही द्वारा आपका अकबर से मेल हुआ था, पर अब पिता पुत्र एक हो गये हैं, अतएव अब वचन आदि का ध्यान त्यागकर आप अपने-अपने देश जांय।" इसके बाद वह औरंगज़ेब के पास गया, जहां बादशाह की आज्ञा से वह मारा गया (राजस्थान, जि० २, पृ० ६६८)।

मनूकी लिखता है कि तहव्वरख़ां बादशाह को मारने की नीयत से गया था (स्टोरिया डो मोगोर, जि० २, पृ० २४७), पर यह कथन कल्पनामात्र है।

(१) सरकार, हिस्ट्री ऑव औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३६३ ४।

सवेरा होने पर अकबर ने अपने आपको विचित्र परिस्थिति में पाया। विशाल वाहिनी के स्थान में उसके पास केवल ३५० सवार शेष रह गये। ऐसी हालत में उसकी बादशाह बनने की सारी अभिलाषा मिट्टी में मिल गई। शीघ्रातिशीघ्र भागने के अतिरिक्त उसके लिए जीवन-रक्षा का दूसरा उपाय नहीं रह गया। स्त्रियों को घोड़ों पर बैठा और जो कुछ धन आदि जल्दी में एकत्र किया जा सका वह ऊंटों पर लादकर अकबर राजपूतों के पीछे रवाना हुआ। बादशाह ने यह खबर पाते ही शाहज़ादे मुअज़्ज़म को अकबर को गिरफ़्तार करने के लिए मारवाड़ में भेजा। अकबर दो दिन तक निराश्रित भागता रहा, पर इस बीच राठोड़ों को औरंगज़ेब के छल का सारा हाल ज्ञात हो गया और दुर्गादास ने राजपूतों के साथ पीछे लौटकर अकबर को अपनी शरण में ले लिया[1]। शाहज़ादे की रक्षा करना राठोड़ों ने अपना प्रमुख कर्तव्य समझा। राठोड़ उसे साथ लिए कई दिन तक मारवाड़ में फिरते रहे, पर वे किसी जगह भी एक दिन तक नहीं ठहरते थे। इसपर शाहज़ादे मुअज़्ज़म ने अपना ढंग बदल दिया और चारों तरफ़ जगह-जगह अकबर की गिरफ्तारी के लिए

दुर्गादास का शाहज़ादे अकबर को शरण में लेना और उसे लेकर शम्भा के पास जाना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है—"बादशाह ने ३० हज़ार सेना के साथ शाहज़ादे आलम (? मुअज़्ज़म) को अकबर को गिरफ़्तार करने के लिए उसके पीछे भेजा। राव इन्द्रसिंह, राठोड़ रामसिंह रतनोत और नवाब कुलीचख़ां आदि इस फ़ौज के साथ थे। जालोर के पास पहुंचते ही राठोड़ों ने शाही सेना का बहुतसा सामान आदि लूट लिया। इस लापरवाही के कारण बादशाह ने इन्द्रसिंह से जोधपुर, रामसिंह से जालोर और कुलीचख़ां से उसकी जागीर ज़ब्त कर ली। यही नहीं कुलीचख़ां क़ैद में डाल दिया गया (जि० २, पृ० ४३)।" मुंशी देवीप्रसाद लिखित "औरंगज़ेबनामे" में भी अकबर के पीछे बादशाह द्वारा बहुतसा धन आदि साथ देकर शाहआलम, इन्द्रसिंह, रामसिंह आदि का भेजा जाना लिखा है (भाग २, पृ० १०४)। हम ऊपर लिख आये हैं कि इन्द्रसिंह का केवल दो मास तक ही जोधपुर पर अधिकार रहा था, ऐसी दशा में ख्यात का यह कथन कि इस समय उससे जोधपुर की जागीर ज़ब्त हुई संदिग्ध प्रतीत होता है।

सैनिक नियुक्त कर दिये। अजमेर से भागने के एक सप्ताह के बीच विद्रोही शाहज़ादा सांचोर पहुंचा, पर गुजरात में रक्खे हुए मुग़ल सैनिकों-द्वारा वहां से भगाये जाने पर उसे अपने आश्रय दाताओं-सहित मेवाड़ में जाना पड़ा[1], जहां के महाराणा जयसिंह ने उसका आदरपूर्वक स्वागत किया और उसे अपने यहां ठहरने के लिए कहा। यहां भी ठहरना ख़तरे से ख़ाली नहीं था, अतएव दुर्गादास ने उसे दक्षिण ले जाने का निश्चय किया[2]। केवल ५०० राठोड़ों के साथ वह मेवाड़ से निकलकर डूंगरपुर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है—"जालोर से नज़राना वसूलकर राठोड़ शाहज़ादे को लेकर सांचोर की तरफ़ गये, जहां शाहज़ादे (शाह) आलम (?) की सेना से उनका युद्ध हुआ। फिर गांव कोटकोलर में डेरा होने पर शाहज़ादे (शाह) आलम ने राठोड़ों से सन्धि की बात-चीत की और कहलाया कि राजा के पुत्र (अजीतसिंह) को मनसब और उसकी जागीर (जोधपुर) दी जायगी तथा अकबर को गुजरात का परगना दिया जायगा। साथ ही उसने चार हज़ार मोहरें भी ख़रचे के लिए उनके पास भेजीं, जो राठोड़ हरिसिंह मोहकमसिंहोत, बाघ मुरारसिंहोत तथा जुझारसिंह कुशलसिंहोत ज़ामिन होकर ले आये। शाहज़ादे अकबर और दुर्गादास को यह बात पसन्द न आई और ख़रचे के लिए आई हुई अशरफ़ियां भी सरदारों में बांट दी जाने के कारण वापस न की जा सकीं। फलतः यह सन्धि वार्ता अपूर्ण ही रह गई और बाघ, हरिसिंह आदि शाहज़ादे आज़म से सारी हक़ीक़त कह आये। श्रावणादि वि० सं० १७३७ (चैत्रादि १७३८) वैशाख सुदि १० (ई० स० १६८१ ता० १७ अप्रेल) को बादशाह ने इनायतख़ां को जोधपुर के सूबे में भेजा। इसपर पालणपुर और थराद से पेशकशी वसूल करते हुए दुर्गादास और अकबर राणा जयसिंह के पास चले गये (जि० २, पृ० ४३)।" मुन्शी देवीप्रसाद ने 'औरंगज़ेबनामे" में यह सारा कथन टिप्पण में दिया है (भाग २, पृ० १०६ टि० १)। उसमें बादशाह की तरफ से भेजे हुए शाहज़ादे का नाम मुअज़्ज़म दिया है, पर अन्य फ़ारसी तवारीख़ों में कहीं भी इन घटनाओं का उल्लेख नहीं मिलता, इसलिए इनकी सत्यता संदिग्ध ही है।

(२) "वीरविनोद से पाया जाता है कि इसी बीच बादशाह और महाराणा के बीच सन्धि की चर्चा चल रही थी। विद्रोही अकबर के मेवाड़ की तरफ़ जाने का समाचार सुनकर शाहज़ादे आज़म ने महाराणा को हि० स० १०९२ ता० २४ रबीउल्अव्वल (वि० स० १७३८ वैशाख वदि १० = ई० स० १६८१ ता० ३ अप्रेल) को एक निशान भेजकर लिखा कि शाहज़ादा अकबर देसूरी की तरफ़ जा रहा

के पहाड़ी प्रदेश में होता हुआ दक्षिण की ओर चला[1]। मार्ग में प्रत्येक जगह शाही सैनिकों का कड़ा पहरा था, परन्तु वीर और चतुर दुर्गादास उनसे बचता हुआ बढ़ता ही गया। डूंगरपुर से वह अहमदनगर की तरफ़ बढ़ा, परन्तु जब उसे उस ओर सफलता नहीं मिली तब वह दक्षिण पूर्व की तरफ से बांसवाड़ा और दक्षिणी मालवा में होता हुआ अकबरपुर के पास नर्मदा को पार कर बुरहानपुर के निकट पहुंचा, लेकिन उधर भी शाही अफ़सरों का कड़ा पहरा था, अतएव वह वहां से पश्चिम की तरफ़ चला और खानदेश एवं बुगलाना होता हुआ रायगढ़ पहुंचा[2]।

मेवाड़ के साथ के लम्बे युद्ध से बादशाह तंग आ गया था। उधर महाराणा जयसिंह भी सन्धि के लिए उत्सुक था। फलस्वरूप श्यामसिंह[3]

है, उसे पकड़ लेना अथवा मार डालना। उस समय अकबर के साथ राठोड़ दुर्गादास, सोनिंग आदि ससैन्य थे। महाराणा ने उनसे कहला दिया कि शाहज़ादे को इधर न लाकर दक्षिण में पहुंचा दो, क्योंकि यहां सुलह की बात-चीत चल रही है (भाग २, पृ० ६५३)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि दक्षिण की तरफ़ प्रस्थान करने से पूर्व दुर्गादास ने दस वर्ष का खर्चा देकर अकबर के ज़नाने को बाड़मेर भेज दिया और वहां उनकी रक्षा का समुचित प्रबन्ध करवा दिया (जि० २, पृ० ५५)।

(२) सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३६४-७। "वीरविनोद" में लिखा है कि राठोड़ दुर्गादास अकबर को भोमट (मेवाड़), डूंगरपुर और राजपीपला के मार्ग से दक्षिण में ले गया, जहां शंभा ने उसे आश्रय दिया (भाग २, पृ० ६५३)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि शंभा ने जब अकबर को आश्रय देने के सम्बन्ध में अपने सरदारों से सलाह की तो उनमें से अनेक ने इसके विरुद्ध राय दी, पर एक ब्राह्मण ने यही कहा कि शाहज़ादा और राठोड़ एक होकर आये हैं अतएव शरण देना ही उचित है, चाहे इसमें झगड़े की ही आशङ्का क्यों न हो। इसके बाद पौष वदि २ को रायगढ़ से १७ कोस दूर पातशाहपुर में शंभाजी का शाहज़ादे एवं दुर्गादास से मिलना हुआ (जि० २, पृ० ५५-६)।

(३) सर जदुनाथ सरकार ने श्यामसिंह को बीकानेर का बतलाया है (हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३७०) जो ठीक नहीं है क्योंकि राजप्रशस्ति महाकाव्य

अजीतसिंह का जाकर सिरोही राज्य में रहना

के मध्यस्थ हो जाने से दोनों शक्तियों में सुलह हो गई। सुलह की शर्तों में एक शर्त यह भी रक्खी गई कि महाराणा राठोड़ों को सहायता न दे[1]। अनुमान होता है कि इसी समय के आस-पास सोनिंग आदि राठोड़ अजीतसिंह को उदयपुर से हटाकर सिरोही इलाक़े में ले गये, जहां वह कुछ वर्षों तक कालंद्री गांव में गुप्त रूप से पुष्करणा ब्राह्मण जयदेव के यहां रहा[2]।

राठोड़ों का मुग़ल सेना को तंग करना

वह समय ऐसा था जब मुग़लों का मारवाड़ में पूरा आतङ्क स्थापित हो सकता था; परन्तु शाहज़ादे अकबर के मरहटों से जा मिलने से औरंगज़ेब के लिए एक नया ख़तरा पैदा हो गया, जिससे उसे अपनी अधिकांश शक्ति दक्षिण में मरहटों के विरुद्ध लगा देनी पड़ी। इसका परिणाम यह हुआ कि मारवाड़ पर मुग़लों का दबाव ढीला पड़ गया और राठोड़ों ने जहां-तहां

के २३ वे सर्ग में, जो सन्धि के समय के आस-पास समाप्त हुआ था, श्यामसिंह को राणा कर्णसिंह के द्वितीय पुत्र ग़रीबदास का बेटा लिखा है,

(राणा श्रीकर्णसिंहस्य द्वितीयस्तनयो बली ॥ ३१ ॥
गरीबदासस्तत्पुत्र श्यामसिंह इहागतः। कृत्वा मिलनवार्ता ··॥३२॥),

जो अधिक विश्वसनीय है।

(१) मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास, जि० २, पृ० ४८६-८।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में जोधपुर राज्य के ख़ालसा होने पर बादशाह के भय से खींची मुकुन्ददास का बालक अजीतसिंह को सीधे सिरोही के कालंद्री गांव में ले जाना और वहां उसे गुप्त रूप से कई वर्षों तक रखना लिखा है (जि० २, पृ० ३२), पर यह कथन असंगत है। जैसा कि ऊपर (पृ० ४८३ टि० २ में) सप्रमाण बतलाया गया है, मुकुन्ददास खींची नहीं वरन् दुर्गादास और सोनिंग आदि राठोड़ बालक अजीतसिंह को लेकर सर्वप्रथम उदयपुर महाराणा राजसिंह के पास गये थे, जहां उसको बारह गांवों सहित केलवा की जागीर मिली थी। पीछे से महाराणा जयसिंह के समय (वि० सं० १७३८ = ई० स० १६८१) में बादशाह के साथ सन्धि हो जाने के कारण ही अजीतसिंह का सिरोही इलाक़े के कालंद्री गांव में जाकर रहना संगत जान पड़ता है।

उपद्रव करना आरम्भ कर दिया[1]। जिस समय "बादशाह महाराणा से सुलह कर दक्षिण जाने की तैयारी में था, उसी समय ख़बर आई कि तहव्वरखां के मारे जाने के पीछे उसके ताल्लुक़े का बादशाही सेवक मेड़तिया मोहकमसिंह कल्याणदासोत (तोसीणे का स्वामी) घर बैठ रहा है। बादशाह ने जब उसको दंड देने का प्रयत्न किया तो वह राठोड़ सोनिंग से जा मिला। इसके बाद राठोड़ों ने बगड़ी को लूटा तथा सोजत के हाकिम सरदारख़ां से लड़ाई की, जिसपर वह भाग गया। इस लड़ाई में जोधपुर के चांपावत कान गिरधरदासोत, चांपावत हरनाथ गिरधरदासोत (मालगढ़वालों का पूर्वज), चांपावत चतुरा हरिदासोत, सोढ़ विशना बाघावत, सींधल दला गोदावत, राठोड़ बीजो चतुरावत आदि कई सरदार काम आये। मुग़लों ने यह देखकर जोधपुर के प्रबंध में कई अन्तर कर दिये। बादशाह ने वि० सं० १७३८ प्रथम आश्विन सुदि ६ (ई० स० १६८१ ता० ८ सितम्बर) को दक्षिण की तरफ़ प्रस्थान किया[2]। इसके बाद असदख़ां ने राजा भीमसिंह (महाराणा राजसिंह का छोटा पुत्र) की मारफ़त मेल की बातचीत कराई। तब राठोड़ सोनिंग आदि कई सरदार अजमेर की तरफ़ चले, पर मार्ग में पूनलोत गांव मे सोनिंग की अचानक मृत्यु हो गई[3],

(१) ख्यातों आदि से पाया जाता है कि मुग़लों का मारवाड़ पर अधिकार होने पर वहां के कुछ सरदारों ने अपनी जागीरें बचाने के लिए उनकी अधीनता स्वीकार कर ली थी, परन्तु अधिकांश सरदार महाराजा के ही पक्ष में रहे और उन्होंने कई अवसरों पर मुसलमानों से मिले हुए सरदारों पर हमले भी किये।

(२) मुन्शी देवीप्रसाद के "औरंगज़ेबनामे" (भाग २, पृ० ११७-८) से भी पाया जाता है कि इसी तिथि को बादशाह ने अजमेर से बुरहानपुर के लिए कूच किया।

(३) इस सम्बन्ध में मुन्शी देवीप्रसाद के "औरंगज़ेबनामे" में लिखा है कि ता० १८ ज़ीक़ाद हि० स० १०९२ (वि० स० १७३८ मार्गशीर्ष वदि ४ = ई० स० १६८१ ता० १९ नवम्बर) को एतक़ादख़ां ने बहुतसी फ़ौज के साथ राठोड़ों पर जो मेड़ता के पास तीन हज़ार सवार के क़रीब जमा हो गये थे, धावा किया। घमसान लड़ाई हुई, जिसमें सोनिंग, उसका भाई अजबसिंह, सांवलदास विहारीदास और गोकुलदास आदि काम आये और विजय मुसलमानों की हुई (भाग २, पृ० ११४)।

खींवकरण दुर्गादास के भाई के साथ होकर लूटने के लिए चले, पर उनके पीछे शेर मोहम्मद जा पहुंचा, जिसके साथ युद्धकर कई राठोड़ सरदार काम आये। राठोड़ मुकन्ददास, सादूल तथा रत्नसिंह मालदेवोत जोधा झगड़ा आरंभ होने के समय से ही भाद्राजूण में रहते थे। वि० सं० १७४० (ई० स० १६८३) में उनके ऊपर जोधपुर से इनायतखां ने अपने पुत्र को सेना देकर भेजा। मुकन्ददास ने उससे लड़कर ऊंट आदि छीन लिये। दूसरी बार फिर लड़ाई होने पर मुसलमान अफ़सरों ने पेशकशी देना ठहराकर शान्ति की। उसी वर्ष मेड़ते के पास मोहकमसिंह मेड़तिया ने, जैतारण के पास ऊदावत जगराम ने और सारण की तरफ़ उदयसिंह ने झगड़े किये। इसपर बादशाही अफ़सरों ने मोहकमसिंह को तोसीण और जोधा उदयभाण मुकन्ददासोत को भाद्राजूण की चौरासी में बैठाया (अधिकार दिया)। इसी बीच खींवकरण आसकरणोत, तेजकरण दुर्गादासोत आदि ने साथ एकत्र कर फलोधी की तरफ लूट-मार की और चांपावत सावंतसिंह तथा भाटी राम वग़ैरह ने गांव बंवाल आदि को लूटा। मेड़तिया सादूल मुसलमानों से मिल गया था, जिससे ऊदावत जगराम ने अपने साथियों सहित चढ़कर उसे मार डाला। उधर अन्य सरदारों ने जोधपुर और सोजत के बीच बहुत से गांवों को लूटा। श्रावणादि वि० सं० १७४० (चैत्रादि १७४१ = ई० स० १६८४) के वैशाख मास में सोजत के थाने पर बहलोलखां से लड़ाई होने पर राठोड़ सावंतसिंह जोगीदास विट्ठलदासोत, राठोड़ हिम्मतसिंह शक्तसिंह सुंदरदासोत मेड़तिया, राठोड़ बिहारीदास मोहणदासोत ऊदावत आदि मारे गये[1]। इस प्रकार राठोड़ जगह-जगह दंगा फ़साद करते रहे, पर मुसलमानों से उनका कोई प्रबन्ध न हो सका, क्योंकि वे (राठोड़) इधर-उधर लूटकर बहुधा पहाड़ियों में छिप जाते थे।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ४६-४८।

टॉड ने भी करणीदान के ग्रन्थ "सूरजप्रकाश" के आधार पर लगभग ऐसा ही वर्णन अपने ग्रन्थ "राजस्थान" में दिया है। उक्त पुस्तक से पाया जाता है कि राठोड़ों

उधर दक्षिण में शाहज़ादे अकबर के साथ रहकर दुर्गादास ने पीछा करनेवाले शाही अफ़सरों के साथ लड़कर बड़ी वीरता दिखलाई[1]। वि० सं० १७४३ (ई० स० १६८६) के श्रावण मास में उसके पास मारवाड़ से खींची मुकन्ददास का पत्र पहुंचा, जिसमें लिखा था कि राठोड़ उदयसिंह लखधीरोत आदि सरदार बालक महाराजा के दर्शन करने के लिए उत्सुक हो रहे हैं, आप आवें तो उसका प्रबन्ध किया जाय। अब अधिक समय तक उसे छिपाकर रखना कठिन है। यह पत्र पाकर दुर्गादास ने शाहज़ादे से निवेदन किया कि जो कुछ मुझ से बना मैंने अब तक आपकी सेवा की, अब आप मारवाड़ चले चलें। मारवाड़ जाने में शाहज़ादे को बादशाह की तरफ़ से खटका था, जिससे उसने ऐसा करना स्वीकार

दुर्गादास का दक्षिण से लौटना

की इन लड़ाइयों में जैसलमेर के भाटियों ने भी काफ़ी मदद पहुंचाई (राजस्थान; जि० २, पृ० १००१-६)। सरकार ने केवल इतना लिखा है कि दक्षिण में नई लड़ाई छिड़ने अथवा कहीं पराजय होने पर जब मारवाड़ में रक्खी हुई मुग़ल सेना उधर भेजी जाती तो देशभक्त राजपूत अपने-अपने छिपने के स्थानों से निकलकर बची हुई कमज़ोर मुग़ल सेना को बड़ा नुक़सान पहुंचाते। दक्षिण से अवकाश मिलने पर पुन. राजस्थान में सेना भेजी गई और मुग़लों ने अपने खोये हुए ठिकानों पर फिर अधिकार कर लिया (हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३७१-२)।

इससे इतना तो स्पष्ट है कि बादशाह का ध्यान दक्षिण की तरफ़ आकर्षित होते ही, मारवाड़ में मुग़लों की शक्ति कम हो गई और वहा के राठोड़ बलवान हो गये थे।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि औरंगज़ेब ने दक्षिण में पहुंच कर मुर्नवरख़ां (?) और राव इन्द्रसिंह राममिंहोत की अध्यक्षता में पाच हज़ार सवार अकबर पर भेजे। राठोड़ों और मरहटों ने वि० सं० १७३९ में कई जगह उनसे लड़ाई की और कई सौ आदमियों को मारा। संवत् १७४० में मीर ख़लील और उसकी मां को, जो अकबर की दाई थी, अकबर के पास सुलह के लिए भेजा गया। अकबर को बादशाह का भरोसा नहीं था इसलिये उसने कहलाया कि यदि गुजरात का सूबा और मेरा माल असबाब मुझे दिया जाय तो मैं अहमदाबाद चला जाऊ, पर बादशाह ने यह बात मंज़ूर नहीं की (जि० १, पृ० ८०)।

न किया और दुर्गादास को अपने देश जाने की अनुमति दी। इस अवसर पर उसने उस (दुर्गादास) से मारवाड़ में छोड़े हुए अपने परिवार की देख-रेख करने के लिए भी कहा[1]। तदनन्तर ई० स० १६८७ के फ़रवरी (वि० सं० १७४३ फाल्गुन) मास में जहाज़ पर सवार होकर शाहज़ादा फ़ारस के लिये रवाना हो गया[2]। इस प्रकार उसको सकुशल विदाकर दुर्गादास मारवाड़ लौटा[3]।

राठोड़ सरदारों के समक्ष बालक महाराजा का प्रकट किया जाना

जैसा कि ऊपर लिखा गया है वि० सं० १७३८ (ई० स० १६८१) के आस-पास अजीतसिंह के अनुगामी उसे मेवाड़ से हटाकर सिरोही इलाके के कालिंद्री गांव में ले गये थे। लम्बी अवधि तक महाराजा को न देख सकने के कारण कितने ही राठोड़ सरदार उसे देखने के लिए उत्सुक हो रहे थे। मालपुरा की ओर लूटमार करके राठोड़ उदयसिंह, मुकुन्ददास, तेजसिंह (चांपावत), ऊदावत जगराम उदयभाण आदि जब गांव मोकलसर में एकत्र हुए तो उन्होंने यह सोचा कि बालक महाराजा की अवस्था आठ बरस की हो गई है, अब उसे प्रकट करना चाहिये। यह निश्चय होने पर उदयसिंह सिरोही (इलाके) जाकर मुकन्ददास खींची से मिला और उसने उससे कहा कि तमाम राठोड़ एकत्रित हुए हैं,

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ५२।

(२) मार्ग में नौसेना की ख़राबी के कारण अकबर का जहाज़ मस्कत के बन्दरगाह में जा पहुंचा। वहां अकबर कई साल तक पड़ा रहा। फिर उसने ईरान के बादशाह सुलेमानशाह से पत्र व्यवहार किया, जिसने उसे प्रतिष्ठा के साथ अपने यहां बुला लिया।

(३) सर जदुनाथ सरकार, शॉर्ट हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब पृ० ३०७। मिर्ज़ा मुहम्मद हसन (अलीमुहम्मदख़ां बहादुर) मिरात-ई-अहमदी, जि० १, पृ० ३१७-८।

जोधपुर राज्य की ख्यात में दुर्गादास के मारवाड़ की तरफ़ प्रस्थान करने के कई रोज़ बाद शाहज़ादे का ईरान जाना लिखा है (जि० २, पृ० ५२), पर यह ठीक नहीं है।

महाराजा को प्रकट करो। पहले तो मुकुन्ददास राज़ी न हुआ, परन्तु बाद में यह सोचकर कि राठोड़ सरदारों को नाराज़ करना ठीक नहीं, उसने महाराजा से जाकर निवेदन किया। श्रावणादि वि० सं० १७४३ (चैत्रादि १७४४) वैशाख वदि ५ (ई० स० १६८७ ता० २३ मार्च) को[1] सिरोही के पालड़ी गांव में अजीतसिंह ने प्रकट होकर नागणेची की पूजा की। अनन्तर दरबार हुआ, जिसमें उपस्थित सरदारों ने नज़रें आदि महाराजा के सम्मुख पेश कीं। इस अवसर पर दुर्जनसिंह हाड़ा भी उपस्थित था[2]।

अजीतसिंह का कई सरदारों के यहां जाना

तदनन्तर बालक महाराजा को लेकर राठोड़ सरदार आऊवा गये जहां के सरदार ने घोड़े आदि देकर उसका सम्मान किया। फिर रायपुर, बीलाड़ा और बलूंदा के सरदारों की नज़रें स्वीकार करता हुआ वह आसोप गया, जहां कूंपावतों के मुखिया ने उसका स्वागत किया। वहां से वह भाटियों की जागीर लवेरा, मेड़तियों की रीयां और करमसोतों की खींवसर में गया। क्रमशः उसका साथ बढ़ता गया। कालू पहुंचने पर पाबू राव धांधल भी अपने सैन्य-सहित उसका अनुगामी हो गया[3]।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इतना उल्लेख नहीं है। उससे पाया जाता है कि हाड़ा दुर्जनसिंह ने महाराजा के प्रकट होने के पीछे सोजत की तरफ देश का बिगाड़ किया। इनायतखां ने जब यह सुना तो उसने सोजत जाकर बात-चीत की और सिवाणा देने के साथ ही अन्य स्थानों से चौथ[4]

---

(१) बांकीदास ने भी यही तिथि दी है (ऐतिहासिक बातें, संख्या १६८७)। टॉड ने चैत्र सुदि १५ दी है (राजस्थान, जि० २, पृ० १००७), जो ठीक नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ५२-३।

(३) टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० १००८।

(४) सर जदुनाथ सरकार-कृत "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" में दुर्गादास के दक्षिण से लौटने पर मुसलमानों का राठोड़ों की लड़ाइयों से तंग आकर, उन्हें चौथ देना लिखा है (जि० ५, पृ० २७२)।

उगाहने का अधिकार महाराजा को दिया। तब महाराजा सिवाणा में दाख़िल हो गया[1]।

राठोड़ दुर्गादास दक्षिण से रवाना होकर रतलाम पहुंचा, जहां से उसने जोधा अखैसिंह रत्नसिंहोत को भी साथ ले लिया। बादशाही प्रदेश में लूट-मार करते हुए आगे बढ़-कर उन्होंने मालपुरे[2] को लूटा। वहां उस समय सैयद कुतुब था, जिसने सामने आकर लड़ाई की। उसमें राव अनूपसिंह ईश्वरसिंहोत मारा गया और कितने ही राठोड़ घायल हुए। वि० सं० १७४४ श्रावण सुदि १० (ई० स० १६८७ ता० ८ अगस्त) को दुर्गादास महेवा के गांव भींवरलाई में अपने ठिकाने में पहुंचा। फिर बाहड़मेर में शाहज़ादे सुलतान से मिलने के अनन्तर उसने महाराजा अजीतसिंह के पास इस आशय की अर्ज़ी भिजवाई कि मैंने दक्षिण में ६ वर्ष तक मार-काट की और वहां से लौटते हुए मार्ग में रतलाम से जोधा अखैसिंह रत्नसिंहोत के साथ मालपुरा और केकड़ी वग़ैरह को लूटकर पेशकशी ली। अब मैं महाराजा से भेंट करने का इच्छुक हूं। उन्हीं दिनों महाराजा तलवाड़ा गांव में मल्लीनाथ का दर्शन करने के लिए गया। वहां से कार्तिक वदि ११ (ता० २१ अक्टोबर) को वह भींवरलाई पहुंचा, जहां दुर्गादास अपने साथियों-सहित उसकी सेवा में उपस्थित हुआ[3]। उस (दुर्गादास) ने महाराजा से निवेदन किया कि आप कुछ दिनों पीपलोद के पहाड़ों में ही रहें, मैं तब तक देश में लूट-मार मचाता हूं[4]।

दुर्गादास का अजीतसिंह की सेवा में उपस्थित होना

---

(१) जिल्द २, पृ० ५३।

(२) सर जदुनाथ सरकार-कृत "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" में राठोड़ों का मालपुरे के अतिरिक्त पुर-मांडल, अजमेर तथा मेवात पर आक्रमण करना लिखा है (जि० ५, पृ० २७२, ई० स० १९२४ का संस्करण)।

(३) कर्नल टॉड दुर्गादास का वि० सं० १७४४ भाद्रपद (वदि) १० को पोकरण में अजीतसिंह के शामिल होना लिखता है (राजस्थान जि० २, पृ० १००८)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० २, पृ० ५३-४।

दुर्गादास के मारवाड़ में पहुंच जाने से राठोड़ों का उत्साह बहुत बढ़ गया और वे जगह-जगह मारवाड़ में रहती हुई मुसलमान सेना को तंग करने लगे। धीरे धीरे उनका मुसलमानों पर पूरा आतंक स्थापित हो गया। जब महाराजा अजीतसिंह के प्रकट होने और मुसलमान अफसरों के राठोड़ों को चौथ देने की खबर बादशाह को मिली तो वह बड़ा नाराज़ हुआ और उसने जोधपुर के फौजदार इनायतखां को महाराजा को पकड़ने के लिए लिखा, पर इसी बीच उस(इनायतखां)का देहांत हो गया[1]।

दुर्गादास के मारवाड़ में पहुंचने के बाद वहां की स्थिति

इनायतखां के मरने की खबर बादशाह के पास पहुंचने पर उसने मारवाड़ का प्रबंध अहमदाबाद की सूबेदारी में शामिल कर दिया। इस अवसर पर कारतलबखां को, जो अहमदाबाद का सूबेदार था, शुजातखां का खिताब, ५००० ज़ात ४००० सवार का मनसब, नक़ारा, निशान और एक करोड़ दाम दिये गये। उस समय जोधपुर का प्रबंध करने के लिए उससे योग्य व्यक्ति दूसरा न था। ऐसा कहते हैं कि उस समय राठोड़ों के भय से कोई मुसलमान अफसर जोधपुर की फौज़दारी स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं होता था। शुजातखां ने एक लाख रुपयों की मांग की, जो उसे शाही ख़ज़ाने से दिये गये। अनन्तर उसने जोधपुर जाकर उधर का प्रबंध इस प्रकार किया कि वहां के कुछ सरदारों की जागीरों के, जो उनके अधिकार में पुश्त दर पुश्त से चली आती थीं, उसने पट्टे कर दिये और कुछ सरदारों के मनसबों के एवज़ उनकी तनख्वाहें नियत कर दीं। फिर वह क़ासिमबेग मुहम्मद अमीनखानी को वहां का नायब नियत कर अहमदाबाद लौट गया। राठोड़ों के उपद्रव से पालनपुर और सांचोर के फ़ौजदार कमालखां जालोरी को सख्त ताकीद की गई कि वह पालनपुर से जालोर जाकर उधर का ठीक प्रवन्ध रक्खे और

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ४४। "मिरात-इ-अहमदी" में हि० स० १०६६ (वि० सं० १७४४ = ई० स० १६८७) में इनायतख़ां की मृत्यु लिखी है।

क़ासिमबेग को यह हुक्म हुआ कि तैयार फ़ौज के साथ मेड़ता जावे। साथ ही उसे यह भी आज्ञा दी गई कि किराये के जानवरों और गाड़ीवालों से ऐसे मुचलके लिये जावें कि वे व्यापार का माल उदयपुर के मार्ग से अहमदाबाद पहुंचावे[1]।

उन्हीं दिनों राठोड़ों ने एकत्र होकर जोधपुर के आस-पास हमला किया। पीछे से मुसलमान उनपर चढ़े। दोनों दलों में लड़ाई होने पर भंडारी मयाचंद मारा गया और सिवाणा पुनः मुसलमानों के हाथ में चला गया। इस घटना के बाद ही अजीतसिंह छप्पन (मेवाड़) के पहाड़ों में जा रहा[2]। वहां महाराणा जयसिंह ने उसे आश्रय दिया।

अजीतसिंह का छप्पन के पहाड़ों में जाना

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि राठोड़ों के आतंक के कारण जोधपुर में रक्खे हुए मुसलमान अफ़सरों ने उन्हें चौथ देना ठहरा लिया था, पर उसकी वसूली में मुसलमानों और राठोड़ों में जगह-जगह मुठभेड़ हो जाती थी। श्रावणादि वि० सं० १७४४ (चैत्रादि १७४५) वैशाख वदि ६ (ई० स० १६८८ ता० ११ अप्रेल) को राठोड़ मदनसिंह मनरूपोत आदि का रामसर में मुसलमानों से झगड़ा हुआ जिसमें वह तथा उसके साथ के कई व्यक्ति घायल हुए। उसी वर्ष फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १६८९ ता० १७ फ़रवरी) को राठोड़ तेजकरण दुर्गादासोत और राठोड़ राजसिंह अखैराजोत जालोर से पेशकशी लेने के लिए गये। गांव सेणा से कूच करते ही उनका कमालखां की फ़ौज से सामना हुआ जिसमें दोनों-

जगह-जगह मुसलमानों और राठोड़ों में मुठभेड़

(१) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मीरात-इ-अहमदी, जि० १, पृ० ३२८-२८।

जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० ५४) तथा सर जदुनाथ सरकार कृत "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" (जि० ५, पृ० २०२) में भी इनायतखां की मृत्यु होने पर अहमदाबाद के सूबेदार कारतलबखां (शुजाअतखां) का ही जोधपुर का भी फ़ौजदार बनाया जाना लिखा है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ५४।

ने बीस हज़ार राठोड़ों के साथ अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया और मुकन्ददास चांपावत को यह जानने के लिए आगे रवाना कर दिया कि कहीं उक्त बात में छल तो नहीं है। इससे ठीक समय पर छल का पता चल गया और इसकी सूचना अजीतसिंह को मिल गई, पर वह पीछे न लौटा। उसके नगर में पहुंचने पर बाध्य होकर सफ़ीख़ां को उसके सम्मुख उपस्थित होना और रत्न तथा घोड़े आदि भेंट में देने पड़े[1]।

अजमेर के सूबेदार की दुर्गादास पर चढ़ाई

श्रावणादि वि० सं० १७४८ (चैत्रादि १७४९) आषाढ सुदि १४ (ई० स० १६९२ ता० १७ जून) को बागल परगने (मेवाड़ राज्य) के भड़सिया गांव में रहते समय राठोड़ दुर्गादास पर अजमेर के सूबेदार ने चढ़ाई की, जिसमें राठोड़ों की तरफ़ के मनोहरपुर का स्वामी गुमानीचंद देवीचंद [illegible] भाटी दौलतख़ां रघुनाथोत आदि काम आये और कितने ही [illegible] हुए।

अलाकुली का जोधपुर के गांवों में बिगाड़ करना

वि० सं० १७४९ (ई० स० १६९२) में जोधपुर के [illegible] के बेटे अलाकुली ने सुजानसिंह के साथ [illegible] सेतरावा आदि गांवों का बिगाड़ किया [illegible] वह जोधपुर लौट गया[2]।

[illegible]

शाहज़ादे अकबर ने वि० सं० १७३८ (ई० स० १६८१) में दक्षिण की तरफ़ जाने से पूर्व अपने पुत्र [illegible] बेगम को मारवाड़ में ही छोड़ [illegible] ने उनकी देख रेख और शिक्षा आदि का [illegible] प्रबंध कर दिया था। वि० सं० [illegible] ई० स० [illegible]

(१) [illegible]

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; [illegible]

(३) वही; [illegible]

१६६२) में सफ़ीखां ने राठोड़ों से मेल जोल का व्यवहार स्थापित कर दुर्गादास से अकबर की पुत्री को बादशाह को सौंप देने के विषय में बात-चीत चलाई; परन्तु इसका कोई परिणाम न निकला, क्योंकि बादशाह (औरंगज़ेब) उस समय अजीतसिंह का हक़ आदि मानने के लिए तैयार न था[1]।

मुग़लों के साथ राठोड़ों की पुनः लड़ाइयां

उपर्युक्त घटना का फल यह हुआ कि राठोड़ों और मुग़लों के साथ की लड़ाई, जो कुछ शिथिल हो गई थी, फिर बढ़ गई। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इसके एक साल पूर्व अजीतसिंह और दुर्गादास के बीच कुछ मनोमालिन्य[2] हो गया था। मुकन्ददास और तेजसिंह ने जाकर दुर्गादास को समझाया, जिससे वह महाराजा के शामिल हो गया। अनन्तर उन्होंने जोधपुर, जालोर, सिवकोटड़ा और पोहकरण आदि स्थानों से पेशकशी वसूल की। जोधपुर से क़ासिमबेग और राठोड़ भगवानदास ने उनका पीछा किया, पर वे उनका कुछ बिगाड़ न कर सके और उन्हें वापस लौट जाना पड़ा[3]।

---

(१) सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २८०।

टॉड के कथनानुसार यह बात-चीत नारायणदास कुलम्बी की मारफत हुई थी (राजस्थान, जि० २, पृ० १००९-१०)। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी नारायणदास कुलम्बी द्वारा यह बात-चीत होना लिखा है, पर उसमें उक्त घटना का समय वि० सं० १७५१ दिया है (जि० २, पृ० ६१), जो ठीक नहीं है।

(२) मनोमालिन्य का कारण ख्यात में इस प्रकार दिया है—

दुर्गादास के गांव भीमरलाई में रहते समय उसके पास अजीतसिंह ने जाकर उसका सम्मान आदि किया और कहा कि तुम्हारी राय के विपरीत अजमेर जाने के कारण मैंने सिवाणा भी गवा दिया। दुर्गादास ने उत्तर दिया कि अब आपका विश्वास दो महीने में होगा, उस समय मैं उपस्थित हो जाऊंगा। इसपर महाराजा अप्रसन्न होकर इंडल चला गया (जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ६०-१)।

(३) जि० २, पृ० ६१।

ई० स० १६९३ (वि० सं० १७५०) में दुर्गादास के परामर्शानुसार अजीतसिंह ने भीलाड़ा (?) नामक स्थान में रहना स्थिर किया, जहां रहते समय उसने कई बखेड़े किये, लेकिन इसी बीच शुजातखां के मारवाड़ में पहुंच जाने: जोधपुर, जालोर और सिवाणे के फ़ौजदारों के एकत्र होकर आक्रमण करने एवं आसा बख़्श के मुगल सेना-द्वारा परास्त किये जाने पर अजीतसिंह को भागकर पुनः पहाड़ों में आश्रय लेना पड़ा[1]।

अजीतसिंह का पुनः पहाड़ों में आश्रय लेना

उसी वर्ष एक सांड की हत्या किये जाने के कारण मोकलसर में मुग़लों और राठोड़ों में मुठभेड़ हो गई, जिसमें चांपावत मुकुन्ददास ने चांक के हाकिम को उसके समस्त अनुयायियों-सहित क़ैद कर लिया[2]। टॉड लिखता है—"वि० सं० १७५१ (ई० स० १६९४) में राठोड़ों और मुग़लों के निरंतर संघर्ष का परिणाम यह हुआ कि मारवाड़ में मुग़ल शक्ति बहुत क्षीण हो गई। स्थान-स्थान पर चौथ देने के साथ ही उनमें से बहुतों ने राठोड़ों के यहां नौकरी तक कर ली[3]।"

मारवाड़ में मुग़ल शक्ति का कम होना

उसी वर्ष क़ासिमखां और लश्करखां ने अजीतसिंह पर, जो उन दिनों विजयपुर (?बीजापुर, गोड़वाड़) में था, चढ़ाई की। इसपर दुर्गादास के पुत्र ने उनका सामना कर उन्हें हराया[4]।

शाही मुलाज़िमों का अजीतसिंह पर आक्रमण

उसी वर्ष शाहज़ादे अकबर के पुत्र और पुत्री के सौंपे जाने के सम्बन्ध में पुनः बादशाह से बात-चीत शुरू हुई। इस बार यह कार्य शुजातखां को

(१) सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २८०। टॉड राजस्थान, जि० २, पृ० १०१०। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख नहीं है।

(२) टॉड राजस्थान, जि० २, पृ० १०१०।

(३) वही, जि० २, पृ० १०१०।

(४) वही जि० २, पृ० १०१०।

अकबर के परिवार के लिए राठोड़ों से पुनः बात-चीत होना

सौंपा गया[1]। टॉड लिखता है—"अपनी पौत्री के लिए बादशाह की चिन्ता बढ़ती जाती थी, क्योंकि वह धीरे-धीरे युवावस्था को प्राप्त होने लगी थी। उस(बादशाह)ने जोधपुर के हाकिम शुजातखां को लिखा कि जिस प्रकार भी हो सके मेरे सम्मान की रक्षा करो[2]।"

वि० सं० १७५३ (ई० स० १६९६) के प्रारम्भ में उदयपुर के महाराणा जयसिंह और उसके पुत्र अमरसिंह के बीच दुबारा विरोध उत्पन्न हुआ[3]। उन दिनों महाराजा अजीतसिंह कोटकोलर-(जसवन्तपुरा परगना) की तरफ़ था। वहां के शाही सेवक लश्करखां को परास्तकर वह उदयपुर गया[4], जहां महाराणाने अपने भाई गजसिंह की पुत्री की शादी उसके साथ आषाढ वदि ८[5] (ता० १२ जून) को की और ६ हाथी, १५० घोड़े आदि बहुतसा सामान उसे दहेज़ में दिया[6]। इसके कुछ ही दिनों बाद उसका देवलिया-प्रतापगढ़ में विवाह हुआ[7]। उदयपुर के राजघराने में अजीतसिंह

महाराजा के उदयपुर तथा देवलिया में विवाह

---

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८०।

(२) टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० १०१०।

(३) महाराणा और उसके पुत्र में पहले विरोध वि० सं० १७४८ में हुआ था और दोनों ओर से युद्ध की तैयारी भी हो गई थी। उस अवसर पर राठोड़ों की सेना-सहित जाकर दुर्गादास भी महाराणा के शरीक हुआ था (वीरविनोद, भाग २, पृ० ६७३-७।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ६१। उससे पाया जाता है कि इस लड़ाई में मुसलमानी सेना के ८० आदमी काम आये और राठोड़ों की तरफ़ के राठोड़ सुन्दरदास अमरावत कूंपावत के गोली लगी।

(५) जोधपुर राज्य की ख्यात में आषाढ वदि ७ दिया है।

(६) वीरविनोद, भाग २; पृ० ६८२।

(७) टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० १०१०। बांकीदास ने देवलिया की कुंवरी का नाम कल्याणकुंवरी दिया है, जो पृथ्वीसिंह (कुंवर) की पुत्री और रावत प्रताप-

का विवाह हो जाने से बादशाह का उसके जाली होने का शक जाता रहा और उसी समय से उस(अजीतसिंह)के भाग्य ने भी पल्टा खाया।

अकबर के पुत्र और पुत्री का बादशाह को सौंपा जाना

अकबर के पुत्र और पुत्री को राठोड़ों से प्राप्त करने का कार्य दूसरी बार शुजातखां को सौंपा गया था। उसने अपनी तरफ़ से ईश्वरदास[1] को, जो पाटण का नागर ब्राह्मण था और जोधपुर के अमीन का कार्य करने के साथ ही राठोड़ों से मेल-जोल रखता था, राठोड़ों से इस विषय में बात-चीत करने के लिए नियुक्त किया। अकबर द्वारा उसके कम-उम्र पुत्र बुलन्द-अख़्तर तथा पुत्री सफ़ीयतुन्निसा के मारवाड़ में छोड़े जाने पर दुर्गादास ने उन्हें गिरधर जोशी के संरक्षण में एक सुरक्षित स्थान में रखवा दिया था। उनकी शारीरिक और मानसिक देख-रेख के साथ-साथ सफ़ीयतुन्निसा को इस्लाम-धर्म की शिक्षा भी दी जाती थी। ईश्वरदास के कई बार दुर्गादास के पास इस सम्बन्ध में जाने पर दुर्गादास ने भी, जो लड़ाई झगड़े से ऊब गया था, अजीतसिंह के तथा अपने हितों की रक्षा की ग़रज़ से, बात-चीत करने में उत्सुकता प्रकट की। उसने इस आशय का एक पत्र ईश्वरदास के पास भेजा कि यदि शुजातखां बादशाह के पास से मेरी (दुर्गादास की) अर्ज़ी का जवाब आने तक मेरे घर आदि की रक्षा करने और मेरे आने-जाने की सुविधा का वचन दे तो मैं सफ़ीयतुन्निसा बेगम को शाही दरबार में भेज दूंगा। बादशाह ने तुरत उसकी शर्त को स्वीकार कर लिया। फिर उसके पास से उत्तर प्राप्त होने पर शुजातखां के आदेशानुसार ईश्वरदास ने दुर्गादास के पास जाकर इसकी सूचना दी और [illegible] उसे

सिंह की पौत्री थी (ऐतिहासिक बातें संख्या ११००)। यह विवाह स्वयं [illegible] की विद्यमानता में हुआ था।

(१) ईश्वरदास को इतिहास से बड़ा प्रेम था। उसने बादशाह औरंगज़ेब के समय का बहुत सा हाल अपनी फ़ारसी पुस्तक "फ़ुतूहात-इ-आलमगीरी" में लिखा है। [illegible] के इतिहास के लिए यह ग्रन्थ [illegible] है और [illegible] के लिये हुए "फ़ुतूहात-इ-आलमगीरी" से लिए हैं।

कर दी। बादशाह ने अजीतसिंह को मनसब[1] प्रदान कर जालोर[2], सांचोर और सिवाणा[3] की जागीर दी, जहां का वह फ़ौजदार भी नियत किया गया। इसके एवज़ में शाहज़ादा बुलन्दअख़्तर बादशाह को सौंप दिया गया[4]।

ईश्वरदास इस संबंध में लिखता है—

"शाही दरबार से प्रस्थान कर मैं कई बार दुर्गादास के पास गया और शुजाअतख़ां की तरफ़ से विश्वासघात न होने का मैंने उसे आश्वासन दिया। शाही परवाने के मिलने और मिली हुई जागीर पर अधिकार करने के अनन्तर वह शाहज़ादे को साथ ले मेरे साथ पहले अहमदाबाद और फिर सूरत तक आया, जहां कतिपय शाही अफ़सर शाहज़ादे की अगवानी करने

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में महाराजा के साथ साथ राठोड़ दुर्गादास, राठोड़ खींवकरण आसकर्णोत, राठोड़ तेजकरण दुर्गादासोत, राठोड़ मेहकरण दुर्गादासोत, भाटी दूदा आदि तेरह सरदारों को मनसब मिलना लिखा है (जि० २, पृ० ६२-३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है—"बादशाह ने जहानाबाद से दीवान असदख़ां की मुहर-युक्त एक परवाना जोधपुर के सूबेदार शुजाअतख़ां के पास भिजवाया कि डेढ़ हज़ार ज़ात एवं पांचसौ सवारों का मनसब तथा जालोर की जागीर अजीतसिंह को दी जाय। शुजाअतख़ां ने इस आज्ञा का पालन किया और श्रावणादि वि० सं० १७५४ (चैत्रादि १७५५ = ई० स० १६९८) ज्येष्ठ सुदि १२ को अजीत-सिंह ने जालोर के गढ़ में प्रवेश किया (जि० २, पृ० ६४)।"

(३) टॉड के अनुसार वि० सं० १७५७ (ई० स० १७००) के पौष मास में अजीतसिंह का जोधपुर पर अधिकार हो गया, जहां पहुंचकर उसने गढ़ के चारों फाटकों पर एक एक भैंसे का बलिदान किया। उस समय शुजाअतख़ां मर गया था, अतएव शाहज़ादे ने उसका स्वागत किया। पीछे ई० स० १७०१ में वहां फिर बहादुर-शाह ने क़ब्ज़ा कर लिया (राजस्थान, जि० २, पृ० १०११), जो ठीक नहीं है, क्योंकि ई० स० १७०१ में तो वहां का फ़ौजदार शाहज़ादा आज़म था; देखो सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २८४ का टिप्पण)।

(४) सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २८१-४। "मिराते अ-हमदी" में भी इस घटना का वर्णन क़रीब क़रीब ऐसा ही और कहीं-कहीं अधिक विस्तार से दिया है (जि० १, पृ० ३३१-२)।

और उसे शाही शिष्टाचार की शिक्षा देने के लिए उपस्थित थे; लेकिन शाहज़ादा मौन ही बना रहा और आये हुए शाही अफ़सर उसे कुछ भी सिखाने में समर्थ न हुए[1]।"

दुर्गादास को मनसब मिलना

शाहज़ादे बुलंदअख़्तर को सौंपने के बाद, जब भीमा (नदी) के तट पर इस्लामपुरी के खेमे में दुर्गादास शाही दरबार के प्रवेशद्वार पर पहुंचा तो उसे निशस्त्र भीतर जाने की आज्ञा हुई। दुर्गादास ने निर्विरोध अपनी तलवार छोड़ दी। यह सुनकर बादशाह उससे बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसे सशस्त्र भीतर आने की आज्ञा प्रदान की। शाही खेमे में प्रवेश करते ही अर्थ-मंत्री रूहुल्लाखां ने आगे बढ़कर उस (दुर्गादास) के दोनों हाथ एक रूमाल से बांध दिये और तब उसे लेकर वह बादशाह के समक्ष गया[2]। बादशाह ने उसके हाथ खोले जाने की आज्ञा देकर उसे तीन हज़ार सवार का मनसब, एक रत्न-जटित कटार, एक सुवर्ण पदक, एक मोतियों की माला और शाही खज़ाने से एक लाख रुपये दिलवाये[3]।

अजीतसिंह का बादशाह के पास अर्ज़ी भेजना

ई० स० १७०० (वि० सं० १७५७) के अक्टोबर मास में बादशाह के पास अजीतसिंह की इस आशय की अर्ज़ी पहुंची कि यदि सेना रखने के लिए मुझे जागीर अथवा नक़द धन दिया जाय तो मैं चार हज़ार सवारों के साथ शाही दरबार में उपस्थित हो जाऊं। बादशाह ने इसपर उसे अजमेर के खज़ाने से धन दिये जाने की आज्ञा दी और साथ ही यह वादा

---

(१) सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २८४-५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी दुर्गादास का हथियार छोड़कर हाथ बांधे बादशाह की सेवा में उपस्थित होना और सौ मोहरें तथा एक हज़ार रुपये भेंट करना लिखा है (जि० २, पृ० ६३)।

(३) सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २८५-६।

"मिरात-इ-अहमदी" से पाया जाता है कि इस अवसर पर दुर्गादास को धन्धुका तथा गुजरात के कई परगने जागीर में मिले (जि० १, पृ० ३३८)।

भी किया कि उसके दरबार में उपस्थित होते ही उसे जागीर भी दे दी जायगी[1]।

शाही सेवा में उपस्थित हो जाने के बाद बादशाह ने दुर्गादास को पाटण (अणहिलवाड़ा, बड़ोदा राज्य) का फ़ौजदार नियतकर उधर भेज दिया। बात यह थी कि उसे दुर्गादास की तरफ़ से खटका बना हुआ था, जिससे उसने उसे मारवाड़ से दूर रखना ही ठीक समझा। ई० स० १६९८ से १७०१ (वि० सं० १७५५ से १७५८) तक तो कुछ शान्ति रही पर इसके बाद ही पुन राठोड़ों और मुग़लों के बीच झगड़े का सूत्रपात हो गया। औरंगज़ेब के साथ मैत्री-संबंध स्थापित कर लेने पर भी दुर्गादास एवं अजीतसिंह दोनों के मन में उसकी तरफ़ से सन्देह बना ही रहा। ई० स० १७०१ (वि० सं० १७५८) में बादशाह-द्वारा कई बार बुलाये जाने पर भी अजीतसिंह उसके पास न गया और टाल-टूल करता रहा। ई० स० १७०१ ता० ६ जुलाई (वि० सं० १७५८ श्रावण वदि १) को मारवाड़ के शासक शुजाअतख़ां का देहान्त हो गया[2]। उसके स्थान में शाहज़ादे मुहम्मद आज़मशाह की नियुक्ति होकर वह वहां भेजा गया। वह स्वभाव का घमंडी था। बादशाह ने उसको आज्ञा दी कि यदि हो सके तो वह दुर्गादास को शाही सेवा में भेजने का प्रयत्न करे अन्यथा उसे वहीं मरवा डाले, जिससे उसके अजीतसिंह तथा अन्य राठोड़ों को उकसाने का भय ही जाता रहे। इस आज्ञा के अनुसार शाहज़ादे ने दुर्गादास को लिखा कि तुम अहमदाबाद में मेरे पास हाज़िर हो। उस (शाहज़ादे) के एक अफ़सर सफ़दरख़ां बाबी[3] ने शाहज़ादे के रूबरू दुर्गादास के उपस्थित

दुर्गादास के मारने का प्रयत्न

(१) सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८६।

(२) कैम्पबेल-कृत 'गैज़ेटियर ऑव् दि बॉम्बे प्रेसिडेन्सी' (भाग १, खंड १, पृ० २६१) में ई० स० १७०२ में शुजाअतख़ां का मरना लिखा है।

(३) ई० स० की सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में बादशाह [illegible] के शासनकाल में जूनागढ़ के नवाब का पूर्वज बहादुरख़ां बाबी [illegible] से अहमदाबाद में

होते ही उसे क़ैद करने अथवा मार डालने का ज़िम्मा लिया। पाटण से अपने अनुयायियों-सहित प्रस्थानकर दुर्गादास अहमदाबाद के निकट साबरमती नदी के किनारे करीज (? घाडेज) नामक गांव में ठहरा। मुलाकात के लिए निश्चित तिथि को शिकार के बहाने शाहज़ादे ने सारी सेना तैयार रक्खी थी। सब मनसबदार मौजूद थे और सफदरखां बाबी अपने पुत्रों और सेवकों-सहित सशस्त्र दरबार में उपस्थित था। शाहज़ादे ने दरबार में पहुंचते ही दुर्गादास को बुलाने के लिए आदमी भेजे। पहले दिन एकादशी का व्रत रखने के कारण दुर्गादास ने भोजनादि से निवृत्त होकर दरबार में उपस्थित होने की इच्छा प्रकट की। शाहज़ादे को एक-एक क्षण का विलम्ब अखर रहा था। उसने दूत पर दूत भेजने शुरू किये। यह देखकर दुर्गादास के मन में स्वभावतया ही सन्देह हो गया। फिर जैसे ही उसने मुग़ल सेना के तैयार रहने की बात सुनी तो वह एकदम शंकित हो उठा। ऐसी दशा में भोजन किये बिना ही वह अविलम्ब अपने डेरे आदि में आग लगाकर माल-असबाब और साथियों-सहित वहां से मारवाड़ की तरफ चला गया। यह खबर पाते ही मुग़ल सेना की एक टुकड़ी ने, जिसमें सफ़दरखां बाबी भी था, उसका पीछा किया। कुछ ही समय में पाटण के मार्ग में वे भागते हुए राठोड़ों के निकट जा पहुंचे। ऐसी दशा देखकर दुर्गादास के पौत्र[1] ने उससे कहा—"युद्ध सम्मुख

आया। ई० स० १६५४ में जब शाहज़ादा मुरादबख्श गुजरात की सूबेदारी पर मुक़र्रर हुआ, तो बहादुरख़ां बाबी का पुत्र शेरख़ां बाबी भी उसके साथ वहां गया। प्रारम्भ में ई० स० १६६३-६४ में शेरख़ां बाबी को चुवाळ परगने की थानेदारी सौंपी गई। चतुर और दृढ़व्रती होने के कारण वह इस पद के सर्वथा योग्य था। उसके चार पुत्र हुए, जिनमें से तीसरे ज़ाफ़रख़ां बाबी को चुवाळ में रहकर अच्छी सेवा करने के एवज़ में "सफदरख़ां" का ख़िताब मिला और वह पाटण का नायब सूबेदार नियत हुआ। पीछे से उसको पाटण और बीजापुर की सूबेदारी मिली। मराठा सरदार धनाजी यादव के साथ की लड़ाई में वह क़ैद हुआ और बड़ा दंड देकर छूटा। सफदरख़ां के वंशजों के अधिकार में इस समय जूनागढ़, राधनपुर, वाडासिनोर आदि राज्य हैं।

(१) सरकार ने आगे चलकर इसी पौत्र का मारा जाना लिखा है, परन्तु

होते ही उसे क़ैद करने अथवा मार डालने का ज़िम्मा लिया। पाटण से अपने अनुयायियों-सहित प्रस्थानकर दुर्गादास अहमदाबाद के निकट साबरमती नदी के किनारे करीज (? वाडेज) नामक गांव में ठहरा। मुलाक़ात के लिए निश्चित तिथि को शिकार के बहाने शाहज़ादे ने सारी सेना तैयार रक्खी थी। सब मनसबदार मौजूद थे और सफ़दरखां बाबी अपने पुत्रों और सेवकों-सहित सशस्त्र दरबार में उपस्थित था। शाहज़ादे ने दरबार में पहुंचते ही दुर्गादास को बुलाने के लिए आदमी भेजे। पहले दिन एकादशी का व्रत रखने के कारण दुर्गादास ने भोजनादि से निवृत्त होकर दरबार में उपस्थित होने की इच्छा प्रकट की। शाहज़ादे को एक-एक क्षण का विलम्ब अखर रहा था। उसने दूत पर दूत भेजने शुरू किये। यह देखकर दुर्गादास के मन में स्वभावतया ही सन्देह हो गया। फिर जैसे ही उसने मुगल सेना के तैयार रहने की बात सुनी तो वह एकदम शंकित हो उठा। ऐसी दशा में भोजन किये बिना ही वह अविलम्ब अपने डेरे आदि में आग लगाकर माल-असबाब और साथियों-सहित वहां से मारवाड़ की तरफ़ चला गया। यह ख़बर पाते ही मुगल सेना की एक टुकड़ी ने, जिसमें सफ़दरख़ां बाबी भी था, उसका पीछा किया। कुछ ही समय में पाटण के मार्ग में वे भागते हुए राठोड़ों के निकट जा पहुंचे। ऐसी दशा देखकर दुर्गादास के पौत्र[1] ने उससे कहा—"युद्ध सम्मुख

आया। ई० स० १६५४ में जब शाहज़ादा मुरादबख़्श गुजरात की सूबेदारी पर मुक़र्रर हुआ, तो बहादुरख़ां बाबी का पुत्र शेरख़ां बाबी भी उसके साथ वहां गया। प्रारम्भ में ई० स० १६६३-६४ में शेरख़ां बाबी को चुवाळ परगने की थानेदारी सौंपी गई। चतुर और दृढ़व्रती होने के कारण वह इस पद के सर्वथा योग्य था। उसके चार पुत्र हुए, जिनमें से तीसरे ज़ाफ़रख़ां बाबी को चुवाळ में रहकर अच्छी सेवा करने के एवज़ में "सफ़दरख़ां" का ख़िताब मिला और वह पाटण का नायब सूबेदार नियत हुआ। पीछे से उसको पाटण और बीजापुर की सूबेदारी मिली। मराठा सरदार धनाजी यादव के साथ की लड़ाई में वह क़ैद हुआ और बड़ा दंड देकर छूटा। सफ़दरख़ां के वंशजों के अधिकार में इस समय जूनागढ़, राधनपुर, वाडासिनोर आदि राज्य हैं।

(१) सरकार ने आगे चलकर इसी पौत्र का मारा जाना लिखा है, परन्तु

मुटाव हो गया। बादशाह औरंगज़ेब दिन-प्रति-दिन के झगड़ों से परेशान हो गया था। उसके शत्रुओं की संख्या बढ़ती ही जाती थी। अतएव वि० सं० १७६१ (ई० स० १७०४) में अजीतसिंह को मेड़ता देकर एक प्रकार से उसने उसके साथ सन्धि कर ली[1]। अजीतसिंह ने मेड़ता पर अधिकार मिलने पर कुशलसिंह को वहां का अधिकारी नियुक्त किया। इससे नाराज़ होकर नागोर के इन्द्रसिंह का पुत्र मोहकमसिंह, जो महाराजा की बाल्यावस्था से ही उसके साथ की लड़ाइयों में उसकी तरफ़ शामिल रहा था, औरंगज़ेब से जा मिला और अजीतसिंह का विरोधी बनकर अपने ही जाति भाइयों पर आक्रमण करने लगा[2]।

अजीतसिंह को मेड़ता की जागीर मिलना

---

(१) टॉड कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि वि० स० १७६१ (ई० स० १७०४) में मुर्शिदकुली जोधपुर का हाकिम होकर गया। उसने वहां पहुंचते ही मेड़ता दिये जाने की शाही सनद अजीतसिंह को दी (जि० २, पृ० १०११)।

(२) सरकार हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २६०-६१। टॉड-कृत "राजस्थान" में भी लिखा है कि महाराजा-द्वारा वहां (जोधपुर में) कुशलसिंह मेड़तिया और धाधल गोविन्ददास के नियुक्त किये जाने के कारण इन्द्र का पुत्र (मोहकमसिंह) बिगड़ गया। उसने बादशाह को लिखा कि मुझे मारवाड़ में नियुक्त कर दिया जाय तो मैं हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिए सन्तोषपूर्ण प्रबन्ध कर दूं (जि० २, पृ० १०११)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है—

"वि० सं० १७६२ (ई० स० १७०५) में चांपावत उदयसिंह (लखधीरोत) तथा चांपावत उर्जनसिंह (प्रतापसिंहोत) ने मोहकमसिंह से, जो बादशाह की तरफ़ से मेड़ते के थाने पर था, कहलाया कि आप चढ़कर जालोर आवें, हम अजीतसिंह को पकड़ा देंगे। इसपर वह दो हज़ार सवारों के साथ चढ़ गया। इसकी खबर धाधल उदयकरण तथा मारवाड़ के कई दूसरे सरदारों ने ऊंट सवारों द्वारा अजीतसिंह के पास भिजवाई। महाराजा ने अपने सरदारों से इस विषय में बात की तो उन्होंने वहां से हट जाना ही उचित बतलाया। तब वह वहां से हट गया। माघ सुदि २ (ई० स० १७०६ ता० ६ जनवरी) को मोहकमसिंह ने जालोर पहुंचकर कुछ लड़ाई के बाद वहां अधिकार कर लिया। अनन्तर राठोड़ विट्ठलदास भगवानदासोत अपने तथा राठोड़ उदयसिंह

अजीतसिंह का मोहकमसिंह को हराना

मोहकमसिंह के विरोधी हो जाने के कुछ ही समय बाद महाराजा अजीतसिंह ने दुनाड़ा नामक स्थान में उसपर आक्रमण किया और उसे परास्त कर अपनी शक्ति और सम्मान में पर्याप्त अभिवृद्धि की[1]।

के परिवार के साथ कालंधरी (?) गांव में महाराजा के शामिल हो गया। मेड़तिया कुशलसिंह अचलसिंहोत तथा विजयसिंह हरिसिंहोत आगरवारी गांव में महाराजा से मिले। कुछ अन्य सरदार भी उसके शामिल हुए (जि० २, पृ० ५४-७)।"

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २८१-२। टॉड कृत "राजस्थान" में लिखा है—"वि० सं० १७६१ (ई० स० १७०४) में शत्रुओं (अर्थात् मुग़लों) का सितारा अस्त होने लगा। मुग़ल मुर्शिदकुली के स्थान में जाफरखां की नियुक्ति हुई। मोहकमसिंह का पत्र (बादशाह के पास भेजा हुआ) बीच में ही पकड़ लिया गया। यह अजीतसिंह का विरोधी होकर शत्रुओं से मिल गया था। अजीत ने उसके ख़िलाफ़ चढ़ाई की और दुनाड़ा नामक स्थान में उसकी शत्रु-सेना से लड़ाई हुई, जिसमें उसकी विजय हुई और विरोधी इन्द्रावत (मोहकमसिंह) मारा गया। यह घटना वि० सं० १७६२ (ई० स० १७०५) में हुई (जि० २, पृ० १०११-१२)।" टॉड ने इस लड़ाई में मोहकमसिंह का मारा जाना लिखा है, जो ठीक नहीं है।

यही घटना जोधपुर राज्य की ख्यात में इस प्रकार दी है—

"जालोर पर मोहकमसिंह का अधिकार होने के पश्चात् क्रमशः बहुतसे राठोड़ सरदार अजीतसिंह से जा मिले। इस प्रकार अपना बल बढ़ जाने पर उसने मोहकमसिंह से कहलाया कि आये हो तो जमे रहना, मैं भी आता हूं। मोहकमसिंह को जब पता लगा कि महाराजा के पास विशाल फौज है तो वह माघ सुदि १३ (ई० स० १७०६ ता० १६ जनवरी) को जालोर छोड़कर चला गया। महाराजा ने उसका पीछा किया। मार्ग में अन्य कितने ही जोधपुर के सरदार भी उसके शामिल हो गये। दुनाड़ा पहुंचने पर आमने सामने दोनों सेनाओं के मोर्चे जमे और गोलियां चलने लगीं। राठोड़ बड़ी वीरता से लड़े और अन्त में विजय उन्हीं की हुई। मोहकमसिंह के साथ के तीस आदमी मारे गये और पचास घायल हुए तथा उसका नगारा, निशान, हाथी, घोड़े आदि विजेताओं के हाथ लगे। इस लड़ाई में अजीतसिंह की तरफ के भी कई राठोड़ और भाटी सरदार मारे गये तथा कितने ही घायल हुए। अनन्तर महाराजा का डेरा गांव ढीडस में हुआ और मोहकमसिंह उसी रात कूचकर पीपाड़ चला गया (जि० २, पृ० ६७-८)।

ई० स० १७०५ (वि० सं० १७६२) में इब्राहीमखां का पुत्र ज़बर्दस्तख़ां लाहोर से बदलकर अजमेर और जोधपुर का हाकिम नियुक्त किया गया।

दुर्गादास का पुनः शाही अधीनता स्वीकार करना

उन्हीं दिनों दुर्गादास ने भी शाहज़ादे आज़म की मारफत बादशाह से माफ़ी की दरख्वास्त की। इसपर उसका मनसब बहालकर उसकी नियुक्ति गुजरात में पहले के स्थान पर कर दी गई[1]।

बादशाह औरंगज़ेब के अंतिम राज्यवर्ष में गुजरात में मरहटों का उपद्रव बढ़ गया और उन्होंने अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले अब्दुल-

अजीतसिंह और दुर्गादास का पुनः विद्रोही होना

हमीदख़ां को हराया। इस घटना से मुगलों की स्थिति अधिक कमज़ोर हो गई और उनके शत्रुओं की आशा पुनः बलवती हो उठी। ऐसी परिस्थिति देख अजीतसिंह फिर विद्रोही हो गया। दुर्गादास भी शाही आश्रय छोड़कर उससे जा मिला और थराद आदि स्थानों में उपद्रव करने लगा। राजपीपला के स्वामी वैरिशाल ने भी मुगलों को छेड़ना शुरू किया। इसपर आज़मशाह के पुत्र वेदारबख़्त ने, जो गुजरात में मुकर्रर था, विद्रोही राठोड़ों के पीछे सेना भेजी, जिससे बाध्य होकर अजीतसिंह को पीछे हटना पड़ा और दुर्गादास सूरत से दक्षिण के कोलियों के देश में चला गया[2]।

वि० सं० १७५६ (ई० स० १७०२) में बादशाह औरंगज़ेब ने महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) के नाम सिरोही और आबू की जागीर का

महाराजा और उदयपुर के महाराणा के बीच मनमुटाव

(जिसकी आय एक करोड़ बीस लाख दाम अर्थात् तीन लाख रुपये मानी जाती थी) फ़रमान कर दिया था। वि० सं० १७२८ (ई० स० १६८१) में उदयपुर से जाने के बाद महाराजा अजीतसिंह की सिरोही राज्य में

---

(१) सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २६१। कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेन्सी, जि० १, खंड १, पृ० २९२।

(२) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, जि० १, भाग १, पृ० २९२-५। सरकार, हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब जि० ५ पृ० २६१।

परवरिश हुई थी, इसलिए वहां के देवड़ा स्वामी के पक्ष में होकर उसने महाराणा का वहां अधिकार स्थापित होने में बाधा डाली। इसकी शिकायत होने पर मालवा के सूबेदार अमीरुल्उमरा शाइस्ताख़ां ने हि० स० १११४ ता० ११ ज़िलहिज्ज (वि० सं० १७६० वैशाख सुदि १२ = ई० स० १७०३ ता० १७ अप्रेल) को फ़ौजदार यूसुफख़ां के नाम यह हुक्म भेजा कि अजीतसिंह सिरोही से हटाये हुए जागीरदार की मदद करता है, इसलिए उसको देवड़ों की मदद से बाज़ आने की हिदायत की जावे। इसपर भी जब अजीतसिंह ने कोई ध्यान न दिया तो महाराणा और उसके बीच मनमुटाव हो गया। विपत्ति के समय महाराजा को मेवाड़ में आश्रय मिलता रहा था और पुनः बादशाह की तरफ़ से छल होने की संभावना थी, अतएव महाराजा तथा उसके साथी राठोड़ों ने महाराणा से मेल रखना ही उचित समझा। तदनुसार महाराजा के सरदारों में से ठाकुर मुकुंददास ने महाराणा के प्रधान दामोदरदास पंचोली की मारफ़त पारस्परिक मनमुटाव को मिटाने और महाराणा की तरफ से महाराजा को मदद मिलने के बारे में बात-चीत चलाई तथा महाराजा के कर्मचारी (विट्ठलदास भंडारी) ने भी वि० सं० १७६३ वैशाख वदि १४ (ई० स० १७०६ ता० १ अप्रेल) को अपनी अर्ज़ी के साथ महाराणा के नाम का महाराजा का पत्र भेजा। मोहकमसिंह के जालोर के आक्रमण के समय महाराजा के कई सरदार भी उस (मोहकमसिंह) के शरीक हो गये थे। इससे महाराजा का उन सरदारो पर से विश्वास हट गया और उसने तेजसिंह चांपावत को अपना प्रधान नियत किया। उसकी इस कार्यवाही से ठाकुर मुकुंददास, जो मेल के लिए यत्न कर रहा था, महाराजा से खिन्न रहने लगा। महाराजा इससे उसपर भी संदेह करने लगा और उसने महाराणा से मेल करने के लिए सवीनाखेड़ा के गोस्वामी नीलकंठ गिरि को मध्यस्थ बनाकर वि० सं० १७६३ चैत्र सुदि ११ (ई० स० १७०६ ता० १३ मार्च) को पत्र के साथ तरवाड़ी सुखदेव, भगवान और धरणीधर को उस (गोस्वामी) के पास उदयपुर भेजा। ऐसा ही एक पत्र वैशाख सुदि ११ (ता० १२ अप्रेल) शुक्रवार

ता० ४ मार्च (वि० सं० १७६३ फाल्गुन सुदि १२) को पहुंचा[1]। इसके तीसरे दिन इस समाचार की पुष्टि हो जाने पर, उसने ससैन्य जोधपुर पर आक्रमण कर दिया और वहां के नायब फ़ौजदार जाफरकुली को भगाकर उसने अपने पैतृक राज्य पर क़ब्ज़ा कर लिया। उसके जोधपुर में प्रवेश करते ही मुग़ल अपना सामान आदि वहां छोड़कर भाग गये। राठोड़ों ने पीछा कर उनमें से बहुतों को मार डाला और बहुतों को क़ैद कर लिया। कुछ मुसलमान तो जान बचाने के लिए हिन्दुओं का वेष बनाकर भाग गये। मेड़ता पर राठोड़ों का आक्रमण होने पर मुहकमसिंह घायल दशा में मेड़ता छोड़कर नागोर चला गया[2]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार महाराजा उस समय जालोर के पास देवलवाटी में था, परन्तु बांकीदास उस समय उसका साचोर में होना लिखता है (ऐतिहासिक बातें; संख्या १४१६)।

(२) सरकार, "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" जि० ५, पृ० २९१-२।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है—

"वि० सं० १७६३ (ई० स० १७०६) के मार्गशीर्ष मास में, जिस समय महाराजा जालोर की तरफ़ देवलवाटी में पेशकशी वसूल कर रहा था, उसे बादशाह की मृत्यु का समाचार मिला। उसी समय उसने जोधपुर की तरफ प्रस्थान किया। जोधपुर में उन दिनों फौजदार क़ाज़िमबेग का पुत्र जाफ़रबेग (? जाफ़रकुली) था। उसके पास उसके भाई ने गुजरात से बादशाह के मरने की सूचना देते हुए कहलाया कि अब जोधपुर में ठहरना निरापद नहीं है। इसपर जाफ़रबेग ने तत्काल अपना सारा सामान ऊंटों पर लदवाकर अजमेर भिजवा दिया। उसका इरादा स्वयं भी वहां से चल देने का था, पर अन्य मनसबदारों के कहने से वह वहीं ठहर गया। अजीतसिंह के जोधपुर पहुंचने पर जाफ़रबेग द्वारा भेजे हुए राठोड़ कीरतसिंह (कूंपावत), राठोड़ उदयभाण (चांपावत) आदि ने उसके पास उपस्थित होकर कहा कि आप नागोरी दरवाज़े के पास जाफ़रबेग के डेरे के निकट ठहरें, बिना शाही आज्ञा के शहर में प्रवेश करना उचित नहीं, पर किसी ने उनकी बात पर ध्यान न दिया। बलपूर्वक उन्हें हटाकर वे नगर में घुस गये और तलहटी के महलों में प्रविष्ट हुए। इस अवसर पर वहां जाफ़रबेग की दो स्त्रियां और मामा मोहम्मदज़मा थे, जो दरवाज़ा बन्द कर बैठ गये। अजीतसिंह ने आगे बढ़कर दरवाज़ा खोल दिया और जाफ़रबेग की स्त्रियों को उसके

महाराजा अजीतसिंह के जोधपुर पर अधिकार करने की खबर मिलने पर दुर्गादास जोधपुर गया। महाराजा ने भांडेलाव तालाब तक जाकर उसका स्वागत किया। दुर्गादास ने उसका उचित अभिवादन कर ग्यारह रुपये नज़र किये। इसके बाद महाराजा उससे सूरसागर के डेरे पर जाकर मिला। दुर्गादास ने उसे दो घोड़े भेंट किये। महाराजा ने भी वैशाख सुदि ७ (ता० २७ अप्रेल) को उसे एक घोड़ा और सिरोपाव दिया[1]।

दुर्गादास का अजीतसिंह के पास जाना

बीकानेर पर उन दिनों महाराजा सुजानसिंह का राज्य था, पर वह बादशाह की तरफ़ से दक्षिण में नियुक्त था और बीकानेर का राज्य-कार्य मंत्री तथा अन्य सरदार आदि करते थे। सुजानसिंह की अनुपस्थिति में राज्य-विस्तार करने का अच्छा अवसर देखकर अजीतसिंह ने बीकानेर पर चढ़ाई करने का निश्चय किया। बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह और रतलाम के राजा रामसिंह ने अपने वकीलों-द्वारा बादशाह औरंगज़ेब से मारवाड़ का राज्य अजीतसिंह को, उसके जन्म के कुछ ही समय बाद, दिलाने की सिफारिश कराई थी[2]; परन्तु अजीतसिंह ने राज्य पाते ही फ़ौज के साथ बीकानेर की ओर प्रस्थान किया और लाडणूं में जाकर ठहरा। बीकानेर

अजीतसिंह की बीकानेर पर असफल चढ़ाई

पास भिजवा दिया। जोधपुर पर अजीतसिंह का अधिकार हो जाने के कारण घर घर बड़ा आनन्द-उत्सव मनाया गया। महाजनों और प्रजा ने उनकी अधीनता स्वीकार की। उस समय उसके साथ चांपावत हरनाथसिंह, कूंपावत पर्बतसिंह (ईसरसिंहोत), जोधा भीम (रणछोड़दासोत), खींवकरण (भाखरसीोत), ऊदावत जगराम (विजयरामोत), उदयनारायण (बलरामोत), भाटी सूरजमल (जगनाथोत) आदि थे। चैत्र बदि १२ (ई० स० १७०७ ता० १२ मार्च) को पांच घड़ी दिन चढ़े अजीतसिंह ने बड़े समारोह के साथ गढ़ में प्रवेशकर उसके कंगूरे को अपनी पगड़ी के पल्ले से झाड़ दिया। इसके बाद वि० सं० १७६४ चैत्र सुदि १० (ई० स० १७०७ ता० २१ मार्च) को उसके परिवार के अन्य लोग भी जालोर से जोधपुर पहुंच गये (जि० २, पृ० ६१-६२)।"

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० २ पृ० ६१-२।

(२) वही, जि० २, पृ० ६६।

राज्य की सीमा के तेजसिंहोत बीदावत महाराजा सुजानसिंह से विरोध रखते थे। अजीतसिंह ने उन्हें लाडणूं बुलाकर उनसे बात-चीत की, जिससे उनमें से अधिकांश उसके सहायक हो गये, परन्तु गोपालपुरा के कर्मसेन तथा बीदासर के बिहारीदास ने इस बुरे कार्य में सहयोग देना स्वीकार न किया, जिससे उन्हें नज़रक़ैद कर अजीतसिंह ने भंडारी रघुनाथ को एक बड़ी सेना के साथ बीकानेर पर भेजा। कर्मसेन और बिहारीदास ने नज़रक़ैद होने पर भी इस चढ़ाई का समाचार गुप्त-रूप से बीकानेर भिजवा दिया, परन्तु बीकानेरवालों की शक्ति जोधपुरवालों का सामना करने की न पड़ी, जिससे वहां पर अजीतसिंह का अधिकार हो गया और नगर में उसके नाम की दुहाई फिर गई। बीकानेर में रामजी नाम का एक वीर, साहसी एवं राजभक्त लुहार रहता था। उसके हृदय को यह घटना इतनी असह्य हुई कि वह अकेला ही जोधपुर के सैनिकों से भिड़ गया और [illegible] मारकर मारा गया। इस घटना से बीकानेर के सैनिकों का [illegible] और [illegible] पृथ्वीराज एवं मलसीसर के बीदावत [illegible] जोधपुर की फौज के समक्ष जा [illegible] मन गई। विजय की आशा के [illegible] में ही भलाई समझी। [illegible] भी [illegible] हो [illegible] गई। [illegible] कर दिया।

[illegible]

बादशाह औरंगज़ेब की दक्षिण में मृत्यु होते ही शाहज़ादे मुअज़्ज़म ने, जो उन दिनों काबुल में था, अपने आप को बादशाह घोषित कर आगरे की तरफ प्रस्थान किया। उसका छोटा भाई आज़म उस समय दक्षिण में ही था। वह भी अपने को बादशाह प्रकटकर ससैन्य आगरे की तरफ अग्रसर हुआ। धौलपुर और आगरे के बीच जाजाओ नामक स्थान में दोनों का परस्पर युद्ध हुआ, जिसमें हि० स० ११११ ता० १८ रबीउल्अव्वल (वि० सं० १७६४ आषाढ वदि ४ = ई० स० १७०७ ता० ६ जून) को आज़म मारा गया। तब शाहज़ादा मुअज़्ज़म "शाह आलम बहादुरशाह" नाम धारणकर मुग़ल साम्राज्य का स्वामी बना[1]।

बहादुरशाह का राज्यासीन होना

औरंगज़ेब के जीतेजी राठोड़ भावसिंह सबलसिंहोत, राठोड़ उरजनसिंह प्रतापसिंहोत आदि कितने ही सरदार महाराजा के विरोधी हो गये थे। एक फ़र्ज़ी दलथंभन को खड़ाकर चार साल तक वे सोजत के परगने में, जहां का हाकिम सरदारखां था, लूट-मार करते रहे। फिर बादशाह औरंगज़ेब के मरने की खबर पाकर जब देश में चारों ओर अराजकता और उत्पात फैलने लगा, तो उन्होंने भी उस अवसर से लाभ उठाकर सोजत के शाही हाकिम के भाग जाने पर वहां अधिकार कर लिया। उन्होंने अन्य सरदारों को भी लालच देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयत्न किया। इन सब बातों की सूचना पाते ही महाराजा ने पन्द्रह-बीस हज़ार सवार सेना के साथ सोजत पर चढ़ाई कर उसे घेर लिया। ग्यारह दिन तक घेरा रहने के पश्चात् महाराजा ने कहलाया कि व्यर्थ प्राण गंवाने से क्या लाभ, आप दलथंभन को मेरे पास लावें, वह मेरा भाई है. पर विद्रोही सरदारों ने यह स्वीकार न किया। गढ़ के भीतर का सामान इत्यादि समाप्त हो जाने पर श्रावणादि वि० सं० १७६३ (चैत्रादि १७६४) ज्येष्ठ वदि ६ (ई० स० १७०७ ता० ११ मई) रविवार को आधी रात के समय

सरदारों-द्वारा खड़े किये हुए फ़र्ज़ी दलथंभन को मरवाना

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ८३४, ८३७।

गढ़ के भीतर के लोग वहां से चले गये और महाराजा का वहां अधिकार हो गया[1]। दलथंभन के साथी उसे लेकर बादशाह के पास गये, पर वहां उनकी बात मानी नहीं गई। तब वे मेहराबखां के पास जाकर स्वामी गोविन्ददास के स्थान में ठहरे। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने सोजत से वहां आदमी भेजकर उन्हें मौत के घाट उतरवा दिया। इस सेवा के एवज़ में इस कार्य को अंजाम देनेवाले व्यक्तियों को महाराजा ने बहुत कुछ पुरस्कार देकर सन्तुष्ट किया। फिर जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने अन्य अपराधी व्यक्तियों को दंड दिया[2]।

बादशाह बहादुरशाह का जोधपुर खालसा करना और अजीतसिंह का उसकी सेवा में जाना

जोधपुर पर अधिकार होने के बाद ही महाराजा अजीतसिंह ने वहां औरंगज़ेब के समय बनी हुई मसजिदों को तुड़वाने के साथ ही आज़ान का देना भी बन्द करवा दिया[3]। यही नहीं उसने बादशाह की गद्दीनशीनी के समय अपना कोई वकील भी न भेजा[4]। इन सब बातों से बादशाह की उसपर नाराज़गी हो गई और उसने जोधपुर की तरफ ससैन्य प्रस्थान किया[5]। आंबेर होता हुआ वह अजमेर पहुंचा, जहां से उसने शाहज़ादे अज़ीमुश्शान और ख़ानख़ाना मुनइमख़ां को फ़ौज देकर मारवाड़ पर भेजा और आप जोधपुर से छः कोस पर जा ठहरा। जोधपुर पर भेजी गई फौज ने वहां पहुंचकर बरबादी करना तथा प्रजा को

---

(१) सरकार ने भी जोधपुर पर अधिकार होने के पश्चात् महाराजा का सोजत पर अधिकार करना लिखा है (हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ५, पृ० २६२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ७२-५।

(३) वीरविनोद, भाग २, पृ० ८२६।

(४) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० १, पृ० ४५।

(५) "वीरविनोद" में बादशाह के प्रस्थान करने की तारीख़ ७ शाबान हि० स० १११६ (वि० सं० १७६५ कार्तिक सुदि ८ = ई० स० १७०८ ता० ११ अक्टोबर) और 'लेटर मुगल्स" में १७ शाबान दी है।

लूटना शुरु कर दिया और वहां शाही अधिकार स्थापित हो गया[1]। ऐसी हालत में महाराजा अजीतसिंह महाराजा जयसिंह[2]-सहित वज़ीर मुनइमख़ां की मारफ़त बादशाह की सेवा में उपस्थित हो गया[3]।

इर्विन लिखता है—"ता० २१ फ़रवरी को बादशाह मेड़ता पहुंचा। इसके चौथे दिन ता० २४ फ़रवरी को अजीतसिंह भी खानज़मां के साथ वहां पहुंच गया। उसे मुनइमख़ां के डेरों में रहने को स्थान दिया गया। दूसरे दिन रमात से उसके हाथ बांधकर वह बादशाह के समक्ष उपस्थित किया गया। उस समय उसने सौ मोहरें तथा एक हज़ार रुपये बादशाह को नज़र किये। बादशाह ने उसका समुचित सत्कार कर इस्लामख़ां को उसे खिलअ़त आदि सम्मान की वस्तुएं प्रदान करने की आज्ञा दी। फिर ता० २६ फ़रवरी को दरबार में उपस्थित होने पर अजीतसिंह सिंहासन की बाईं तरफ़ खड़ा किया गया। इसके तीसरे और चौथे दिन बादशाह की तरफ़ से उसे कई चीज़ें उपहार में मिलीं। ता० १० मार्च को

---

(१) वीरविनोद भाग २, पृ० ८२६। इर्विन लिखता है कि नागौर से बादशाह ने जोधपुर के फ़ौजदार मेहराबख़ां को जोधपुर की तरफ़ भेजा था, जिसका मेड़ता में महाराजा अजीतसिंह से मुक़ाबला हुआ। इस लड़ाई में महाराजा हारकर भाग गया और मेड़ता पर शाही क़ब्ज़ा हो गया (लेटर मुग़ल्स जि० १, पृ० ४३)।

(२) बादशाह औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद उसके शाहज़ादों के बीच राज्य के लिए जो लड़ाई हुई उसमें जयपुर का महाराजा सवाई जयसिंह शाहज़ादे आज़म के पक्ष में था और उसका छोटा भाई विजयसिंह बहादुरशाह (शाह आलम) के। इस कारण बहादुरशाह उस (जयसिंह) से नाराज़ था और उसने बादशाह बनते ही सर्वप्रथम आंबेर को ख़ालसा कर विजयसिंह को वहां का राजा बनाया (इर्विन, लेटर मुग़ल्स जि० १, पृ० ४६)। अपना राज्य पीछा प्राप्त करने की इच्छा से ही जयसिंह भी महाराजा अजीतसिंह के साथ बादशाह की सेवा में गया था। जोधपुर ख़ालसा होने के पूर्व जयसिंह ने अजीतसिंह को लिखा कि आंबेर पर शाही थाना स्थापित हो गया है और अब बादशाह जोधपुर ले लेना चाहता है। इस समय बादशाह का जोधपुर जाना अच्छा नहीं अतएव उसके हुज़ूर में हाज़िर हो जाना ही ठीक होगा। पीछे हम जैसा उचित समझेंगे करेंगे (जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ७८)।

(३) वीरविनोद भाग २, पृ० ८२६।

उसे "महाराजा" का ख़िताब और ता० २३ अप्रेल को साढ़े तीन हज़ार ज़ात तीन हज़ार सवार (एक हज़ार दुअस्पा) का मनसब, झंडा, नक़ारा आदि दिये गये। उसके बड़े पुत्र अभयसिंह को १५०० ज़ात ३०० सवार, उससे छोटे राखीसिंह (? अखैसिंह) को ७०० ज़ात २०० सवार तथा दूसरे दो छोटे पुत्रों को ५०० ज़ात १०० सवार के मनसब मिले[1]।" इतना होने पर भी उसे उसका राज्य नहीं दिया गया।

[illegible]

जोधपुर का मामला इस प्रकार तय हो जाने पर बादशाह मेड़ता से अजमेर की तरफ़ रवाना हुआ, जहां वह ई० स० १७०८ ता० २४ मार्च (वि० सं० १७६५ चैत्र सुदि १४) को पहुंचा। अजीतसिंह, सवाई जयसिंह और दुर्गादास उसके साथ रहे। मार्ग से उस (बादशाह) ने क़ाज़ीरां और मुहम्मद गौस [illegible] को जोधपुर में पुनः मुसलमानी धर्म का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए [illegible] रवाना किया। ता० ३० अप्रेल (ज्येष्ठ वदि ६) को बादशाह का मुकाम [illegible] में हुआ। वहां तक अजीतसिंह आदि राज्य-प्राप्ति की [illegible] बादशाह के साथ रहे, पर जब ऐसी कोई आशा नज़र नहीं आई [illegible] बादशाह की तरफ़ से निगरानी रहने लगी तो वे अपने डेरे-डंडे [illegible] को सूचना दिये बिना ही वहां से चले गये[2]। उस

[1] [illegible] जि० १, पृ० [illegible]। उससे यह भी पाया जाता है कि मार्ग [illegible] उत्तर अजीतसिंह के पास से [illegible] जोधपुर भेजा गया [illegible]।

[2] [illegible] है कि अजीतसिंह के बादशाह की सेना से [illegible] मनसब मिले। उससे यह [illegible], मिलाया और [illegible] (जि० २, पृ० [illegible])। [illegible] लिखा है कि अजीतसिंह के [illegible] बादशाह ने [illegible] (वि० सं० १७६५) वैशाख सुदि [illegible]

समय विद्रोही कामबख़्श का प्रबन्ध करना बहुत ज़रूरी था, अतएव बादशाह ने इस ओर ध्यान न दिया और वह दक्षिण की तरफ़ चला गया[1]।

अजीतसिंह आदि का देवलिया होते हुए उदयपुर जाना

अजीतसिंह आदि बादशाह का साथ छोड़कर उदयपुर की ओर अग्रसर हुए। उनके देवलिया पहुंचने पर रावत प्रतापसिंह ने उनका स्वागत किया[2]। वहां से प्रस्थान कर उन्होंने अपने आने की सूचना महाराणा को दी। महाराणा अमरसिंह वि० सं० १७६५ ज्येष्ठ वदि ५ (ई० स० १७०८ ता० २६ अप्रेल) को उदयपुर से जाकर उदयसागर की पाल पर ठहरा। दूसरे दिन वह उनके स्वागत के लिए गाडवा गांव तक गया, जहां महाराजा अजीतसिंह, जयसिंह, दुर्गादास और मुकुन्ददास भी पहुंचे। महाराणा पहले अजीतसिंह से मिला, फिर जयसिंह के पास गया। अनन्तर वह दुर्गादास और मुकुन्ददास से मिला। सन्ध्या समय सब उदयपुर गये, जहां महाराजा अजीतसिंह कृष्णविलास और जयसिंह सर्व ऋतुविलास महल में ठहराये गये। इसकी ख़बर मिलने पर शाहज़ादे मुईज़ुद्दीन जहांदारशाह ने महाराणा के पास ता० १४ सफ़र सन् जलूस २ (वि० सं० १७६५ ज्येष्ठ वदि १=ई० स० १७०८ ता० २४ अप्रेल) को एक निशान[3] भेजकर लिखा—

(ई० स० १७०८ ता० १४ अप्रेल) को बादशाह का डेरा मंदसोर में हुआ। वहां रहते समय अजीतसिंह ने दुर्गादास से सलाह की कि अब क्या करना चाहिये। अनन्तर सवाई जयसिंह से बात ठहराकर वैशाख सुदि १२ (ता० ३० अप्रेल) को गांव बदोद से बादशाह का साथ छोड़ अजीतसिंह, दुर्गादास और सवाई जयसिंह पीछे लौट गये (जि० २, पृ० ८२)। टॉड लिखता है कि बादशाह के नर्मदा पार करते ही दोनों राजा (अजीतसिंह और सवाई जयसिंह) उसका साथ छोड़कर राजवाड़ा की ओर चले गये (राजस्थान, जि० २, पृ० १०१४)।

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४८-५० तथा ६३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ७६७-६८।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ८६।

(३) यह निशान उदयपुर राज्य में अब तक विद्यमान है। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी शाहज़ादे अज़ीमुद्दीन ('मुईज़ुद्दीन' द्वारा भेजे गये रुक्के इसी आशय

"अजीतसिंह, जयसिंह और दुर्गादास जागीर और तनख्वाह न मिलने के के कारण भाग गये हैं। तुम्हें चाहिये कि उन्हें अपने यहां नौकर न रक्खो और उन्हें समझा दो कि वे बादशाह के पास अर्ज़ियां भेजें, मैं उनके अपराध क्षमा करवाकर उनकी जागीरें उन्हें दिलवा दूंगा।" महाराणा ने उनसे माफ़ी की अर्ज़ियां लिखवाकर शाहज़ादे की मारफ़त बादशाह के पास भिजवादीं और उन्हें अपने पास ही रक्खा। उनके वहां रहते समय महाराणा ने अपनी पुत्री चन्द्रकुंवरी का विवाह सवाई जयसिंह के साथ किया। इस विवाह के प्रसंग में तीनों राजाओं के बीच एक प्रतिज्ञापत्र लिखा गया, जिसके अनुसार यह निश्चय हुआ कि

(१) उदयपुर की राजकुमारी, चाहे वह छोटी ही क्यों न हो, सब राणियों में मुख्य समझी जाय।

(२) उदयपुर की राजपुत्री का पुत्र ही युवराज माना जाय।

(३) यदि उदयपुर की राजपुत्री से कन्या उत्पन्न हो तो उसका विवाह मुसलमान के साथ न किया जाय[1]।

जब कुछ समय बीत जाने पर भी बादशाह की तरफ़ से उन्हें अपने राज्य प्राप्त न हुए तो उन्होंने अपने बाहुबल से उन्हें हस्तगत करने का विचार किया। इस विचार के अनुसार महाराणा ने अपने दो अफसरों की अध्यक्षता में अपनी सेना उन राजाओं के साथ कर उन्हें विदा किया[2]। तीनों

अजीतसिंह का पुनः जोधपुर पर अधिकार होना

के एक निशान का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८४)। इर्विन-कृत "लेटर मुगल्स" में आगे चलकर लिखा है कि ई० स० १७०८ ता० ३० मई (वि० सं० १७६५ आषाढ वदि ७) को दोनों राजाओं के महाराणा के पास पहुंचने की निश्चित ख़बर बादशाह को मिली (जि० १, पृ० ६७)।

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ७६६-७१। वंशभास्कर, चतुर्थ भाग, पृ० ३०१७-८। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस विवाह का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८३)। इर्विन ने जयसिंह की पुत्री का विवाह महाराणा अमरसिंह के साथ होना लिखा है (लेटर मुगल्स, जि० १, पृ० ६७), जो ठीक नहीं है।

(२) वीरविनोद, भाग २, पृ० ७७४-५।

राजाओं की सम्मिलित सेना ने प्रथम जोधपुर को जा घेरा। दुर्गादास के बीच में पड़ने से जोधपुर का शाही फ़ौजदार मेहरावखां किला ख़ालीकर चला गया[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि अजमेर तक सही-सलामत पहुंचा दिये जाने की शर्त पर वि० सं० १७६५ श्रावण वदि ११ (ई० स० १७०८ ता० ३ जुलाई) को मेहरावखां गढ़ ख़ाली कर चला गया। इसके दूसरे दिन महाराजा अजीतसिंह ने सवाई जयसिंह और दुर्गादास आदि सहित गढ़ में प्रवेश किया। महाराजा के सिंहासनासीन होने के अवसर पर सवाई जयसिंह ने उसके टीका किया। अनन्तर सब सरदारों ने टीका कर नज़रें पेश कीं। महाराजा ने सवाई जयसिंह का डेरा सूरसागर के महलों में, दुर्गादास का ब्रह्मकुंड पर और महाराणा के सैनिकों का कूंपावत राजसिंह खींमावत के बाग़ में कराया[2]।

महाराजा अजीतसिंह आदि के उदयपुर में रहते समय ही महाराजा जयसिंह के दीवान रामचन्द्र और श्यामसिंह कछवाहा ने आंबेर के शाही फौजदार पर आक्रमण कर उसे निकाल दिया[3]।

महाराजा अजीतसिंह आदि के आचरण के सम्बन्ध में महाराणा के नाम शाहज़ादे जहांदारशाह का निशान भेजना

इस विषय में, शाहज़ादे जहांदारशाह ने महाराणा के नाम ता० २७ रबीउस्सानी सन् जुलूस २ (वि० सं० १७६५ श्रावण वदि १४ = ई० स० १७०८ ता० ५ जुलाई) को इस आशय का एक निशान भेजा

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ६७। टॉड लिखता है कि उदयपुर से चलकर दोनों राजा खाडवा पहुंचे, जहां उदयभाण के पुत्र चांपावत मुकुन्द ने [illegible] का स्वागत किया। वि० सं० १७६५ श्रावण वदि ७ (ई० स० १७०८ ता० [illegible] जून) को उसने जोधपुर पर घेरा डाला। श्रावण वदि ११ को दुर्गादास द्वारा [illegible] कर मेहरावखां चला गया (राजस्थान, जि० २, पृ० १०१२)।

(२) जि० २, पृ० ८९।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि [illegible] से सवाई जयसिंह के पास ख़बर आई कि मेहता रामचन्द्र दीवान ने [illegible] आंबेर के

कि अजीतसिंह, जयसिंह और दुर्गादास की अर्ज़ियों समेत तुम्हारी अर्ज़ी पहुंची, जो हमने बादशाह को नज़र कर दीं। हमारी यह इच्छा थी कि उनके अपराध क्षमा किये जावें, लेकिन इन दिनों अजमेर के सूबेदार शुजाअतखां से मालुम हुआ कि रामचन्द्र आदि जयसिंह के सेवकों ने सैयद हुसेनखां आदि बादशाही नौकरों से लड़ाई की। उन्हें यह हरगिज़ उचित न था कि हमारा उत्तर पहुंचने तक ऐसा निन्दित कार्य करते। यह बहुत बुरी कार्रवाई हुई, इसलिए कुछ समय तक हमने इन अपराधों की माफ़ी स्थगित रक्खी है। उनको समझा दो कि अब भी हाथ खेंच लें, रामचन्द्र को निकाल दें और इसके लिए यहां अर्ज़ी भेजें। इसके उत्तर में महाराणा ने लिखा कि आपकी आज्ञा के अनुसार महाराजा जयसिंह को लिख दिया गया है, परन्तु वास्तविक बात यह है कि अपने देश की जागीर पाये बिना उन्हें सन्तोष न होगा। ऐसा मालुम होता है कि हिन्दुस्तान में बड़ा फ़साद उठेगा, इसलिए आप अपने हित एवं उपद्रव दूर करने के विचार से उन्हें उनके देश में जागीर दिला देवें। इसी आशय का एक पत्र महाराणा ने नवाब आसफ़ुद्दौला को भी लिखा[1]।

फौजदार ने एक बड़ी फौज के साथ चढ़ाई की। इसपर तमाम कछवाहे एकत्र हुए। बड़ी लड़ाई हुई, जिसमें फौजदार के बहुतसे आदमी मारे गये और वह भाग गया। तब रामचन्द्र आंबेर गया। अनन्तर उसने सारे राज्य में से मुसलमानों को निकाल दिया (जि० २, पृ० ८७)।

इर्विन कृत 'लेटर मुगल्स" में भी इस घटना का उल्लेख है। उसमें लिखा है कि अजमेर के सूबेदार शुजाअतखां बारहा ने बादशाह को ख़बर दी कि दोनों राजाओं ने दो हज़ार सवार और पन्द्रह हज़ार पैदल सेना एकत्र कर रामचन्द्र और सांवलदास की अध्यक्षता में आंबेर पर भेजी। सैयद हुसेनख़ां, अहमद सईदख़ां और महमूदख़ां ने उनका सामना कर सात सौ को मार डाला। बादशाह ने इसपर विश्वासकर बड़ा आनन्द मनाया, पर यह घटना असत्य निकली, जैसा कि बादशाह को ता० २१ अगस्त को ज्ञात हुआ (जि० १, पृ० ६६-७०)।

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ७७५-८।

जोधपुर में महाराजा जयसिंह के रहते समय वि० सं० १७६५ भाद्रपद वदि ५ (ई० स० १७०८ ता० २८ जुलाई) को अजीतसिंह ने अपनी पुत्री सूरजकुंवरबाई का संबंध उसके साथ किया[1]।

अजीतसिंह की पुत्री का संबंध जयसिंह के साथ होना

वर्षा ऋतु की समाप्ति होने पर राजपूतों की सेना ने मेड़ता के मार्ग से होते हुए अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया जहां उस समय मुसलमानों की बड़ी छावनी थी। वहां से राजपूतों की फ़ौज सांभर की तरफ़ अग्रसर हुई। उसका सामना करने के लिए मेवात का सूबेदार सैयद हुसेनखां बारहा, मेड़ता संगल्हाना का फ़ौजदार अहमद सईदखां तथा नारनोल का फ़ौजदार गैरतखां बढ़े। उनके पहले ही आक्रमण में राजपूतों को अपना सामान छोड़कर भागना पड़ा और वह सारा सामान सैयदों के हाथ लगा। दोनों राजा कुछ ही दूर पहुंचे थे कि उन्हें यह समाचार मिला कि मुसलमान सेनापति अपने दो भाइयों, दूसरे संबंधियों एवं कितने ही अनुयायियों-सहित मार डाला गया। बात यह हुई कि जिस समय मुसलमानों की सेना में विजय की खुशियां मनाई जा रही थीं उसी समय हुसेनखां की दृष्टि एक किनारे पर खड़े हुए एक राजपूत सरदार पर पड़ी, जो अपने दो हज़ार सैनिकों-सहित ऊंटों पर सामान लादकर भागने में व्यस्त था। यह देखते ही वह अपने थोड़े से साथियों-सहित उधर बढ़ा। राजपूत एक ऊंचे टीले पर थे और सैयद नीचे। उनके निकट पहुंचते ही राजपूतों ने गोलियां चलाईं और वे भागने को भी उद्यत हुए, परन्तु उनका पहला ही वार इतना कारगर हुआ कि फ़ौजदार अपने दोनों भाइयों एवं पचास साथियों सहित वहीं खेत रहा। मुखियों की मृत्यु मुसलमानों के लिए बड़ी हानिकारक सिद्ध हुई और मुसलमान सैनिक जो इधर-उधर

अजीतसिंह और जयसिंह का सांभर पर आक्रमण करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ८७-८। 'वीरविनोद' में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ८३४)।

इस प्रकार सांभर पर अधिकार कर लेने के बाद वहां की आय दोनों नरेशों में बराबर-बराबर बांटी जाने का निर्णय होकर वहां दोनों के अधिकारी रख दिये गये। इसके बाद ही डीडवाणा पर भी महाराजा अजीतसिंह का अधिकार हो गया[1]।

दुर्गादास का मारवाड़ से निर्वासित किया जाना

अपनी अपूर्व वीरता, स्वामीभक्ति, युद्ध-कौशल, राजनैतिक योग्यता एवं स्वार्थत्याग के कारण दुर्गादास की प्रतिष्ठा राठोड़ सरदारों एवं अन्य राजाओं आदि में बढ़ी हुई थी। उसकी यह बढ़ती हुई प्रतिष्ठा महाराजा को असह्य होने से उसने बुरे लोगों के बहकाने में आकर दुर्गादास को, जिसने उस (अजीतसिंह) के बाल्यकाल से ही उसकी पूरी मदद की थी, वि० सं० १७६५ के अन्त के आस-पास मारवाड़ से निकाल दिया[2]। इससे महाराजा की बड़ी बदनामी

वह देवजानी के कोट में चला गया। अनन्तर मथुरा का फौजदार सैयद ग़ैरतख़ां, नारनोल का सैयद हसनख़ां और आंबेर का सैयद हुसेनअहमद आठ हज़ार सवार और विशाल तोपख़ाने के साथ आये। दोनों राजाओं के पास बीस-पचीस हज़ार फौज थी। परस्पर लड़ाई होने पर सैयद सरदार, जो हाथी पर था, मारा गया, अलीमुहम्मद पकड़ लिया गया और मुसलमानों की अन्य सेना भाग गई, जिसका महाराजा की फौज ने पांच कोस तक पीछा किया। इस लड़ाई में हाथी, घोड़े आदि बहुत सा सामान विजेताओं के हाथ लगा। महाराजा की तरफ़ से राठोड़ भीम सबलसिंहोत कूंपावत (आसोप), भाटी किशनसिंह (आटण), राठोड़ केसरीसिंह काशीसिंहोत आदि काम आये और अन्य कितने ही घायल हुए (जि० २, पृ० ८९-९०)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० २, पृ० ९०। "वीरविनोद" (भाग २, पृ० ८३५-६) में दुर्गादास का उदयपुर के पचोली बिहारीदास के नाम का एक पत्र छपा है, जिससे पाया जाता है कि दोनों राजाओं (जयसिंह और अजीतसिंह) ने महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) को भी सहायतार्थ बुलाया था परन्तु दुर्गादास उस समय उसे लाने के लिए न जा सका जिससे महाराणा स्वयं सम्मिलित न हुआ, जैसा कि जोधपुर राज्य की ख्यात से भी प्रकट है (जि० २, पृ० ९१ तथा ११६)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सांभर-विजय के बाद वहां डेरे होने पर दुर्गादास ने अपनी सेना-सहित अलग डेरा किया। महाराजा ने उससे मिलने-

हुई[1]। दुर्गादास मारवाड़ का परित्याग कर उदयपुर महाराणा (अमरसिंह द्वितीय) की सेवा में चला गया[2]। महाराणा ने उसे विजयपुर की जागीर[3] देकर अपने पास रक्खा और उसके लिए पांचसौ रुपये रोज़ाना नियत कर दिये[4]। पीछे से वह रामपुरे का हाकिम नियत हुआ[5], जहां रहते समय

(सरदारों की पंक्ति) में डेरा करने को कहा तो उसने उत्तर दिया कि मेरी तो उमर अब थोड़ी रह गई है, मेरे पीछे के लोग मिसल में डेरा करेंगे। दुर्गादास को महाराजा के इस व्यवहार का ध्यान रहा और जब वह राणा को बुलाने के लिए भेजा गया तो वहां से लौटा ही नहीं (जि० २, पृ० ११६)।

(१) इस विषय में निम्नलिखित पद्य प्रसिद्ध है—

महाराज अजमालरी जद पारख जाणी।
दुर्गो देशां काढ़ियो गोलां गांगाणी॥

आशय—महाराज अजमाल (अजीतसिंह) की परीक्षा तो तब हुई जब उसने दुर्गो(दुर्गादास) को देश से निकाल दिया और गोलों को गागाणी जैसी जागीर दी।

(२) बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास के साथ उसके दो पुत्र तेजकरण और महेशकरण उदयपुर गये। अभयकरण महाराजा जयसिंह के पास गया और चैनकरण समदरडी में ही रहा (ऐतिहासिक बातें, संख्या २६८)।

(३) वीरविनोद, भाग २, पृ० ९९३-४। उक्त पुस्तक में विजयपुर की जागीर के सम्बन्ध के दुर्गादास के बिहारीदास पंचोली के नाम के वि० सं० १७७४ कार्तिक वदि ६ के पत्र की नक़ल छपी है।

बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास को सादड़ी की जागीर मिली थी, जहा रहते समय उसने अपनी नौ बहिन-बेटियों के विवाह किये (ऐतिहासिक बातें, संख्या २६७)।

(४) टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० १०३४। टॉड ने महाराणा के नाम लिखे हुए बादशाह बहादुरशाह के एक पत्र का उल्लेख किया है, जिसमें इसका वर्णन है। उससे यह भी पाया जाता है कि बादशाह ने महाराणा को दुर्गादास को सौंपने के विषय में लिखा, जिसे उसने अस्वीकार कर दिया।

(५) वीरविनोद, भाग २, पृ० ९९२। वहां रहते समय वि० सं० १७७४ कार्तिक वदि ५ को दुर्गादास ने महाराणा के नाम एक अर्ज़ी भेजी, जिसकी नक़ल उक्त पुस्तक में छपी है।

उसकी वि० सं० १७७५ मार्गशीर्ष सुदि ११ (ई० स० १७१८ ता० २२ नवंबर) को मृत्यु हुई[1]। उसका अन्तिम संस्कार क्षिप्रा नदी के तट पर हुआ[2]।

वि० सं० १७६५ (ई० स० १७०८) के मार्गशीर्ष मास में दोनों नरेशों ने आंबेर की ओर प्रस्थान किया। आंबेर पहुंचकर जयसिंह वहां की गद्दी पर बैठा। महाराजा ने उसे टीके में हाथी-घोड़े दिये। कुछ समय बाद अजीतसिंह वहां से सांभर लौट गया[3]।

जयसिंह का आंबेर पर अधिकार होना

इसी बीच रूपनगर (कृष्णगढ़) के राजा राजसिंह (मानसिंहोत) ने, जो अजीतसिंह के भयसे अपनी ननसार देवलिया में जा रहा था,

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी दुर्गादास का मेवाड़ में ही मरना लिखा है (जि० २, पृ० ११६)।

चंडू के यहां से प्राप्त जन्मपत्रियों के संग्रह में दुर्गादास का जन्म वि० सं० १६६५ द्वितीय श्रावण सुदि १४ (ई० स० १६३८ ता० १३ अगस्त) सोमवार को होना लिखा है। बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास ने ८० वर्ष ३ मास २८ दिन की उमर पाई (ऐतिहासिक बातें, संख्या २७१)। इसके अनुसार उसकी मृत्यु की ऊपरि-लिखित तिथि ही आती है।

(२) इस विषय में निम्नलिखित प्राचीन पद्य प्रसिद्ध है—

अण घर याही रीत दुर्गो सफरां दागियो।

आशय—इस घराने (जोधपुर) की ऐसी ही रीति है कि दुर्गादास का दाह भी सफरां (क्षिप्रा) नदी के तट पर हुआ (मारवाड़ में नहीं)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ९१। टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० १०१५।

इर्विन-कृत "लेटर मुगल्स" से पाया जाता है कि राजा जयसिंह ने तीन हज़ार सवार और पैदल सेना के साथ रात्रि के समय आक्रमण कर आंबेर के फ़ौजदार सैयद हुसेनख़ां को भगा दिया और इस प्रकार उसका वहां अधिकार हो गया (जि० १, पृ० ६९)।

अजीतसिंह और जयसिंह के नाम उनके राज्यों का फरमान होना

शाहज़ादे अज़ीमदीन (? अज़ीमुश्शान) को लिखा कि दोनों राजाओं के पास बड़ी सेना है और उनका दिल्ली तक बिगाड़ करने का इरादा है, अतएव उन्हें उनके वतन (जोधपुर और आंबेर) दिला दिये जावें तो अच्छा हो। इसपर शाहज़ादे ने बादशाह से अर्ज़कर दोनों राजाओं के नाम उनके इलाक़ों के फ़रमान लिखवाकर भिजवा दिये। राजसिंह फ़रमान लेकर अजीतसिंह के पास गया, जिसपर वह जोधपुर चला गया[1]।

पाली के ठाकुर को छल से मरवाना

जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने पाली के ठाकुर मुकुन्ददास चांपावत को धोखे से मरवा डाला। महाराजा ऊपर से तो उससे खुश था, पर भीतर ही भीतर वह उससे जलता था, क्योंकि पाली की जागीर और मनसब उसे बादशाह की तरफ़ से प्राप्त हुआ था। मुकुन्ददास क़िले पर बुलवाया गया, जहां छीपिया के ठाकुर प्रतापसिंह ऊदावत और सबलसिंह कूंपावत ने उसको मार डाला। इसपर मुकुन्ददास के वीर राजपूतों भीमा और धन्ना[2] ने प्रतापसिंह को मारकर बदला लिया और आप भी मारे

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ६१। इर्विन-कृत "लेटर मुगल्स" से भी पाया जाता है कि शाहज़ादे अज़ीमुश्शान के बीच में पड़ने से ई० स० १७०८ ता० ६ अक्टोबर (वि० सं० १७६५ कार्तिक सुदि ४) को अजीतसिंह तथा जयसिंह शाही सेवा में बहाल कर लिये गये (जि० १, पृ० ७१)।

(२) भीमा चौहान और धन्ना गहलोत था तथा दोनों मामा भांजे लगते थे। सरलहृदय मुकुन्ददास के मारे जाने की ख़बर सुनते ही उन्होंने बलपूर्वक तारालीपोल के किवाड़ तोड़कर महल के भीतर प्रवेश किया और प्रतापसिंह को मारकर अपने स्वामी का वैर लिया तथा राजसेना से वीरतापूर्वक लड़कर वे स्वयं भी मारे गये। वे राजपूताने में अप्रतिम वीर माने जाते हैं। उनके विस्तृत परिचय के लिए देखो मलसीसर (जयपुर) के विद्यानुरागी शेखावत ठाकुर भूरसिंह-द्वारा संगृहीत "विविध संग्रह" (प्रथम संस्करण); पृ० ११०-१२।

गये[1]।

उसी वर्ष पौष मास मे महाराजा ने ससैन्य नागोर की तरफ़ प्रस्थान कर गांव उचेरे मे डेरा किया। वहां के स्वामी इन्द्रसिंह के पुत्र मोहकमसिंह को इसकी पहले से खबर मिल जाने पर वह वहां से भाग गया। फिर महाराजा का डेरा मूंडवा में होने पर इन्द्रसिंह की माता तथा कुंवर अजबसिंह उसके पास उपस्थित हो गये। इन्द्रसिंह की माता ने महाराजा से प्रार्थना कर नागोर के संबंध में उसकी माफ़ी प्राप्त की। पीछे से इन्द्रसिंह भी अपने पुत्र-पौत्र सहित हाज़िर हो गया। कुछ समय बाद इन्द्रसिंह का कुंवर २०० सवारों के साथ जोधपुर जाकर माघ सुदि २ (ई० स० १७०६ ता० १ जनवरी) को महाराजा के पास उपस्थित हुआ और चार दिन वहां रह कर लौटा[2]।

महाराजा का नागोर पर जाना

---

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ८३७-८। जोधपुर राज्य की ख्यात जि० २, पृ० ८५-६। इस सम्बन्ध में नीचे लिखी कविता प्रसिद्ध है—

आजूणी अधरात, महळज रूणी मुकंदरी।
पातलरी परभात, भली रुवाणी भीमड़ा॥
पांच पहर लग पीळ, जड़ी रही जोधाणरी।
रै गढ़ ऊपर रौळ, भली मचाई भीमड़ा॥
चांपा ऊपर चूक, ऊदा करे न आदरे।
धन्ना वाळी थूक, जण जण ऊपर जूझवे॥
भीमा धन्ना सारखा, दो भड़ राख दुराह।
सुण चन्दा सूरज कहे, राह न रोके राह॥
गढ़ सारखी गहलोत, कर सारखो पातल कमध।
मुकन रुघारी मोत, भली सुधारी भीमड़ा॥

रुघा (रघुनाथ) मुकन्ददास का भाई था, जो उसके साथ ही मारा गया था।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ६१-२।

महाराजा अजीतसिंह के महाराणा अमरसिंह (दूसरा) के नाम के वि० सं०

उन्हीं दिनों अजमेर के सूबेदार शुजाअतखां ने महाराजा से कहलाया कि बादशाह ने मुझे यहां से हटा दिया है। आपने सांभर एवं डीडवाणा पर अधिकार कर लिया और सैयदों को (सांभर में) मारा, इससे बादशाह मुझसे नाराज़ है; अतएव मैं तो वतन को जा रहा हूं। यहां फीरोज़खां का पुत्र नियुक्त हुआ है, पर वह भय के कारण नहीं आ रहा है और उज्जैन के मार्ग से आगरे चला गया है, अतएव आप आकर अजमेर पर अधिकार कर लें। वास्तव मे यह सब उसका छल था और वह चाहता था कि महाराजा के पहुंचते ही उसे मार डाले। महाराजा ने पचीस-तीस हज़ार फ़ौज एकत्रकर वि० सं० १७६५ फाल्गुन सुदि ५ (ई० स० १७०६ ता० ३ फ़रवरी) को प्रस्थान किया। उधर शुजाअतखां ने मेवाती फ़ीरोज़खां के पुत्र (पुर मांडल का थानेदार) के पास से तथा अन्य स्थलों से सेना मंगवा रक्खी थी और दरवाज़े के बाहर खाई खोदकर वह तैयार बैठा था। दांतड़ा पहुंचकर जब महाराजा को यह सब हाल ज्ञात हुआ तो उसने अन्य स्थानों से तोपखाना तथा फौज बुलवाकर चैत्र वदि ७ (ता० १६ फ़रवरी) को आक्रमण किया। कई दिन तक लड़ाई होने पर भी जब शुजाअतखां को विजय के दर्शन न हुए तो उसने रूपनगर के स्वामी राजसिंह की मारफ़त हाथी, घोड़े और ४५००० रुपये देकर घेरा उठवा दिया[1]।

अजीतसिंह का अजमेर के सूबेदार पर आक्रमण करना

१७६५ माघ सुदि ७ (ई० स० १७०६ ता० ७ जनवरी) के खरीते से भी इस घटना की पुष्टि होती है, जो उदयपुर राज्य में विद्यमान है। आगे चलकर उसमें महाराजा ने लिखा है कि अब तक जो कार्य हुए हैं वह सब आपकी कृपा से ही हुए हैं और आगे भी जो होंगे आपकी सहायता से होंगे। साथ ही उसमें उसने शाहज़ादे अज़ीम के साथ, जो उधर आ रहा था, स्वयं मुकाबिला करने की बात लिखकर महाराणा को भी इसके लिए तैयार रहने को लिखा। इससे स्पष्ट है कि उस समय तक अजीतसिंह को महाराणा की तरफ़ से सहायता मिलती रही थी।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ६३-४। "वीरविनोद" में भी महाराजा का अजमेर से रुपये वसूल करना लिखा है (भाग २, पृ० ८३१)।

बहादुरशाह के राज्यसमय के ता० ४ सफ़र सन् जलूस ३ (वि० सं० १७६६

कई रोज़ अजमेर में रहकर महाराजा देवलिया गया, जहां उसने बिना मुहूर्त के श्रावणादि वि० सं० १७६५ (चैत्रादि १७६६) चैत्र सुदि १२ (ई० स० १७०६ ता० ११ मार्च) को महारावत पृथ्वीसिंह की पुत्री से विवाह किया। वहां से वैशाख वदि ५ (ता० १९ मार्च) को वह जोधपुर लौटा[1]।

महाराजा का देवलिया में विवाह होना

अजमेर की चढ़ाई की खबर बादशाह बहादुरशाह के पास दक्षिण में पहुंची तो नवाब असदखां ने ता० ११ सफ़र सन् जुलूस ३ (वि० सं० १७६६ प्रथम वैशाख सुदि १३=ई० स० १७०९ ता० ११ अप्रेल) को शुजाअतखां को महाराजा अजीतसिंह आदि को समझाने के लिए खत लिखा[2]। ई० स० १७०९ ता० २५ दिसंबर (वि० सं० १७६६ पौष सुदि ५) को बहादुरशाह ने नर्मदा को पार किया। अनन्तर वह मांडू, नालछा, देपालपुर आदि स्थानों में होता हुआ अजमेर से तीस कोस दूर दांदवा सराय में ठहरा। वहां यारमुहम्मदखां कुल और हांसी का नाहरखां, जो विद्रोही राजाओं के पास भेजे गये थे, उनके मंत्रियों आदि को लेकर बादशाह के पास पहुंचे। ई० स० १७१० ता० २२ मई (वि० सं० १७६७ ज्येष्ठ सुदि ५) को शाहज़ादे अज़ीमुश्शान ने दोनों राजाओं के पत्र बादशाह के समक्ष पेश किये। उस (शाहज़ादे) के प्रार्थना करने पर बादशाह ने उनके अपराध क्षमा कर दिये। शाहज़ादे ने मंत्रियों को खिलअत दीं। इसके चार दिन पश्चात् बादशाह के लोडा (? टोडा) पहुंचने पर महाराणा अमरसिंह, महाराजा अजीतसिंह और जयसिंह के सेवकों के

महाराजा का बादशाह के पास हाज़िर होना

प्रथम वैशाख सुदि ६ = ई० स० १७०९ ता० ४ अप्रेल) के अख़बार से भी पाया जाता है कि अजमेर के निवासियों से रुपये वसूलकर अजीतसिंह ने वहां से डेरा उठाया। ये अख़बार "अख़बारात-ए-दरबार-ए-मुअल्ला" के नाम से प्रसिद्ध हैं और जयपुर के संग्रह में सुरक्षित हैं।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ९९। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८३९। ऊपर टिप्पण १ में दिये हुए अख़बार से भी बीस हज़ार सवारों के साथ महाराजा अजीतसिंह का अपनी शादी के लिए देवलिया जाना स्पष्ट है।

(२) वीरविनोद भाग २, पृ० ८३९-४०।

लिए खिलअतें भेजी गईं। इस अवसर पर एक खिलअत दुर्गादास के पास से पत्र लानेवाले व्यक्ति को भी दी गई। इसी बीच सरहिन्द के उत्तर से सिक्खों के विद्रोह की ख़बर आई। ऐसी परिस्थिति में राजपूताने के राजाओं के साथ शीघ्रातिशीघ्र मेल करना बादशाह के लिए आवश्यक हो गया। वज़ीर मुनइमखां के निवेदन करने पर उसका पुत्र महाबतखां दोनों राजाओं अजीतसिंह और जयसिंह को आश्वासन देकर उन्हें लाने के लिए भेजा गया। इसके तीन दिन बाद देवराई (दौराई) में डेरे होने पर बादशाह के पास खबर आई की गंगवाना में दोनों राजाओं से मिलकर महाबतखां ने ता० २० जून (आषाढ सुदि ५) को उन्हें शाही सेवा में उपस्थित होने के लिए राज़ी कर लिया है। इसपर मुनइमखां भी दोनों राजाओं के पास भेजा गया। ता० २१ जून (आषाढ सुदि ६) को अजीतसिंह और जयसिंह महाबतखां के साथ बादशाह के पास उपस्थित हुए और प्रत्येक ने दो सौ मोहरें तथा दो हज़ार रुपये उसको नज़र किये। इसके बदले में बादशाह की तरफ़ से उन्हें ख़िलअत, रत्न-जटित तलवार और कटार, बेशकीमत रूमाल, हाथी, फ़ारस के घोड़े आदि दिये गये। इसके बाद बादशाह ने उन्हें अपने-अपने देश लौटने की इजाज़त दी[1]।

(१) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० १, पृ० ७१-२। आगे चलकर उसी पुस्तक में लिखा है कि राजपूत मुसलमानों के वचन का कितना कम भरोसा करते थे यह तत्कालीन इतिहास लेखक कामवरख़ां के लेख से प्रकट होता है। कामवरख़ां ने, जो उस समय मौजूद था, देखा कि चारों ओर पहाड़ियों और मैदानों में राजपूत भरे हुए थे। कई हज़ार राजपूत तो दो-दो, तीन तीन की संख्या में बन्दूक़ अथवा तीर-कमान से सज्जित ऊंटों पर सवार पहाड़ियों की घाटियों में छिपे हुए थे। वस्तुत. विश्वासघात का ज़रा भी आभास पाने पर वे अपने स्वामियों की रक्षा के लिए अपने प्राण तक देने को तैयार थे।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में जो वृत्तान्त दिया है वह नीचे लिखे अनुसार है—

"वि० स० १७६७ में बहादुरशाह दक्षिण से अजमेर गया। इसपर राज-परिवार को पोकरण फलोधी में भेजकर महाराजा ने भंडारी खींवसी को अजमेर भेजा, जिसने शाहज़ादे अज़ीमशाह (? अज़ीमुश्शान) की मारफ़त बादशाह से मुलाक़ात कर,

बादशाह के पास से विदा होकर दोनों राजा पुष्कर गये, जहां वे पर्व स्नान के लिए ठहरे। वहां से दोनों अलग हो-कर अपने-अपने राज्यों को गये। अजीतसिंह जुलाई मास में जोधपुर पहुंचा[1]।

महाराजा का पुष्कर होते हुए जोधपुर जाना

महाराजा की तरफ से भंडारी पेमसी ने देवगांव (ज़िला अजमेर) जाकर वहां के स्वामी से १५००० रुपये वसूल किये थे। कुछ ही समय बाद महाराजा ने स्वयं वहां जाकर राठोड़ नाहरसिंह[2] से गढ़ी खाली कर देने को कहलाया। उसने अर्ज़ की कि मुझे तो राठोड़ दुर्गादास ने यहां बैठाया है और मैं तो आपका सेवक हूं। तब फिर १५००० रुपये पेशकशी के

देवगांव के स्वामी से पेशकशी वसूल करना

अपने स्वामी के लिए काबुल के सूबे का फरमान प्राप्त किया। पीछे बादशाह का डेरा गांव सढोरे (?) में हुआ, जहां रहते समय भंडारी खीवसी पुनः उसके पास गया। फिर उसके कहलाने पर महाराजा बादशाह के पास गया। आंबेर से जयसिंह भी गया और दोनों शाहज़ादे की मारफत बादशाह की सेवा में उपस्थित हुए (जि० २, पृ० ६६)।

"वीरविनोद" में भी वि० सं० १७६७ में भंडारी खींवसी को भेजकर शाहज़ादे अज़ीमुश्शान की मारफत बादशाह से फरमान पाना और खुद अजीतसिंह का बादशाह के पास जाना लिखा है (भाग २; पृ० ८४०)। टॉड कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि अजीतसिंह के नागोर पर चढ़ाई करने से अप्रसन्न हो इन्द्रसिंह ने इसकी शिकायत बादशाह से की। इसपर बादशाह अजीतसिंह से बड़ा नाराज़ हुआ। तब दोनों राजाओं ने भयभीत होकर उससे मेल करना ही ठीक समझा। फरमान और पत्र प्राप्त होने पर अजमेर में वे बादशाह के पास वि० सं० १७६७ आषाढ़ वदि १ को उपस्थित हो गये, जहां उनका समुचित सम्मान होकर जोधपुर और आंबेर की जागीरें उन्हें मिल गईं (जि० २, पृ० १०१५-६)।

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स, जि० १, पृ० ७२। टॉड कृत "राजस्थान" (जि० २, पृ० १०१६) में भी इसका उल्लेख है, पर जोधपुर राज्य की ख्यात तथा 'वीरविनोद' में महाराजा का सीधे जोधपुर जाने का उल्लेख है और उसका पुष्कर ठहरना नहीं लिखा है।

(२) चन्द्रसेन के वंशधर [illegible] के छोटे भाई [illegible] के स्वामी गिरधारीसिंह का पौत्र एवं देवगांव बघेरा का सरदार।

ठहराकर तथा उसके पुत्र के सदैव चाकरी में रहने और बुलाये जाने पर स्वयं उसके हाज़िर होने की शर्त कर महाराजा ने वहां से कूच किया[1]।

राजा राजसिंह पर महाराजा की चढ़ाई

वि० सं० १७६८ (ई० स० १७११) के भाद्रपद मास में महाराजा फ़ौज लेकर कृष्णगढ़ गया, जहां के राजा राजसिंह से उसने दंड वसूल किया[2]। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि कृष्णगढ़ में झंडा लगाकर महाराजा रूपनगर गया, जहां चार दिन तक लड़ाई होने के बाद बात ठहराकर राजसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो गया[3]।

महाराजा का नाहन के विरोधी सरदारों पर जाना

उसी वर्ष बादशाह की आज्ञा से महाराजा नाहन (पंजाब) गया, जिधर के विरोधी सरदारों का उसने दमन किया। वहां से वह गंगा-स्नान के लिए गया और वसन्त ऋतु में जोधपुर लौटा[4]।

बादशाह बहादुरशाह की मृत्यु

उसी वर्ष पंजाब के सिक्खों का उपद्रव दबाने के लिए बादशाह स्वयं पंजाब की तरफ़ गया। ई० स० १७११ ता० ११ अगस्त (वि० सं० १७६८ प्रथम भाद्रपद सुदि ६) को वह लाहोर पहुंचा। ई० स० १७१२ (वि० सं० १७६८) के जनवरी मास के मध्य में वह बीमार पड़ा। उसके बाद क्रमशः उसकी दशा बिगड़ती गई और हि० स० ११२४ ता० २१ मुहर्रम (ता० २६

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६६।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४०।

(३) जि० २, पृ० ६६-७। "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि मारवाड़ के राजा के अजमेर पर अधिकार करने के कारण रूपनगर का राजा राजसिंह उससे विरोध रखने लगा था और उसने दिल्ली जाकर बादशाह से उसकी शिकायत तक की थी (चतुर्थ भाग, पृ० ३०४०)। सम्भवतः यही चढ़ाई का कारण रहा हो।

(४) टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० १०२०। अन्य किसी ख्यात आदि में इसका उल्लेख नहीं है।

फ़रवरी = फाल्गुन वदि ७) को उसका देहान्त हो गया[1]।

बहादुरशाह के मरते ही उसके पुत्रों, अज़ीमुश्शान, जहांदारशाह, जहांशाह (खुजस्तह अख़्तर) तथा रफ़ीउल्क़द्र (रफ़ीउश्शान) के बीच बादशाहत के लिए विरोध पैदा हुआ। उनमें से अज़ीमुश्शान एक तरफ़ रहा और शेष तीनों भाइयों ने सम्मिलित होकर उसका विरोध किया। कई लड़ाइयां होने के बाद अज़ीमुश्शान और उसके बहुत से पक्षपाती मारे गये तथा तीनों शाहज़ादों की विजय हुई। पीछे से उनमें भी संपत्ति के बंटवारे के संबंध में झगड़ा हुआ और दोनों भाइयों को मारकर मुइज्जुद्दीन जहांदारशाह बादशाह बना। लाहोर से चलकर हि० स० ११२४ ता० १८ जमादिउल्अव्वल (वि० सं० १७६९ आषाढ़ वदि ५ = ई० स० १७१२ ता० १२ जून) को वह दिल्ली पहुंचा, जहां उसने अपने दूसरे विरोधियों को मरवाया या क़ैद में डलवा दिया। वह भी अधिक समय तक राज्य-सुख न भोगने पाया था कि उस-पर अज़ीमुश्शान के पुत्र फ़र्रुख़सियर ने चढ़ाई कर दी।

बादशाहत के लिए लड़ाई

औरंगज़ेब के समय अज़ीमुश्शान को बंगाल और बहादुरशाह के समय उड़ीसा, इलाहाबाद और अज़ीमाबाद (पटना) की सूबेदारी मिली थी, जहां क्रमशः जाफ़रख़ां, सैयद अब्दुल्लाख़ां एवं सैयद हुसैनअलीख़ां को अपनी तरफ़ से नियुक्त कर वह खुद बादशाह (बहादुरशाह) की सेवा में

(१) बील, एन ओरिएन्टल बायोग्राफ़िकल डिक्शनरी पृ० ११।

बादशाह के मरने के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न पुस्तकों में भिन्न भिन्न [illegible] मिलते हैं। "दरबारे अकबर" से पाया जाता है कि बहादुरशाह की मृत्यु [illegible] के हाथ से हुई (चतुर्थ भाग, पृ० १०१२-३)। जोधपुर राज्य की ख्यात में [illegible] उल्लेख है (जि० २, पृ० ११)। ख़ाफ़ीख़ां लिखता है कि वह [illegible] के ७ ८ दिन में मर गया। "मिरात इ वारदात" और "[illegible]" में उसका पेट के दर्द से मरना लिखा है। "[illegible]" में [illegible] उसका मिज़ाज और होश बदल जाना और फिर [illegible] लिखा है। [illegible] लिखा है [illegible] मरना लिखा है।

रहता था। अज़ीमुश्शान की मृत्यु के समय उसका पुत्र फ़र्रुख़सियर ज़नाने-सहित अकबरनगर में था। जहांदारशाह ने बादशाह होने पर फ़र्रुख़सियर को गिरफ्तार कर भेजने के लिए जाफ़रख़ां के पास एक फ़रमान भेजा। स्वामिभक्त जाफरखां ने शाहज़ादे को आगाह कर दिया। इसपर पटने में सैयद हुसेनअलीख़ां के पास जाकर उसने उससे मदद मांगी। उसने मदद देना स्वीकार कर अपने भाई अब्दुल्लाख़ां को भी अपने शरीक किया। तदनन्तर फ़र्रुख़सियर को बादशाह घोषित कर हुसेनअलीख़ां ने पटने से प्रस्थान किया। यह खबर मिलने पर जहांदारशाह ने सैयद अब्दुलग़फ़्फ़ारखां कुर्देज़ी को दस-बारह हज़ार सवारों के साथ इलाहाबाद की हुकूमत पर भेजा, पर वह अब्दुल्लाख़ां की सेना-द्वारा परास्त होकर मार डाला गया। फिर इलाहाबाद से अब्दुल्लाख़ां को भी साथ लेकर फ़र्रुख़सियर आगे बढ़ा। इसपर जहांदारशाह का बड़ा शाहज़ादा अअज़्ज़ुद्दीन उसके मुकाबले के लिए गया, पर खजवा गांव में उसकी हार हुई। तब हि० स० ११२४ ता० १२ ज़िल्काद (मार्गशीर्ष सुदि १५ = ता० १ दिसम्बर) सोमवार को जहांदारशाह स्वयं मुकाबले के लिए दिल्ली से रवाना हुआ। आगरे के आगे समूनगर के निकट विपक्षी दलों का सामना होने पर जहांदारशाह हारकर आगरे के किले में चला गया। फिर उसके दिल्ली पहुंचने पर आसफुद्दौला असदख़ां ने उसे नज़रबन्द कर दिया। इस प्रकार विजय प्राप्तकर ता० १५ ज़िलहिज (माघ वदि २ = ई० स० १७१३ ता० २ जनवरी) को फर्रुख़सियर ने दरबार किया, जिसमें अब्दुल्लाख़ां की मारफ़त हाज़िर होकर तूरानी सरदारों ने नज़रें पेश कीं। फिर अब्दुल्लाख़ां को कई उमरावों के साथ दिल्ली का बन्दोबस्त करने के लिए भेजकर एक सप्ताह बाद फ़र्रुख़सियर ने स्वयं भी उधर प्रस्थान किया। हि० स० ११२५ ता० १४ मुहर्रम (माघ सुदि १५ = ता० ३० जनवरी) को दिल्ली के पास बारहपुले में पहुंचकर उसने अब्दुल्लाख़ां को "कुतुबुल्मुल्क" का ख़िताब तथा सात हज़ार ज़ात सात हज़ार सवार का मनसब देकर अपना वज़ीर-आज़म और हुसेनअलीख़ां को "इमामुल्मुल्क" का ख़िताब तथा सात

। जार ख़ान सात हज़ार सवार का मनसब देकर अपना अमीरउलउमरा वकीलउल्मुल्क अव्वल बनाया। इस अवसर पर अन्य कई व्यक्तियों को भी मनसब, ख़िताब और ओहदे मिले। ता० १६ मुहर्रम (फाल्गुन वदि २ = ता० ११ फरवरी) को जहांदारशाह फांसी देकर मार डाला गया। इसके दूसरे दिन फ़र्रुख़सियर ने किले में प्रवेश किया[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि पूरब के सूबे में शाहज़ादा फ़र्रुख़सियर था, जिसके मुसाहिब बारहा के सैयद अब्दुल्लाख़ां और हुसेनअली थे। उसने ८० हज़ार फ़ौज के साथ दिल्ली की तरफ़ प्रस्थान किया। व्यय के लिए धन सैयद अपने मामा से ले आये। इसपर दिल्ली से जहांदारशाह ने उनका सामना करने के लिए प्रस्थान किया और जोधपुर से अजीतसिंह को सहायतार्थ बुलाया[2]। अजीतसिंह स्वयं तो न गया, पर उसने भंडारी विजयराज को भेज दिया और उसे ताकीद कर दी कि मुसलमान आपस में लड़ मरें तो ठीक नहीं तो उसी का साथ देना, जिसकी जीत होती देखो। जहांदारशाह ने और भी कई राजाओं और उमरावों को सहायतार्थ बुलाया, पर कोई गया नहीं। आगरे के निकट युद्ध होने पर जहांदारशाह पकड़ा गया, सैयद घायल हुए और फ़र्रुख़सियर दिल्ली के तख़्त का स्वामी हुआ। वज़ीर का पद और बख़्शीगीरी क्रमशः अब्दुल्लाख़ां और हुसेनअलीख़ां को मिली। अनन्तर बादशाह से आज्ञा प्राप्तकर विजयराज जोधपुर लौटा[3]।

ऊपर आये हुए वर्णन से स्पष्ट है कि सैयद-बन्धुओं की सहायता से ही फ़र्रुख़सियर दिल्ली के तख़्त का स्वामी बना था, पर सल्तनत मिलते

---

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ११३०-३५। इर्विन; लेटर मुगल्स; जि० १, पृ० १८६, २०५-४०, २४५-५५।

(२) इर्विन-कृत "लेटर मुगल्स" में भी जहांदारशाह-द्वारा अजीतसिंह एवं अन्य राजपूत राजाओं के बुलवाये जाने का उल्लेख है (जि० १, पृ० २२३)।

(३) जि० २, पृ० ९९-१००।

बादशाह का सैयदबन्धुओं से विरोध होना

ही इससे सैयद भाइयों की मर्ज़ी के खिलाफ़ लोगों को छोड़ने, मनसब आदि देना शुरू कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि बादशाह और वज़ीर के दिलों में फ़र्क आने लगा। स्वार्थी लोगों का बादशाह पर प्रभाव बढ़ने से इस विरोध में वृद्धि ही होती गई[1]।

आषाढ़ादि वि० सं० १७६९ (चैत्रादि १७७० = ई० स० १७१३) में महाराजा द्वारा बुलवाये जाने पर जूनिया के ठाकुर सुजानसिंह के पुत्र करणसिंह और जुझारसिंह[2] जोधपुर गये, जहां उनके पिता के

महाराजा का जूनिया के करणसिंह तथा जुझारसिंह को मरवाना

वैर[3] में उन्हें महाराजा के पक्ष के राठोड़ जैतसिंह रत्नसिंहोत (मेड़तिया, बोरूंदा का), राठोड़ शीतलसिंह जुझारसिंहोत (मेड़तिया, कोसाणा का), राठोड़ पृथ्वीसिंह दुलेराजोत (मेड़तिया, राहण का) आदि ने ज्येष्ठ सुदि १ (ता० १४ मई) को चूक कर मार डाला[4]।

इसके बाद उसी वर्ष (वि० सं० १७७०) भाद्रपद सुदि ५ (ता० २४ अगस्त) को महाराजा ने अपने आदमियों को भेजकर दिल्ली में नागोर के

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ११२४।

(२) इनके वंश में क्रमशः मेड़ू और पीसागण के ठिकाने हैं। जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार जैतारण का गांव रास इनके पट्टे में था (जि० २, पृ० १००)। "वीरविनोद" से पाया जाता है कि ये बड़े वीर थे और बादशाह की तरफ़ से इन्हें, बदनोर, पुर, मांडल आदि परगने मिले थे, जिसकी वजह से उदयपुरवालों के साथ इनका झगड़ा रहता था (भाग २, पृ० ७५२)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में वैर का कारण यह दिया है कि अजीतसिंह के राज्य पाने से पूर्व सुजानसिंह (केसरीसिंहोत, जूनिया का स्वामी) ने शाही सेवा स्वीकार कर ली थी। उसके एवज़ में उसे जागीर में सोजत और सिवाना मिले। उसकी महाराजा के राजपूतों से भी कई लड़ाइयां हुई (जि० २, पृ० ६७)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ६७ तथा १००। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१।

मोहकमसिंह को मरवाना

राव इन्द्रसिंह के कुंवर मोहकमसिंह को मरवा डाला। इसपर बादशाह ने इन्द्रसिंह को उसके छोटे कुंवर मोहनसिंह-सहित बुलवाया। महाराजा ने मोहनसिंह को भी मार्ग में दग़ा से मरवा दिया[1]।

इसके बाद ही बादशाह ने जोधपुर पर सेना रवाना की। राजपूतों का उपद्रव पहले—बहादुरशाह के राज्यकाल में—ही बढ़ गया था, जिसका समुचित प्रबंध नहीं होता था। उसके मरते ही जोधपुर में नियुक्त शाही अफ़सरों को निकालने और उनके घर नष्ट करने के अतिरिक्त अजीतसिंह ने अपने यहां गो-हत्या और आज़ान का दिया जाना बन्द करवा दिया। साथ ही उसने अजमेर पर भी कब्ज़ा कर लिया। फ़र्रुख़सियर

महाराजा पर शाही सेना की चढ़ाई

---

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ८४१। जोधपुर राज्य की ख्यात में इसका विस्तृत विवरण दिया है, जो इस प्रकार है—

"बादशाह फ़र्रुख़सियर के सिंहासनारूढ़ होने पर नागोर के राव इन्द्रसिंह का कुंवर मोहकमसिंह उसके पास दिल्ली गया। वहां रहनेवाले जोधपुर के वकीलों ने लिखा कि वह जोधपुर पाने के लिए प्रयत्नशील है तो महाराजा ने भाटी अमरसिंह केसोदासोत, राठोड़ अमरसिंह नाथावत और उसके भाई मोहकमसिंह (कीटणोद के), राठोड़ कर्णसिंह विजयसिंहोत (थोब का) एवं राठोड़ दुर्जनसिंह सबलसिंहोत जोधा (पाटोदी का) को बीस-पचीस सवारों के साथ उस (मोहकमसिंह) को चूककर मारने के लिए भेजा। वे व्यापारियों के रूप में दिल्ली पहुंचे और जब एक दिन कुंवर (मोहकमसिंह) संध्या-समय किसी नवाब के यहां से मातमपुर्सी करके लौट रहा था, उन्होंने उसे मार्ग में ही मार डाला। इससे प्रसन्न होकर महाराजा ने उनके लौटने पर उन्हें सिरोपाव तथा आभूषण आदि पुरस्कार में दिये। बादशाह ने इसपर राव इन्द्रसिंह और उसके छोटे कुंवर मोहनसिंह को दिल्ली बुलवाया, जिसपर वे एक दो हज़ार आदमियों के साथ रवाना हुए। इसकी ख़बर पाकर महाराजा ने राठोड़ दुर्जनसिंह, राठोड़ सूरजमल, राठोड़ शिवसिंह गोपीनाथोत (सरनावड़ा का), राठोड़ मोहकमसिंह और राठोड़ प्रतापसिंह को उनपर चूक करने के लिए भेजा। उन्होंने मार्ग में ही मोहनसिंह को, जब वह सो रहा था, मार डाला, जिससे राव इन्द्रसिंह अकेला ही दिल्ली गया (जि० २, पृ० १००-२)।"

ने अपने राज्यारम्भ में अजीतसिंह के पास इस विषय में लिखा, पर वहां से सन्तोषजनक उत्तर प्राप्त न होने से अन्त में चढ़ाई करने का ही निश्चय हुआ[1]। बादशाह की इच्छा स्वयं युद्ध में सम्मिलित होने की थी, पर स्वास्थ्य ठीक न होने एवं अन्य लोगों के समझाने से उसने अपना विचार स्थगित रक्खा और इस कार्य के लिए सैयद हुसेनअलीखां को नियुक्त किया[2]। इस अवसर पर बादशाह ने दुहरी चाल चली। इधर तो उसने अजीतसिंह के विरुद्ध हुसेनअलीखां को रवाना किया और उधर अजीतसिंह को गुप्तरूप से फ़रमान भेजकर लिखा कि वह जैसे भी हो हुसेनअलीखां को मार डाले[3]। इसके बदले में उसे बहुत कुछ इनाम-इकराम देने का वचन दिया गया। हि० स० ११२५ ता० २६ ज़िलकाद (वि० सं० १७७० पौष सुदि १ = ई० स० १७१३

(१) जोनाथन स्कॉट भी चढ़ाई का क़रीब क़रीब यही कारण देता है (हिस्ट्री ऑव् डेक्कन, जि० २, पृ० १२६)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इन्द्रसिंह के दिल्ली पहुंचने के बाद बादशाह ने सैयद हुसेनअलीख़ां की अध्यक्षता में एक बड़ी फौज मारवाड़ पर रवाना की (जि० २, पृ० १०२)। "वीरविनोद" से भी पाया जाता है कि नागोर के मोहकमसिंह और मोहनसिंह के मरवाये जाने से बादशाह अजीतसिंह से बड़ा नाराज़ हुआ और उसने हुसेनअलीख़ां को एक बड़ी फौज के साथ मारवाड़ पर भेजा (भाग २, पृ० ८४१)। टॉड ने भी यही कारण दिया है (राजस्थान, जि० २, पृ० १०२०)।

(२) जोनाथन स्कॉट लिखता है कि बादशाह ने मीर जुमला और उसके साथियों की सलाह से दोनों भाइयों (सैयद बन्धुओं) को अलग करने का यह उपाय स्थिर किया कि उनमें से एक को महाराजा अजीतसिंह को दंड देने के लिए भेज दिया जाय। तदनुसार अमीरुलउमरा (हुसेनअलीख़ां) इस कार्य के लिए रवाना किया गया (हिस्ट्री ऑव् डेक्कन, जि० २, पृ० १२६)। "वीरविनोद" में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ११२५)।

(३) "वीरविनोद" में भी इस आशय के फरमान के भेजे जाने का उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि यह फ़रमान महाराजा ने हुसेनअलीख़ां को दिखा दिया (भाग २, पृ० ११२५)।

ता० ७ दिसम्बर) को हुसेनअलीख़ां ने बादशाह से विदा ली। इस चढ़ाई में उसके साथ अन्य सरदारों में सरबुलन्दख़ां, अफ़्रासियाबख़ां, एतक़ादख़ां, दिलदिलेरख़ां, सैफ़ुद्दीनअलीख़ां, नज्मुद्दीनअलीख़ां, राजा गोपालसिंह भदोरिया तथा रूपनगर का राजा राजबहादुर (राजसिंह) आदि थे। हि० स० ११२५ ता० १५ ज़िलहिज (माघ वदि ३ = ता० २३ दिसम्बर) को अजीतसिंह के पास से एक प्रार्थनापत्र आया, पर वह सन्तोषजनक न होने से चढ़ाई का कार्य पूर्ववत् जारी रहा। फिर उस(महाराजा)का मुन्शी रघुनाथ एक हज़ार सवारों के साथ सन्धि की शर्तें तय करने के निमित्त सराय सहल में आया[1]। हुसेनअलीख़ां उस समय सराय अल्लावर्दीख़ां में था। उसने महाराजा अजीतसिंह-द्वारा रक्खी गई शर्तें अस्वीकार कर दीं। इसके बाद मुसलमान सेना पुनः आगे बढ़ी। उस समय राठोड़ सेना के सांभर से बारह कोस दक्षिण में होने की ख़बर थी और ऐसी अफ़वाह थी कि अवसर पाते ही वे मुसलमान फ़ौज पर आक्रमण करेंगे, परन्तु दिल्ली से अजमेर तक कोई घटना न घटी। सांभर के परगने से गुज़रते समय शाही सेना ने रूपनगढ़ का नाश किया। अजमेर पहुंचने पर शाही सेना कुछ दिनों तक आनासागर के किनारे पड़ी रही, जहां से महाराजा के पास क़ासिद भेजे गये। फिर वहां से प्रस्थान कर मुसलमान सेना पुष्कर होती हुई मेड़ता पहुंची, जहां एक थाना नियत कर दो हज़ार सेना रख दी गई। अजीतसिंह इसके पूर्व ही वहां से हट गया था। अजमेर और मेड़ता के बीच जोधपुर और जयपुर राज्यों के गांव मिले जुले थे। शाही सेना का आगमन सुनते ही जोधपुर के गांवों के निवासी गांव खाली कर चले गये। इसपर उन्हीं गांवों को नष्ट करने और लूटने की आज्ञा दी गई। यह देखकर जोधपुर के गांवों के निवासी अपने पड़ोसी जयपुर के गांववालों की [illegible] [illegible] अपने-अपने गांवों में रहने लगे। मेड़ता के मार्ग में ही हुसेनअलीख़ां

(१) ख़ाफ़ीख़ां-कृत "मुन्तख़बुल्लुबाब" में इस घटना का समय हि० स० ११२६ ता० १२ मुहर्रम (वि० सं० १७७० फाल्गुन वदि ४ = ई० स० १७१४ ता० २० जनवरी) दिया है।

ने अन्य लोगों से मन्त्रणा कर निर्णय किया कि यदि अपनी एक पुत्री का विवाह बादशाह से करने और अपने कुंवर को शाही सेवा में भेजने के लिए अजीतसिंह राज़ी न हो तो उसको पकड़कर उसका सिर दरबार में भेज दिया जाय। कुछ लोग उस समय जोधपुर पर आक्रमण करने के विरुद्ध थे, क्योंकि उन दिनों गर्मी अधिक होने के साथ ही पानी और गल्ले आदि की कमी और मंहगाई थी, परन्तु अपना बहुतसा सामान वहीं छोड़कर हुसेनअलीखां ने शीघ्र जोधपुर की तरफ़ बढ़ने का ही निश्चय किया। इस चढ़ाई के परिणाम की सूचना बादशाह के पास हि० स० ११२६ ता० १४ रबीउलअव्वल (वि० सं० १७७१ वैशाख वदि १ = ई० स० १७१४ ता० २० मार्च) को पहुंची। उससे पता चला कि एक ही रात में अजीतसिंह सांभर के निकट से हटकर मेड़ता और फिर वहां से जोधपुर चला गया, जहां उसे अपनी रक्षा की अधिक आशा थी, पर जब उसे इस बात की ख़बर मिली की शाही सेना बढ़ती ही आ रही है, तो अपने ज़नाने को पहाड़ी प्रदेश में भिजवाकर वह स्वयं बीकानेर जा रहा[1]। हुसेनअलीखां के मेड़ता के निकट पहुंचने पर महाराजा की तरफ़ से डेढ़ हज़ार सवारों के साथ एक दूत-दल सन्धि के लिए उसके पास पहुंचा। शाही अफ़सरों को शक था कि राजा को निकल जाने का अवसर देने के लिए यह केवल बहाना है, अतएव इसकी जांच करने के लिए हुसेनअलीखां ने उनसे कहा कि तुम्हें ज़ंजीरों से बांधा जायगा। पहले तो राजपूतों ने इसे अस्वीकार कर दिया, पर पीछे से वे इसके लिए राज़ी हो गये। उनमें से चार मुखिया ज़ंजीरों से बांधकर तंबू में लाये गये। उनको इस दशा में देख नीच प्रकृति के लोगों ने यही समझा कि शायद संधि की शर्तें ठुकरा दी गईं और उनमें से कितनों ने ही राजपूतों पर आक्रमण कर उन्हें लूटना शुरू कर दिया। इस गड़बड़ी को शान्त करने में बड़ा समय लगा। मुखियों को बुलाकर उनकी

(१) टॉड लिखता है कि अजीतसिंह ने धनी व्यक्तियों को सिवाना एवं अपने परिवारवालों तथा पुत्र को राडद्रा की मरुभूमि में भिजवा दिया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०२०)।

ज़ंजीरें खोल दी गई और उन्हें आश्वासन दिया गया। अन्त में मेड़ता पहुंचने पर सन्धि की शर्तें तय हो गई[1], जिनके अनुसार यह निश्चित हुआ कि महाराजा बादशाह के लिए अपनी पुत्री का "डोला[2]" भेजे, उसका पुत्र अभयसिंह हुसेनअलीख़ां के साथ शाही दरबार में जाय और बुलाये आने पर स्वयं महाराजा भी दरबार में उपस्थित हो[3]।

हुसेनअलीख़ां के मारवाड़ से लौटने पर सन्धि की शर्त के अनुसार

---

(१) जोनाथन स्कॉट लिखता है कि हुसेनअलीख़ां के आगमन से भयभीत होकर अजीतसिंह सपरिवार पहाड़ों में जा रहा और शाही दरबार की तरफ़ से अमीरुलउमरा का विरोध करने का इशारा मिलने पर भी उसने उसके पास दूत भेजकर अपने अपराधों की क्षमा चाही। चूंकि इसी समय शाही दरबार में बादशाह और उसके वज़ीर (अब्दुल्लाख़ां) के बीच विरोध बढ़ने लगा तथा उस (वज़ीर) को क़ैद करने का षड्यन्त्र रचा जाने लगा, इसलिये अब्दुल्लाख़ां ने अपने भाई को कई पत्र लिखकर उसे शीघ्र दिल्ली लौटने को लिखा। तब अधिक देर लगाना विपत्ति-जनक जान हुसेनअलीख़ां ने अजीतसिंह का अधीनता मानना स्वीकार कर लिया (हिस्ट्री ऑव् डेकन, जि० २, पृ० १२६)। "वीरविनोद" में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ११२५)।

(२) कन्या का पिता अपनी पुत्री का विवाह अपने यहां न कर उसे विवाह के लिए वर के यहां भेजता है, उसको राजपूताने में "डोला" कहते हैं।

(३) इर्विन; लेटर मुगल्स; जि० १, पृ० २८५-६०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१। जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑव् डेकन; जि० २, पृ० १२६।

इर्विन ने यह वर्णन ख़ाफ़ीख़ां के "तज़किरातुस्सलातीन-इ-चग़तिया", कामराज के "इब्रतनामा", मुहम्मद क़ासिम लाहोरी के "इब्रतनामा", मुहम्मद क़ासिम औरंगाबादी के "अहवाल-उल्-ख़वाक़ीन" और "मआसिरुलउमरा" के आधार पर लिखा है।

जोधपुर राज्य की ख्यात में केवल दो शर्तों—पुत्री का विवाह करने एवं अभयसिंह को बादशाह के पास भेजने—का उल्लेख है और यह सन्धि मेड़ते में भंडारी खींवसी-द्वारा होना लिखा है। उससे यह भी पाया जाता है कि हुसेनअलीख़ां के आगमन की ख़बर पाकर महाराजा ने चांपावत भगवानदास जोगीदासोत (भीन्नास), ऊदा भीम रघुनाथदासोत (दैवा) आदि कई व्यक्तियों को उसके पास भेजा था, पर उसका कोई परिणाम न निकला (जि० २, पृ० १०१-२)।

महाराजा अजीतसिंह ने अपने पुत्र अभयसिंह को उसके साथ कर दिया[1]।

कुंवर अभयसिंह का बादशाह के पास जाना

ता० ५ रज्जब (द्वितीय आषाढ़ सुदि ६ = ता० ७ जुलाई) को हुसेनअलीखां बादशाह के पास पहुंचा, जिसने उसके साथ गये हुए सरदारों को इनाम दिये। इसके तीसरे दिन अभयसिंह बादशाह के रूबरू पेश किया गया[2]। बादशाह ने सैयद अहमद जिलानी को सोरठ (सौराष्ट्र) से हटाकर अभयसिंह को वहां का हाकिम नियत किया। इसपर वह स्वयं तो दरबार में ही रहा, परन्तु उसने सोरठ का प्रबंध करने के लिए अपने कार्यकर्ता फ़तहसिंह कायस्थ को भेज दिया[3]। कुछ मास तक वहां ठहरकर श्रावणादि वि० सं० १७७१ (चैत्रादि १७७२ = ई० स० १७१५) के आषाढ़ मास में अभयसिंह बादशाह की आज्ञा प्राप्तकर जोधपुर लौटा। बादशाह ने उसके दरबार से प्रस्थान करते समय उसे सिरोपाव एवं आभूषण आदि दिये[4]।

सन्धि हो जाने और अभयसिंह के भंडारी खींवसी के साथ दिल्ली चले जाने पर वि० सं० १७७१ (ई० स० १७१४) के आश्विन मास में

महाराजा का अहमदाबाद जाना

महाराजा जोधपुर से सिवाणा होता हुआ बाड़मेर-कोटड़ा गया। वहां से उसने खींवसी को लिखा कि गुजरात, मारोठ, पर्वतसर, बावल और केकड़ी

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार भंडारी खींवसी भी अभयसिंह के साथ दिल्ली गया (जि० २, पृ० १०४)।

(२) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० १, पृ० २६०।

(३) कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, जि० १, भाग १, पृ० २१७। मीरात-इ-अहमदी, भाग २, पृ० १।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १०४। टॉड लिखता है कि अभयसिंह के दरबार में उपस्थित होने पर उसे पांच हज़ारी मनसब मिला। उसके कथनानुसार पीछे से महाराजा भी दिल्ली गया, जहां से थोड़े समय बाद वह अपने मनोरथ सफल कर लौटा (राजस्थान, जि० २, पृ० १०२१)। करणीदान कृत "सूरजप्रकाश" में भी अभयसिंह को पांच हज़ारी मंसब मिलना लिखा है (पृ० १२८)।

यदि मेरे मनसब में लिखे जायेंगे तो मैं अपनी कुंवरी का डोला भेजूंगा। तदनुसार बादशाह से अर्ज़ कर उसी वर्ष मार्गशीर्ष मास में खींवसी ने उक्त स्थानों का फ़रमान उसके नाम करा दिया, जिसके प्राप्त होने पर महाराजा ने जोधपुर जाकर पहले भंडारी विजयराज खेतसिंहोत को रवाना किया और फिर वि० सं० १७७२ में वह स्वयं भी अहमदाबाद चला गया[1]।

वि० सं० १७७२ (ई० स० १७१५) के आश्विन मास में महाराजा की पुत्री इन्द्रकुंवरी का विवाह बादशाह फ़र्रुखसियर से करने के लिए

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १०४। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" (जि० १, भाग १, पृ० २९६) तथा "वीरविनोद" (भाग २, पृ० ८४१) में भी महाराजा अजीतसिंह को अहमदाबाद की सूबेदारी मिलना और वि० सं० १७७२ में उसका वहां जाना लिखा है। "मीरात-इ-अहमदी" से पाया जाता है कि महाराजा को छ हज़ार ज़ात छ हज़ार सवार का मनसब और अहमदाबाद की सूबेदारी मिलने पर उसने भंडारी विजयराज को वहां का नायब बनाकर भेजा, जो वहां हि० स० ११२७ ता० ७ शाबान (वि० सं० १७७१ श्रावण सुदि ८ = ई० स० १७१४ ता० ७ अगस्त) को पहुंचा। महाराजा खुद हि० स० ११२८ ता० १० रबीउल्-अव्वल (वि० सं० १७७२ फाल्गुन सुदि १२ = ई० स० १७१६ ता० २३ फरवरी) गुरुवार को शाही बाग (अहमदाबाद के निकट) में पहुंचा और अच्छा मुहूर्त देखकर भद्र (अहमदाबाद में) के क़िले में उसने प्रवेश किया। वहां के नौकरों, जागीरदारों, दारोगाओं और तहवीलदारों को उसने पूर्ववत् बहाल रक्खा (मिर्ज़ा मुहम्मद हसन कृत, जि० २, पृ० १-२)। टॉड लिखता है कि वि० स० १७७२ में अजीतसिंह अपने पुत्र अभयसिंह के साथ अपनी हुकूमत (अहमदाबाद की सूबेदारी) पर गया। सर्वप्रथम वह जालोर गया, जहां वह वर्षा ऋतु पर्यन्त रहा। अनन्तर उसने मेवासा (सिरोही इलाक़े में) पर आक्रमण कर नीमज (? नींबज, सिरोही राज्य) के देवड़ों से दंड लिया। पालनपुर से फ़ीरोज़ख़ां उससे मिलने के लिए आया। थराद के राव ने एक लाख रुपया उसे दिया। इसी प्रकार खम्भातवालों और कोली सरदार पेनकर्ण को भी महाराजा ने अधीन बनाया। फिर चांपावत राज्ञा एवं भंडारी विजय, जो एक वर्ष पूर्व उक्त सूबे का प्रबन्ध करने के लिये भेजे गये थे, पाटण से आकर उसके शामिल हो गये (राजस्थान, जि० २, पृ० १०२२)।

इन्द्रकुंवरी का डोला दिल्ली जाना

उस (कुंवरी) का "डोला" दिल्ली भेजा गया। उसके साथ भंडारी खींवसी सपरिवार गया[1]। इर्विन लिखता है—"हि० स० ११२७ ता० १२ जमादिउल्अव्वल (वि० सं० १७७२ वैशाख सुदि १३ = ई० स० १७१५ ता० ५ मई) को बादशाह का मामा शाइस्ताखां जोधपुर से दुलहिन को लाने के लिए भेजा गया। वह उसे साथ लेकर ता० २५ रमज़ान (आश्विन वदि १२ = ता० १३ सितम्बर) को दिल्ली पहुंचा, जहां दुलहिन के स्वागत के लिए महल के आंगन में तम्बू खड़े किये गये थे। अनन्तर वह अमीरुल्उमरा (सैयद हुसेनअलीखां) के मकान में भेजी गई तथा विवाह के इन्तज़ाम का कार्य कुतुबुल्मुल्क (सैयद अब्दुल्लाखां) के सुपुर्द किया गया[2]।"

बादशाह की बीमारी

उन्हीं दिनों विवाह से पूर्व बादशाह सख़्त बीमार पड़ा। जब उसके दरबारी हकीम उसे अच्छा करने में समर्थ न हुए, तो लाचारी की हालत में उसने ईस्ट इंडिया कम्पनी के दूत-दल के साथ आये हुए डॉक्टर सर्जन हैमिल्टन से अपना इलाज कराना मंजूर किया। उसने चीरा लगाकर उसे पुनः नीरोग कर दिया। चीरा लगाने के समय ऐसी अफ़वाह उड़ी कि बादशाह हैमिल्टन के हाथों मर गया। इस अफ़वाह से जनता इतनी क्रुद्ध हुई कि लोगों ने आकर उस मकान को घेर लिया, जहां दूत-दल ठहरा हुआ था और उनको मारने की धमकी दी। लोगों को सन्तोष उसी समय हुआ, जब बादशाह ने स्वयं महल की खिड़की पर आकर लोगों को आश्वासन दिया कि हैमिल्टन की योग्य चिकित्सा के कारण ही मुझे नया जीवन प्राप्त हुआ है। इसपर लोग अंग्रेज़ों को आदर की दृष्टि से देखने लगे। बादशाह हैमिल्टन की

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १०४-५। मुरारीदास-कृत "तवारीख़-इ-मारवाड़" में भी इसका उल्लेख है।

(२) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० १, पृ० ३०४। इस वर्णन के लिखने में इर्विन ने मिर्ज़ा मुहम्मद-लिखित "तज़किरा अथवा इबरतनामा" और कामवरख़ां-लिखित "तज़किरातुस्सलातीन-इ-चग़ातिया" का आश्रय लिया है।

सेवा से बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसका पूर्ण सम्मान करने के साथ ही उससे कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो मांग लो। हैमिल्टन ने अपने लिए कुछ भी न मांगकर ईस्ट इंडिया कम्पनी की व्यापारिक सुविधा के लिए कुछ मांगें पेश कीं, जो बादशाह ने उसी समय स्वीकार कर लीं[1]। दूत-दल के लौटते समय बादशाह ने हैमिल्टन से शाही सेवा स्वीकार करने की ख्वाहिश प्रकट की, जिसे उसने उस समय अस्वीकार कर दिया, परन्तु कलकत्ते का प्रबंध कर उसने लौटने का वायदा किया। उस समय बादशाह ने उसे उपहार में जो वस्तुएं दीं उनमें उसके चीर-फाड़ के कुल औज़ारों के सुवर्ण-निर्मित नमूने भी थे। बंगाल में लौटने के कुछ ही समय बाद हैमिल्टन की मृत्यु हो गई[2]।

---

(१) "वीरविनोद" में लिखा है कि उस नेक शख़्स (हैमिल्टन) ने अपने लिए कुछ भी न मांगकर ईस्ट इंडिया कम्पनी के फायदे के लिए निम्नलिखित दो मांगें पेश कीं—

(१) कम्पनी के लिए बंगाल में ३८ गांव ख़रीदने की इजाज़त।

(२) जो माल कलकत्ते के प्रेसिडेन्ट के दस्तख़त से रवाना हो उसके महसूल की माफ़ी।

बादशाह ने ये दोनों बातें क़बूल कर लीं, लेकिन बंगाल के सूबेदार ने ज़मींदारों को मना कर दिया, जिससे ज़मीन तो कम्पनी को न मिल सकी, परन्तु महसूल माफ़ हो गया (भाग १, पृ० ८१)

(२) जोनाथन स्कॉट, हिस्ट्री ऑव् डेक्कन, जि० २, पृ० १३१ और उसका टिप्पण।

जोनाथन स्कॉट आगे चलकर लिखता है कि इस घटना का पता मुझे मि० हेस्टिंग्ज़ से लगा, जिसने मुझसे कहा कि जब मैं भारतवर्ष में प्रथम बार आया उस समय यहां ऐसे व्यक्ति विद्यमान थे, जिन्होंने ये घटनाएं आंखों देखी थीं। साथ ही हैमिल्टन के कलकत्ते के स्मारक स्तंभ पर भी इनका उल्लेख था।

बादशाह विवाह से पूर्व सख़्त बीमार पड़ा था, जिस वजह से इन्द्रकुंवरी के दिल्ली में पहुंच जाने पर भी विवाह में विलम्ब हुआ ऐसा इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" में भी लिखा है तथा उससे यह भी पाया जाता है कि उसका इलाज दूत-दल के साथ आये हुए सर्जन विलियम हैमिल्टन ने किया। ई० स० १७१५ ता० ३ दिसम्बर

[illegible] होने के बाद [illegible] महाराजा अजीतसिंह की पुत्री इन्द्रकुँवरी का विवाह बादशाह के साथ हुआ। विवाह के समय बादशाह ने हिन्दू रीति के अनुसार तोरण वन्दन किया और भंडारी खींवसी की अर्जी से उसकी [illegible] केसर का तिलक किया एवं जोगियों के [illegible] लगाने तथा उनकी नाक [illegible]। इससे बादशाह बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने पुरोहित [illegible], [illegible] केसरीसिंह तथा भंडारी खींवसी को सिरोपाव तथा अन्य पुरस्कार दिये[2]।

[illegible]

जोनाथन स्कॉट इस विवाह के प्रसंग में लिखता है—"दुलहिन की तरफ के सारे कार्य अमीरुलउमरा ने किये और शादी ऐसी शानोशौकत और धूमधाम से हुई, जैसी हिन्दुस्तान के राजाओं के यहां पहले कभी नहीं देखी गई थी। शाही जलसा में शानदार झंडे नज़र आते थे। नगर की रोशनी सितारों की रोशनी को मात करती थी। छोटे बड़े सभी ने इस विवाह के जलसों में भाग लिया और सब आनन्द से भरे नज़र आते थे। बादशाह अमीरुलउमरा के महलों में गया, जहां शादी की रस्म अदा होने के अनन्तर वह राजकुमारी को शाही शानोशौकत और बाजेगाजे के साथ, आनन्द से चिल्लाते हुए जन समूह के बीच से अपने महल में ले गया[3]।"

(वि० सं० १७७२ पौष वदि ४) को अच्छे होने के बाद बादशाह ने पहले पहल स्नान किया और ता० १० दिसम्बर को उसने हैमिल्टन को मूल्यवान उपहार दिये (जि० 1, पृ० ३०५-६)।

(१) "वीरविनोद" में पौष वदि ८ (ता० ७ दिसम्बर) को फ़र्रुख़सियर के साथ इन्द्रकुंवरबाई का विवाह होना लिखा है (जि० २, पृ० ८४१)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १०४-५। "वंशभास्कर" में स्वयं महाराजा का दिल्ली जाकर अपनी पुत्री का बादशाह से विवाह करना लिखा है (चतुर्थ खंड, पृ० ३०५०)।

(३) हिस्ट्री ऑव् डेक्कन, जि० २, पृ० १३९।

इस घटना का वर्णन जोनाथन स्कॉट ने इरादतखां की ऐतिहासिक पुस्तक

नागोर का मनसब कुंवर अभयसिंह के नाम होने की सूचना मिलने पर महाराजा ने मेड़ता के हाकिम भंडारी प्रेमसी और जोधपुर के हाकिम भंडारी अनूपसिंह के पास आज्ञा भेजी कि वे वहां जाकर अधिकार कर लें। इसपर श्रावणादि वि० सं० १७७२ (चैत्रादि १७७३) ज्येष्ठ सुदि १३ (ई० स० १७१६ ता० २३ मई) को रवाना होकर सोजत की सेना के साथ जोधपुर का हाकिम आषाढ वदि १३ (ता० ६ जून) को गांव नाराधणा में पहुंचा। नागोर से राव इन्द्रसिंह की फ़ौज ने आकर उसका मुकाबला किया, पर तीन पहर तक घमासान लड़ाई होने के बाद

महाराजा का नागोर पर कब्जा करना

'तारीख़-इ-इरादतख़ां' से दिया है। इरादतख़ां बादशाह फ़र्रुख़सियर के समय विद्यमान था, जिसके समय का हाल उसने अपनी पुस्तक में दिया है। पहले इस पुस्तक का अंग्रेज़ी अनुवाद जोनाथन स्कॉट ने पुस्तकाकार प्रकाशित किया था। पीछे से स्वलिखित "हिस्ट्री ऑव् डेक्कन" की दूसरी जिल्द प्रकाशित करते समय उसने उसे भी उसमें शामिल कर दिया।

इर्विन इस विवाह के सम्बन्ध में लिखता है—"बादशाह की तरफ़ से उसकी पत्नी के लिए उपहारों का प्रबन्ध उस (बादशाह) की माता ने किया था, जो हि० स० ११२७ ता० १५ ज़िल्हिज (वि० सं० १७७२ पौष वदि ७ = ई० स० १७१५ ता० १ दिसम्बर) को उसके पास भेजे गये। ता० २१ ज़िल्हिज (पौष वदि ८ = ता० ७ दिसम्बर) को सारे दीवाने आम जिलाउख़ाना (महल का आंगन), सड़कों आदि पर रोशनी का बहुत सुन्दर प्रबन्ध किया गया। रात्रि को नौ बजे भंडारी खींवसी-द्वारा लाई हुई पोशाक पहनकर बादशाह बड़े समारोह के साथ अमीरुलउमरा के मकान पर गया। इस अवसर पर जो कृत्य हुए उनमें हिन्दू एवं मुसलमानी रीति रिवाजों का सम्मिश्रण पाया जाता था। राजपूतों ने अपने यहां का रिवाज बताकर मुसलमानों को गुलाबजल में घोली हुई अफ़ीम पीने पर मजबूर किया जिसपर उनमें से बहुतों ने उसे पिया भी। इस अवसर पर एक सोने की अद्भुत तश्तरी देखने में आई, जो पहले कभी देखी नहीं गई थी। उसके पांच खानों में से चार में क्रमशः हीरे, लाल, पन्ने तथा पुखराज और मध्यवाले खाने में बड़े-बड़े मूल्यवान मोती रक्खे थे। विवाह का जशन मनाने में विलम्ब होने का कारण बादशाह की बीमारी थी (लेटर मुगल्स जि० १, पृ० ३०४-५)।" एक स्थल पर इर्विन लिखता है कि बादशाह ने अपनी पत्नी के लिए "मेहर" में एक लाख मोहरें लिखवाई (वही, जि० १, पृ० ३०४)।

उसे हारकर नागोर भागना पड़ा। तब भंडारी प्रेमसी कूचकर आषाढ सुदि १५ (ता० २३ जून) को नागोर पहुंचा। अनन्तर वहां मोर्चे लगने पर राठोड़ भीम रणछोड़दासोत की मारफ़त बात ठहराकर राव इन्द्रसिंह ने नागोर ख़ाली कर दिया और स्वयं दिल्ली चला गया। उसी वर्ष श्रावण वदि ७ (ता० ३० जून) को जोधपुर का नागोर पर अधिकार हो गया, जिसकी सूचना अहमदाबाद में महाराजा के पास पहुंचने पर उसने सरदारों के लिए सिरोपाव आदि भेजे और भंडारी प्रेमसी को वहां का हाकिम नियत किया तथा मेड़ता में उसके स्थान में भंडारी गिरधरदास नियुक्त हुआ[1]।

सोरठ की ओर के राजाओं आदि की तरफ़ शाही ख़िराज की बहुत रक़म बाक़ी रह गई थी। उसे वसूल करने के लिए अहमदाबाद से महाराजा अजीतसिंह रवाना हुआ। नवानगर (जामनगर) पहुंचकर जब उसने वहां के स्वामी से पेशकशी की अधिक रक़म मांगी तो दोनों में कई रोज़ तक तोप बन्दूक की लड़ाई हुई। तदनन्तर वहां का मामला तयकर मार्ग में दूसरे राजाओं से ख़िराज वसूल करता हुआ, महाराजा द्वारिका गया[2]। द्वारिका में रहते समय आलणियावास के ठाकुर कल्याणसिंह तथा रीयां के ठाकुर सरदारसिंह की मृत्यु हो गई। यही नहीं द्वारिका की इस यात्रा में महाराजा के साथ के ३००० आदमी और बेशुमार ऊंट, घोड़े एवं बैल मर गये[3], जिसका

महाराजा की द्वारिका यात्रा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०५।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन, मिरात इ अहमदी, जि० २, पृ० ११। कैम्पबैल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेन्सी, जि० १, भाग १, पृ० ३७०।

जोधपुर राज्य की ख्यात में महाराजा का चढ़ाई कर नवानगर (? जामनगर) के जाड़ेचा स्वामी से पांच लाख रुपया पेशकशी ठहराना लिखा है (जि० २, पृ० १०४)।

(३) और सबै आणंद हुओ एक बात नह चाह।
कल्याणो राजण तणो मुवो द्वारिका मांह ॥ १ ॥

कारण सम्भवतः किसी बीमारी का फैल जाना था।

महाराजा अजीतसिंह के गुजरात में नियत किये हुए नायब आदि, उधर के लोगों पर बहुत जुल्म करते थे, जिसकी शिकायत बादशाह के पास होने पर महाराजा वहां की सूबेदारी से अलग कर दिया गया[1] और उसके स्थान में शम्सामुद्दौला खानदौरां (नसरतजंग बहादुर) सूबेदार नियत हुआ[2]। उसने महाराजा के नायबों को निकाल दिया, जिसपर महाराजा

महाराजा का गुजरात की सूबेदारी से हटाया जाना

सिरदारै साथे हुंती नारी परतग दोय।
ठाली भूली रह गई साथ गई नह कोय॥ ४७॥
ईते मरगे राह में मांणस तीन हजार।
ऊंट, तुरंगम बैलरी कर कुण सकै सुमार॥ ६३॥

अजीतविलास।

"अजीतविलास" नामक हस्तलिखित ग्रन्थ में राव सीहा से लगाकर अजीतसिंह तक का कुछ-कुछ वृत्तान्त मिलता है। उक्त पुस्तक के मध्यभाग में स्वयं महाराजा अजीतसिंह के बनाये हुए बहुतसे दोहे अङ्कित हैं, जिनमें से २१२ में स्वामीभक्त सरदारों का उल्लेख और ११७ में उसकी द्वारिका-यात्रा का वर्णन है। "अजीतविलास" के कर्ता का परिचय नहीं मिलता।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी महाराजा की द्वारिका-यात्रा का उल्लेख है, पर उसमें उसका वापस जोधपुर जाना लिखा है (जि० २, पृ० १०६), जो ठीक नहीं है। महाराजा द्वारिका से वापस अपने सूबे अहमदाबाद गया था (कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, जि० १, खंड १, पृ० ३००)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सैय्यदों से मेल रखने के कारण वि० सं० १७७४ में बादशाह ने महाराजा को अहमदाबाद के सूबे से अलग कर दिया। इससे यह भी पाया जाता है कि अहमदाबाद का सूबा महाराजा से द्वारिका यात्रा के पूर्व ही हटा लिया गया था। महाराजा के लिखने पर खांदौरां ने उसे ४ मास के लिये और बहाल करवाया (जि० २, पृ० १०६)।

(२) इससे कुछ समय पूर्व ही कुंवर अभयसिंह सोरठ की फ़ौजदारी से अलग किया जाकर, उसके स्थान में हैदरकुलीख़ां नियुक्त हुआ (मिर्ज़ा मुहम्मद हसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० ८)।

को बहुत बुरा लगा और वह लड़ाई करने के इरादे से साबरमती के निकट शाही बाग़ में ठहरा; परन्तु नाहरखां के, जो महाराजा का कार्यकर्ता और उसकी तरफ़ से वकील का काम करता था, समझाने से हि० स० ११२६ तारीख़ ११ रजब (वि० सं० १७७४ द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १३=ई० स० १७१७ ता० १० जून) को उसने जोधपुर की तरफ कूच किया[1]।

बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह को पकड़ने का असफल प्रयत्न

उन दिनों बीकानेर का महाराजा सुजानसिंह केवल थोड़े से साथियों सहित नाल में ठहरा हुआ था। महाराजा अजीतसिंह ने बीकानेर पर अधिकार करने के हेतु उस(सुजानसिंह)पर घात करने का यह उपयुक्त अवसर समझा और उसके पुत्र अभयसिंह के जन्म के उपलक्ष्य में अपने आदमियों-द्वारा वस्त्राभूषण भिजवाये। गुप्तरूप से उसने अपने आदमियो को यह आज्ञा दी कि यदि अवसर मिले तो महाराजा सुजानसिंह को पकड़ लाना नहीं तो भेंट का सामान देकर चले आना। उसके इस उद्देश्य का पता सुजानसिंह को किसी प्रकार चल गया, जिससे वह नाल का परित्याग कर गढ़ मे चला गया। तब जोधपुर के आदमी भेंट का सामान देकर जोधपुर लौट गये। इस प्रकार अजीतसिंह

---

(१) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० ११-१२। कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाबे प्रेसिडेंसी, जि० १, खंड १, पृ० २९९-३००। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८४१।

"मुन्तख़बुल्लुबाब" मे लिखा है कि अजीतसिंह ने, जो अहमदाबाद तथा अजमेर का सूबेदार था, अपनी अमलदारी मे गोहत्या बन्द करवादी, अतएव आगरे के सूबेदार सआदतख़ां को उसे दंड देने के लिए जाने की आज्ञा दी गई, पर वह न जा सका। तब शम्सुद्दौला कमरुद्दीनख़ां बहादुर और हैदरकुलीख़ां भेजे गये, परन्तु वे भी कई कारणों से बीच से ही लौट गये। इसी बीच यह ख़बर आई कि निज़ामुल्मुल्क ने अजीतसिंह की अच्छी तबीह कर दी है। कुछ ही समय बाद महाराजा ने अहमदाबाद से हटना स्वीकार कर माफी माग ली, लेकिन अजमेर का सूबा बहाल रखने के लिए उसने प्रार्थना की (इलियट, हिस्ट्री ऑव् इण्डिया, जि० ७, पृ० ४१७)।

का आन्तरिक उद्देश्य सफल न हो सका[1]।

उधर इसी बीच बादशाह और उसके मंत्री सैयदों के बीच का विरोध क्रमशः बढ़ता ही गया, यहां तक कि बादशाह ने सैयद बन्धुओं का खातमा करने का निश्चय किया। कुतबुल्मुल्क को जब उसकी ऐसी मंशा का पता लगा तो वह सावधान रहने लगा। उन्हीं दिनों बादशाह ने एक नये व्यक्ति को अपना प्रीतिपात्र बनाया, जिसका नाम मुहम्मद मुराद[2] था। वह पहले तीसरे दर्जे का "मीर तुजक" था, पर क्रमशः अपनी वाक्पटुता एवं चाटुकारी से वह बादशाह का पूर्ण विश्वास-भाजन बन गया। उसने बादशाह को विश्वास दिलाया कि मैं सैयदों का अन्त कर दूंगा। बादशाह उससे इतना खुश रहा कि उसने धीरे-धीरे बढ़ाते हुए उसका मनसब ७००० ज़ात ७००० सवार[3] का कर दिया और जम्मू की फ़ौजदारी के अतिरिक्त उसे अनेक मूल्यवान् वस्तुएं उपहार में दीं। साथ ही उसने उसे दिल्ली, आगरे आदि के सूबों में अच्छी से अच्छी जागीरें प्रदान कीं[4]। उसकी सलाह के अनुसार बादशाह ने सरबुलंदखां को बुलाकर सैयदों का प्रबन्ध करने के लिए नियत किया और उसे ७००० ज़ात ६००० सवार

बादशाह-द्वारा बुलाये जाने पर महाराजा का दिल्ली जाना

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६०-१। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ४७।

(२) मुहम्मद मुराद का जन्म काश्मीर में हुआ था और वह उसी स्थान का रहनेवाला था, जहां की फर्रुख़सियर की माता थी, जिसकी मारफ़त वह बादशाह की खिदमत में हाज़िर हुआ था।

(३) उस समय मनसब नाम मात्र का रह गया था और हर किसी को बड़ा से बड़ा मनसब दे दिया जाता था, पर उसकी तनख्वाह में मनसब के अनुसार कोई जागीर नहीं मिलती थी। राजाओं की जागीरें ही उनके मनसब में गिनी जाती थीं, चाहे मनसब बड़ा हो चाहे छोटा।

(४) जोनाथन स्कॉट-कृत "हिस्ट्री ऑव् डेकन" (जि० २, पृ० १२३-४) में भी इसका उल्लेख है।

का मनसब एवं "मुबारिज़ुलमुल्क नामवरजंग" का ख़िताब दिया। वह बुद्धिमान एवं वीर व्यक्ति था, इससे लोगों की यह धारणा होने लगी कि अब सैयद-बन्धुओं का अन्त अवश्य हो जायगा। क़ुतुबुल्मुल्क यह देख अधिक सावधानी से रहने लगा। वह दरबार में जाता तो अपने साथ तीन-चार हज़ार सेना ले जाता। सरबुलन्दख़ां को यह आशा थी कि सैयद बन्धुओं का ख़ातमा होते ही वज़ीर का पद उसे मिल जायगा, पर जब उसने स्वयं बादशाह के मुख से सुना कि वज़ीर का पद मुहम्मद मुराद के लिए सुरक्षित है तो वह इस कार्य से हट गया, लेकिन ऊपर से उसने अपना यह भाव प्रकट न होने दिया। हि० स० ११३० ता० १६ शव्वाल (वि० सं० १७७५ आश्विन वदि ५ = ई० स० १७१८ ता० ४ सितम्बर) को जब उसकी नियुक्ति आगरा में की गई तो वह इस्तीफा देकर फ़रीदाबाद से ही लौट गया।

इसी बीच ईद के दिन हि० स० ११३० ता० १ शव्वाल (वि० सं० १७७५ भाद्रपद सुदि ३ = ई० स० १७१८ ता० १७ अगस्त) को ईदगाह में क़ुतुबुल्मुल्क का अन्त करने का निश्चय हुआ, परन्तु इसकी ख़बर क़ुतुबुल्मुल्क को अपने जासूसों-द्वारा लग गई, जिससे बादशाह का इरादा पूरा न हो सका। ऐसी दशा में बादशाह की सारी आशाएं अजीतसिंह में केन्द्रित हो गई, क्योंकि वह उसका श्वसुर लगता था, जिससे उसे उससे मदद की पूरी उम्मेद थी। उसको बुलाने के लिए नाहरख़ां भेजा गया, पर उस-(नाहरख़ां)की सहानुभूति सैयद बन्धुओं की तरफ़ होने से उसने अजीतसिंह को भी सैयदों के पक्ष में कर लिया[1]। यद्यपि मन से अजीतसिंह सैयद बन्धुओं का सहायक हो गया तथापि ऊपर से दिखाने के लिए उसने जोधपुर से दिल्ली की तरफ प्रस्थान किया। बादशाह यह सुनकर बड़ा

(१) "वीरविनोद" में अजीतसिंह को बुलाने की घटना पहले और ईदगाह में क़ुतुबुल्मुल्क को मरवाने का षड्यन्त्र रचने की घटना बाद में दी है। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा को बादशाह ने अहमदाबाद से बुलवाया था (भाग २, पृ० ११२८)।

खुश हुआ। हि० स० ११३० ता० ४ शव्वाल (वि० सं० १७७५ भाद्रपद सुदि ६ = ई० स० १७१८ ता० २० अगस्त) को महाराजा के मलहनशाह के बाग के निकट पहुंचने की खबर पाकर बादशाह ने एतकादखां (मुहम्मद मुराद) के हाथ उसके पास एक कटार भेजी और शम्सामुद्दौला को उसे लाने के लिए भेजा। साथ ही उसके द्वारा बादशाह ने यह भी कहलाया कि मेरी मेहरबानी तुमपर इतनी ज्यादा है कि तुम कुतुबुल्मुल्क के बिना ही दरबार में उपस्थित हो सकते हो पर उसने ऐसा करना स्वीकार न किया, क्योंकि उसे बादशाह पर भरोसा न था। पहले तो यह जानकर बादशाह को बड़ा गुस्सा आया, लेकिन और कोई रास्ता न होने से उसने कुतुबुल्-मुल्क को भी दूसरे दिन दरबार में उपस्थित होने के लिए कहला दिया। ता० ५ शव्वाल (भाद्रपद सुदि ७ = ता० २१ अगस्त) को एतकादखां और शम्सामुद्दौला महाराजा को लेकर दरबार में चले, परन्तु बाहरी फाटक पर पहुंचकर उसने तबतक आगे बढ़ने से इनकार कर दिया जबतक कि उसे कुतुबुल्मुल्क के मौजूद होने का निश्चित पता न लग जाय। कई बार विश्वास दिलाये जाने पर वह वहां से आगे चला, लेकिन "दीवाने आम" के फाटक पर वह फिर रुक गया। वहां भी उसकी दिल-जमई होने पर वह आगे बढ़ा, परन्तु "दीवानेखास" के प्रवेश-द्वार पर वह फिर रुक गया, जहां कुतुबुल्मुल्क आकर उससे मिला। उसके साथ वह बादशाह के समक्ष उपस्थित हुआ। बादशाह उस (अजीतसिंह) से प्रसन्न तो न था, पर उसने प्रथानुसार खिलअत तथा अन्य उपहार की चीज़ें उसे दीं। इसके बाद बीस दिन तक महाराजा अथवा कुतुबुल्मुल्क दोनों में से कोई भी दरबार में उपस्थित न हुआ, पर भीतर ही भीतर उनमें बात-चीत जारी रही। इस अवधि में बादशाह और उसके वज़ीर के बीच का मनमुटाव प्रकट हो गया था, अतएव बादशाह ने प्रकटरूप से इस संबंध में कार्यवाही की, लेकिन जैसे ही उसे ज्ञात हुआ कि महाराजा तथा कुतुबुल्मुल्क एक हैं, तो उसने उनसे मेल करना चाहा। पहले एतकादखां और फिर अफज़लखां सदरुस्सदूर ने इसके लिए प्रयत्न किया, पर कोई

परिणाम न निकला। अनन्तर इस कार्य को अंजाम देने के लिए सरबुलंदखां और शम्सामुद्दौला नियत किये गये, जिन्हें कुछ सफलता मिली। वे महाराजा एवं कुतुबुल्मुल्क को राज़ी कर दरबार में ले गये, जहां कुतुबुल्मुल्क के प्रार्थना करने पर बीकानेर का राज्य महाराजा के नाम कर दिया गया, लेकिन भीतर ही भीतर बादशाह अपने वज़ीर का अन्त करने के उद्योग में लगा रहा। सब तरफ़ से निराश होकर बादशाह ने मुरादाबाद के फ़ौजदार निज़ामुल्मुल्क को दरबार में बुलवाया, पर बादशाह की कमज़ोर हालत देखकर वह भी भीतर ही भीतर उससे खिंच गया। दिन पर दिन बीतने पर भी जब उसने कोई कार्यवाही न की तो बादशाह ने उससे नाराज़ होकर उसकी जागीर मुरादाबाद मुहम्मद मुराद के नाम कर दी। फिर मीरजुमला को, जो पहले सरहिन्द और फिर लाहोर में हटा दिया गया था, बादशाह ने दरबार में आने को लिखा, परन्तु पीछे से सैयदों के भय से उसने उसे मार्ग से ही वापस जाने को लिखा। मीर जुमला ने इसपर कोई ध्यान न दिया और वह दिल्ली पहुंचकर सीधा कुतुबुल्मुल्क के मकान पर गया। इससे चिढ़कर बादशाह ने मीरजुमला का मनसब उतार दिया और उसे कुतुबुल्मुल्क के मकान से हटाने के लिए आदमी भेजे। ऐसी परिस्थिति में कुतुबुल्मुल्क ने अपने भाई हुसेनअलीखां के पास, जो दक्षिण में था, पत्र लिखकर उसे शीघ्र दिल्ली आने को लिखा। जब इसकी सूचना बादशाह को मिली तो उसने शम्सामुद्दौला को भेजकर वज़ीर का भय मिटाना चाहा[1]।

अजीतसिंह को कत्ल करने का प्रयत्न

हि० स० ११३० ता० ६ ज़िलकाद (वि० सं० १७७५ आश्विन सुदि ८ = ई० स० १७१८ ता० २० सितम्बर) को बादशाह शिकार के लिए गया। वहां से लौटते हुए उसने अपनी मंशा कुतुबुल्मुल्क के यहां जाने की प्रकट की। उधर से गुज़रते समय अजीतसिंह के उसकी ताज़ीम के

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स, जि० १, पृ० ३३९-४३। जोधपुर राज्य की ख्यात में इन घटनाओं का उल्लेख नहीं है।

लिए बाहर निकलते ही उसका ख़ातमा करने का बादशाह ने षड्यंत्र रचा था, पर इसका उसे किसी प्रकार पता चल गया, जिससे वह क़ुतुबुल्मुल्क के पास जा रहा। यह ख़बर मिलने पर बादशाह ने अपना इरादा बदल दिया और क़ुतुबुल्मुल्क के यहां ठहरे बिना ही वह चला गया। इसके बाद ही फिर कई बार क़ुतुबुल्मुल्क को मारने के षड्यंत्र रचे गये, पर उनमें सफलता नहीं मिली। इसी समय के आस-पास बादशाह को पूरा यक़ीन हो गया कि उसके मन्सूबों का पता सैयदों को उसकी धाय[1] तथा एतमादख़ां नाम के एक ख़ोजे की मारफ़त मिल जाता है, जिससे वे समय पर सचेत हो जाते हैं[2]।

हुसेनअलीख़ां का दक्षिण से रवाना होना

भाई का पत्र मिलने पर ज़िल्हिज मास के प्रारंभ में हुसेनअलीख़ां ने दक्षिण से प्रस्थान किया। अपने दरबार में लौटने का कारण उसने यह प्रकट किया कि मैं औरंगज़ेब के पुत्र शाहज़ादे अकबर के पुत्र मुईनुद्दीन को अपने हमराह ला रहा हूं। उसने मरहटों की भी सहायता प्राप्त कर ली, जो ग्यारह-बारह हज़ार की संख्या में पेशवा बालाजी विश्वनाथ, खांडेराव, सन्ताजी आदि की अध्यक्षता में उसके साथ थे। कुल मिलाकर उसके पास लगभग २५००० सवार और तोपख़ाना वग़ैरह था। इस ख़बर से बादशाह को बड़ी चिन्ता हुई और उसने हुसेनअलीख़ां को वापस लौटाने के लिए इख़लासख़ां को भेजा, जिसका उसपर बड़ा प्रभाव माना जाता था, परन्तु उसने उलटा बादशाह के विरुद्ध उस (हुसेनअलीख़ां) के कान भरे। इससे हुसेनअलीख़ां दिल्ली पहुंचने के लिए अधिक व्यग्र हो उठा। तब बादशाह

(१) "वीरविनोद" में भी लिखा है (भाग २, पृ० ११३६)।

(२) इर्विन, लेटर मुग़ल्स जि० १, पृ० ३४१-६। 'वीरविनोद' में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ११३६)। जोधपुर राज्य की ख्यात से पता चलता है कि सैयदों से मिल जाने के कारण बादशाह महाराजा से नाराज़ हो गया और उसने उसे मार डालने के लिए कई बार जाल बिछाये, परन्तु सफलता नहीं मिली। एक बार तो उसपर हमला होने की ख़बर स्वयं उसकी [illegible] ([illegible]) ने उसे दी थी (जि० २, पृ० १०८-९)।

से घबराकर क़ुतुबुलमुल्क से मेल करना चाहा। तदनुसार हि० स० ११३१ ता० २८ मुहर्रम (वि० सं० १७७५ पौष वदि १३ = ई० स० १७१८ ता० ८ दिसम्बर) को बादशाह स्वयं क़ुतुबुलमुल्क के यहां गया और उसने अपनी पगड़ी उसके सिर पर पहनाई[1]।

ता० २९ मुहर्रम हि० स० ११३१ (पौष वदि १४ = ता० ६ दिसम्बर) को क़ुतुबुलमुल्क बादशाह के पास उपस्थित हुआ। उसी दिन शाम को बीका (?टीका) हज़ारी तथा अजीतसिंह एवं चूड़ा (?चूड़ामन) जाट के आदमियों के बीच झगड़ा हो गया। तीन घंटे की लड़ाई में दोनों तरफ के कितने ही आदमी मारे गये। अन्त में ग़ाज़ीउद्दीनख़ां ग़ालिबजंग, सैयद क़ुलीख़ां कुल तथा सैयद नज्मुद्दीनअलीख़ां के बीच में पड़ने से लड़ाई बन्द होकर मेल स्थापित हो गया। बादशाह ने भी ज़फरख़ां को भेजकर महाराजा से इस घटना के लिए माफी मांग ली[2]।

बादशाह का अजीतसिंह से माफी मांगना

अनन्तर बादशाह ने क़ुतुबुलमुल्क के कहने के अनुसार ता० १ सफर (पौष सुदि ३ = ता० १३ दिसम्बर) को उसके साथ महाराजा अजीतसिंह के डेरे पर जाकर उसे उपहार आदि दिये। इसके दूसरे दिन अजीतसिंह तथा क़ुतुबुलमुल्क साथ-साथ शाही दरबार में गये। ता० १६ सफर (माघ वदि २ = ता० २८ दिसम्बर) को बादशाह ने अजीतसिंह को "राजेश्वर" का ख़िताब और अहमदाबाद गुजरात का सूबा दिया। साथ ही उसने अपने दूसरे विरोधियों एवं कृपापात्रों को भी पुरस्कार आदि देकर सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया[3]।

अजीतसिंह को "राजेश्वर" का ख़िताब मिलना

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स, जि० १, पृ० ३५७-३६३।

(२) वही; जि० १, पृ० ३६३।

(३) वही, जि० १, पृ० ३६३-६५। जोधपुर राज्य की ख्यात में महाराजा के बादशाह के पास पहुंचने पर उसे "राजराजेश्वर" के ख़िताब के अतिरिक्त सिरोपाव, हाथी, घोड़ा, माही मरातिब, आभूषण आदि और एक करोड़ दाम मिलना लिखा है।

सरबुलंदख़ां की नियुक्ति बादशाह ने काबुल के सूबे में कर दी थी, परन्तु इससे भी उसको सन्तोष न हुआ। तब ता० ६ रबीउल्‌अव्वल (माघ सुदि १०=ई० स० १७१६ ता० २० जनवरी) को बादशाह की आज्ञानुसार क़ुतुबुल्मुल्क उसको सन्तोष देने के लिए उससे जाकर मिला। इसके तीन दिन बाद महाराजा अजीतसिंह तथा महाराव भीमसिंह (कोटा) भी उसके पास गये[1]।

अजीतसिंह का सरबुलंदख़ां से मिलना

इस बीच दिन-दिन हुसेनअलीख़ां दिल्ली के निकट पहुंचता आ रहा था। मार्ग में ही उसे बादशाह और अपने भाई (क़ुतुबुल्मुल्क) के बीच मेल हो जाने की सूचना मिली। इसपर उसने ऊपरी मन से खुशी ज़ाहिर की, परन्तु दिल्ली की ओर बढ़ना जारी रक्खा। बादशाह ने उसको खुश करने की गरज़ से हाकिमों में फेर-फार कर सैयदों के पक्ष के लोगों को नियत किया। ता० २१ रबीउल्‌अव्वल (फाल्गुन बदि ८ = ई० स० १७१६ ता० १ फ़रवरी) को ज़फ़रख़ां एवं इसके एक-दो रोज़ बाद हुसेनअलीख़ां के निकट पहुंचने पर एतकादख़ां उसका स्वागत करने के लिए भेजे गये। ता० २७ रबीउल्‌अव्वल (फाल्गुन बदि १४ = ता० ७ फ़रवरी) को हुसेनअलीख़ां जमुना के किनारे नगर से चार मील उत्तर वज़ीराबाद में पहुंचा। इसके तीन दिन बाद क़ुतुबुल्मुल्क, महाराजा अजीतसिंह एवं महाराव भीमसिंह उससे जाकर मिले और उससे बात-चीत कर उन्होंने अपना कार्यक्रम निश्चित किया। उस समय भी बादशाह ने एतकादख़ां की सलाह से सैयदों की कई मांगें स्वीकृत कर उनकी

हुसेनअलीख़ां का दिल्ली पहुंचना तथा महाराजा अजीतसिंह का वहां से अपने देश भेजा जाना

उससे पाया जाता है कि बादशाह उससे बड़े सम्मानपूर्वक खड़ा होकर मिला और उसे उसने अपनी दाहिनी ओर खड़ा किया (जि० २, पृ० १०८)। टॉड ने इन सबके अतिरिक्त उसे सात हज़ारी मनसब मिलना भी लिखा है (राजस्थान, जि० २, पृ० १०२२)।

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स, जि० १, पृ० ३७० ।

मंशा के मुताबिक व्यक्ति महलों में नियत कर दिये। इस बीच बादशाह फ़र्रुख़सियर के सच्चे सहायक जयसिंह ने कई बार उससे कहा—"विपक्षियों (सैयदों आदि) का इरादा मेल करने का नहीं दिखाई देता, अतएव समय पर सैयदों पर आक्रमण करना ठीक होगा। इससे लोग आपसे आ मिलेंगे। मेरे पास २०००० अनुभवी तथा विश्वासपात्र सवार हैं और मैं प्राण रहते आपके लिए लड़ने को प्रस्तुत हूं। दुश्मन हमारे सामने अधिक समय तक टिक न सकेंगे और यदि भाग्य हमारे प्रतिकूल हुआ, तो भी हम कायरता के कलंक से बच जावेंगे।" उसके इस कथन का बादशाह पर कोई असर न हुआ, क्योंकि वह जैसे बने वैसे सैयदों को अपने पक्ष में करना चाहता था। फलस्वरूप कुछ ही समय बाद उसने क़ुतुबुल्मुल्क के दबाव डालने पर अपने हाथ से पत्र लिखकर राजा जयसिंह तथा राव बुधसिंह (बूंदी का) को अपने-अपने देश जाने की आज्ञा दी। जयसिंह ने इसका विरोध किया, पर कोई सुनवाई नहीं हुई। तब और कोई रास्ता न देख ता० ३ रबीउल्आख़िर (फाल्गुन सुदि ४ = ता० १२ फ़रवरी) को उसने दिल्ली से प्रस्थान किया[1]।

सैयदों और महाराजा अजीतसिंह का बादशाह से मुलाक़ात करना

ता० ४ रबीउल्आख़िर (फाल्गुन सुदि ५ = ता० १३ फ़रवरी) को क़ुतुबुल्मुल्क एवं हुसेनअलीख़ां का दरबार में जाना तय हुआ था। उस दिन बड़े सवेरे ही महल में जाकर क़ुतुबुल्मुल्क और अजीतसिंह ने शाही रक्षकों को हटाकर उनके स्थान में अपने आदमी नियुक्त कर दिये। अनन्तर मरहटों की सेना तथा अपनी फ़ौज के साथ वे महल में गये। मुलाक़ात के समय अन्य लोग वहां से हटा दिये गये और वे बादशाह के साथ अकेले रह गये। उस समय हुसेनअलीख़ां ने कई मांगें उसके सामने पेश कीं, जिन सब को ही बादशाह ने स्वीकार कर लिया। तीन घंटे रात जाने तक बात चीत करने के बाद वे अपने-अपने स्थानों को लौटे। इस घटना से

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३६८-७६।

लोगों के मन में विश्वास हो गया कि अब बादशाह और सैयद बन्धुओं के बीच स्थायी मेल स्थापित हो गया, परन्तु बात इसके विपरीत निकली[1]।

बादशाह फर्रुखसियर का क़ैद किया जाना

हि० स० ११३१ ता० ८ रबीउल्आख़िर (फाल्गुन सुदि ९ = ता० १७ फ़रवरी) को कुतुबुल्मुल्क ने नज्मुद्दीनअलीख़ां, ग़ैरतख़ां, महाराजा अजीतसिंह, महाराव भीमसिंह हाड़ा, राजा गजसिंह नरवरी तथा कई दूसरे व्यक्तियों के साथ शाही महल में प्रवेशकर वहां प्रत्येक स्थान में अपने आदमियों को नियुक्त कर दिया। इस अवसर पर उपर्युक्त हिन्दू राजाओं ने दीवानी और ख़ानसामां के कमरों पर क़ब्ज़ा किया। उसी दिन दो पहर के समय तीस-चालीस हज़ार सवारों के साथ हुसेनअलीख़ां ने भी नगर में प्रवेश किया। उसने यह प्रकट किया कि वह शाहज़ादे को अपने साथ ला रहा है। मरहटे सवार महल के फाटकों तथा आस-पास के मार्गों में तैयार थे। दोपहर के बाद कुतुबुल्मुल्क बादशाह के पास उपस्थित हुआ। उससे बातों ही बातों में बादशाह की कहा-सुनी हो गई। पीछे से उस (बादशाह) ने क्रोधावेश में एतक़ादख़ां को निकाल दिया। परिस्थिति गंभीर होने पर बादशाह ने अजीतसिंह से मदद चाही। उसने उसको लिखा—"महल का जमुना की तरफ़ का पूर्वी भाग रक्षकों से रहित है। यदि हो सके तो उधर अपने कुछ आदमी भेज दो, ताकि मैं वहां से बाहर निकलकर अन्यत्र चला जाऊं।" अजीतसिंह ने इसका उत्तर यही दिया कि अब अवसर नहीं है। कुछ लोगों का ऐसा भी कहना है कि उसने बादशाह का पत्र अब्दुल्लाख़ां के पास भिजवा दिया। ता० ९ रबीउल्आख़िर (फाल्गुन सुदि १० = ता० १८ फ़रवरी) को बड़े सवेरे ही नगर में एक बखेड़ा खड़ा हुआ। जिस समय मुहम्मद अमीनख़ां चिन बहादुर तथा ज़करियाख़ां (अब्दुस्समदख़ां का पुत्र) ने अपने दल-बल सहित महल में जाना चाहा तो मार्ग में नियुक्त मरहटे सैनिकों ने उन्हें रोका, जिसपर झगड़ा हो गया और मरहटों के हज़ार-डेढ़ हज़ार

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स, जि० १, पृ० ३७९-८।

सैनिक तथा कई अफसर मारे गये[1]। इसी बीच इस अफवाह ने ज़ोर पकड़ा कि अजीतसिंह ने बादशाह की रक्षा करने की दृष्टि से क़ुतुबुल्मुल्क को मार डाला। इससे बादशाह के पक्ष के लोगों का उत्साह बढ़ा और जगह-जगह उन्होंने विरोधियों का मुक़ाबला करने की तैयारी की। क़ुतुबुल्मुल्क के मारे जाने की अफवाह से सैयदों के पक्षपाती बड़े हतोत्साह हुए, परन्तु पीछे से वज़ीर के जीवित रहने की खबर से उनमें पुनः आशा का संचार हुआ और उन्होंने थोड़ी लड़ाई के बाद ही बादशाह के पक्ष के लोगों को बिखेर दिया[2]।

फ़र्रुख़सियर उस समय ज़नानख़ाने में छिप रहा था। क़ुतुबुल्मुल्क ने उसे बाहर आकर नित्य के अनुसार दरबार करने के लिये कई बार कहलाया, परन्तु उसने ऐसा करना स्वीकार न किया। हुसेनअलीख़ां-द्वारा कई बार लिखे जाने पर क़ुतुबुल्मुल्क आदि ने शीघ्रता से मशविरा कर बादशाह औरंगज़ेब के पौत्र शाहज़ादे बेदारदिल (बेदारबख़्त का पुत्र) को गद्दी पर बैठाने का निश्चय किया। क़ुतुबुल्मुल्क ने क़ादिरदादख़ां तथा अजीतसिंह के भंडारियों को शाहज़ादे को लाने को भेजा। बेगमों ने उनके वहां पहुंचने पर यह समझा कि बादशाह को गिरफ़्तार कर सैयदों ने शाहज़ादों का अन्त करने के लिए आदमी भेजे हैं, अतएव उन्होंने द्वार बन्दकर दिये और उन्हें भीतर न घुसने दिया। तब एक हाथ नवाब तथा दूसरा अजीतसिंह पकड़े हुए रफीउश्शान के पुत्र रफ़ीउद्दरजात को बाहर लाये और उन्होंने उसे तख़्त पर बैठाया। इस कार्य के बाद बादशाह की तलाश हुई। नज्मुद्दीनअलीख़ां, राजा रत्नचंद, राजा बख़्तमल और

(१) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० १, पृ० ३७८-८४। जोनाथन स्कॉट लिखता है कि झगड़ा ख़ानदौरां के आदमियों और मरहटों के बीच हुआ था। उसी समय मुहम्मद अमीनख़ां को, जो अमीरुलउमरा से मिलने जा रहा था, आते देख, उसे दुश्मन समझकर मरहटे भाग खड़े हुए और उनके लगभग १५०० आदमी एवं तीन अफ़सर मारे गये (हिस्ट्री ऑव् डेक्कन, जि० २, पृ० १६१)।

(२) जोनाथन स्कॉट, हिस्ट्री ऑव् डेक्कन, जि० २, पृ० १६१-२।

जलालखां का पुत्र दीनदारखां कतिपय अफ़ग़ानों के साथ ज़नानख़ाने से गद्दी से उतारे हुए बादशाह (फ़र्रुख़सियर) को कैद कर लाने के लिए भेजे गये। सब मिलाकर लगभग चारसौ व्यक्ति शाही महलों की ओर वेग से बढ़े। मार्ग में कुछ औरतों ने शस्त्र लेकर उन्हें रोकना चाहा, पर इसका कोई परिणाम न निकला और उनमें से कई घायल हुईं तथा मारी गईं। अंत में बादशाह एक छोटे कमरे में मिला। उसने स्वयं लड़ने की निरर्थक कोशिश की तथा उसकी पुत्रियों, माता आदि ने भी उसकी रक्षा करने का विफल प्रयत्न किया; परन्तु उसका कोई परिणाम न निकला और सैयदों के मनुष्यों ने घेरकर उसे कैद कर लिया तथा वे अपमान के साथ घसीटते हुए उसे दीवानेख़ास में कुतुबुल्मुल्क के समक्ष ले गये। वहां उसकी दोनों आंखें फोड़ दी गईं और वह कैद कर त्रिपोलिया दरवाज़े के ऊपर रक्खा गया, जहां साधारण अपराधी रक्खे जाते थे। साथ ही शाही ज़नानख़ाने एवं भंडार अथवा वहां के आदमियों के पास जो भी सामान—सोना, चांदी, आभूषण, रत्न, तांबे के बर्तन वस्त्र आदि—था वह सब लूट लिया गया[1]। यही नहीं दासियों

(१) बांकीदास लिखता है कि उस समय अजीतसिंह भी हुरमख़ाना लूटकर रत्नों की २१ परात अपने डेरे पर ले गया (ऐतिहासिक बातें, संख्या ८६)।

कविया करणीदान-कृत 'सूरजप्रकास' में अजीतसिंह का भी लूट के माल में हिस्सा बटाना लिखा है—

इक साह तख़्त उथाप, इक साह तख़्तह थाप ॥
कय कहे जिन कमधेस, द्रब लीध थाट दलेस ॥
रजतेस कनक रखत, तै चमर छत्र तखत ॥
असि गयंद लीध अपार, हद माल मुलक हुद्दार ॥

[पृ० १३८ हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से]

अर्थात् एक शाह को तख़्त से उतार तथा दूसरे को तख़्त पर बैठाकर कमधेस (अजीतसिंह) ने दिल्लीपति का द्रव्य लूट लिया और चांदी सोने का सामान चंवर, छत्र, तख़्त, हाथी, घोड़े, मुल्क आदि अधिकार में कर लिये।

और अन्य स्त्रियों तक पर अधिकार कर लिया गया[1]। महाराजा अजीतसिंह के प्रार्थना करने पर उसकी पुत्री बादशाह की बेगम का सामान नहीं लूटा गया[2]।

हिन्दुओं पर से जज़िया हटाया जाना

रफ़ीउद्दरजात ने प्रथम दरबार के दिन महाराजा अजीतसिंह, राजा भीमसिंह (कोटा) तथा राजा रत्नचंद[3] के कहने पर हिन्दुओं पर लगनेवाला जज़िया नाम का कर हटा दिया[4]।

फ़र्रुख़सियर का मारा जाना

क़ैद की हालत में फ़र्रुख़सियर को अनेक प्रकार के कष्ट दिये गये। फ़र्रुख़सियर ने, जिसे आंखे फोड़ी जाने पर भी कुछ-कुछ दिखाई पड़ता था, सैयदों से कई बार कहलाया कि यदि तुम मुझे मुक्त कर तख़्त पर बैठा दो तो मैं सारा शासन-भार तुम्हें सौंपने के लिए तैयार हूं। उधर से निराश होकर उसने अपने एक जेलर अब्दुल्लाख़ां अफ़ग़ान से मदद चाही। उससे उसने कहा कि यदि तुम मुझे सकुशल राजा जयसिंह के पास पहुंचा दो तो मैं तुम्हें सात

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स, जि० १; पृ० ३८६-९०। जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० १०८-१०), वीरविनोद (भाग २, पृ० ११४०-१) तथा टॉड कृत "राजस्थान" (जि० २, पृ० १०२३-४) में भी इन घटनाओं का कहीं-कहीं कुछ भिन्नता के साथ मूल रूप में ऐसा ही वर्णन मिलता है।

(२) जोनाथन स्कॉट, हिस्ट्री ऑव् डेकन; जि० २, पृ० १६७।

(३) यह जात का महाजन और इलाहाबाद के सूबेदार सैयद अब्दुल्लाख़ां का दीवान था। फ़र्रुख़सियर ने तख़्तनशीन होने पर अपने अन्य मददगारों के साथ इसे भी "राजा" का ख़िताब और दो हज़ारी मनसब दिया। सैयदों का प्रीतिपात्र होने के कारण इसका ख़ूब दबदबा रहा। पीछे से मुहम्मदशाह के समय जब सैयदों का सितारा अस्त हुआ, उस समय यह भी शाही सेना के साथ लड़कर क़ैद हुआ और बाद में मार डाला गया।

(४) इर्विन, लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०४। मुंतख़बुल्लुबाब—इलियट; हिस्ट्री ऑव् इंडिया, जि० ७, पृ० ४७६। जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑव् डेकन; जि० २, पृ० १६४।

हज़ारी मनसब दूंगा। अब्दुल्लाख़ां अफ़ग़ान ने उसकी मदद करने के बजाय इसकी सूचना सैयदों को दे दी। इसी बीच यह अफ़वाह फैली कि कुछ अन्य लोग बादशाह को कैद से छुड़ाकर पुनः तख़्तनशीन करने के लिए प्रयत्नशील हैं। तब फ़र्रुख़सियर को मारने का निश्चय हुआ। तदनुसार सैयदों ने मीर्ज़ा यासीनख़ां (जिसके बाप मीर्ज़ा कासिमख़ां फ़ौलादख़ां को फ़र्रुख़सियर ने मरवाया था) को बुलवाकर बादशाह को मारने की आज्ञा दी, पर उसने ऐसा करना स्वीकार न किया। इसपर सैयदों ने यह कार्य अपने हाथ में लेकर फ़र्रुख़सियर को शनैः शनैः विष देना शुरू किया, पर जब इसमें देर दिखाई पड़ी तो उन्होंने हत्यारों को बन्दीगृह में भेजा, जिन्होंने गला घोंटकर उसको मार डाला। यह घटना हि० स० ११३१ ता० ८ और ९ जमादिउल्आखिर (वि० सं० १७७६ वैशाख सुदि ९ और १० = ई० स० १७१९ ता० १७ और १८ अप्रेल) की रात को हुई। इसके अगले दिन उसकी लाश हुमायूं के मकबरे में ले जाकर दफ़नाई गई। इस अवसर पर लाश के साथ जानेवाले सैयदों के पक्ष के लोगों को एकत्रित जन समूह ने बहुत कोसा और गालियां दीं तथा उनपर ईंट-पत्थरों की वर्षा की[1]।

मुग़ल साम्राज्य की स्थिति

मुग़लों से पूर्व दिल्ली की सलतनत पर ग़ुलाम, खिलजी, तुग़लक, सैयद और लोदी आदि मुसलमान वंशों का अधिकार रहा था, परन्तु किसी एक वंश का सौ वर्ष भी राज्य न रहा। मुग़लवंश के बुद्धिमान बादशाह अकबर ने अपने राज्य की ऐसी हालत न हो इस विचार से, ईरान के बादशाह की अपने पिता (हुमायूं) को दी हुई नसीहत को स्मरण रख सर्वप्रथम मुसलमान बादशाहों की नीति में परिवर्तन किया एवं हिन्दुओं के साथ मेल का

(१) इर्विन, लेटर मुगल्स जि० १, पृ० ३९१-४। उसी पुस्तक में "सैरुल्-मुताख़िरीन" के आधार पर यह भी लिखा है कि फ़र्रुख़सियर ने एक बार भागने का प्रयत्न किया, पर वह शीघ्र ही पकड़ लिया गया और बुरी तरह पीटा गया। इस अपमान से पीड़ित होकर फ़र्रुख़सियर ने दीवार से सर टकराकर आत्महत्या कर ली परन्तु यह कथन विश्वास-योग्य नहीं है, क्योंकि उक्त पुस्तक का कर्ता सैयद था, जिसने सैयदों का कलङ्क मिटाने के लिए यह कथा लिख दी है।

व्यवहार क़ायम कर उन्हें बड़े-बड़े मंसब और ओहदे देकर अपना सहायक बनाया। इसका परिणाम अच्छा हुआ एवं भारत में मुग़ल बादशाहत की जड़ जम गई। उसके पीछे जहांगीर और शाहजहां ने भी उसकी निर्धारित नीति का अनुसरण किया, जिससे राज्य की बड़ी उन्नति हुई। शाहजहां के उत्तराधिकारी औरंगज़ेब ने धर्म के प्रश्न को प्रधानता देकर अपने पूर्वजों से उलटा आचरण करना शुरू किया। उसकी कट्टर धार्मिकता और हिन्दू-विरोधिनी नीति के कारण मुग़ल-साम्राज्य के स्तम्भस्वरूप हिन्दुओं का उससे विरोध पैदा हो गया तथा देश भर में जगह-जगह विप्लव होने लगे। फलस्वरूप अकबर की डाली हुई मुग़ल-साम्राज्य की नींव औरंगज़ेब के जीते जी ही हिल गई और उसको इस बात का आभास हो गया कि मेरे पीछे बादशाहत की दशा अवश्य बिगड़ जायगी। हुआ भी ऐसा ही। उसके बाद शाहआलम (बहादुरशाह) ने केवल पांच वर्ष तक राज्य किया। फिर उसका पुत्र मुहम्मद मुईज़ुद्दीन (जहांदारशाह) तख़्त पर बैठा, परन्तु नौ मास बाद ही उसके भतीजे फ़र्रुख़सियर ने उसे मरवा डाला। फ़र्रुख़सियर के समय से ही शाही सत्ता का लोप सा हो गया। उसके समय राज्य-कार्य उसके वज़ीर सैयद-बन्धु चलाते थे और वह नाम मात्र का बादशाह रह गया था। उसकी मृत्यु बड़ी दुःखद हुई। यह औरंगज़ेब की ही नीति का फल था कि उसकी मृत्यु के बारह वर्ष बाद ही मुग़ल साम्राज्य की ऐसी स्थिति हो गई कि मुग़ल वंश का शासक-(फ़र्रुख़सियर) अपने नौकरों के हाथों अपमानित होकर बुरी तरह से मारा गया। उसके पीछे मुग़ल साम्राज्य की दशा क्रमश बिगड़ती ही गई और बादशाह सिर्फ़ नाम के ही रह गये।

महाराजा का दिल्ली छोड़ने का इरादा करना

बादशाह फ़र्रुख़सियर को क़ैद करने और मरवाने में महाराजा अजीतसिंह की भी सलाह होने से जनता उसके भी विरुद्ध थी। जब भी वह बाज़ार से गुज़रता तो लोग उसे "दामाद-कुश" (जमाई की हत्या करनेवाला) कहकर संबोधन करते थे। कोई-कोई अपमान-सूचक शब्द काग़ज़ों पर

लिखकर उसके मकान के दरवाज़े पर लगा देते थे। एक बार उसके पुत्र के पावों पर गौ की हड्डियां फेंकी गई। इसपर वज़ीर ने दो-तीन अपराधी काश्मीरियों को पकड़ लिया और उन्हें गधों पर बैठाकर नगर में घुमाया। प्रतिदिन के अपमान से बचने के लिए महाराजा ने शीघ्र दिल्ली का परित्याग करने की इच्छा प्रकट की। नक़द धन और रत्न आदि उपहार में मिलने के बाद ता० १७ जमादिउल्आखिर (ज्येष्ठ वदि ४ = ता० २६ अप्रेल) को उसे अपने सूबे गुजरात जाने की आज्ञा हुई, पर कुछ ही समय बाद कई ऐसे कारण उत्पन्न हो गये जिनसे उसका जाना रुक गया[1]।

रफ़ीउद्दरजात की मृत्यु और रफ़ीउद्दौला का बादशाह होना

नवीन बादशाह रफ़ीउद्दरजात का स्वास्थ्य प्रारंभ से ही ख़राब था। उसे दिक़ की बीमारी थी और वह अफ़ीम का इस्तेमाल भी करता था। गद्दी पर बैठने के बाद से उसकी हालत दिन-दिन गिरने लगी। जब उसे यह आभास हुआ कि मैं अब कुछ दिनों का ही मेहमान हूं, तो उसने सैयदों से अपने बड़े भाई रफ़ीउद्दौला को बादशाह बनाने की ख्वाहिश प्रकट की। तदनुसार ता० १७ रज्जब (आषाढ वदि ४ = ता० २६ मई) को रफ़ीउद्दरजात गद्दी से हटाया जाकर दो दिन बाद रफ़ीउद्दौला दिल्ली के तख़्त पर बैठाया गया। इसके सात दिन बाद ता० २८ रज्जब (आषाढ वदि ११ = ता० २ जून) को रफ़ीउद्दरजात का देहांत हो गया[2]।

बादशाह रफ़ीउद्दरजात के जीते जी ही सैयदों के मित्रसेन[3] आदि कुछ विरोधियों ने शाहज़ादे अकबर (औरंगज़ेब का पुत्र) के पुत्र निकोसियर

(१) इर्विन, लेटर मुगल्स जि० १, पृ० ४०८।

(२) इर्विन लेटर मुगल्स जि० १ पृ० ४१७-८।

(३) यह जात का नागर ब्राह्मण और निकोसियर का सेवक था। हिकमत जानने के कारण इसका शाही सैनिकों पर बहुत-कुछ प्रभाव था। निकोसियर ने बादशाह घोषित किये जाने पर इसे चार हज़ारी मनसब दिया।

इस प्रकार हुमायूं तक [illegible] अपना सहायक बना था। इसका ही फल [illegible] बादशाहत की जड़ जम गई। उसके पीछे जहांगीर और शाहजहां ने भी उसकी निष्पक्ष नीति का अनुसरण किया, जिससे राज्य की बड़ी उन्नति हुई। शाहजहां के उत्तराधिकारी औरंगज़ेब ने भाई के खून से सलतनत लेकर अपने पूर्वजों से उल्टा आचरण करना शुरू किया। उसकी कट्टर धार्मिकता और हिन्दू-विरोधिनी नीति के कारण मुगल साम्राज्य के स्तम्भस्वरूप हिन्दुओं का उससे विरोध पैदा हो गया तथा देशभर में जगह जगह विप्लव होने लगे। फलस्वरूप अकबर की डाली हुई मुगल-साम्राज्य की नींव औरंगज़ेब के जीते जी ही हिल गई और उसको इस बात का आभास हो गया कि मेरे पीछे बादशाहत की दशा अवश्य बिगड़ जायगी। हुआ भी ऐसा ही। उसके बाद शाहआलम (बहादुरशाह) ने केवल पांच वर्ष तक राज्य किया। फिर उसका पुत्र मुहम्मद मुईज़ुद्दीन (जहांदारशाह) तख्त पर बैठा, परन्तु नौ मास बाद ही उसके भतीजे फर्रुखसियर ने उसे मरवा डाला। फ़र्रुखसियर के समय से ही शाही सत्ता का लोप सा हो गया। उसके समय राज्य-कार्य उसके वज़ीर सैयद बन्धु चलाते थे और वह नाम मात्र का बादशाह रह गया था। उसकी मृत्यु बड़ी दुखद हुई। यह औरंगज़ेब की ही नीति का फल था कि उसकी मृत्यु के बारह वर्ष बाद ही मुग़ल साम्राज्य की ऐसी स्थिति हो गई कि मुगल वंश का शासक (फर्रुखसियर) अपने नौकरों के हाथों अपमानित होकर बुरी तरह से मारा गया। उसके पीछे मुगल साम्राज्य की दशा क्रमशः बिगड़ती ही गई और बादशाह सिर्फ़ नाम के ही रह गये।

बादशाह फर्रुखसियर को क़ैद करने और मरवाने में महाराजा अजीतसिंह की भी सलाह होने से जनता उसके भी विरुद्ध थी। जब भी वह बाज़ार से गुज़रता तो लोग उसे "दामाद-कुश" (जमाई की हत्या करनेवाला) कहकर संबोधन करते थे। कोई-कोई अपमान-सूचक शब्द काग़ज़ों पर

महाराजा का दिल्ली छोड़ने का इरादा करना

लिखकर उसके मकान के दरवाज़े पर लगा देते थे। एक बार उसके पूजा के पात्रों पर गौ की हड्डियां फेंकी गईं। इसपर वज़ीर ने दो-तीन अपराधी काश्मीरियों को पकड़ लिया और उन्हें गधों पर बैठाकर नगर में घुमाया। प्रतिदिन के अपमान से बचने के लिए महाराजा ने शीघ्र दिल्ली का परित्याग करने की इच्छा प्रकट की। नक़द धन और रत्न आदि उपहार में मिलने के बाद ता० १७ जमादिउल्आखिर (ज्येष्ठ वदि ४ = ता० २६ अप्रेल) को उसे अपने सूबे गुजरात जाने की आज्ञा हुई पर कुछ ही समय बाद कई ऐसे कारण उत्पन्न हो गये जिनसे उसका जाना रुक गया[1]।

रफ़ीउद्दरजात की मृत्यु और रफ़ीउद्दौला का बादशाह होना

नवीन बादशाह रफ़ीउद्दरजात का स्वास्थ्य प्रारंभ से ही ख़राब था। उसे दिक की बीमारी थी और वह अफ़ीम का इस्तेमाल भी करता था। गद्दी पर बैठने के बाद से उसकी हालत दिन-दिन गिरने लगी। जब उसे यह आभास हुआ कि मैं अब कुछ दिनों का ही मेहमान हूं, तो उसने सैयदों से अपने बड़े भाई रफ़ीउद्दौला को बादशाह बनाने की ख्वाहिश प्रकट की। तदनुसार ता० १७ रजब (आषाढ वदि ४ = ता० २६ मई) को रफ़ीउद्दरजात गद्दी से हटाया जाकर दो दिन बाद रफ़ीउद्दौला दिल्ली के तख्त पर बैठाया गया। इसके सात दिन बाद ता० २८ रजब (आषाढ वदि [illegible] = ता० २ जून) को रफ़ीउद्दरजात का देहान्त हो गया[2]।

बादशाह रफ़ीउद्दरजात के [illegible] सैयदों के [illegible] मित्रसेन[3] आदि कुछ विरोधियों ने शाहज़ादे अकबर (औरंगज़ेब का पुत्र) के पुत्र निकोसियर

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०८।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४१८।

(३) [illegible]

[illegible] अपना [illegible]
[illegible] बादशाह की
[illegible] उसकी [illegible]
[illegible] हुई । बादशाह
ने [illegible] औरंगज़ेब ने भी [illegible] अपने
पूर्वजों की [illegible] किया । [illegible] धार्मिक
और हिन्दू [illegible] के [illegible]
हिन्दुओं का उससे विरोध पैदा हो गया [illegible] विरुद्ध
होने लगे । [illegible] की
औरंगज़ेब के जीते जी ही [illegible] और [illegible] का आभास हो
गया कि उसके बाद बादशाहत की दशा [illegible] । हुआ भी
ऐसा ही । उसके बाद शाहआलम (बहादुरशाह) ने केवल पांच वर्ष तक
राज्य किया । फिर उसका पुत्र मुइज़्ज़ुद्दीन (जहांदारशाह)
तख्त पर बैठा, परन्तु थोड़े समय बाद ही उसके भतीजे फ़र्रुख़सियर ने उसे
मरवा डाला । फ़र्रुख़सियर के समय में ही शाही सत्ता का लोप सा हो
गया । उसके समय राज्य कार्य उसके वज़ीर सैयद बन्धु चलाते थे और वह
नाम मात्र का बादशाह रह गया था । उसकी मृत्यु बड़ी दुःखद हुई । यह
औरंगज़ेब की ही नीति का फल था कि उसकी मृत्यु के बारह वर्ष बाद
ही मुग़ल साम्राज्य की ऐसी स्थिति हो गई कि मुग़ल वंश का शासक
(फ़र्रुख़सियर) अपने नौकरों के हाथों अपमानित होकर बुरी तरह से
मारा गया । उसके पीछे मुग़ल साम्राज्य की दशा क्रमशः बिगड़ती ही गई
और बादशाह सिर्फ़ नाम के ही रह गये ।

बादशाह फ़र्रुख़सियर को क़ैद करने और मरवाने में महाराजा
अजीतसिंह की भी सलाह होने से जनता उसके भी विरुद्ध थी । जब भी वह
बाज़ार से गुज़रता तो लोग उसे "दामाद-कुश"
(जमाई की हत्या करनेवाला) कहकर संबोधन करते
थे । कोई-कोई अपमान-सूचक शब्द काग़ज़ों पर

महाराजा का दिल्ली छोड़ने का इरादा करना

लिखकर उसके मकान के दरवाज़े पर लगा देते थे। एक बार उसके पुत्रों के पावों पर गौ की हड्डियां फेंकी गईं। इसपर वज़ीर ने दो-तीन अपराधी काश्मीरियों को पकड़ लिया और उन्हें गधों पर बैठाकर नगर में घुमाया। प्रतिदिन के अपमान से बचने के लिए महाराजा ने शीघ्र दिल्ली का परित्याग करने की इच्छा प्रकट की। नक़द धन और रत्न आदि उपहार में मिलने के बाद ता० १७ जमादिउल्आख़िर (ज्येष्ठ वदि ४ = ता० २६ अप्रेल) को उसे अपने सूबे गुजरात जाने की आज्ञा हुई, पर कुछ ही समय बाद कई ऐसे कारण उत्पन्न हो गये जिनसे उसका जाना रुक गया[1]।

रफ़ीउद्दरजात की मृत्यु और रफ़ीउद्दौला का बादशाह होना

नवीन बादशाह रफ़ीउद्दरजात का स्वास्थ्य प्रारंभ से ही ख़राब था। उसे दिक की बीमारी थी और वह अफ़ीम का इस्तेमाल भी करता था। गद्दी पर बैठने के बाद से उसकी हालत दिन-दिन गिरने लगी। जब उसे यह आभास हुआ कि मैं अब कुछ दिनों का ही मेहमान हूं, तो उसने सैयदों से अपने बड़े भाई रफ़ीउद्दौला को बादशाह बनाने की ख़्वाहिश प्रकट की। तदनुसार ता० १७ रजब (आषाढ वदि ४ = ता० २६ मई) को रफ़ीउद्दरजात गद्दी से हटाया जाकर दो दिन बाद रफ़ीउद्दौला दिल्ली के तख़्त पर बैठाया गया। इसके सात दिन बाद ता० २८ रजब (आषाढ वदि १३ = ता० २ जून) को रफ़ीउद्दरजात का देहांत हो गया[2]।

बादशाह रफ़ीउद्दरजात के गद्दी पर बैठाये जाने पर [illegible] विरोधियों ने शाहज़ादे अकबर (औरंगज़ेब का पुत्र) के पुत्र [illegible]

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०८।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४१८।

(३) [illegible]

छिपाई गई जब तक कि दिल्ली से दूसरा शाहज़ादा शाही सेना में न पहुंच गया। बादशाह की मृत्यु के लगभग एक सप्ताह पूर्व ही गुलामअलीखां (सैयदों का भानजा) तथा कई दूसरे अमीर इस कार्य के लिए दिल्ली भेजे गये थे। ता० ११ ज़िल्काद (प्रथम आश्विन सुदि १३ = ता० १५ सितंबर) को वे शाहज़ादे रोशनअख्तर[1] को लेकर बिआपुर पहुंचे। तब बादशाह की मृत्यु की घोषणा करने और उसका शव दिल्ली रवाना करने के अनन्तर ता० १५ ज़िल्काद (द्वितीय आश्विन बदि २ = ता० १९ सितंबर) को रोशनअख्तर "अबुल्फतह नासिरुद्दीन मुहम्मदशाह बादशाह ग़ाज़ी" का विरुद धारण कर दिल्ली के तख़्त का स्वामी बना[2]।

अजीतसिंह ने बीच में पड़कर जयसिंह और बादशाह के बीच सुलह कराने का प्रयत्न किया, पर जब इसमें बहुत समय लगने लगा, तो उस (जयसिंह) पर आतंक स्थापित करने के लिए बादशाह ने अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया। इसी बीच अजीतसिंह ने अपने देश जाने को आज्ञा चाही। साथ ही उसने यह भी कहा कि मैं मार्ग में जयसिंह से भी मिलता जाऊंगा। इसपर उसे देश जाने की आज्ञा दी गई। ता० २ ज़िलहिज (द्वितीय आश्विन सुदि ३ = ता० ५ अक्टोबर) को बादशाह के पास ख़बर आई कि जयसिंह इसके तीन दिन पूर्व आंबेर लौट गया। अनन्तर संधि हो जाने पर जयसिंह को सोरठ (दक्षिणी काठियावाड़) तथा अजीतसिंह को अहमदाबाद एवं अजमेर की सूबेदारी प्रदान की गई[3]।

महाराजा अजीतसिंह को अजमेर तथा अहमदाबाद की सूबेदारी मिलना

(१) बादशाह बहादुरशाह के चतुर्थ पुत्र जहांशाह खुजिस्ताअख़्तर का पुत्र।

(२) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० १, पृ० ४३०-३२ तथा जि० २, पृ० १-२।

(३) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० २, पृ० ३-४।

"मुंतख़बुल्लुबाब" में रफ़ीउद्दौला के वृत्तान्त में ही लिखा है कि जब जयसिंह को किसी तरफ़ से सहायता न मिली तो उसने अपने वकील भेजकर माफ़ी मांग ली। उस समय यह निर्णय हुआ कि सोरठ की फ़ौजदारी जयसिंह को दी जाय तथा अजमेर, अहमदाबाद और जोधपुर पूर्ववत् अजीतसिंह के अधिकार में रहें (इलियट्, हिस्ट्री

अहमदाबाद की सूबेदारी मिलने पर महाराजा स्वयं तो वहां न गया लेकिन भंडारी अनूपसिंह को उसने अपना नायब बनाकर वहां का प्रबन्ध करने के लिए भेज दिया। हि० स० ११३२ के जमादिउस्सानी (वि० सं० १७७७ चैत्र-वैशाख = ई० स० १७२० अप्रेल) मास में वह शाही बाग में पहुंचा। फिर भद्र के किले में रहकर उसने सूबे का कार्य शुरू किया। वहां रहते समय उसकी वहां के नायब सूबेदार मेहरअली से अनबन हुई। मेहरअली के पास बड़ी फ़ौज थी जिससे भंडारी उपयुक्त मौके का इन्तज़ार करने लगा। ऐसी स्थिति में वहां रहना नामुनासिब समझ मेहरअली अपनी नई जगह खंभात चला गया। उन्हीं दिनों भणसाली कपूरचन्द अहमदाबाद में जाकर नगर सेठ का कार्य करने लगा। उसने भंडारी-द्वारा लोगों पर अनुचित जुर्माना किये जाने, उनपर झूठे आरोप लगाकर उनसे ज़बरदस्ती धन वसूल करने आदि का विरोध किया। महाराजा की कुतुबुलमुल्क एवं अमीरुलउमरा से घनिष्ठ मैत्री होने के कारण भंडारी को बड़ा अभिमान हो गया था। वह अपने स्वार्थसाधन में नगर सेठ को बाधक मानकर उसे दूर करने का उपाय करने लगा। इसपर कपूरचन्द सावधान रहने लगा और उसने भद्र में जाना छोड़ दिया। साथ ही उसने

अजीतसिंह के नायब अनूपसिंह का गुजरात में जुल्म करना

ऑव् इंडिया, जि० ७, पृ० ४८४)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि मुहम्मदशाह के बादशाह होने पर अब्दुल्लाखां ने आमेर पर चढ़ाई की। इस अवसर पर गुजरात के सूबे का फ़रमान अजीतसिंह के नाम करा कर (अब्दुल्लाखां) उसे भी साथ ले गया। आमेर को नष्ट करने की अब्दुल्लाखां की बड़ी इच्छा थी पर जब जयसिंह के वकील अजीतसिंह के पास पहुंचे तो उसने समझा-बुझाकर उसे वापस लौटा दिया (जि० २, पृ० ११०-११)।

कैम्पबेल कृत 'गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी' से पता चलता है कि मुहम्मदशाह के सिंहासनारूढ़ होने के समय अजीतसिंह ही सबसे शक्तिशाली सरदार था। उसको अपनी तरफ मिलाये रखने के लिए सैयदों ने गुजरात की सूबेदारी उसके नाम कराई और उसके वहां पहुंचने तक वहां का प्रबन्ध करने के लिए मेहरअली को नियुक्त किया (जि० १, भाग १, पृ० ३०१)।

छिपाई गई जब तक कि दिल्ली से दूसरा शाहज़ादा शाही सेना में न पहुंच गया। बादशाह की मृत्यु के लगभग एक सप्ताह पूर्व ही गुलामअलीखां (सैयदों का भानजा) तथा कई दूसरे अमीर इस कार्य के लिए दिल्ली भेजे गये थे। ता० ११ ज़िल्काद (प्रथम आश्विन सुदि १३ = ता० १५ सितंबर) को वे शाहज़ादे रोशनअख़्तर[1] को लेकर बिलासपुर पहुंचे। तब बादशाह की मृत्यु की घोषणा करने और उसका शव दिल्ली रवाना करने के अनन्तर ता० १५ ज़िल्काद (द्वितीय आश्विन वदि २ = ता० १६ सितंबर) को रोशनअख़्तर "अबुल्फ़तह नासिरुद्दीन मुहम्मदशाह बादशाह ग़ाज़ी" का विरुद धारण कर दिल्ली के तख़्त का स्वामी बना[2]।

अजीतसिंह ने बीच में पड़कर जयसिंह और बादशाह के बीच सुलह कराने का प्रयत्न किया, पर जब इसमें बहुत समय लगने लगा, तो उस (जयसिंह) पर आतङ्क स्थापित करने के लिए बादशाह ने अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया। इसी बीच अजीतसिंह ने अपने देश जाने की आज्ञा चाही। साथ ही उसने यह भी कहा कि मैं मार्ग में जयसिंह से भी मिलता जाऊंगा। इसपर उसे देश जाने की आज्ञा दी गई। ता० २ ज़िलहिज (द्वितीय आश्विन सुदि ३ = ता० ५ अक्टोबर) को बादशाह के पास ख़बर आई कि जयसिंह इसके तीन दिन पूर्व आंबेर लौट गया। अनन्तर संधि हो जाने पर जयसिंह को सोरठ (दक्षिणी काठियावाड़) तथा अजीतसिंह को अहमदाबाद एवं अजमेर की सूबेदारी प्रदान की गई[3]।

महाराजा अजीतसिंह को अजमेर तथा अहमदाबाद की सूबेदारी मिलना

---

(१) बादशाह बहादुरशाह के चतुर्थ पुत्र जहांशाह खुजिस्ताअख़्तर का पुत्र।

(२) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० १, पृ० ४३०-३२ तथा जि० २, पृ० १-२।

(३) इर्विन, लेटर मुगल्स, जि० २, पृ० ३-४।

"मुंतख़बुल्लुबाब" में रफ़ीउद्दौला के वृत्तान्त मे ही लिखा है कि जब जयसिंह को किसी तरफ से सहायता न मिली तो उसने अपने वकील भेजकर माफी मांग ली। उस समय यह निर्णय हुआ कि सोरठ की फ़ौजदारी जयसिंह को दी जाय तथा अजमेर, अहमदाबाद और जोधपुर पूर्ववत् अजीतसिंह के अधिकार में रहे (इलियट्, हिस्ट्री

अहमदाबाद की सूबेदारी मिलने पर महाराजा स्वयं तो वहां न गया लेकिन भंडारी अनूपसिंह को उसने अपना नायब बनाकर वहां का प्रबन्ध करने के लिए भेज दिया। हि० स० ११३२ के जमादिउस्सानी (वि० सं० १७७७ चैत्र-वैशाख = ई० स० १७२० अप्रेल) मास में वह शाही बाग में पहुंचा। फिर भद्र के किले में रहकर उसने सूबे का कार्य शुरू किया। वहां रहते समय उसकी वहां के नायब सूबेदार मेहरअली से अनबन हुई। मेहरअली के पास बड़ी फ़ौज थी जिससे भंडारी उपयुक्त मौके का इन्तज़ार करने लगा। ऐसी स्थिति में वहां रहना नामुनासिब समझ मेहरअली अपनी नई जगह खंभात चला गया। उन्हीं दिनों भणसाली कपूरचन्द अहमदाबाद में जाकर नगर सेठ का कार्य करने लगा। उसने भंडारी-द्वारा लोगों पर अनुचित जुर्माना किये जाने उनपर झूठे आरोप लगाकर उनसे ज़बरदस्ती धन वसूल करने आदि का विरोध किया। महाराजा की कुतुबुलमुल्क एवं अमीरुलउमरा से घनिष्ठ मैत्री होने के कारण भंडारी को बड़ा अभिमान हो गया था। वह अपने स्वार्थसाधन में नगर सेठ को बाधक मानकर उसे दूर करने का उपाय करने लगा। इसपर कपूरचन्द सावधान रहने लगा और उसने भद्र में जाना छोड़ दिया। साथ ही उसने

अजीतसिंह के नायब अनूपसिंह का गुजरात में जुल्म करना

ऑव् इंडिया, जि० ७ पृ० ४८४)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि मुहम्मदशाह के बादशाह होने पर अब्दुल्लाखां ने आमेर पर चढ़ाई की। इस अवसर पर गुजरात के सूबे का फ़रमान अजीतसिंह के नाम करा कर (अब्दुल्लाखां) उसे भी साथ ले गया। आमेर को नष्ट करने की अब्दुल्लाखां की बड़ी इच्छा थी पर जब जयसिंह के वकील अजीतसिंह के पास पहुंचे तो उसने समझा-बुझाकर उसे वापस लौटा दिया (जि० २ पृ० ११०-११)।

कैम्पबेल कृत 'गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी' से पाया जाता है कि मुहम्मदशाह के सिंहासनारूढ़ होने के समय अजीतसिंह ही सबसे अधिकशाली नरेश था। उसको अपनी तरफ़ मिलाये रखने के लिए सैयदों ने गुजरात की सूबेदारी उसके नाम करादी और उसके वहां पहुंचने तक वहां का प्रबन्ध करने के लिए मेहरअलीखां को नियुक्त किया (जि० १, भाग १, पृ० ३०१).

क़रीब ५०० पैदल सिपाही अपनी सेवा में रख लिये। जब भी वह पूजा करने के लिए मन्दिर में जाता, उसके साथ बहुत से आदमी रहते। तब भंडारी ने अपने आदमियों में से ख्वाजाबख़्श को नगर सेठ को मारने के लिये नियत किया। वह क़ासिद का वेष बनाकर कपूरचंद के नाम के कितनेक ज़ाली पत्र तैयार कर रात्रि के समय, जब वह घर में अकेला था, उसके पास गया। जैसे ही कपूरचंद उन पत्रों को पढ़ने लगा, ख्वाजाबख़्श कटार से उसे मारकर भाग गया। रात्रि के अन्त में इस घटना का पता लगने पर कपूरचंद के संबंधी एकत्र हुए और उसके शव को लेकर चले। भंडारी के आदमियों ने शव को रोका और वे उसे लेजानेवालों को तकलीफ़ देने लगे। डेढ़ पहर दिन चढ़े तक उसका शव वहीं पड़ा रहा। इसके बाद कहीं उसे लेजाने की आज्ञा भंडारी से प्राप्त हुई[1]।

अजीतसिंह का जोधपुर जाना

जोधपुर की तरफ प्रस्थान करते समय अजीतसिंह ने महाराजा जयसिंह को भी अपने साथ ले लिया। वि० सं० १७७७ (ई० स० १७२०) में मनोहरपुर के गौड़ों के यहां विवाह करने के अनन्तर वह जयसिंह के साथ जोधपुर पहुंचा, जहां जयसिंह सूरसागर के महलों में ठहराया गया। श्रावणादि वि० सं० १७७७ (चैत्रादि १७७८) के ज्येष्ठ मास में महाराजा ने अपनी पुत्री सूरजकुंवरी का विवाह जयसिंह के साथ किया[2]।

मारवाड़ के निकट के गुजरात के प्रदेश पर महाराजा का क़ब्ज़ा करना

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि बादशाह की तरफ से अहमदाबाद का सूबा महाराजा अजीतसिंह को दे दिया गया था। ई० स० १७१६ (वि० सं० १७७६) में महरटों का प्रभाव बहुत बढ़ गया था। पीलाजी गायकवाड़ ने सैयद आकिल तथा मुहम्मद पनाह की सेनाओं को परास्त

(१) मिरात-इ-अहमदी, जि० २ पृ० २८, ३१-२ तथा ३४-५। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" (जि० १, खंड १, पृ० ३०१-२) एवं जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० १११) में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १११।

कर सोनगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया। इसी समय के आस-पास मुग़लों की शक्ति का ह्रास शुरू हुआ। अजीतसिंह भी मुसलमानों से घृणा रखने के कारण गुप्त रूप से मरहटों का पक्षपाती हो गया। यही नहीं उसने मारवाड़ की सीमा से मिले हुए गुजरात के कई स्थानों पर अधिकार कर लिया। पीछे से सरबुलंदखां ने उन स्थानों पर पुनः अधिकार करने के लिए कई बार प्रयत्न किये, परन्तु उनमें उसे सफलता नहीं मिली[1]।

मुहम्मदशाह के राज्य के प्रारम्भिक दिनों में ही सैयदों और चिनक़लीचख़ां निज़ामुल्मुल्क के बीच विरोध पैदा हो गया। विरोध यहां तक

सैयद बन्धुओं का पतन और मारा जाना

बढ़ा कि सैयदों ने उसका नाश करने के लिए सैनिक तैयारियां कीं। इसी बीच बादशाह ने गुप्त रूप से निज़ामुल्मुल्क के पास इस आशय के पत्र भेजे कि मुझे सैयदों के पंजे से मुक्त करो। हुसेनअलीख़ां ने कोटा के महाराव भीमसिंह को अपने पक्ष में कर उसको दिलावरख़ां के साथ दक्षिण में निज़ामुल्मुल्क पर भेजा। हि० स० ११३२ ता० १३ शाबान (वि० सं० १७७७ ज्येष्ठ सुदि १५ = ई० स० १७२० ता० ६ जून) को रत्नपुर (बुरहानपुर से १७ कोस दूर) के निकट लड़ाई होने पर महाराव भीमसिंह आदि कितने ही व्यक्ति मारे गये और निज़ामुल्मुल्क की फ़तह हुई। अनन्तर उसने आलमअलीख़ां (सैयदों के संबंधी) को भी हराया। तब ता० ६ ज़िल्काद (भाद्रपद सुदि १२ = ता० २ सितंबर) को हुसेनअलीख़ां ने स्वयं बादशाह के साथ आगरे से दक्षिण की तरफ़ प्रस्थान किया। मार्ग से ही अब्दुल्लाख़ां वापस राजधानी (दिल्ली) भेजा गया। सैयदों के बढ़ते हुए आतंक से चिन्तित होकर बादशाह की मा की मर्ज़ी और सलाह के अनुसार एतमादुद्दौला मुहम्मद अमीनख़ां, सआदतख़ां एवं मीर हैदरख़ां काशग़री ने हुसेनअलीख़ां को मार डालने का षड्यंत्र रचा। फ़तहपुर से पैंतीस कोस दक्षिण तोरा नामक स्थान में बादशाह के डेरे होने पर ता० ६ ज़िल्हिज (आश्विन सुदि ८ = ता० २८ सितंबर) को,

---

(१) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, जि० १, खंड १, पृ० ३०१।

[illegible]

शाही ... और ... का ..., जो हुसेनअलीखाँ का ..., हुसेनअलीखाँ के मारे जाने पर बादशाह से मिल गया। हुसेनअलीखाँ का सिर काटकर मुगलों ने बादशाह के सामने पेश किया। अब्दुल्लाखाँ ने जब यह समाचार सुना तो वह चिन्तित हुआ। दिल्ली पहुँचकर उसने ता० ११ जिल्हिज्ज (आश्विन सुदि १३ = ता० २ अक्टोबर) को रफ़ीउश्शान के बेटे सुलतान इब्राहीम को बादशाह घोषित कर करीब एक लाख सेना के साथ मुहम्मदशाह के विरुद्ध प्रस्थान किया। इधर मुहम्मदशाह भी दिल्ली की ओर बढ़ा। उसके पास अब्दुल्लाखाँ की सेना से आधी सेना थी। हसनपुर नामक स्थान में सामना होने पर हि० स० ११३३ ता० १३ और १४ मुहर्रम (कार्तिक सुदि १५ और मार्गशीर्ष बदि १ = ता० ३ और ४ नवंबर) को दोनों में भीषण युद्ध हुआ। मुहकमसिंह, जो अबतक शाही सेना के साथ था, इस अवसर पर अब्दुल्लाखाँ से आ मिला। अन्त में विजय शाही सेना की हुई तथा अब्दुल्लाखाँ और सुलतान इब्राहीम क़ैद कर लिये गये। लगभग दो वर्ष तक क़ैद[1] में रहने के बाद हि० स० ११३५ ता० १ मुहर्रम (वि० सं० १७७९ आश्विन सुदि २ = ई० स० १७२२ ता० १ अक्टोबर) को वह विष देकर मार डाला गया। उसकी इच्छानुसार उसकी लाश दिल्ली में ही पुराना दरवाजे के बाहर राजा बख़्तमल-द्वारा

---

(१) अब्दुल्लाख़ाँ की क़ैद की दशा में महाराजा अजीतसिंह ने बादशाह से अर्ज़ कराई कि यदि अब्दुल्लाख़ाँ को मुक्त कर दिया जाय तो मैं पुनः शाही सेवा में आने को तैयार हूं, परन्तु इसका कोई परिणाम न निकला।

कुतुबुल्मुल्क को दिये गये बाग में गाड़ी गई[1], जो निज़ामुद्दीन औलिया के मज़ार को जानेवाली सड़क पर था[2]।

उन्हीं दिनों महाराजा अजीतसिंह ने अजमेर जाकर वहां रहना इख़्तियार किया और अपने दोनों सूबों (गुजरात और अजमेर) में गो-वध बन्द किये जाने की आज्ञा प्रचारित की। ऐसी अवस्था में उसका अविलम्ब दमन किया जाना आवश्यक समझकर सर्वप्रथम अकबराबाद के हाकिम सआदतख़ां और फिर क्रमशः शम्सामुद्दौला, कमरुद्दीनख़ां तथा हैदरकुलीख़ां को अजमेर का सूबा एवं शाही सेना देकर उधर का प्रबन्ध करने के लिए जाने को कहा गया, परन्तु उनमें से एक ने भी उधर प्रस्थान न किया और एक न एक बहाना कर इस कार्य को हाथ में लेने से इनकार कर दिया। शम्सामुद्दौला चाहता था कि अजमेर का परित्याग करने की शर्त पर अजीतसिंह के नाम गुजरात का सूबा बहाल रक्खा जाय, परन्तु हैदरकुलीख़ां ने इसका विरोध किया। तब सआदतख़ां को अजीतसिंह पर जाने का कार्य सौंपा गया। नया आदमी होने की वजह से वह इस कार्य के लिए पर्याप्त व्यक्ति एकत्र न कर सका। कमरुद्दीनख़ां ने जाने से पूर्व यह मांग पेश की कि [illegible] सैयदों को क्षमा कर मेरे साथ भेजा जाय, परन्तु [illegible] विश्वास न होने से यह मांग स्वीकार न हुई [illegible] की अजमेर में नियुक्ति [illegible]

महाराजा का अजमेर जाकर रहना

इन्हीं समय महाराजा [illegible]

(१) [illegible]

[illegible]

[illegible]

(२) [illegible]

[illegible]

(३) [illegible]

कुलीखां वहां का सूबेदार नियत हुआ[1]। उसने अपने नायब को वहां भेज दिया। सूबा बदल जाने से नायब भंडारी अनूपसिंह क्या करेगा यह मालूम न होने से मेहरअलीखां- (जो पहले दीवान का कार्य करता था) अपनी प्रतिष्ठा के बचाव के लिए आदमियों की एक टुकड़ी, कुछ पैदल तथा सवार अपने साथ रखने लगा। उनमें से एक व्यक्ति की एक दिन बाज़ार में अनूपसिंह के नौकरों के साथ झड़प हो गई और वह ज़ख्मी हो गया। लोगों को सूबे की बदली की खबर मिल गई थी और उसके ज़ुल्म से लोग ऊब गये थे, तत्काल उस छोटे से झगड़े ने लड़ाई का रूप धारण कर लिया। उसकी खबर मेहरअलीखां के पास पहुंचने पर उसने अपने नौकरों तथा दूसरे लोगों को प्रबंध करने के लिए भेजा। इससे लड़ाई बढ़ गई और बदमाश तथा लुटेरे लोगों ने लड़ाई में शरीक होकर क़िले को घेर लिया। जब अनूपसिंह को इस बखेड़े का हाल मालुम हुआ तो भद्र की साबरमती की तरफ़ की खिड़की से निकलकर वह शाही बाग़ में चला गया। तब मेहरअलीखां के नौकरों और दूसरे लोगों ने, जो उनके साथ हो गये थे, क़िले में घुसकर अनूपसिंह की जो जो चीज़ हाथ लगी उसे नष्ट किया और भंडारी ने जो वहां एक नई इमारत बनवाई थी, वह मेहरअलीखां की आज्ञा से तोड़ डाली गई[2]। इस प्रकार भंडारी की अत्याचारपूर्ण हुकूमत का अन्त हुआ।

[illegible]

---

(१) "मिरात-इ-अहमदी" (जि० २, पृ० ३८) में अजीतसिंह के अहमदाबाद की सूबेदारी से हटाये जाने का समय हि० स० ११३३ का रजब मास (वि० सं० १७७८ वैशाख, ज्येष्ठ= ई० स० 1721 मई) और इर्विन-कृत "लेटर मुगल्स" (जि० २, पृ० १०८) में ई० स० 1721 ता० 12 अक्टोबर (वि० सं० १७७८ कार्तिक सुदि २) दिया है। जोनाथन स्कॉट लिखता है कि अजीतसिंह द्वारा नियत किये हुए हाकिम के ज़ुल्मों की शिकायत होने पर बादशाह ने अजीतसिंह को वहां से हटा दिया (हिस्ट्री ऑव् डेकन; जि० २, पृ० १८४)।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन, मिरात इ-अहमदी, जि० २, पृ० ३८-९।

इधर अजमेर के नये सूबेदार मुज़फ्फ़रअलीख़ां ने स्वयं उधर जाने का विचार किया, पर उसके पास धन की कमी थी। उसे छः लाख रुपये दिये जाने का हुक्म हुआ, पर उस समय उसे दो लाख से अधिक न मिल सके। उसने उतने से ही सन्तोष कर सैनिकों की भर्ती शुरू की। मनोहरपुर पहुंचते-पहुंचते उसके पास २०००० सेना हो गई, लेकिन इसी बीच उसको मिला हुआ सब रुपया भी ख़त्म हो गया। सवाई जयसिंह का मामला आसानी से तय हो गया था और ई० स० १७२१ (वि० सं० १७७८) में उसने दरबार में उपस्थित हो बादशाह की अधीनता स्वीकार कर ली थी, लेकिन अजीतसिंह का मामला इतना आसान न निकला। उसने अजमेर ख़ाली करने का कोई इरादा ज़ाहिर न किया और अपने ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंह को मुज़फ्फ़रअलीख़ां का सामना करने को भेजा। इसपर (ई० स० १७२१ ता० २ अक्टोबर = वि० सं० १७७८ कार्तिक वदि ८) को मुज़फ्फ़रअलीख़ां के पास दिल्ली से यह आज्ञा पहुंची कि वह मनोहरपुर से आगे न बढ़े। वह वहां तीन मास तक पड़ा रहा। इस बीच दिल्ली से शेष रुपये भी न आये। तनख्वाहें न मिलने के कारण उसके सिपाहियों ने अपने शस्त्र आदि बेच दिये। अन्ततः उन्होंने नारनोल के निकट के कई गांवों को लूट लिया और फिर वे उसका साथ छोड़कर चले गये। ऐसी परिस्थिति में मुज़फ्फ़रअलीख़ां ने राठोड़ों पर आक्रमण करने का एक बार भी प्रयत्न न किया। कुछ समय बाद जयसिंह का सेनापति आकर उसे अपने साथ आंबेर ले गया, जहां से अजमेर की सूबेदारी का शाही फ़रमान, ख़िलअत आदि लौटाकर वह फ़क़ीर हो गया। तब सैयद नसरतयारख़ां बारहा की नियुक्ति हुई। इसी बीच चूड़ामन जाट के पुत्र मोहकमसिंह के सेना-सहित अजमेर पहुंच जाने से अजीतसिंह की शक्ति बढ़ गई। इससे पूर्व कि नसरतयारख़ां उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही करे, अजीतसिंह ने अभयसिंह को नारनोल तथा आगरा एवं दिल्ली के सूबों पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया। उस(अभयसिंह)के पास अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित बारह हज़ार ऊंट-सवार थे। उसके

महाराजा का अजमेर छोड़ना

अतिरिक्त दूसरा उपाय न रह गया। स्वयं दरबार में उपस्थित होने के लिए एक वर्ष की मुहलत मांगकर उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंह को कई हाथियों और दूसरे उपहारों के साथ शाही सेनाध्यक्ष के पास भेज दिया। हैदरकुलीखां ने अभयसिंह को उपहारों आदि के साथ बादशाह की सेवा में भेजा, जहां उसका समुचित स्वागत हुआ। उसे बहुत सी वस्तुएं उपहार में दी गई और वह दरबार में ही रोक लिया गया[1]।

महाराजा अजीतसिंह का बादशाह से मेल करना

यद्यपि महाराजा दीर्घ समय तक स्थायी रूप से जोधपुर में बहुत कम रहा था, फिर भी भवन निर्माण का शौक होने से उसने अपने समय में कई नये भवन आदि बनवाये। जोधपुर के गढ़ में उसने फतहमहल[2] और दौलतखाने का राजमहल बनवाया। नगर के भीतर के घनश्यामजी[3]

महाराजा अजीतसिंह के बनवाये हुए भवन आदि

---

(१) इर्विन लेटर मुगल्स, जि० २, पृ० ११४। "तारीख़-इ-हिंदी" (इलियट, हिस्ट्री ऑव इंडिया, जि० ८, पृ० ४४) में भी इसका उल्लेख है।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि पहले महाराजा ने कुंवर के साथ खींवसी को भेजना चाहा, पर वह (खींवसी) राजी न हुआ तो उसने भाटी [illegible] व चांपावत हरनाथसिंह तेजसिंहोत को भेजा। दोनों अजमेर जाकर हैदरकुली और जयसिंह वगैरह से मिले। अनन्तर महाराजा तो मेड़ता से चलकर मंडोवर गया और कुंवर शाही फौज के साथ दिल्ली की ओर गया, पर मार्ग में ही भाटी का ठाकुर मर गया, जिसकी खबर मिलने पर महाराजा को बड़ी चिन्ता हुई। दिल्ली पहुंचने पर बादशाह ने कुंवर की बड़ी खातिर की (जि० २, पृ० ११४)।

टॉड-कृत 'राजस्थान' में भी अभयसिंह का दिल्ली जाना और उसका बड़ा अच्छा स्वागत होना लिखा है (जि० २, पृ० १०२८)।

(२) मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खंड, पृ० [illegible]।

(३) घनश्यामजी का मंदिर राव गांगा ने बनवाया था। जोधपुर पर [illegible] का अधिकार होने के बाद मुसलमानों ने उसे तुड़वाकर वहां मसजिद बनवा दी। जब महाराजा अजीतसिंह का जोधपुर पर अधिकार हुआ तब उसने मसजिद को तोड़कर [illegible] मंदिर बनवा दिया। पीछे से महाराजा विजयसिंह ने उस मंदिर का जीर्णोद्धार कराया (मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खंड, पृ० २२६)।

तथा मूलनायकजी के मन्दिर महाराजा के ही बनवाये हुए हैं। मंडोर में उसने महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) का स्मारक बनवाया। उसकी राणियों में से राणावत ने गोल में तंवरजी के झालरे के निकट शिखरबन्द मन्दिर तथा जाडेची ने चांदपोल के बाहर एक बावड़ी बनवाई।

महाराजा का मारा जाना

कुंवर अभयसिंह के दिल्ली में रहते समय महाराजा जयसिंह तथा अन्य मुग़ल सरदारों ने उसे समझाया कि फ़र्रुख़सियर को मरवाने में शामिल रहने के कारण बादशाह महाराजा (अजीतसिंह) से बहुत नाराज़ है। यदि तुम मारवाड़ का राज्य अपने वंशवालों के पास रखना चाहते हो तो उसको मरवा दो। तब कुंवर ने अपने छोटे भाई बखतसिंह को इस विषय में लिखा, जिसने अपने भाई के इशारे के अनुसार वि० सं० १७८१ आषाढ सुदि १३ (ई० स० १७२४ ता० २३ जून) को ज़नाने में सोते हुए अपने बाप को मार डाला। महाराजा के शव के साथ उसकी कई राणियो, खवासों, लौंडियों, नाज़िरों आदि ने प्राण दिये[1]। महाराजा का दाह संस्कार मंडोर में हुआ, जहां

(१) वीरविनोद, भाग २; पृ० ८४२। उक्त पुस्तक में आगे चलकर लिखा है कि इस अवसर पर आनदसिंह, रायसिंह और किशोरसिंह की माताओं ने अपने बालकों को सरदारों के सुपुर्द कर दिया। किशोरसिह तो उसकी ननिहाल जैसलमेर में भेज दिया गया और शेष दो को देवीसिंह और मानसिंह चौहान पहाड़ों में ले गये (भाग २, पृ० ८४४)।

जोधपुर राज्य की ख्यात मे इस संबंध में भिन्न वर्णन दिया है, जो नीचे लिखे अनुसार है—

"अभयसिंह पर बादशाह की बड़ी कृपा थी और साथ ही उस (अभयसिंह) की महाराजा जयसिंह से भी घनिष्टता थी। इससे महाराजा के मन मे उसकी तरफ से खटका हो गया। उसने पुरोहित जगू तथा रोहट के ठाकुर चांपावत सगतसिंह को दिल्ली से कुंवर को लाने को भेजा। उधर बादशाह के कहने से महाराजा जयसिंह ने कुंवर को समझाया कि सैयदों एवं महाराजा अजीतसिंह ने फर्रुख़सियर को मरवाया था, उनमें से सैयदों को तो बादशाह ने मरवा दिया और अब वह अजीतसिंह को मारने का मौक़ा देख रहा है। यही नहीं वह अवसर मिलते ही जोधपुर पर क़ब्ज़ा कर लेगा और हज़ारों

तथा मूलनायकजी के मन्दिर महाराजा के ही बनवाये हुए हैं। मंडोर में उसने महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) का स्मारक बनवाया। उसकी राणियों में से राणावत ने गोल में तंवरजी के झालरे के निकट शिखरबन्द मन्दिर तथा जाड़ेची ने चांदपोल के बाहर एक बावड़ी बनवाई।

महाराजा का मारा जाना

कुंवर अभयसिंह के दिल्ली में रहते समय महाराजा जयसिंह तथा अन्य मुग़ल सरदारों ने उसे समझाया कि फ़र्रुख़सियर को मरवाने में शामिल रहने के कारण बादशाह महाराजा (अजीतसिंह) से बहुत नाराज़ है। यदि तुम मारवाड़ का राज्य अपने वंशवालों के पास रखना चाहते हो तो उसको मरवा दो। तब कुंवर ने अपने छोटे भाई बख़्तसिंह को इस विषय में लिखा, जिसने अपने भाई के इशारे के अनुसार वि० सं० १७८१ आषाढ सुदि १३ (ई० स० १७२४ ता० २३ जून) को ज़नाने में सोते हुए अपने बाप को मार डाला। महाराजा के शव के साथ उसकी कई राणियों, ख़वासों, लौंडियों, नाज़िरों आदि ने प्राण दिये[1]। महाराजा का दाह संस्कार मंडोर में हुआ, जहां

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ८४२। उक्त पुस्तक में आगे चलकर लिखा है कि इस अवसर पर आनदसिंह, रायसिंह और किशोरसिंह की माताओं ने अपने बालकों को सरदारों के सुपुर्द कर दिया। किशोरसिंह तो उसकी ननिहाल जैसलमेर में भेज दिया गया और शेष दो को देवीसिंह और मानसिंह चौहान पहाड़ों में ले गये (भाग २; पृ० ८४४)।

जोधपुर राज्य की ख्यात मे इस संबंध में भिन्न वर्णन दिया है, जो नीचे लिखे अनुसार है—

"अभयसिंह पर बादशाह की बड़ी कृपा थी और साथ ही उस (अभयसिंह) की महाराजा जयसिंह से भी घनिष्टता थी। इससे महाराजा के मन मे उसकी तरफ से खटका हो गया। उसने पुरोहित जगू तथा रोहट के ठाकुर चांपावत सगतसिंह को दिल्ली से कुंवर को लाने को भेजा। उधर बादशाह के कहने से महाराजा जयसिंह ने कुंवर को समझाया कि सैयदों एवं महाराजा अजीतसिंह ने फ़र्रुख़सियर को मरवाया था, उनमें से सैयदों को तो बादशाह ने मरवा दिया और अब वह अजीतसिंह को मारने का मौक़ा देख रहा है। यही नहीं वह अवसर मिलते ही जोधपुर पर क़ब्ज़ा कर लेगा और हज़ारों

छुड़ाने का प्रयत्न जारी रक्खा। अजीतसिंह के प्रकट होने और दुर्गादास के दक्षिण से लौटने के बाद राठोड़ों के प्रयत्न ने ज़ोर पकड़ा, यहां तक कि औरङ्गजेब के मरते ही लगभग २८ वर्ष तक राज्य से वञ्चित रह और कष्ट-मय जीवन व्यतीत कर अजीतसिंह ने अपने सरदारों की सहायता से जोध-पुर पर पीछा कब्ज़ा कर लिया।

वह वीर साहसी और स्वाभिमानी नरेश था। साथ ही उदारता की मात्रा भी उसमें पाई जाती थी। समय-समय पर उसने अपने सरदारों, ब्राह्मणों, चारणों आदि को गांव तथा भूमि प्रदान कर उनका समुचित सत्कार किया था। वह हिन्दू धर्म का पूर्ण पक्षपाती एवं मुसलमानों का विरोधी था। यद्यपि समय के फेर से उसे मुगल बादशाहों की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी तथा अपनी पुत्री का विवाह बादशाह फ़र्रुख़सियर से करना पड़ा था तथापि हृदय से उसकी सहानुभूति कभी मुसलमानों के साथ नहीं रही। पड़ोसी महाराजाओं के साथ बहुधा उसने मेल का ही व्यवहार रक्खा। महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) एवं सवाई जयसिंह के साथ उसकी मैत्री ऊंचे दर्जे की रही।

वह भाषा का अच्छा विद्वान् और कवि था। उसके रचे हुए गुण-सागर, दुर्गापाठ भाषा, निर्वाण दूहा, अजीतसिंह जी कहा दूहा, महाराजा अजीतसिंहजी कृत दूहा श्री ठाकुरां रा[1], महाराजा अजीतसिंहजी री कविता एवं महाराजा अजीतसिंहजी रा गीत नामक ग्रन्थ मिले हैं[2]। अपने कुछ दोहों में उसने अपनी द्वारिका-यात्रा का वर्णन किया है[3]।

जहां उसमें इतने गुण थे वहां कई दुर्गुण भी विद्यमान थे। वह

---

(१) "अजीतविलास" में महाराजा अजीतसिंह के बनाये हुए कई सौ दोहों का संग्रह है, जिनमें उसके स्वामिभक्त सरदारों का वर्णन है (देखो ऊपर पृ० २६६, टि० २)। संभवत: ये वही दोहे हैं।

(२) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण (काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित), प्रथम भाग, पृ० १।

(३) देखो ऊपर पृ० २६६, टि० १।

पुत्र—

(१) अभयसिंह, (२) बख्तसिंह (जन्म वि० सं० १७६३ भाद्रपद वदि ८), (३) आनन्दसिंह (जन्म वि० सं० १७६४ आश्विन वदि ५), (४) किशोरसिंह (जन्म वि० सं० १७६६ आश्विन वदि ११), (५) रायसिंह (जन्म वि० सं० १७६८ श्रावण वदि १२), (६) रत्नसिंह (जन्म वि० सं० १७७४ श्रावण सुदि ६), (७) सुलतानसिंह[1] (जन्म वि० सं० १७७५), (८) तेजसिंह, (९) दौलतसिंह (जन्म वि० सं० १७५८ बाल्यावस्था में मर गया), (१०) जोधसिंह, (११) सौभागसिंह, (१२) अखैसिंह, (१३) रूपसिंह, (१४) जोरावरसिंह, (१५) मानसिंह, (१६) प्रतापसिंह और (१७) छत्रसिंह।

पुत्रियां—

(१) फूलकुंवर बाई (वि० सं० १८०८ में महाराजा बख्तसिंह के समय जैसलमेर के रावल अखैसिंह को ब्याही गई), (२) इंद्रकुंवर बाई, (३) फतहकुंवर बाई, (४) सूरजकुंवर बाई, (५) किशोरकुंवर बाई, (६) अखैकुंवरबाई, (७) बख्तावरकुंवर बाई और (८) सौभाग्यकुंवर बाई (महाराणा जगतसिंह के पुत्र प्रतापसिंह को ब्याही गई)।

महाराजा अजीतसिंह का व्यक्तित्व

अजीतसिंह का लाहोर में जन्म होने से पूर्व ही उसके पैतृक राज्य पर मुग़ल बादशाह औरंगजेब ने अधिकार कर लिया था और फिर उसका जन्म होने के बाद वह उसे मरवाने का उद्योग करने लगा। ऐसी परिस्थिति में अधिकांश स्वामीभक्त राठोड़ों ने, जिनमें दुर्गादास का नाम भारतवर्ष के इतिहास में सदा अमर रहेगा, अपनी जान ख़तरे में डालकर बड़ी वीरता एवं चतुराई के साथ उसे दिल्ली से बाहर कर दिया। महाराजा के बाल्य-जीवन का कुछ भाग मेवाड़ और कुछ सिरोही राज्य में बीता। इस बीच अपने स्वामी का साक्षात्कार न होने पर भी, राठोड़ों ने जगह-जगह मुसलमानों से मोर्चे लेकर जोधपुर को बादशाह के चंगुल से

(१) ख्यात के अनुसार अभयसिंह ने इसे, भण्डारी गिरधरदास के अहमदाबाद में झूठी अर्ज़ करने पर, चूक कर मरवाया (जि० २, पृ० ११८)।

छुड़ाने का प्रयत्न जारी रक्खा। अजीतसिंह के प्रकट होने और दुर्गादास के दक्षिण से लौटने के बाद राठोड़ों के प्रयत्न ने ज़ोर पकड़ा, यहां तक कि औरङ्गज़ेब के मरते ही लगभग २८ वर्ष तक राज्य से वञ्चित रह और कष्ट-मय जीवन व्यतीत कर अजीतसिंह ने अपने सरदारों की सहायता से जोध-पुर पर पीछा कब्ज़ा कर लिया।

वह वीर साहसी और स्वाभिमानी नरेश था। साथ ही उदारता की मात्रा भी उसमें पाई जाती थी। समय-समय पर उसने अपने सरदारों, ब्राह्मणों, चारणों आदि को गांव तथा भूमि प्रदान कर उनका समुचित सत्कार किया था। वह हिन्दू धर्म का पूर्ण पक्षपाती एवं मुसलमानों का विरोधी था। यद्यपि समय के फेर से उसे मुगल बादशाहों की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी तथा अपनी पुत्री का विवाह बादशाह फ़र्रुख़सियर से करना पड़ा था तथापि हृदय से उसकी सहानुभूति कभी मुसलमानों के साथ नहीं रही। पड़ोसी महाराजाओं के साथ बहुधा उसने मेल का ही व्यवहार रक्खा। महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) एवं सवाई जयसिंह के साथ उसकी मैत्री ऊंचे दर्जे की रही।

वह भाषा का अच्छा विद्वान् और कवि था। उसके रचे हुए गुण-सागर, दुर्गापाठ भाषा, निर्वाण दुहा, अजीतसिंह जी कृत दुहा, महाराजा अजीतसिंहजी कृत दुहा श्री ठाकुरां रा[1], महाराजा अजीतसिंहजी री कविता एवं महाराजा अजीतसिंहजी रा गीत नामक ग्रन्थ मिले हैं[2]। अपने कुछ दोहों में उसने अपनी द्वारिका-यात्रा का वर्णन किया है[3]।

जहां उसमें इतने गुण थे वहां कई दुर्गुण भी विद्यमान थे। वह

---

(१) "अजीतविलास" में महाराजा अजीतसिंह के बनाये हुए कई सौ दोहों का संग्रह है, जिनमें उसके स्वामिभक्त सरदारों का वर्णन है (देखो ऊपर पृ० ५६६, टि० ३)। सम्भवतः ये वही दोहे हैं।

(२) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण (काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित), प्रथम भाग, पृ० ३।

(३) देखो ऊपर पृ० ५६६, टि० ३।

अभिमानी, कान का कच्चा, अत्याचारी और कृतघ्न नरेश था। अपने स्वार्थ-साधन के लिए वह नम्र बन जाया करता था। बादशाह फर्रुख-सियर, बहादुरशाह एवं मुहम्मदशाह के समय उसपर मुगल सेना की चढ़ाइयां होने पर उसने लड़ने का साहस न किया और पीछे हटता गया। यही नहीं उसने उस समय मुसलमानों की कड़ी से कड़ी शर्तें तक मान लीं। इससे उसकी मानसिक कमज़ोरी ही प्रकट होती है। वह अपने विरोधियों से सख्त बदला लेता था, जिनमें से कई को उसने छल से मरवा डाला। उसने अपने सच्चे सहायक और मारवाड़ के रक्षक, अदम्य साहसी एवं स्वार्थत्यागी वीर दुर्गादास को, जिसने उसके जन्म से ही उसका साथ दिया था, बुरे लोगों के बहकाने में आकर बिना किसी अपराध के देश से निर्वासित कर दिया। उसकी यह कृतघ्नता उसके चरित्र पर कलंक की कालिमा के रूप में सदैव अङ्कित रहेगी।
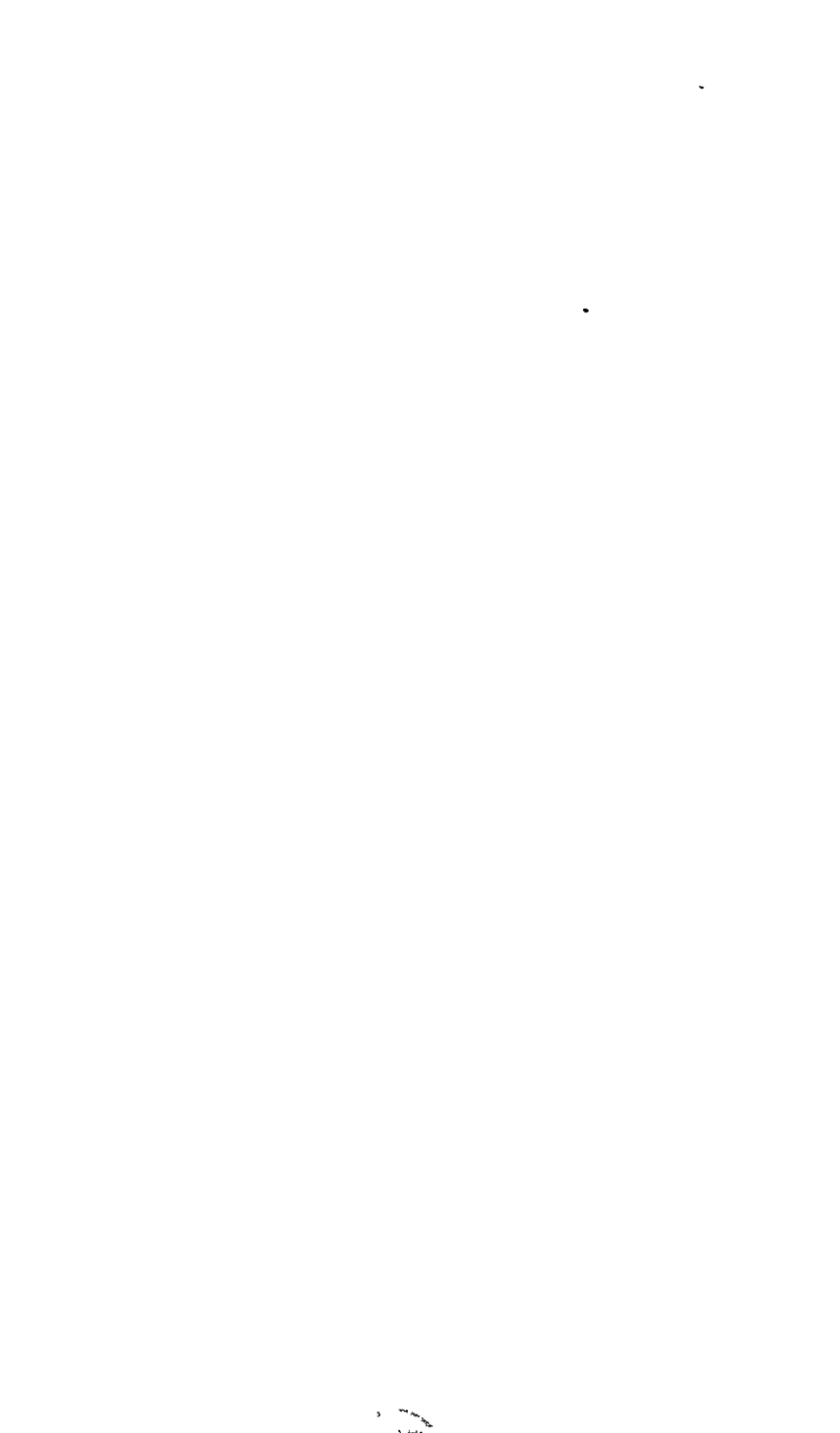
महाराजा अभयसिंह

ग्यारहवां अध्याय

महाराजा अभयसिंह से महाराजा यशवन्तसिंह तक

अभयसिंह

अभयसिंह का जन्म वि० सं० १७५९ मार्गशीर्ष वदि १४ (ई० स० १७०२ ता० ७ नवम्बर) शनिवार को जालोर में हुआ था। अपने पिता के मारे जाने का समाचार दिल्ली पहुंचने पर वि० सं० १७८१ श्रावण वदि ८ (ई० स० १७२४ ता० २ जुलाई) शुक्रवार को वह वहीं जोधपुर राज्य का स्वामी बना। अनन्तर वह बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ, जिसने सिरोपाव आदि देने के अतिरिक्त उसे सात हज़ारी मनसब दिया। इस अवसर पर महाराजा अजीतसिंह से वि० सं० १७७९ (ई० स० १७२२) में ज़ब्त किये हुए परगनों में से नागोर, केकड़ी, घटियाली, मारोठ, परवतसर, फूलिया तथा कुछ बाहर के परगने अभयसिंह को मिले[1]।

जन्म तथा जोधपुर का राज्य मिलना

अभयसिंह के दिल्ली में रहते समय ही उसके पास महाराजा जयसिंह की पुत्री के साथ विवाह करने का संदेशा आंबेर से आया। उसने

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २. पृ० १२१।

इर्विन-कृत "लेटर मुगल्स" के अनुसार महाराजा अजीतसिंह के मारे जाने के बाद उसके पुत्रों में गद्दी के लिए बखेड़ा खड़ा हुआ। ई० स० १७२४ ता० २५ जुलाई (वि० सं० १७८१ भाद्रपद वदि १) को शम्सामुद्दौला के बीच में पड़ने पर बादशाह ने अभयसिंह को "राजराजेश्वर" का ख़िताब तथा सात हज़ारी मनसब देने के साथ ही जोधपुर पर अधिकार करने के लिए जाने की आज्ञा दी (जि० २, पृ० ११५)।

कुछ सरदारों का अप्रसन्न होकर महाराजा का साथ छोड़ना

इस विषय में अपने पास रहनेवाले भंडारी रघुनाथ तथा अन्य सरदारों आदि से सलाह की। उन्होंने कहा कि पहले आप जोधपुर चलें, फिर आंबेर आकर विवाह करें; परन्तु उसने यह सलाह न मानी और मथुरा जाकर पहिले आंबेर-नरेश की पुत्री से भाद्रपद बदि ८ (ता० १ अगस्त) को विवाह किया। इससे अप्रसन्न होकर चैनकरण दुर्गादासोत (समदड़ी), उदयसिंह हरनाथसिंहोत (खींवसर) तथा अन्य कितने ही चांपावत, कूंपावत, जैतावत, करणोत, मेड़तिया, ओधा, करमसोत तथा ऊदावत सरदार उसका साथ छोड़कर चले गये। उनमें से कई तो अपने-अपने घर गये और कितने ही महाराजा के छोटे भाइयों आनन्दसिंह तथा रायसिंह के शामिल हो गये। किशोरसिंह जैसलमेर अपनी ननसाल में चला गया[1]।

आनंदसिंह तथा रायसिंह ने उन सरदारों की सहायता से सोजत आदि परगनों पर अधिकार कर लिया और वे मुल्क में लूट-मार करने लगे[2]। जब उनपर फ़ौजकशी हुई, तो उन्होंने जाकर ईडर पर अधिकार कर लिया, जो बादशाह ने अभयसिंह को दिया था[3]।

आनंदसिंह तथा रायसिंह का ईडर पर अधिकार करना

जोधपुर राज्य के कार्यकर्ता भंडारियों से राठोड़ सरदार अप्रसन्न थे, क्योंकि उनका विश्वास था कि महाराजा अजीतसिंह को मरवाने में उनका भी हाथ था। एक बार राठोड़ शक्तिसिंह आईदानोत रोहट गया। इसकी खबर पाकर बख़्तसिंह ने उसे अपने पास बुलवाया, तो उसने

भंडारी रघुनाथ आदि का क़ैद किया जाना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १२१-२४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४४। "वीरविनोद" से यह भी पाया जाता है कि जोधपुर में रहे हुए शेष (? कई) भाइयों को बख़्तसिंह ने मरवा डाला।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १२४।

(३) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६७।

उत्तर में कहलाया—"मैं तो महाराजा अजीतसिंह के पुत्र का ही सेवक हूं, परन्तु आपने भंडारियों के कहने से जो कुछ किया वह उचित नहीं था[1], क्योंकि राज्य तो अन्त में आपको ही मिलता। इसके बाद मैंने महाराजा-(अभयसिंह) को जयपुर में विवाह करने के लिए मना किया, परन्तु उस-पर भी ध्यान नहीं दिया गया। राठोड़ भंडारियों से अप्रसन्न हैं। अब तो भंडारियों को कैद करने से ही राठोड़ राज़ी होंगे और देश का फ़साद मिटेगा।" भंडारियों के कैद किये जाने का वचन मिलने पर शक्तिसिंह बख़्तसिंह के पास गया। अनन्तर देश का समुचित प्रबन्ध करने के लिये बख़्तसिंह ने पंचोली केसरीसिंह के झालरे पर रहते समय वि० सं० १७८१ (ई० स० १७२४) के कार्तिक मास में भंडारियों को गिरफ्तार करने का हुक्म दिया। इस पकड़ा-धकड़ी में कई व्यक्ति मारे गये और ज़ख़्मी हुए। राज्य-कार्य पंचोली रामकिशन बख़्शी को सौंपा गया। फिर इन सब बातों की ख़बर बख़्तसिंह ने महाराजा अभयसिंह के पास मथुरा भेजी, जिस पर उस (महाराजा) ने भंडारी रघुनाथ को नज़रक़ैद किया और दीवान का पद पंचोली रामबख़्श बालकिशन को सौंपा[2]।

महाराजा का जोधपुर पहुंचना

बादशाह से आज्ञा प्राप्तकर जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान करते समय महाराजा ने जयसिंह की तरफ़ से खत्री लाला शिवदास नारायणदास को ५००० सवारों सहित अपने साथ ले लिया था। जोधपुर पहुंचकर उसने भंडारी रघुनाथ आदि को मुक्त कर दिया। इससे नाराज़ होकर फिर कुछ सरदार जालोर की तरफ़ चले गये। उन्हें खुश करने के लिये उसने

(१) भंडारी रघुनाथ ने, जो अभयसिंह के साथ दिल्ली गया था, सवाई जयसिंह के समान ही उस (अभयसिंह) को अपने पिता अजीतसिंह को मरवाने की राय दी थी। उसने कहा कि महाराजा जयसिंह का कथन ठीक है, हमें जैसे बादशाह खुश रहे वैसा ही करना चाहिये (जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ११९)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १२४-५। वीरविनोद भा० २, पृ० ८४४।

फाल्गुण वदि १३ (ई० स० १७२५ ता० ३१ जनवरी) को फिर भंडारी रघुनाथ को गिरफ्तार कर लिया और दीवान का पद मेहता गोकुलदास समदड़िया को दिया[1]।

अनन्तर अभयसिंह जालोर तथा सोजत होता हुआ मेड़ता गया। वहां से कूचकर वह नागोर गया। वहां के स्वामी इन्द्रसिंह ने गढ़ में रह-

महाराजा का नागोर पर कब्ज़ा करना

कर एक मास तक मुक़ाबिला किया, परन्तु अन्त में वह गढ़ छोड़कर चला गया और वहां महाराजा का अधिकार हो गया। वहां से महाराजा मेड़ता लौटा[2]।

उन्हीं दिनों आनंदसिंह और रायसिंह का देश में उत्पात बढ़ा। इस

बख्तसिंह का आनंदसिंह पर चढ़ाई करना

पर बख्तसिंह ने फ़ौज के साथ उनपर चढ़ाई कर उन्हें देश से बाहर निकाल दिया। अनंतर वह (बख्तसिंह) मेड़ता जाकर महाराजा से मिला[3]।

[illegible]

वि० सं० १७८२ (ई० स० १७२५) के कार्तिक मास में महाराजा ने बख्तसिंह को "राजाधिराज" का खिताब और नागोर देकर उसका अलग ठिकाना कायम किया[4]।

इसी तरह माघ मास में राज्य का प्रबन्ध बख्तसिंह के हाथ में सौंप-कर [illegible] ने मेड़ता से दिल्ली की तरफ प्रस्थान किया। तदनन्तर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १२४।

(२) वही, जि० [illegible], पृ० १२४-५।

(३) वही, जि० [illegible] पृ० [illegible]।

(४) वही, जि० [illegible] पृ० [illegible]।

[illegible] है कि बख्तसिंह ने अपने पिता अजीतसिंह को [illegible] और नागोर [illegible]।

[illegible] है कि [illegible]

होता हुआ वह आषाढ मास में दिल्ली पहुंचा। वहां रहते समय उसकी नवाब रोशनुद्दौला तुर्राबाज़-खां नाम के शाही अफसर से नाराज़गी हो गई, जिसे उसने मारने का निश्चय किया, परन्तु बादशाह ने महाराजा को बुलाकर समझा दिया[1]।

महाराजा का दिल्ली जाना

उन्हीं दिनों जैसलमेर की तरफ से कुंवर किशोरसिंह फौज के साथ मारवाड़ में बिगाड़ करने के लिए पहुंचा। उधर से बख़्तसिंह उसका सामना करने को गया। गांव तिंवरी चंडालिया में झगड़ा हुआ, जिसमें गांव रतकूड़िया के कूंपावत कनीराम (रामसिंहोत) के हाथ से कोसाणा का चांदावत दौलतसिंह (जुझारसिंहोत) मारा गया। इस सेवा के बदले में बख़्तसिंह ने अपने भाई अभयसिंह से कहकर आसोप का ठिकाना कनीराम के नाम करा दिया। इससे पूर्व आसोप का ठिकाना कूंपावत भीम (सबल-सिंहोत) के पास था। किशोरसिंह भागकर पीछा जैसलमेर और वहां से बीकानेर होता हुआ आंबेर गया[2]।

बख़्तसिंह का किशोरसिंह को भगाना

आनंदसिंह और रायसिंह के ईडर पर क़ब्ज़ा करने का उल्लेख ऊपर आ गया है। महाराणा संग्रामसिंह भी वहां अपना अधिकार जमाना चाहता था। उसने इस विषय में जयपुर के महाराजा जय-सिंह को लिखा, तो उस (जयसिंह) ने महाराजा अभयसिंह को समझाया कि आपके दोनों भाई (आनंदसिंह तथा रायसिंह) ईडर पर क़ाबिज़ रहकर मारवाड़ का बिगाड़ करेंगे, अतएव महाराणा को इन दोनों का क़ब्ज़ा

आनन्दसिंह तथा रायसिंह को ईडर का इलाक़ा मिलना

महाराजा को शीतला (शीतला) माता की बीमारी हुई जिसके ठीक होने पर उसने वहां शीतला माता का मन्दिर बनवाया (जि० २, पृ० १२०)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १२०। फ़ारसी तवारीख़ों से इसकी पुष्टि नहीं होती।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १२१।

करने के एवज़ में आप यह परगना दे दें। महाराजा को भी यह बात पसंद आई और वि० सं० १७८४ (ई० स० १७२७) में उसने उन दोनों को मारने की शर्त पर ईडर का परगना महाराणा को दे दिया[1]। महाराणा ने इसपर भींडर के महाराज जैतसिंह (शक्तावत) तथा धायभाई राव नगराज की अध्यक्षता में ईडर पर सेना भेजी, जिसने जाकर उसे घेर लिया। ऐसी दशा में आनंदसिंह तथा रायसिंह को भी आत्म-समर्पण करना पड़ा। उन दोनों को लेकर जब महाराज जैतसिंह महाराणा के पास पहुंचा तो उसने मारने के बजाय उन्हें अपने पास रख लिया। यह खबर पाने पर महाराजा ने अहमदाबाद से वि० सं० १७८५ भाद्रपद वदि २ (ई० स० १७२८ ता० १० अगस्त) को एक उपालम्भपूर्ण पत्र महाराणा के नाम भेजा, परन्तु उसके पहुंचने के पूर्व ही वे दोनों भाई वहां से चले गये। इसके कुछ ही समय बाद उन्होंने मेड़ता आदि मारवाड़ के परगनों में उत्पात करना आरम्भ किया। इसपर महाराजा ने बख्तसिंह को उधर भेजा। इसी बीच महाराजा अभयसिंह के पास से वि० सं० १७८५ भाद्रपद वदि १३ (ता० २२ अगस्त) का पत्र पहुंचने पर महाराणा ने आनन्दसिंह तथा रायसिंह के अपने पास आने पर उन्हें ईडर का कुछ इलाक़ा दे दिया[2]।

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० ९९७-८। अभयसिंह का महाराणा के नाम लिखा हुआ श्रावणादि वि० सं० १७८३ (चैत्रादि १७८४) आषाढ वदि ७ (ई० स० १७२७ ता० ३१ मई) का पत्र (वीरविनोद, भाग २, पृ० ९९९)।

(२) वीरविनोद, भाग २, पृ० [illegible]। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में [illegible] वर्णन मिलता है—

"वि० सं० १७८४ में आनन्दसिंह और रायसिंह के जालोर में उपद्रव करने [illegible] अनूपसिंह [illegible] फौज लेकर गया, जिसपर वे गुजरात में [illegible] अनूपसिंह [illegible] और गया। इसके बाद ही आनन्दसिंह तथा [illegible] १०००० फौज के साथ लाकर जालोर में पुन: उपद्रव [illegible]। इसपर अनूपसिंह [illegible] गया। [illegible] ने [illegible] आनन्दसिंह एवं रायसिंह को [illegible] (जि० २, पृ० १११)।

उसी समय के आस-पास किशोरसिंह, महाराजा जयसिंह से आज्ञा लेकर खंडेला में विवाह करने गया, जहां से वह जैसलमेर पहुंचकर पोकरण फलोदी की तरफ़ लूट-मार करने लगा। इसकी ख़बर मिलने पर बख़्तसिंह उधर गया, जिसपर किशोरसिंह भागकर जैसलमेर चला गया। तब पोकरण का ठिकाना नरावतों से छीनकर चांपावत महासिंह (भगवानदासोत) को दिया गया[1] और भीनमाल खालसा कर लिया गया[2]।

किशोरसिंह का पोकरण फलोदी में उत्पात करना

गुजरात के हाकिम मुबारिज़ुल्मुल्क सरबुलंदख़ां का प्रबंध ठीक न होने के कारण[3] बादशाह ने हि० स० ११४३ (वि० सं० १७८८ = ई० स० १७३२)[4] में उसको हटाकर वहां महाराजा अभयसिंह की नियुक्ति की। इसकी सूचना वकीलों-द्वारा प्राप्त होने पर सरबुलंदख़ां ने लौटने का इरादा

महाराजा को गुजरात की सूबेदारी मिलना

---

(१) महासिंह के पूर्वज गोपालदास (मांडणोत) के नाम रणसिंगाव की क़दीमी जागीर थी। वि० स० १६४२ (ई० स० १५८५) में मोटे राजा उदयसिंह ने उसको आऊवा दिया और उसके बाद आऊवा का पट्टा हटाकर पाली की जागीर उसके नाम कर दी। पाली आदि ३३ गांव गोपालदास के पुत्र विट्ठलदास की जागीर में रहे। वह महाराजा जसवन्तसिंह के समय उज्जैन की लड़ाई में काम आया। विट्ठलदास के प्रपौत्र सावन्तसिंह (जोगीदासोत) के पट्टे में भीनमाल भी रहा, किन्तु वह नि सन्तान था, जिससे उसका छोटा भाई भगवानदास भीनमाल का स्वामी हुआ। महाराजा अजीतसिंह को जब राज्य नहीं मिला था, उस समय अच्छी सेवा करने के एवज़ में उस(महाराजा)ने भगवानदास को वि० स० १७६६ (ई० स० १७०६) में ३० गांवों के साथ १४००० रुपये आय की दासपां की जागीर दी। इसके दो वर्ष के भीतर ही उसे २१६०० रुपये की आय के आठ गांव और मिले। उसका पुत्र महासिंह था।

मारवाड़ के राठोड़ सरदारों का इतिहास (हस्तलिखित), जि० १, पृ० १-३।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १३१। मारवाड़ के राठोड़ सरदारों का इतिहास, जि० १, पृ० ३।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि वह दक्षिणियों से मिल गया था और उसने शाही आज्ञा की उपेक्षा करनी शुरू कर दी थी (जि० २, पृ० १३२)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७८९ दिया है (जि० २, पृ० १३२)

किया। अन्य उपहारों आदि के अतिरिक्त इस अवसर पर अभयसिंह को शाही ख़ज़ाने से १८ लाख[1] रुपये और भिन्न-भिन्न आकार की ५० तोपें दी गई। दिल्ली से प्रस्थान कर महाराजा प्रथम जोधपुर[2] गया, जहां उसने मारवाड़ और नागोर से २० हज़ार अच्छे सवार एकत्रित किये। अनन्तर बख़्तसिंह को साथ लेकर उसने अहमदाबाद की तरफ़ प्रस्थान किया[3]। पालनपुर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में केवल पन्द्रह लाख लिखा है और महाराजा के साथ नवाब अज़ीमुल्लाख़ां का जाना लिखा है (जि० २, पृ० १३२)।

कविया करणीदान कृत "सूर्यप्रकाश" से पाया जाता है कि बादशाह ने इस अवसर पर महाराजा को सिरोपाव आदि के अतिरिक्त अपनी सेना और ख़ज़ाने से इकतीस लाख रुपये दिये—

ताज कुलह सिरपेच जरी तोरा जर कंव्वर।
खंजर जमदढ़ खड्ग पवंग सिरपाव पटाम्बर।
तई लोक तावीन तोबखाना गजखाना।
सझै साह बगसीस लाख इकतीस खजाना।
अमदाबाद दीधो उतन असपति सोच उथालियो।
ईखतां दोयरा हां अभौ होय विदा इम हालियो॥ ६॥

[हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से, पृ० २०१]।

परन्तु ३१ लाख रुपये देने का कथन अतिशयोक्तिपूर्ण है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि वह प्रथम जयपुर जाकर महाराजा जयसिंह से मिला, जहां से चलकर वह कार्तिक मास में जोधपुर पहुंचा (जि० २, पृ० १३२)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार वि० सं० १७८६ चैत्र वदि १० (ई० स० १७३० ता० २ मार्च) को महाराजा ने बख़्तसिंह के साथ जोधपुर से कूच किया। गांव दुनाड़े में डेरा होने पर उसने भाद्राजूण के जोधा पर, जो देश में बहुत बिगाड़ करता था, बख़्तसिंह को भेजा। वह उससे पेशकशी ठहरा और मालगढ़ में थाना स्थापित कर जोधा को साथ ले जालोर में महाराजा के शामिल हो गया। अनन्तर गांव रेवाडोसी के विद्रोही हीरा देवड़ा का दमन किया गया। गांव पोसालिये में उसने सिरोही के राव उम्मेदसिंह की पुत्री से वि० सं० १७८७ भाद्रपद वदि ८ (ई० स० १७३०

पहुंचने पर फ़ौजदार करीमदादखां भी उनसे जा मिला। यह पता चलने पर कि सरबुलंदखां अवरोध करने पर तुला बैठा है, उस (महाराजा)-ने सरदार मुहम्मदखां गोरनी के पास बीस हज़ार रुपये की हुंडी और नायब हाकिमी का पत्र भेजकर आज्ञा दी कि यदि संभव हो तो तुम शहर पर अधिकार कर लो। सरदार मुहम्मदखां गुजरातियों की सेना एकत्र कर अवसर देखने लगा। इस बीच शाहनवाज़खां, मुहम्मद अमीनबेग तथा शेख़ अल्लाहयार ने फाटकों को चुनवा दिया और जगह जगह रक्षक नियुक्त कर वे घेरे के लिए सामान इकट्ठा करने लगे। रात-दिन वे पूरी सतर्कता रखते, जिससे सरदार मुहम्मदखां को मौका न मिला[1]।

गुजरात के पहले सूबेदार सरबुलंदखां के साथ लड़ाई

महाराजा के अहमदाबाद से ६४ मील उत्तर में सिद्धपुर के निकट पहुंचने पर जवांमर्दखां तथा सफदरखां बाबी सरबुलंदखां की कृपाओं को भुलाकर राधनपुर से जाकर उससे मिल गये। साथ ही 'कसबाती' नाम के मुसलमान सिपाही तथा स्वर्गीय मोमिनखां का पुत्र मुहम्मद बाकिर भी गुप्त रूप से तीन-चार व्यक्तियों के साथ महाराजा के शामिल हो गये। हि० स० ११४३ के रबीउलआख़िर (वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि = ई० स० १७३० अक्टोबर) के प्रारम्भ में अभयसिंह साबरमती के किनारे मोजिर नामक गांव में पहुंचा, जहां से केवल दो मील दूर सरबुलंदखां के डेरे थे। खाई आदि खुदवाकर उसने रात्रि को वहीं ठहरने का प्रबन्ध किया। रात्रि पड़ने पर दोनों ओर के सेनाध्यक्ष अपने अपने सलाहकारों के साथ युद्ध के संबंध में सलाह करते रहे। सुबह होने पर सरबुलंदखां सेना सहित सामने आकर डट गया और युद्ध की बाट देखने लगा, लेकिन महाराजा ने परिस्थिति को

ता० २६ जुलाई) को विवाह किया (जि० २, पृ० १३३)।

बांकीदास भी लिखता है कि गुजरात जाते समय मार्ग में सिरोही के पोसालिया गांव में महाराजा ने सिरोही के राव की पुत्री से विवाह किया (ऐतिहासिक बातें, संख्या ३९५)।

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स, जि० २, पृ० २००-१।

देखते हुए युद्ध छेड़ा नहीं। गुजरातियों की सलाह के अनुसार वह नदी के ऊपर की ओर चार-पांच मील चलकर नगर के पश्चिम की तरफ़ उस स्थान पर पहुंचा, जहां पहले सरबुलंदखां का डेरा था। वहां पर ही महाराजा ने अपना डेरा नियत किया। ऊंचे स्थान पर बने हुए गांव के छोटे छोटे मकानों में राठोड़ों ने निवासस्थान बनाया। दीवारों पर तोपें रक्खी गईं और गांव में प्रवेश करने के जल और स्थल दोनों मार्ग रोक लिये गये। यह स्थान अहमदाबाद के क़िले के ठीक सामने था और वहां से गोलाबारी करने की सुविधा थी। सुरक्षित गांव में जवांमर्दखां तथा सफ़दरखां बाबी के साथ मारवाड़ी पैदल सेना रक्खी गई। भद्र के क़िले से उनपर थोड़ी गोलाबारी हुई। महाराजा ने सेना की एक टुकड़ी शाह भीकन की क़ब्र के पास तथा बहरामपुर और बाड़ा नैनपुर की तरफ़ भेजी[1]। इसका उद्देश्य यह था कि वहां तोपें लगाकर नगर पर आक्रमण किया जाय। शत्रु की गतिविधि का पता लगभग सूर्यास्त के निकट लगने के कारण सरबुलंदखां सुबह तक वहीं ठहरा रहा, लेकिन सतर्कता की दृष्टि से उसने अपने कुछ आदमियों को काली के क़िले में तथा शाही बाग के निकट मलिक मक़सूद गुजराती की मसजिद की छत पर नियुक्त कर दिया। सवेरा होने पर

---

(१) बांकीदास लिखता है कि वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि ७ (ई० स० १७३० ता० ७ अक्टोबर) को कोचरपालड़ी पहुंचने पर अहमदाबाद नगर तथा भद्र के क़िले पर पांच मोर्चे लगाये गये, जिनमें से चार महाराजा की सेना के थे और एक बख़्तसिंह की सेना का। एक मोर्चे में अभयकरण (कर्णोत), चांपावत महासिंह (पोकरण का), तथा भागीरथदास आदि, दूसरे में शेरसिंह सरदारसिंहोत (मेड़तिया), प्रतापसिंह भीमोत (जोधा, खैरवा का) तथा पुरोहित केसरीसिंह आदि, तीसरे में साराठ तथा चौरासी के मेड़तिये एवं भंडारी विजयराज, चौथे में गुजराती सैनिक एवं भंडारी रत्नसिंह और पांचवे में दीवान पचोली लाला आदि थे। नवाब के पास उस समय आठ हज़ार सवार, दस हज़ार पैदल और छोटी मोटी नौसौ तोपें थीं (ऐतिहासिक बातें, संख्या ११०२-८)। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इन पांचों मोर्चों का उल्लेख है। उसमें पहले मोर्चे में पाली के चांपावत करण राजसिंहोत का नाम विशेष है (जि० २, पृ० १३४)।

उसने आगे बढ़कर शाही बाग के सामने दरगाईखां गुजराती की क़ब्र की दूसरी तरफ़ डेरा किया। बचा हुआ तोपख़ाना तथा सामान थोड़ी सेना के साथ उसने शहर में भिजवा दिया। सारा दिन इसी प्रकार बीत गया। हां क़िले की दीवारों से शत्रु पर गोलाबारी अवश्य जारी रही। उधर अधिकृत गांवों में महाराजा के सैनिक पक्की दीवारो का निर्माण करने में लगे थे। बाहर उन्होंने खाइयां खोद दी थीं। इन सब कार्यों से निवृत्त होकर उन्होने भी गोलाबारी का जवाब दिया। ऊंचे स्थान पर स्थित होने के कारण उनकी गोलाबारी सफल हो रही थी, जब कि शत्रु के गोले व्यर्थ जा रहे थे। ई० स० १७३० ता० २० अक्टोबर (वि० सं० १७८७ कार्तिक वदि ५) को सूर्योदय के एक या दो घंटे बाद सरबुलंदख़ां युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर साबरमती के रेतीले मैदान में आया। उसका उद्देश्य शत्रु को सुरक्षित स्थान से हटा देना था। घोड़े पर चढ़कर चलने लायक जगह न होने के कारण उसके सैनिकों को, जो मैदान से जा रहे थे, पैदल चलना पड़ा। अन्य बाधाओं का अतिक्रमण करते हुए वे गांवों की दीवारों पर जा पहुंचे, जहां से उन्होंने बंदूकें चलाईं। अन्त में उन्हें खानपुर के फाटक खोल देने में भी सफलता प्राप्त हुई। वह स्थान ठीक नदी के किनारे था और उसके नीचे कई खाइयां थीं। फिर भी सरबुलन्दख़ां के आदमी फाटक तथा दूसरे मार्गों से भीतर प्रवेश कर ही गये। महाराजा की सेना के गुजराती भी अटल थे। हाथों-हाथ लड़ाई होने लगी, पर कितने ही अफसरों के मारे जाने पर शेष गुजराती सैनिक महाराजा के शामिल हो गये। इसी बीच सरबुलन्दख़ां भी वहां आ पहुंचा, पर उसने तोपख़ाने को वापस क़िले में ले जाने की आज्ञा देकर एक बड़ी गलती की। साथ ही उसके पैदल बक्सरी सैनिक लूट-मार करने की ग़रज़ से बिखर गये। सर-बुलन्दख़ां के आगे बढ़ते ही महाराजा अपनी सारी सवार सेना के साथ उसका सामना करने को गया। मारवाड़ी सेना ने बड़े वेग से शत्रु पर आक्रमण कर उनपर बन्दूकों की मार की। सरबुलन्दख़ां के पास केवल तीरंदाज़ बच रहे थे। महाराजा और उसका भाई राजपूती प्रथा के विरुद्ध

बजाय हाथियों के घोड़ों पर चढ़कर लड़ रहे थे। सरबुलन्दख़ां ने हाथियों के समूह की तरफ़ आक्रमण किया, पर वहां तो महाराजा था नहीं। मारवाड़ी सैनिक बहुत समय तक तो जमकर लड़े, परन्तु बाद में उनके पैर उखड़ने लगे। सरबुलन्दख़ां ने भी लगातार आक्रमण कर उन्हें पीछे हटने पर मजबूर किया, पर इस बीच मुसलमानों की तरफ़ के कई प्रमुख अफ़सर मारे जा चुके थे, जिससे उनकी यह धारणा होने लगी कि विजयश्री उनके हाथ न लगेगी और उनमें से कितने ही युद्धक्षेत्र का परित्याग कर चले गये। इस घटना ने यहां तक तूल पकड़ा कि अन्त में यह बात फैल गई कि सरबुलन्दख़ां मारा गया। शहर में यह अफ़वाह फैलने पर वहां छोड़े हुए मुहम्मद अमीनबेग तथा अल्लाहयार खानपुर द्वार से बाहर निकल गये। मार्ग में उन्हें दूसरे मुसलमान सैनिक मिले, जिन्होंने कहा कि अब कुछ करना व्यर्थ है। उधर जैसे ही मारवाड़ियों को यह मालूम हुआ कि सरबुलन्दख़ां के सैनिकों की संख्या बहुत घट गई है, तो उन्होंने नवीन उत्साह के साथ आक्रमण किया, पर सरबुलन्दख़ां जमकर लड़ता ही रहा। इसी बीच अल्लाहयार आ पहुंचा, जिसे पहले आक्रमण में ही मारवाड़ियों ने मार डाला, लेकिन इससे सरबुलन्दख़ां हताश न हुआ। उसने अन्त में मारवाड़ियों को भगा दिया और सरखेज तक उनका पीछा किया। सारा दिन इसी प्रकार लड़ाई होती रही। रात्रि पड़ने पर विश्राम के लिए तम्बू लगाये गये। दिन में राजपूतों में यह अफ़वाह फैल गई कि महाराजा युद्धक्षेत्र छोड़कर चला गया। इसका परिणाम यह हुआ कि गुजराती तथा क़सबाती सैनिक भागकर आस पास के गांवों में चले गये। शाम को महाराजा के वापस लौटने पर लोगों को सन्तोष हुआ। इस प्रकार राजपूतों पर विजय प्राप्तकर संध्या पड़ने पर मुहम्मद अमीनबेग के समझाने से सरबुलन्दख़ां घायल और मृत व्यक्तियों का प्रबन्ध करने के लिए वापस क़िले की तरफ चला गया[1]। दूसरे दिन जब महाराजा को यह ज्ञात हुआ

(१) फ़ारसी तवारीख़ों में इस लड़ाई में महाराजा की तरफ़ के मारे जानेवाले व्यक्तियों का उल्लेख नहीं मिलता, अतएव हम तत्सम्बन्धी हाल बांकीदास के

कि सरबुलंदख़ां अभी तक जीवित है, तो उसने लड़ाई की तैयारी की। सरबुलंदख़ां भी सतर्क था, पर उस दिन लड़ाई न हुई और दोनों तरफ़ के लोग अपने-अपने घायलों तथा मृतकों का प्रबंध करने में व्यस्त रहे[1]।

"ऐतिहासिक बातें" नामक ग्रन्थ से उद्धृत करते हैं। वह लिखता है—वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि १० (ई० स० १७३० ता० १० अक्टोबर) शनिवार को बड़े सवेरे नवाब (सरबुलन्दख़ां) ने शेरसिंह (सरदारसिंहोत) के मोर्चे पर आक्रमण किया। अभयकरण और चांपावत करण उस (शेरसिंह) की सहायता को गये। बड़ी लड़ाई हुई, जिसमें मुसलमानों के तीन सौ आदमी और महाराजा की सेना के चांपावत करण (पाली), मेड़तिया भीमसिंह (सरासणा), जोधा हठीसिंह जोगीदासोत, धांधल भगवानदास (बूंटेलाव) और पुरोहित केसरीसिंह मारे गये। अभयकरण बहुत घायल हुआ। महाराजा का डेरा मोर्चे से अलग था। यह ख़बर पाते ही वह अपने भाई बख़्तसिंह के साथ युद्धस्थल पर पहुंचा, पर उस समय तक लड़ाई बन्द हो चुकी थी। तब अश्वारूढ़ होकर दोनों भाइयों ने मुसलमानों पर आक्रमण कर उनमें से बहुतों को मार डाला और उनका सामान आदि लूट लिया। इस झगड़े में बख़्तसिंह के बीस तीर लगे। नवाब भाग गया और महाराजा की फ़तह हुई (ऐतिहासिक बातें संख्या ११०६-१२)। जोधपुर राज्य की ख्यात में लड़ाई का प्रारम्भिक वृत्तान्त तो ऐसा ही है, परन्तु आगे चलकर कुछ विस्तृत वर्णन दिया है, जो इस प्रकार है—"आश्विन सुदि १० की लड़ाई में महाराजा की सेना के चांपावत किशनसिंह जसवन्तोत (नारनदी), चांपावत रामसिंह सबलसिंहोत (रामासणी), चांपावत सुल्तानसिंह सावन्तसिंहोत, चांपावत अर्जुनसिंह पद्मसिंहोत, मेड़तिया शुभनाथ गोवर्द्धनोत मेड़तिया सरदारसिंह जोरावरसिंहोत माधोदासोत, जोधा गुमानसिंह हठीसिंहोत, जोधा जोरावरसिंह कुशलसिंहोत, चांदावत हरीसिंह भावसिंहोत (नोसा) आदि कितने ही सरदार काम आये। महाराजा की फ़ौज की फ़तह होते ही उसके कितनेक सैनिक वापस अपने डेरों को चले गये। इतने में अमीनख़ां ने, जो नदी के किनारे खड़ा था, अपनी दो हज़ार फ़ौज के साथ महाराजा की फ़ौज पर आक्रमण कर दिया। इसकी ख़बर लगते ही सैनिकों ने लौटकर उसका सामना किया और नवाब की फ़ौज को पीछे हटा दिया। दूसरे दिन फिर लड़ाई होने पर महाराजा की तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये और घायल हुए। उसी दिन जोधपुर से जाकर ऊदावत अमरसिंह कुशलसिंहोत (नींबाज) तथा चांदावत अनूपसिंह विजयसिंहोत (बलूंदा) महाराजा की सेना में शामिल हुए (जि० २, पृ० १३२-७)।

(१) इर्विन, लेटर मुग़ल्स, जि० २, पृ० २०७-११। "वीरविनोद" में भी इस लड़ाई का संक्षिप्त उल्लेख है (भाग २, पृ० ८१४-५)। कविराजा श्यामलदास ने

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में कौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फ़ौजदार सैयद आज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाग़ में मिला और शर्तें तयकर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी[1] का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मतुल्लाख़ां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई बरमाजी (? मालाजी) उनका मुकाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई, परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफजाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ चला गया[2]।

---

(१) पूना के पास के दावदी गाव के पटेल कैरोजी के दो पुत्र दामाजीराव और झींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति खंडेराव दाभाडे ने गुजरात पर चढ़ाई की। उस समय दामाजी राव उसकी सेना में एक अफ़सर था। दाभाडे ने साहू राजा के पास दामाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको अपने मातहत अफ़सरों में रक्खा। दामाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई झींगाजीराव का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ अहमदी, जि० २, पृ० १६३-४। कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑफ़् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १३६।

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में क़ौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फ़ौजदार सैयद अज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ़ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाग में मिला और शर्तें तयकर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फ़ैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी[1] का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मतुल्लाख़ां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई बरमाजी (? मालाजी) उनका मुक़ाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ़ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई, परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफ़जाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ़ चला गया[2]।

(१) पूना के पास के दावड़ी गांव के पटेल केरोजी के दो पुत्र दमाजी राव और झींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति [illegible] ने गुजरात पर चढ़ाई की थी। उस समय दमाजी राव उसकी सेना में एक [illegible] था। दाभाड़े ने साहू राजा के पास दमाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको [illegible] उच्च अफ़सरों में रक्खा। दमाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई [illegible] का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १६६ [illegible] जि० २, पृ० १६६।

७८

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में कौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फ़ौजदार सैयद अज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ़ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाग़ में मिला और शर्तें तयकर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फ़ैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी[1] का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मतुल्लाख़ां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई वरमाजी (? मालाजी) उनका मुकाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई, परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफजाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ चला गया[2]।

---

(१) पूना के पास के दावड़ी गांव के पटेल पीरोजी के दो पुत्र दामाजीराव और झींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति खंडेराव दाभाड़े ने गुजरात पर चढ़ाई की। उस समय दामाजी राव उसकी सेना में एक अफ़सर था। दाभाड़े ने साहू राजा के पास दामाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको अपने मातहत अफ़सरों में रक्खा। दामाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई झींगोजीराव का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ अहमदी; जि० २, पृ० ११३-४। बॉम्बे गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १२१।

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में कौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फौजदार सैयद अज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाग में मिला और शर्तें तयकर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी[1] का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मुतुल्लाखां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई बरमाजी (? मालाजी) उनका मुकाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ़ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई, परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफ़जाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ चला गया[2]।

---

(१) पूना के पास के दावड़ी गाव के पटेल कैरोजी के दो पुत्र दामाजीराव और झींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति खंडेराव दाभाड़े ने गुजरात पर चढ़ाई की। उस समय दामाजी राव उसकी सेना में एक अफ़सर था। दाभाड़े ने साहू राजा के पास दामाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको अपने मातहत अफ़सरों में रक्खा। दामाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई झींगाजीराव का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ अहमदी, जि० २, पृ० १२३-४। कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाँबे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १३६।

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में कौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फ़ौजदार सैयद अज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाग़ में मिला और शर्तें तयकर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फ़ैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी[1] का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मुतुल्लाखां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई बरमाजी (? मालाजी) उनका मुकाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई, परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफ़जाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ चला गया[2]।

---

(१) पूना के पास के दावदी गाव के पटेल कैरोजी के दो पुत्र दामाजीराव और झींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति खंडेराव दाभाड़े ने गुजरात पर चढ़ाई की। उस समय दामाजी राव उसकी सेना में एक अफ़सर था। दाभाड़े ने साहू राजा के पास दामाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको अपने मातहत अफ़सरों में रक्खा। दामाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई झींगाजीराव का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ अहमदी, जि० २, पृ० १२३-४। कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १३६।

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में कौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फौजदार सैयद अज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाग में मिला और शर्तें तयकर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी[1] का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मुतुल्लाख़ां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई बरमाजी (? मालाजी) उनका मुकाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ़ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई; परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफ़जाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ़ चला गया[2]।

---

(१) पूना के पास के दावदी गाव के पटेल कैरोजी के दो पुत्र दामाजीराव और झींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति खंडेराव दाभाडे ने गुजरात पर चढ़ाई की। उस समय दामाजी राव उसकी सेना में एक अफ़सर था। दाभाडे ने साहू राजा के पास दामाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको अपने मातहत अफ़सरों में रक्खा। दामाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई झींगाजीराव का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ अहमदी; जि० २, पृ० १२३-४। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाबे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १३६।

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में कौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फ़ौजदार सैयद अज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाग में मिला और शर्तें तयकर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फ़ैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी[1] का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मुतुल्लाख़ां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई बरमाजी (? मालाजी) उनका मुकाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ़ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई, परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफ़जाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ चला गया[2]।

---

(१) पूना के पास के दावदी गाव के पटेल यशोजी के दो पुत्र दामाजीराव और झींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति खंडेराव दाभाडे ने गुजरात पर चढ़ाई की। उस समय दामाजी राव उसकी सेना में एक अफ़सर था। दाभाडे ने साहू राजा के पास दामाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको अपने मातहत अफ़सरों में रक्खा। दामाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई झींगोजीराव का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ अहमदी जि० २ पृ० १३३-४। बंबई गैज़ेटियर ऑफ् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात जि० २, पृ० १३६।

लगा और वह लड़ने के लिए तैयार हो गया। महाराजा ने जब उसको अपने पास बुलाकर फ़रमान दिखाया और कहा कि यह तो शाही हुक्म है, तब वह चुप हो गया। गंगादास के साथ ही उसके अन्य सम्बन्धी एवं रेशम के व्यापारी भी क़ैद कर लिये गये। मार-पीट तथा कई तरह के अत्याचार कर गंगादास के पास से दो लाख रुपये, उसके चचेरे भाई खुशहाल से तीन लाख तथा दूसरों से जो कुछ वसूल हो सका वसूल किया गया। इस प्रकार थोड़े समय में ही सख़्ती तथा ज़ोर-ज़ुल्म से नौ लाख रुपये वसूल किये गये। इससे हिन्दुस्तान के शहरों के अतिरिक्त सिंध, तुर्किस्तान, अरब, हबश (अबीसीनिया), ईरान और तूरान तक होनेवाले रेशम के व्यापार को बड़ा धक्का पहुंचा। इसी तरह महाराजा ने बोहरों से भी दंड की बड़ी रक़म वसूल की। छोटे-बड़े हिन्दू मुसलमान तक भी दंड से न बचे और उनका माल और धन छीना गया। यही नहीं आमदनी बढ़ाने की गरज़ से सोने, चांदी के प्रचलित सिक्कों में मेल की मात्रा बढ़ाई गई, जिससे अन्यत्र उनका चलन बन्द हो गया। सैयदों, शेख़ों, फ़क़ीरों आदि को जो भूमि और गांव आदि निर्वाह के लिए दिये गये थे उनपर भी महाराजा ने चौथ लेना स्थिर किया, जिससे उनकी हालत भी ख़राब हो गई। इसी अर्से में मुबारिज़ुलमुल्क (सरबुलन्दख़ां) द्वारा एकत्र किया हुआ शीशा, बारूद, गोले तथा अन्य सामग्री, जो उसने तोपों के साथ महाराजा को सौंपी थी धीरे धीरे जोधपुर भिजवादी गई[1]।

स्वर्गीय खंडेराव दाभाड़े[2] का प्रतिनिधि, सोनगढ़ का स्वामी तथा

---

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १२८ ३१।

(२) दाभाडों का मूल पुरुष येसाजी तलेगांव का रहनेवाला था। वह शिवाजी की सेवा में रहता था। उसका बड़ा बेटा खंडेराव राजाराम का सेवक रहा, जिसने उसकी अच्छी सेवा के बदले में उसे 'सेना धुरन्धर' का [illegible] और ख़ज़ाना की तरह भेजा। शाहू राजा के समय वह उसका सेनापति नियत हुआ। फिर उसको गुजरात और मालवा पर चढ़ाई करने की आज्ञा हुई। [illegible] ने सूरत तक का [illegible] का प्रदेश अपने अधिकार में किया था। [illegible]

इसके बाद महाराजा अहमदाबाद से प्रस्थान कर माही नदी से उत्तर बड़ोदा ज़िले में जा पहुंचा। दक्षिणियों ने बड़ोदा और दूसरे परगने छोड़कर डभोई के किले में जो सुरक्षित स्थान समझा जाता था, आश्रय लिया। तब महाराजा ने खाद्य सामग्री, शीशा और दारू-गोला अपने कब्ज़े में कर जीवराज भंडारी को बड़ोदा के मालदार आदमियों को कैदकर उनसे धन वसूल करने के लिए वहां नियत किया। उसने वहां के लोगों पर यह झूठा आरोप लगाकर कि उनके पास मरहटे धन-माल छोड़ गये हैं उनसे दंड लिया। उन्हीं दिनों बादशाह की तरफ़ से रहीमदादखां इस आशय का फ़रमान लेकर कि शाही मनसबदारों और सूबे के मुख्य-मुख्य अधिकारियों को उनकी जागीरें दे दी जावें पाटण से अहमदाबाद पहुंचा। महाराजा का नायब रत्नसिंह भंडारी उस (रहीमदादखां) को लेकर महाराजा के पास गया। महाराजा डभोई पर भी अधिकार करना चाहता था, परन्तु इसमें उसको सफलता नहीं मिली। तब शेरखां बाबी को बड़ोदे की हुकूमत पर नियत कर वह अहमदाबाद लौट गया[1]।

महाराजा का बड़ोदा पर अधिकार करना

स्वर्गीय खंडेराव दाभाड़े की पत्नी उमाबाई बड़ी वीर और साहसी स्त्री थी। वह घोड़े और हाथी की सवारी करने में अत्यन्त कुशल थी और अपनी सेना का संचालन स्वयं किया करती थी। पीलाजी के मारे जाने की खबर पाकर वह बदला लेने के लिए व्यग्र हो उठी। एतदर्थ तीन-चार हजार सवारों तथा पीलाजी के पुत्र दामाजी एवं कदमबांडे के साथ जो उसकी सेवा में रहते थे उमाबाई ने अहमदाबाद की तरफ़ प्रस्थान किया,

उमाबाई की महाराजा पर चढ़ाई

(१) मिराते अहमदी; जिल्द २, पृ० ११३-४। उक्त ग्रन्थ से यह भी पाया जाता है कि महाराजा ने बड़ोदे के [illegible]

इसके बाद महाराजा अहमदाबाद से प्रस्थान कर माही नदी से उत्तर बड़ोदा ज़िले में जा पहुंचा। दक्षिणियों ने बड़ोदा और दूसरे परगने छोड़कर डभोई के किले में, जो सुरक्षित स्थान समझा जाता था, आश्रय लिया। तब महाराजा ने खाद्य सामग्री, शीशा और दारू-गोला अपने कब्ज़े में कर जीवराज भंडारी को बड़ोदा के मालदार आदमियों को कैदकर उनसे धन वसूल करने के लिए वहां नियत किया। उसने वहां के लोगों पर यह झूठा आरोप लगाकर कि उनके पास मरहटे धन-माल छोड़ गये हैं उनसे दंड लिया। उन्हीं दिनों बादशाह की तरफ़ से रहीमदादखां इस आशय का फ़रमान लेकर कि शाही मनसबदारों और सूबे के मुख्य-मुख्य अधिकारियों को उनकी जागीरें दे दी जावें पाटण से अहमदाबाद पहुंचा। महाराजा का नायब रत्नसिंह भंडारी उस (रहीमदादखां) को लेकर महाराजा के पास गया। महाराजा डभोई पर भी अधिकार करना चाहता था, परन्तु इसमें उसको सफलता नहीं मिली। तब शेरखां बाबी को बड़ोदे की हुकूमत पर नियत कर वह अहमदाबाद लौट गया[1]।

महाराजा का बड़ोदा पर अधिकार करना

स्वर्गीय खंडेराव दाभाड़े की पत्नी उमाबाई बड़ी वीर और साहसी स्त्री थी। वह घोड़े और हाथी की सवारी करने में अत्यन्त कुशल थी और अपनी सेना का संचालन स्वयं किया करती थी। पीलाजी के मारे जाने की ख़बर पाकर वह बदला लेने के लिए व्यग्र हो उठी। एतदर्थ [illegible] हज़ार सवारों तथा पीलाजी के पुत्र दामाजी एवं [illegible] के साथ, जो उसकी सेवा में रहते थे, उमाबाई ने अहमदाबाद की तरफ़ प्रस्थान किया।

उमाबाई की महाराजा पर चढ़ाई

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात इ अहमदी [illegible] पुस्तक से यह भी पाया जाता है कि महाराजा ने [illegible] उनसे भी धन वसूल करना चाहा। इसी अभिप्राय से वह [illegible] अन्य लोगों को उसने बाहर ही रक्खा, परन्तु [illegible] पता चल गया, जिससे वह [illegible]

भीलों एवं कोलियों का मददगार होने के कारण पीलाजी गायकवाड़ स्वभावतः अभयसिंह को कांटे के समान खटकता था। बड़ौदा नगर और डभोई के क़िले पर अधिकार हो जाने से उसका पक्ष अधिक मज़बूत हो गया था[1]। खंडेराव को गुजरात की चौथ उगाहने का हक़ प्राप्त था। मही नदी के पार के इलाक़े की चौथ उगाहने के बाद खंडेराव की विधवा पत्नी उमाबाई ने आस-पास के प्रदेश की चौथ उगाहने के लिए कंथाजी (कदम) के स्थान में पीलाजी गायकवाड़ को नियत किया। वह बड़ा लश्कर लेकर चौथ उगाहने के लिए डाकोर नामक स्थान में पहुंचा। यह ख़बर सुनकर अभयसिंह सेना और तोपखाना लेकर उससे लड़ने चला, परन्तु प्रकट रूप से उसने अपना पैग़ाम पहुंचाने और सलाह करने के लिए कितनेक मारवाड़ियों को उसके पास भेजा। उनमें से दो तीन छल-कपट करने में प्रवीण व्यक्तियों को महाराजा ने कहा कि अवसर पाते ही पीलाजी को मार डालना। पीलाजी के पास पहुंचकर उन्होंने दो-तीन दिन दिखावटी बात-चीत में व्यतीत किये। फिर एक रात्रि को अपने डेरों पर जाने की आज्ञा हो जाने के बाद उनमें से एक वापस पीलाजी के पास गया और कुछ ज़रूरी बात कहने के बहाने उसके कान के निकट जा उसने कटार के दो घाव कर उसे मार डाला। इसका पता लगते ही पीलाजी के आदमियों ने घातक को मार डाला। अनन्तर माही नदी के सामने के तट पर सांवली गांव में उसके शव का दाह हुआ[2]।

महाराजा का पीलाजी गायकवाड़ को छल से मरवाना

१७८६) मे पथरी की बीमारी से उसकी मृत्यु हुई। उसकी मृत्यु के बाद, पुत्र की नाबालिग़ अवस्था के कारण उसकी वीर पत्नी उमाबाई उसका कार्य चलाने लगी।

(१) कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१२।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १४२-३। कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी पीलाजी गायकवाड के महाराजा-द्वारा मरवाये जाने का वर्णन है। उसमें घातक का नाम ईंदा लखधीरोत दिया है (जि० २, पृ० १३९-४०)।

इसके बाद महाराजा अहमदाबाद से प्रस्थान कर माही नदी से उत्तर बड़ोदा ज़िले में जा पहुंचा। दक्षिणियों ने बड़ोदा और दूसरे परगने छोड़कर डभोई के क़िले में जो सुरक्षित स्थान समझा जाता था, आश्रय लिया। तब महाराजा ने खाद्य सामग्री, शीशा और दारू-गोला अपने कब्ज़े में कर जीवराज भंडारी को बड़ोदा के मालदार आदमियों को कैदकर उनसे धन वसूल करने के लिए वहां नियत किया। उसने वहां के लोगों पर यह झूठा आरोप लगाकर कि उनके पास मरहटे धन-माल छोड़ गये हैं उनसे दंड लिया। उन्हीं दिनों बादशाह की तरफ़ से रहीमयार्बरखां इस आशय का फरमान लेकर कि शाही मनसबदारों और सूबे के मुख्य-मुख्य अधिकारियों को उनकी जागीरें दे दी जावें पाटण से अहमदाबाद पहुंचा। महाराजा का नायब रत्नसिंह भंडारी उस(रहीमयार्बरखां)को लेकर महाराजा के पास गया। महाराजा डभोई पर भी अधिकार करना चाहता था, परन्तु इसमें उसको सफलता नहीं मिली। तब शेरखां बाबी को बड़ोदे की हुकूमत पर नियत कर वह अहमदाबाद लौट गया[1]।

महाराजा का बड़ोदा पर अधिकार करना

स्वर्गीय खंडेराव दाभाड़े की पत्नी उमाबाई बड़ी वीर और साहसी स्त्री थी। वह घोड़े और हाथी की सवारी करने में अत्यन्त कुशल थी और अपनी सेना का सचालन स्वयं किया करती थी। पीलाजी के मारे जाने की ख़बर पाकर वह बदला लेने के लिए व्यग्र हो उठी। एतदर्थ तीस-चालीस हज़ार सवारों तथा पीलाजी के पुत्र दामाजी एवं कंथाजी के साथ, जो उसकी सेवा में रहते थे, उमाबाई ने अहमदाबाद की तरफ़ प्रस्थान किया।

उमाबाई की महाराजा पर चढ़ाई

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात इ-अहमदी, जि० २, पृ० १४३-४। उसी पुस्तक से यह भी पाया जाता है कि महाराजा ने बड़ोदा के मुखिया दह्या को पकड़कर उससे भी धन वसूल करना चाहा। इसी अभिप्राय से वह उसे गढ़ में साथ ले गया और अन्य लोगों को उसने बाहर ही रक्खा, परन्तु दह्या को किसी प्रकार महाराजा की मंशा का पता चल गया, जिससे वह एक तेज़ अश्व पर सवार हो क़िले से भागकर निकल गया।

नगर से तीन कोस दूर साबरमती के किनारे मौज़ा फ़ैज़ाबाद (शाहबाड़ी) में डेरे कर उसने अपने लश्कर को आस-पास के गांवों को लूटने की आज्ञा दी। महाराजा ने उस समय मोमिनखां एवं जवांमर्दखां को बुलवाकर उन्हें शाही बाग़ की तरफ़ के हिस्से की रक्षा करने को भेजा। दूसरी तरफ़ के हिस्सों की रक्षा के लिए भंडारियों एवं जागीरदारों के साथ मारवाड़ी सेना नियुक्त की गई। उसी समय राजा बख़्तसिंह एक अच्छी सेना के साथ नागोर से आकर भाई से मिला। बख़्तसिंह सेठ खुशहालचंद झवेरी को नगर सेठाई दिये जाने के सम्बन्ध का परवाना अपने साथ लाया था, जिसके अनुसार महाराजा ने उसको खिलअत देकर नगर सेठाई का कार्य सौंप दिया। इस बीच जीवराज भंडारी का, जो अपनी वीरता का बड़ा गर्व रखता था और गुजराती तथा मारवाड़ी सवारों और पैदलों के साथ राजपुर के पास चारतोड़े में रहकर उधर की रक्षा करने के लिए नियत था, मरहटों से सामना हुआ, जिसमें वह मारा गया। इस लड़ाई के फलस्वरूप जीवराज भंडारी की सेना के घोड़े, शस्त्रास्त्र, छोटी-बड़ी तोपें, झंडे, नक़ारे आदि मरहटों के हाथ लगे। इस लड़ाई के समय महाराजा ने रत्नसिंह को जीवराज भंडारी की सहायतार्थ जाने को कहा, परन्तु वह नहीं गया और जवांमर्दखां एवं मोमिनखां को शत्रु का सामना करने के लिए कहलाकर वह बहरामपुर की तरफ़ चला गया। जवांमर्दखां और मोमिनखां शाम होते-होते शाही बाग़ में पहुंचे। उन्होंने लड़ना शुरू किया और मीर अबुल-क़ासिम आदि कई व्यक्तियों को, जो घायल हुए थे, लेकर वे लौट गये। रत्नसिंह भद्र के क़िले की दीवार के नीचे के अपने डेरे में चला गया। इन घटनाओं से लोग घबरा गये और दक्षिणी, हिन्दू एवं मुसलमान सबको लूटने लगे। रसूलाबाद के बाहरी भाग में, जहां शाही वंश के सैयदों का निवास था, दक्षिणियों ने बड़ी लूट-मार की। सैयद लड़ने के लिए तैयार हुए, पर दक्षिणियों का सैन्य बल अधिक होने से उनका कुछ बस न चला। उनमें से कई मारे गये और उनके घर-बार, दरगाह का सामान तथा एक बड़े पुस्तकालय का नाश हो गया। एक सप्ताह तक दिन में दक्षिणी और

रात में कोलियों के दल मकान खोदने, माल मता लूटने तथा घरों में आग लगाने का कार्य करते रहे। इस प्रकार मरहटों का उत्साह, जो पीलाजी के मारे जाने से कम हो गया था, पुनः बढ़ गया। जीवराज भंडारी के लश्कर का नाश करने के बाद दक्षिणी रत्नसिंह भंडारी पर चढ़े। उसके पास मरहटों का सामना करने योग्य शक्ति का अभाव होने से वह कुछ कर नहीं सकता था। अन्त में मरहटों से संधि करने का निश्चय होकर अभयकरण तथा जवांमर्दखां उमाबाई के पास सुलह की बात-चीत करने के लिए भेजे गये। वे तीन दिन तक वहां रहे और बातचीत के बाद चौथ[1] और सरदेशमुखी[2] के क़ायम रहने के अतिरिक्त अस्सी हज़ार रुपया खूंद का मरहटों को देना तय हुआ। इस रक़म के चुकाने का भार जवांमर्दखां ने अपने ऊपर लिया। तब उमाबाई बड़ोदा की तरफ गई। जवांमर्दखां थोड़े-थोड़े रुपये उसके पास भेजता रहा। अन्त में बीस हज़ार रुपये बाक़ी रह गये, जो उसने स्वयं रख लिये। उमाबाई के बड़ोदा पहुंचने पर शेरखां बाबी ने किले को मज़बूत कर उससे लड़ने की तैयारी की, पर उमाबाई ने महाराजा के साथ की अपनी सुलह की बातचीत की सूचना उस (शेरखां-बाबी) को दे दी, जिससे लड़ाई न हुई। फिर चौथ की रकम वसूल करने के लिए एक व्यक्ति को उसके पास छोड़कर वह अपने देश लौट गई[3]।

(१) आमद का चौथा हिस्सा।

(२) सरदेशमुखी नामक कर के रूप में आमद का दसवा भाग लिया जाता था। यह कर चौथ से अलग लगता था।

(३) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १२७-३१। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का वि० सं० १७८६ (ई० स० १७३३) के फाल्गुन मास के प्रारम्भ में होना लिखा है। उससे पाया जाता है कि उक्त मास में उमाबाई सत्तर हज़ार फ़ौज के साथ चढ़ आई तब महाराजा ने बख़्तसिंह को बुलाने के साथ जोधपुर, मेड़ता आदि से फ़ौज बुलाई। महाराजा तथा बख़्तसिंह तो क़िले में ही रहे और सारी फ़ौज के मुत्सद्दियों के डेरे किलकिला नदी पर हुए। कुल फ़ौज बीस हज़ार थी।

गया। नाज़िर ने तदनुसार चौहान हिन्दूसिंह के हाथ से सुलतानसिंह को मरवा दिया। भंडारी रघुनाथ कैद में था, जिसे धांधल केसरीसिंह ने सौंपने से इनकार कर दिया। इसी बीच महाराजा को वास्तविक बात का पता चल गया, जिससे भंडारी रघुनाथ की ज़िन्दगी बच गई। भंडारी गिरधरदास से महाराजा बड़ा नाराज़ हुआ। वह (गिरधरदास) इस घटना के कुछ ही समय बाद बीमार पड़कर मर गया[1]।

हि० स० ११४५ (वि० सं० १७८६ = ई० स० १७३२) में रत्नसिंह भंडारी को अपना नायब नियतकर अपने भाई राजा बख़्तसिंह के साथ महाराजा ने जोधपुर होते हुए दिल्ली जाने के लिए प्रस्थान किया। उसके जाते ही रत्नसिंह भंडारी ने मनमाने तौर से हुकूमत करना आरम्भ किया और वह कर के नाम से अनुचित ढंग से लोगों से धन वसूल करने लगा। उसकी देखा-देखी शहर-कोतवाल एवं बाहर के हिस्से के फ़ौजदार भी रैयत को हैरान करने और दुःख देने लगे[2]।

महाराजा का गुजरात से जोधपुर जाना

उसी वर्ष उमाबाई के दत्तक पुत्र जादोजी ने, महाराजा के गुजरात से लौट जाने की ख़बर सुनकर, बीस हज़ार सवारों के साथ नायब सूबे- (रत्नसिंह) से चौथ तय करने के लिए प्रस्थान किया। मार्ग में पड़नेवाले स्थानों में लूट-मार करता और ख़िराज वसूल करता हुआ वह शाही बाग़ में पहुंचा। भंडारी ने गुजराती सिपाहियों को अपनी फ़ौज में

जादोजी की महाराजा के नायब भंडारी रत्नसिंह पर चढ़ाई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १४०।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात इ-अहमदी, जि० २, पृ० १६२-३। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इसका उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा अपने भाई-सहित पहले जालोर गया, जहां से बख़्तसिंह तो नागोर गया और महाराजा कुछ समय वहां रहने के उपरान्त जोधपुर चला गया। (जि० २, पृ० १४१-२)।

भर्तीकर मोमिनखां को बुलवाया और शहरपनाह के फाटक बन्द करवा एवं वहां सेना नियुक्त कर उसने अपनी मज़बूती की। मुहम्मद अलादीन गवर्नी लश्कर-सहित शहर के बाहरी भाग की रक्षा के लिए नियत किया गया। मरहटी सेना की टुकड़ियां शहर के बाहरी हिस्सों पर हमला करतीं, जिनके साथ मुसलमानी सेना की लड़ाई होती। इस प्रकार एक मास व्यतीत हुआ। तब भंडारी ने अपने विश्वासपात्र आदमी जादोजी के पास भेजकर यह पुछवाया कि उमाबाई के साथ सन्धि हो जाने के बाद अब इस चढ़ाई का कारण क्या है। इसपर जादोजी पहले के क़रार के मुताबिक़ चौथ तय कर वहां से सोरठ की तरफ़ चला गया और आपस में सुलह हो गई[1]।

बडोदे पर मरहटों का अधिकार होना

उन दिनों शेरखां बाबी बड़ोदे का काम संभालता था। वह कुछ समय के लिए अपनी जागीर वाड़ासिनोर का बन्दोबस्त करने गया। उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर पीलाजी गायकवाड़ के भाई महादजी ने बड़ोदा के पास के जम्बूसर के परगने पर क़ब्ज़ा कर लिया। फिर पादरा के मुखिया दल्ला और वीरमगांव के देसाई के उत्तेजित करने पर उसने बड़ोदा पर घेरा डालने का विचार किया। सोनगढ़ से दामाजीराव ने उसकी सहायता के लिए फ़ौज रवाना की। इसपर मुहम्मद सरवाज़ ने, जिसको शेरखां बाबी अपनी अनुपस्थिति में बड़ोदा का प्रबन्ध करने के लिए छोड़ गया था, शहरपनाह के फाटक आदि मज़बूत कर युद्ध की तैयारी की। शेरखां ने इसकी खबर मिलने पर भंडारी से मदद मंगवाई और वह स्वयं भी रवाना हुआ। भंडारी ने मोमिनखां को लिखा कि शेरखां के पहुंचते ही वह उसकी मदद कर मरहटों को बाहर निकाल दे। शेरखां फ़ौज एकत्र कर करीब डेढ़ मास तक पड़ा रहा। फिर उसके माही नदी पार करने की खबर पाते ही महादजी, उसका मार्ग रोकना आवश्यक समझ, बहुतसी सेना के साथ उसके मुक़ाबले के लिए गया। शेरखां और

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १६३-४।

उसके साथी बड़ी वीरता से लड़े, पर दक्षिणियों का बल अधिक होने से उनको सफलता नहीं मिली और बड़ोदा पर महादजी का अधिकार हो गया। मोमिनखां, जो उस समय मार्ग में ही था, बड़ोदा का हाल सुनकर खंभात चला गया[1]। तब से ही स्थायी रूप से बड़ोदे पर मरहटों का अधिकार हो गया।

बख़्तसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई

वि० सं० १७९० (ई० स० १७३३)[2] में बख़्तसिंह ने नागोर से एक बड़ी सेना के साथ बीकानेर पर अधिकार करने के विचार से प्रस्थान किया और स्वरूपदेसर के निकट जाकर डेरे किये। उन दिनों बीकानेर के स्वामी सुजानसिंह का ज्येष्ठ पुत्र ज़ोरावरसिंह अपनी सेना-सहित नोहर में था। सुजानसिंह के समाचार भिजवाने पर वह अमरसर पहुंचा, जहां बीकानेर की और फ़ौज भी उसके शामिल हो गई। इस सम्मिलित सेना के साथ जोधपुर की सेना का तालाब नाज़रसर पर मुक़ाबिला होने पर प्रथम आक्रमण में ही बख़्तसिंह की सेना के पैर उखड़ गये और वह भागकर अपने डेरों में चली गई। अनन्तर बख़्तसिंह के यह समाचार जोधपुर भेजने पर अभयसिंह स्वयं एक बड़ी सेना के साथ उससे आ मिला। फिर मोर्चाबन्दी हुई और युद्ध शुरू हुआ, परन्तु बीकानेरवालों ने गढ़ की रक्षा का ऐसा अच्छा प्रबन्ध किया था तथा वे इतनी दृढ़ता के साथ जोधपुरवालों का सामना कर रहे थे कि अभयसिंह को विजय की आशा न रही। फिर रसद आदि का पहुंचना भी जब बन्द हो गया तो अभयसिंह ने मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) से कहलाया कि आप अपने प्रतिष्ठित व्यक्तियों

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६७-८। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४-५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में बख़्तसिंह का वि० सं० १७९१ (ई० स० १७३४) के भाद्रपद मास में बीकानेर पर चढ़कर जाना लिखा है (जि० २, पृ० १४२), जो ठीक नहीं है। 'वीरविनोद' में भी वि० सं० १७९० ही दिया है (भाग २, पृ० ८६७)।

भर्तीकर मोमिनखां को बुलवाया और शहरपनाह के फाटक बन्द करवा एवं वहां सेना नियुक्त कर उसने अपनी मज़बूती की। मुहम्मद अलादीन गवर्नी लश्कर-सहित शहर के बाहरी भाग की रक्षा के लिए नियत किया गया। मरहटी सेना की टुकड़ियां शहर के बाहरी हिस्सों पर हमला करतीं, जिनके साथ मुसलमानी सेना की लड़ाई होती। इस प्रकार एक मास व्यतीत हुआ। तब भंडारी ने अपने विश्वासपात्र आदमी जादोजी के पास भेजकर यह पुछवाया कि उमाबाई के साथ सन्धि हो जाने के बाद अब इस चढ़ाई का कारण क्या है। इसपर जादोजी पहले के क़रार के मुताबिक़ चौथ तय कर वहां से सोरठ की तरफ़ चला गया और आपस में सुलह हो गई[1]।

वडोदे पर मरहटों का अधिकार होना

उन दिनों शेरखां बाबी बड़ोदे का काम संभालता था। वह कुछ समय के लिए अपनी जागीर वाड़ासिनोर का बन्दोबस्त करने गया। उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर पीलाजी गायकवाड़ के भाई महादजी ने बड़ोदा के पास के जम्बूसर के परगने पर क़ब्ज़ा कर लिया। फिर पादरा के मुखिया दल्ला और वीरमगांव के देसाई के उत्तेजित करने पर उसने बड़ोदा पर घेरा डालने का विचार किया। सोनगढ़ से दामाजीराव ने उसकी सहायता के लिए फ़ौज रवाना की। इसपर मुहम्मद सरवाज़ ने, जिसको शेरखां बाबी अपनी अनुपस्थिति में बड़ोदा का प्रबन्ध करने के लिए छोड़ गया था, शहरपनाह के फाटक आदि मज़बूत कर युद्ध की तैयारी की। शेरखां ने इसकी खबर मिलने पर भंडारी से मदद मंगवाई और वह स्वयं भी रवाना हुआ। भंडारी ने मोमिनखां को लिखा कि शेरखां के पहुंचते ही वह उसकी मदद कर मरहटों को बाहर निकाल दे। शेरखां फ़ौज एकत्र कर करीब डेढ़ मास तक पड़ा रहा। फिर उसके माही नदी पार करने की खबर पाते ही महादजी, उसका मार्ग रोकना आवश्यक समझ, बहुतसी सेना के साथ उसके मुक़ाबले के लिए गया। शेरखां और

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १६३-४।

बीकानेर पर पुनः अधिकार करने का बख्तसिंह का विफल प्रयत्न

वंशज दौलतसिंह ने अपने स्वामी से कपट कर बख्तसिंह से बीकानेर के गढ़ पर उसका अधिकार करा देने के विषय में गुप्त रूप से बातचीत की। वह तो यह चाहता ही था। दौलतसिंह के उद्योग से जैमलसर का भाटी उदयसिंह, शिव पुरोहित, भगवानदास गोवर्द्धनोत और उसके दो पुत्र हरिदास एवं राम तथा बीकानेर के कितने ही सरदार आदि भी बख्तसिंह के शामिल हो गये। उदयसिंह के एक सम्बन्धी पड़िहार राजसी के पुत्र जैतसी की बीकानेर राज्य में बहुत चलती थी। उन दिनों कुंवर जोरावरसिंह ऊदासर में था। उदयसिंह जैतसी को साथ ले उसके पास ऊदासर चला गया। इस प्रकार बीकानेर का गढ़ अरक्षित रह गया। ऊदासर में एक रोज़ गोठ के समय उदयसिंह अधिक नशे में हो गया और ऐसी बातें करने लगा, जिनसे स्पष्ट ज्ञात होता था कि उसके मन में कोई भेद है। जैतसी ने जब अधिक दबाव डाला तो उसने सारी बातें खोलकर उससे कह दीं। जैतसी सुनते ही सावधान हो गया और आस-पास से सेना एकत्र करने के लिए उसने ऊंट सवार रवाना किये। इतना करने के उपरान्त वह बीकानेर आकर गढ़ के उस भाग की तरफ़ गया, जिधर पड़िहार रक्षा पर थे और उनसे रस्सी नीचे गिरवाकर वह उसके सहारे गढ़ में दाख़िल हो गया। अनन्तर उसने महाराजा को जाकर इसकी सूचना दी। सुजानसिंह तत्काल जैतसी को साथ लेकर सूरजपोल पर पहुंचा तो उसने उसके ताले खुले पाये। उसी समय सब दरवाजे मज़बूती से बन्द कर दिये गये और गढ़ की रक्षा का समुचित प्रबन्ध कर तोपें दागी गईं। [illegible] बख्तसिंह तथा उसके आदमियों को बुलाने गया हुआ था, जो पास ही में थे। जब उसने तोपों की आवाज़ सुनी तो समझ गया कि षड्यन्त्र का सारा भेद खुल गया। बख्तसिंह ने भी जान लिया कि अब आशा फलीभूत होना असम्भव है, अतएव वह अपने साथियों सहित वहां से चला गया। इधर गढ़ के भीतर के [illegible] हाथ लगे सब आदमियों को गढ़ की रक्षा का भार दे दिया गया। वह

को भेजकर हमारे बीच सुलह करा दें। इसपर महाराणा ने चूंडावत जगतसिंह (दौलतगढ़ का), मोही के भाटी सुरताणसिंह तथा पंचोली कानजी (सहीवालों का पूर्वज) को दोनों दलों में सुलह कराने के लिए भेजा। पहले तो जोधपुरवालों ने ख़र्च की मांग भी की, परन्तु बीकानेरवालों ने इसे स्वीकार नहीं किया। पीछे से इस शर्त पर सुलह हुई कि पीछे लौटते हुए जोधपुर के सैन्य का बीकानेरवाले पीछा न करें। तदनुसार फाल्गुन वदि १३ (ई० स० १७३४ ता० २० फ़रवरी) को दोनों भाई (अभयसिंह तथा वख़्तसिंह) कूचकर नागोर चले गये[1]।

बीकानेर की प्रथम चढ़ाई में असफल होने पर भी वख़्तसिंह ने आशा का परित्याग नहीं किया। बीकानेर के किलेदार नापा सांखला के

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६१। वीरविनोद, भाग २, पृ० ५००-१। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ४७।

यह घटना जोधपुर राज्य की ख्यात में इस प्रकार दी है—"वि० सं० १७९१ के भाद्रपद (ई० स० १७३४ अगस्त) मास में वख़्तसिंह ने बीकानेर पर चढ़ाई की और गोपालपुर ख़रबूज़ी पर अधिकार करता हुआ वह बीकानेर के निकट जा पहुंचा। आश्विन के शुक्ल पक्ष में अभयसिंह भी जोधपुर से कूचकर खींवसर पहुंचा, जहां पंचोली रामकिशन, जिसे महाराजा ने एक लाख रुपया देकर फौज एकत्र करने के लिए भेजा था, चार हज़ार सवारों के साथ उससे जा मिला। वख़्तसिंह का मोर्चा लक्ष्मीनारायण के मन्दिर की तरफ़ था। बीकानेरवालों ने बाहर आकर लड़ाई की, परन्तु वख़्तसिंह के राजपूतों ने उन्हें गढ़ में भगा दिया। महाराजा का डेरा नगर के निकट होने पर चारों तरफ़ मोर्चे लगाये गये। बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह का कुंवर भाद्रा की तरफ़ था। वह लालसिंह कांधलोत और चार हज़ार सेना के साथ शहर में गया। चार मास तक लड़ाई चली, पर जब गढ़ टूटता न दिखा तो लालसिंह ने जाकर जोधपुरवालों को समझाया कि इस बार तो आप पधारें, फिर आयेंगे तो सारा प्रबन्ध कर दिया जायगा। इस बात का वचन देने पर अभयसिंह और वख़्तसिंह नागोर गये (जि० २, पृ० १४२)।

उपर्युक्त वर्णन में महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) के आदमियों-द्वारा दोनों दलों में संधि स्थापित होना नहीं लिखा है, परन्तु "वीरविनोद" में भी इसका उल्लेख है, अतएव कोई कारण नहीं है कि उसपर अविश्वास किया जाय।

बीकानेर पर पुन: अधिकार करने का बख़्तसिंह का विफल प्रयत्न

वंशज दौलतसिंह ने अपने स्वामी से कपट कर बख़्तसिंह से बीकानेर के गढ़ पर उसका अधिकार करा देने के विषय में गुप्त रूप से बातचीत की। वह तो यह चाहता ही था। दौलतसिंह के उद्योग से जैमलसर का भाटी उदयसिंह, शिव पुरोहित, भगवानदास गोवर्द्धनोत और उसके दो पुत्र हरिदास एवं राम तथा बीकानेर के कितने ही सरदार आदि भी बख़्तसिंह के शामिल हो गये। उदयसिंह के एक सम्बन्धी पड़िहार राजसी के पुत्र जैतसी की बीकानेर राज्य में बहुत चलती थी। उन दिनों कुंवर जोरावरसिंह ऊदासर में था। उदयसिंह जैतसी को साथ ले उसके पास ऊदासर चला गया। इस प्रकार बीकानेर का गढ़ अरक्षित रह गया। ऊदासर में एक रोज़ गोठ के समय उदयसिंह अधिक नशे में हो गया और ऐसी बातें करने लगा, जिनसे स्पष्ट ज्ञात होता था कि उसके मन में कोई भेद है। जैतसी ने जब अधिक दबाव डाला तो उसने सारी बातें खोलकर उससे कह दीं। जैतसी सुनते ही सावधान हो गया और आस-पास से सेना एकत्र करने के लिए उसने ऊंट-सवार रवाना किये। इतना करने के उपरान्त वह बीकानेर जाकर गढ़ के उस भाग की तरफ़ गया, जिधर पड़िहार रक्षा पर थे और उनसे रस्सी नीचे गिरवाकर वह उसके सहारे गढ़ में दाखिल हो गया। अनन्तर उसने महाराजा को जाकर इसकी सूचना दी। सुजानसिंह तत्काल जैतसी को साथ लेकर सूरजपोल पर पहुंचा तो उसने उसके ताले खुले पाये। उसी समय सब दरवाज़े मज़बूती से बन्द कर दिये गये और गढ़ की रक्षा का समुचित प्रबन्ध कर तोपें दागी गईं। सांखला नाहरखां बख़्तसिंह तथा उसके आदमियों को बुलाने गया हुआ था, जो पास ही में थे। जब उसने तोपों की आवाज़ सुनी तो समझ गया कि षड्यन्त्र का सारा भेद खुल गया। बख़्तसिंह ने भी जान लिया कि अब आशा फलीभूत होना असम्भव है, अतएव वह अपने साथियों-सहित वहां से चला गया। उधर गढ़ के भीतर के सांखले मार डाले गये तथा धायभाई को गढ़ की रक्षा का भार सौंपा गया। यह

घटना वि० सं० १७९१ आषाढ वदि ११ (ई० स० १७३४ ता० १६ जून) को हुई[1]।

उसी वर्ष[2] महाराणा जगतसिंह (दूसरा) के राज्याभिषेकोत्सव के अवसर पर बख़्तसिंह नागोर से उदयपुर गया। सवाई जयसिंह भी इस अवसर पर वहां गया हुआ था। अनन्तर हुरड़ा नामक स्थान में पारस्परिक एकता के सम्बन्ध में अहदनामा करने के लिए राजाओं के एकत्र होने पर[3] अभयसिंह भी वहां जाकर सम्मिलित हुआ। वहां पर उपस्थित महाराजाओं में उदयपुर, जोधपुर, जयपुर, कोटा, बीकानेर आदि के नरेश प्रमुख थे। वहां कुछ विचार होने के उपरान्त एक अहदनामा लिखा गया, जिसमें नीचे लिखी शर्तें स्थिर हुईं—

राजपूत राजाओं का एकता का प्रयत्न

१. सब राजा धर्म की शपथ खाते हैं कि वे एक दूसरे का दुःख-सुख में साथ देंगे। एक का मान अथवा अपमान सबका मान अथवा अपमान समझा जायगा।

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६२-३। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ३८-९। "वीरविनोद" में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है (भाग २, पृ० ८०१)। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख नहीं है, जिसका कारण संभवतः यही हो सकता है कि इस चढ़ाई का सम्बन्ध केवल बख़्तसिंह से ही था, अभयसिंह से नहीं। एक बार विफल-प्रयत्न होने पर पुनः बीकानेर पर अधिकार करने के लिए बख़्तसिंह का षड्यन्त्र करना असम्भव नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७९२ दिया है (जि० २, पृ० १३२), जो ठीक नहीं है, क्योंकि आगे चलकर उसी ख्यात में उस समय महाराणा जगतसिंह (दूसरा) का राज्याभिषेकोत्सव होना भी लिखा है। महाराणा का राज्याभिषेकोत्सव वि० सं० १७९१ के ज्येष्ठ मास में हुआ था, जैसा "वीरविनोद" से भी स्पष्ट है।

(३) राजाओं का यह सम्मेलन सवाई जयसिंह के उद्योग से हुआ था। यह [illegible] बदल गया था और इसलिए इसने यह सब किया था [illegible] राजपूताने का इतिहास, जि० २, पृ० [illegible])।

२ एक के शत्रु को दूसरा अपने पास न रक्खेगा।

३. वर्षा ऋतु के बाद कार्यारम्भ किया जायगा, तब सब राजा रामपुरा में एकत्र होंगे। यदि कोई किसी कारणवश स्वयं न आसके तो अपने कुंवर को भेजेगा।

४. यदि कुंवर अनुभव की कमी से कुछ ग़लती करे तो महाराणा ही उसको ठीक करेगा।

५. कोई नया काम शुरू हो तो सब एकत्र होकर करें।

यह अहदनामा वि० सं० १७९१ श्रावण वदि १३ (ई० स० १७३४ ता० १७ जुलाई) को लिखा गया। फिर सब राजा अपने-अपने स्थानों को चले गये[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि हुरड़ा से प्रस्थान कर महाराजा अभयसिंह देवलिया[2] के ठिकाने में गया। देवलिया का ठिकाना

देवलिया का ठिकाना रघुनाथसिंह को देना

पहले निणायवालों का था, परन्तु शाहपुरा के उम्मेदसिंह ने उसे छीनकर अपने भाई शेरसिंह को दे दिया था। महाराजा ने उसे वापस छुड़ाकर

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० १२१८-२१। वंशभास्कर, भाग ४, पृ० ३२२७-८। टॉड, राजस्थान, जि० १, पृ० ४८२-३ और टिप्पण।

कर्नल टॉड ने इस अहदनामे की तिथि श्रावण सुदि १३ दी है और 'वंशभास्कर' में सब राजाओं का कार्तिक सुदि में एकत्र होना लिखा है। ये दोनों बातें ठीक नहीं हैं। अहदनामे की नक़ल में श्रावण वदि १३ ही दी है।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है, पर उसने भी समय ग़लत दिया है, जैसा कि ऊपर (पृ० ६२४ टि० २ में) बतलाया गया है। उससे यह भी पाया जाता है कि अभयसिंह ने इस अवसर पर साथ देना स्वीकार किया था। इसपर बादशाह को यह सन्देह हुआ कि वह कुछ फ़ितूर करनेवाला है, परन्तु भण्डारी अमरसिंह ने समझा-बुझाकर उसकी दिलजमई कर दी, जिससे उसने महाराजा के पास सिरोपाव तथा आभूषण आदि भिजवाये (जि० २, पृ० १५०-१)।

(२) यह ठिकाना आजकल अजमेर प्रान्त के अन्तर्गत है।

घटना वि० सं० १७९१ आषाढ वदि ११ (ई० स० १७३४ ता० १६ जून) को हुई[1]।

उसी वर्ष[2] महाराणा जगतसिंह (दूसरा) के राज्याभिषेकोत्सव के अवसर पर बख़्तसिंह नागोर से उदयपुर गया। सवाई जयसिंह भी इस अवसर पर वहां गया हुआ था। अनन्तर हुरड़ा नामक स्थान में पारस्परिक एकता के सम्बन्ध में अहदनामा करने के लिए राजाओं के एकत्र होने पर[3] अभयसिंह भी वहां जाकर सम्मिलित हुआ। वहां पर उपस्थित महाराजाओं मे उदयपुर, जोधपुर, जयपुर, कोटा, बीकानेर आदि के नरेश प्रमुख थे। वहां कुछ विचार होने के उपरान्त एक अहदनामा लिखा गया, जिसमें नीचे लिखी शर्तें स्थिर हुईं—

राजपूत राजाओं का एकता का प्रयत्न

१ सब राजा धर्म की शपथ खाते हैं कि वे एक दूसरे का दुःख सुख में साथ देंगे। एक का मान अथवा अपमान सबका मान अथवा अपमान समझा जायगा।

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६२-३। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ५८-६। "वीरविनोद" में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है (भाग २, पृ० २०१)। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख नहीं है, जिसका कारण संभवतः यही हो सकता है कि इस चढ़ाई का सम्बन्ध केवल बख़्तसिंह से ही था, अभयसिंह से नहीं। एक बार विफल-प्रयत्न होने पर पुनः बीकानेर पर अधिकार करने के लिए बख़्तसिंह का षड्यन्त्र करना असम्भव नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७९२ दिया है (जि० २, पृ० १४२), जो ठीक नहीं है, क्योंकि आगे चलकर उसी ख्यात में उस समय महाराणा जगतसिंह (दूसरा) का राज्याभिषेकोत्सव होना भी लिखा है। महाराणा का राज्याभिषेकोत्सव वि० सं० १७९१ के ज्येष्ठ मास में हुआ था, जैसा "वीरविनोद" से भी प्रकट है।

(३) राजाओं का यह सम्मेलन सवाई जयसिंह के प्रयास से हुआ था। [illegible] [illegible] में बुलाया गया था और इसीलिए उसमें यह तय किया गया था [illegible] (देखो मेरा राजपूताने का इतिहास, जि० [illegible], पृ० [illegible])।

२ एक के शत्रु को दूसरा अपने पास न रक्खेगा।

३. वर्षा ऋतु के बाद कार्यारम्भ किया जायगा, तब सब राजा रामपुरा में एकत्र होंगे। यदि कोई किसी कारणवश स्वयं न आसके तो अपने कुंवर को भेजेगा।

४. यदि कुंवर अनुभव की कमी से कुछ ग़लती करे तो महाराणा ही उसको ठीक करेगा।

५. कोई नया काम शुरू हो तो सब एकत्र होकर करें।

यह अहदनामा वि० सं० १७९१ श्रावण वदि १३ (ई० स० १७३४ ता० १७ जुलाई) को लिखा गया। फिर सब राजा अपने-अपने स्थानों को चले गये[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि हुरड़ा से प्रस्थानकर महाराजा अभयसिंह देवलिया[2] के ठिकाने में गया। देवलिया का ठिकाना पहले मिणायवालों का था, परन्तु शाहपुरा के उम्मेदसिंह ने उसे छीनकर अपने भाई ईश्वरीसिंह को दे दिया था। महाराजा ने उसे वापस छुड़ाकर

देवलिया का ठिकाना रघुनाथसिंह को देना

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० १२१८-२१। वंशभास्कर, भाग ४, पृ० ३२२७-८। टॉड, राजस्थान, जि० १, पृ० ४८२-३ और टिप्पण।

कर्नल टॉड ने इस अहदनामे की तिथि श्रावण सुदि १३ दी है और 'वंशभास्कर' ने सब राजाओं का कार्तिक सुदि में एकत्र होना लिखा है। ये दोनों बातें ठीक नहीं हैं। अहदनामे की नक़ल में श्रावण वदि १३ ही दी है।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है, पर उसमें भी समय ग़लत दिया है, जैसा कि ऊपर (पृ० ६३४ टि० २ में) बतलाया गया है। उससे यह भी पाया जाता है कि अभयसिंह ने इस अवसर पर लाल डेरा खड़ा किया था। इसपर बादशाह को यह सुनाया गया कि वह कुछ फ़ितूर करनेवाला है, परन्तु भंडारी अमरसिंह ने समझा-बुझाकर उसकी दिलजमई कर दी, जिससे उसने महाराजा के पास सिरोपाव तथा आभूषण आदि भिजवाये (जि० २, पृ० १४८-९)।

(२) यह ठिकाना आजकल अजमेर प्रान्त के अन्तर्गत है।

दक्षिणियों के विरुद्ध भेजा गया था, वापस दिल्ली चला गया[1]।

वीरमगांव (झालावाड़) का परगना खालसा होने पर बुरहानुल्मुल्क-(सआदतख़ां) ने वह परगना अपने प्रीतिभाजन बहरामख़ां के नाम करा

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १४४।

इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" में भी इस घटना का उल्लेख है, पर उसमें अभयसिंह का नाम नहीं है। उससे पाया जाता है कि समसामुद्दौला ने एक बड़ी फ़ौज तथा कितने ही राजपूत राजाओं एवं सरदारों के साथ दक्षिणियों के विरुद्ध अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया, जहां मल्हारराव का होना ज्ञात हुआ था। मार्ग में जयसिंह भी अपनी सेना-सहित उसके शामिल हो गया। कोई लड़ाई नहीं हुई और जयसिंह के समझाने से उस (समसामुद्दौला) को मरहटों की सारी शर्तें स्वीकार करनी पड़ीं। उसके अनुसार मरहटों के नर्मदा के पार चले जाने की शर्त पर उन्हें चौथ देना मंज़ूर किया गया। साथ ही मालवा से उन्हें बाईस लाख रुपया देना भी तय हुआ। शाही सेना कोटा और बूंदी राज्यों से आगे न गई और समसामुद्दौला वहां से वापिस लौटकर ई० स० १७३५ ता० २१ या २२ मई (वि० सं० १७९२ ज्येष्ठ सुदि ११ अथवा १२) को दिल्ली पहुंचा (जि० २, पृ० २८०-१)।

आगे चलकर जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि बादशाह के पास इसकी शिकायत अभयसिंह ने की थी, जिससे जयसिंह उससे नाराज़ था और उसने दक्षिणियों को मारवाड़ पर चढ़ाई करने को भड़काया। इसपर राणोजी सिंधिया और मल्हारराव होल्कर ने पचास हज़ार सेना के साथ गुजरात की तरफ़ से जाकर जालोर और सोजत का बिगाड़ किया। अनन्तर वे मेड़ता चले गये। उनकी सेना की कुछ टुकड़ियां जोधपुर में रातानाडा तक गईं। इसपर चांपावत शक्तिसिंह आईदानोत (रोहट का), चांपावत महासिंह भगवानदासोत (पोकरण का), पुरोहित जगा आदि ने मेड़ते के मालकोट में भंडारी विजयराज, भंडारी ममरूप आदि के साथ रहकर लड़ाई की तैयारी की। अन्य कितने ही परगनों की सेनाएं भी उनके शामिल हुईं और शाहपुरे का राजा उम्मेदसिंह भारतसिंहोत सीसोदिया भी चार हज़ार सेना के साथ गया। महाराजा को इसकी सूचना मिलने पर उसने वहां से हुक्म भेजा कि दक्षिणियों को एक दाम भी न दे। इसके बाद दोनों तरफ़ से मोर्चे लगाये जाकर लड़ाई शुरू हुई, पर कुछ ही समय में तोपों की मार से घबराकर दक्षिणियों ने युद्ध बन्द कर दिया। महाराजा ने दिल्ली से प्रस्थान कर दिया था, लड़ाई बन्द होने की ख़बर पाकर उसने अपनी यात्रा स्थगित कर दी (जि० २, पृ० १४५-६)।

रत्नसिंह भंडारी का लड़ाई में बहरामखां को मारना

दिया। इस सम्बन्ध में वज़ीरुल्मुल्क ने भंडारी रत्नसिंह के पास सूचना भेजी कि वह बहरामखां को मदद पहुंचावे। बहरामखां ने भी परगना मिलने की सनद भंडारी के पास भेजी और रवाना होने की तैयारी की। इस बीच भंडारी ने उस परगने की खेती नष्ट होने की झूठी सूचना बादशाह के पास भिजवाकर वह परगना महाराजा के नाम करवा दिया। बुरहानुल्मुल्क को जब इसकी सूचना मिली तो वह बड़ा नाराज़ हुआ और बादशाह से उसकी कहा-सुनी हो गई। उसने बहरामखां से कहा कि किसी बात की चिन्ता न करते हुए वह जल्दी वीरमगांव में दाखिल होने का प्रयत्न करे। इसपर सादिक़अलीखां को जूनागढ़ में अपना नायब मुकर्रर कर वह वीरमगांव की तरफ़ अपनी सेना-सहित रवाना हुआ। भंडारी को इस बात की खबर मिलते ही उसने मारवाड़ी फ़ौज और मोमिनखां, शेरखां एवं सफ़दरखां बाबी को अपने पास बुलवाया। साथ ही उसने गुजराती सिपाहियों को अपनी सेना में भर्ती किया और तोपखाना दुरुस्तकर वह लड़ने के लिए चला। धोलका होता हुआ वह कोठ नामक स्थान में पहुंचा। वहां रहते समय उसको खबर मिली कि धंधुका नामक स्थान में बहरामखां आ पहुंचा है। तब बहरामखां की छावनी से सात कोस दूर हंडाला में उसने पड़ाव किया। वहां पर मोमिनखां, शेरखां एवं सफदरखां उसके शामिल हो गये। वहां से प्रस्थान कर धंधुका ज़िले के दमोली गांव में भंडारी ठहरा। वहां रहते समय यह तय हुआ कि इस शर्त पर सुलह का प्रयत्न किया जाय कि इस वर्ष तो बहरामखां शाही हुक्म की तामील करे और दूसरे वर्ष जैसी आज्ञा हो उसका पालन किया जावे। बहरामखां ने यह शर्त स्वीकार नहीं की और लड़ने का निश्चय किया। भंडारी ने भी लड़ने का आयोजन किया और तोप की मार करने योग्य स्थान तक आगे जाकर ठहरा। तीन दिन तक दोनों ओर से बराबर तोपें चलती रहीं। हि० स० ११४७ ता० १ जमादिउल्अव्वल (वि० सं० १७६१ आश्विन सुदि २ = ई० स० १७३४ ता० १६ सितंबर) को भंडारी ने अपनी सेना को तैयार

रहने की आज्ञा दी। रात बीतते बीतते भंडारी की फ़ौज ने बहरामखां के सैनिकों पर, जो नाच-रंग में मस्त थे, आक्रमण कर दिया। इस अचानक आक्रमण से मुसलमानी फ़ौज भागने लगी। बहरामखां ने अपने थोड़े से सैनिकों के साथ ठहरकर मारवाड़ी फ़ौज का सामना किया, परन्तु उसकी शक्ति कम होने से उसके साथ के कई आदमी मारे गये और वह स्वयं भी बुरी तरह घायल हुआ। उसी समय मुहम्मदकुलीखां वहां पहुंच गया, जो बहरामखां को उठाकर सीहोर की तरफ़ रवाना हुआ, पर मार्ग में दो घंटे बाद ही उस (बहरामखां) की मृत्यु हो गई। मुसलमानी सेना में भगदड़ मचते ही मारवाड़ी सैनिकों ने मुसलमानों का सारा सामान आदि लूट लिया। इसी बीच एक अज्ञात सैनिक ने भंडारी पर आक्रमण कर उसके सिर और कंधे पर दो घाव किये, जिससे वह दो मास में अच्छा हुआ। भंडारी के आदमियों ने आक्रमणकारी को मार डाला[1]।

रत्नसिंह के भय से मोमिनखां का खंभात जाना

बहरामखां के मारे जाने का हाल भंडारी तथा मारवाड़ियों को ज्ञात नहीं हुआ। मारवाड़ियों को भय था कि उसके सोरठ पहुंच जाने से उधर बहुत हानि होगी, अतएव उन्होंने भंडारी को यह सुझाया कि बकाया वसूल करने की सनद पहले मोमिनखां ने ही भेजी थी, लड़ाई करने के लिए भी उसने ही उसे तैयार किया था और लड़ाई उसी की साज़िश से हुई थी, इसलिए इस अवसर से लाभ उठाकर उस (मोमिनखां) को हटा दिया जावे, जिससे उधर कोई सिर उठानेवाला ही न रहे। भंडारी की मोमिनखां के साथ एक प्रकार से मैत्री थी और यह भी पक्की ख़बर नहीं थी कि बहरामखां जीवित है अथवा मर गया, जिससे उसने अपने सलाहकारों की बात न मानी, परन्तु यह बात सर्वत्र फैल गई एवं मोमिन-

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिराते अहमदी; जि० २, पृ० १७७-८२। कॅम्पबेल-कृत 'गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी' में भी इस घटना का उल्लेख हुआ है (जिल्द १, भाग १, पृ० ३१४-६), परन्तु उसमें नेकआलमखां नाम दिया है, जो ठीक नहीं है, क्योंकि मूल पुस्तक (मिराते अहमदी) में बहरामखां नाम मिलता है।

के पास मोर्चा जमाया। इसी बीच बड़ोदा से ५०० सवार रंगोजी की सहायतार्थ पहुंच गये। ईदगाह के मोर्चे से तोपों की मार होने पर मारवाड़ियों के बहुत से आदमी मारे गये और कितने ही घायल हुए। ऐसी हालत देख मारवाड़ी एकाएक मरहटों पर टूट पड़े और उन्होंने उनमें से बहुतों को मारकर उनकी तोपें आदि छीन लीं। फिर मारवाड़ियों ने वहां सुरंगें खोदना और मोर्चे बनाना शुरू किया। उन्हीं दिनों मरहटों के एक दूसरे सैन्य ने, जो सरताल (ठासरा) कसबे में था, कपडवंज क़सबे पर कब्ज़ा कर लिया। इस बीच भंडारी ने मोमिनखां को बुलाने के लिए कई पत्र लिखे, पर कपट का संदेह होने से वह रवाना होने में ढील करता रहा। मरहटे अवसर की तलाश में थे। एक दिन भंडारी के रहने का जासूसों-द्वारा ठीक-ठीक पता लगाकर मध्यान्ह के समय, जब कड़ी धूप पड़ रही थी और मारवाड़ियों के मोर्चे के बहुत से रक्षक बाहर गये हुये थे, क़िले में से निकलकर ५०० मरहटों ने उनपर अचानक आक्रमण कर दिया, जिससे भंडारी घबरा गया और मुनसर तालाब के एक मन्दिर में जा छिपा। मरहटों को जब वह नहीं मिला तो वे वापिस क़िले में चले गये। भंडारी ने बाहर निकलकर किले को सुरंग लगाकर उड़ाने की कोशिश की, पर इसी बीच मोमिनख़ां के पास से पत्र पहुंचे, जिनसे ज्ञात हुआ कि दामाजी राव के भाई प्रतापराव और देवजी तावेर दस हज़ार सवारों के साथ गुजरात पर बढ़ रहे हैं। पहले तो भंडारी को इस सम्वाद पर विश्वास ही नहीं हुआ, लेकिन पीछे से दिलजमई होने पर उसने वहां का घेरा उठा लिया और आधीरात के समय तोपख़ाने, भारबरदारी की गाड़ियों एवं अपने छावनीवालों को अहमदाबाद भिजवा दिया। सुबह को वह स्वयं भी शीघ्रता के साथ वहां से रवाना हो गया। प्रतापराव के आने की ख़बर रंगोजी को नहीं थी, इसलिए पहले तो वह कपट के सन्देह के कारण रुका रहा, परंतु पीछे से उसने अपने सवारों को मारवाड़ियों के पीछे भेजा, जिन्होंने सरखेज के पास पहुंचकर मारवाड़ियों के पीछे रहे हुए ज़ख्मी उम्मेदसिंह राजपूत तथा अन्य आदमियों और जानवरों आदि को

पकड़ लिया[1]।

अहमदाबाद पहुंचकर भंडारी ने किले की मज़बूती की और धन एकत्र करने के लिए वह धनी-निर्धनी सब पर अत्याचार करने लगा, जिससे वहां का वास छोड़कर बहुतसे लोग अन्यत्र जाने लगे। उधर वात्रक ज़िले में पहुंचकर प्रतापराव ने वहां का सारा महसूल वसूल कर लिया। अनन्तर हवेली, बलाद, पेथापुर और झाला होता हुआ वह धोलका पहुंचा, जहां दो हज़ार सवार छोड़कर वह धन्धुका गया। इस बीच बाजीराव पेशवा का अनुयायी कन्थाजी, मल्हारराव होलकर के साथ ईडर के मार्ग से होता हुआ दांता तक पहुंच गया। दक्षिणियों के भय से वहां रहनेवाले कितने ही धनवान व्यक्ति पहाड़ों में जा छिपे, पर उन्हें पकड़कर उन्हों (दक्षिणियों) ने दस लाख रुपये वसूल किये। फिर वड़नगर होते हुए दक्षिणी पालनपुर गये, जहां के स्वामी पहाड़खां जालोरी ने एक लाख रुपया देना स्वीकार किया। अनन्तर कंथाजी और मल्हारराव भीनमाल के मार्ग से मारवाड़ की ओर बढ़े तथा प्रतापराव और रंगोजी धन्धुका से काठियावाड़ एवं गोहिलवाड़ की तरफ़ गये। हि० स० ११४६ (वि० सं० १७९३ = ई० स० १७३६) में प्रतापराव, जो सोरठ के लोगों से ख़िराज वसूल करके लौट रहा था, धोलका के निकट कांकर गांव में मर गया[2]।

प्रतापराव की मृत्यु

रत्नसिंह भंडारी की हाकिमी में गुजरात निवासियों पर बड़े जुल्म हुए। झूठे आरोप लगा-लगाकर वह अलग-अलग बहानों से लोगों से मन-मानी रक़में वसूल करता और उनका माल-मता लूट लेता। उसके जुल्म से तंग होकर कितने ही अपना

रत्नसिंह भंडारी के जुल्म

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १८९-९०। कैम्पबेल-कृत 'गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में भी इसका सक्षिप्त उल्लेख है (भाग १, खंड १, पृ० ३१६-७)।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १९०-९३। कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१७-८।

घर-बार छोड़कर चले गये, कई ने आत्महत्या कर ली और कितने ही पागल हो गये एवं कितने ही अपना व्यापार बन्दकर मारवाड़ की तरफ़ चले गये[1]।

गुजरात में मारवाड़ियों के ज़ुल्म के कारण अमीरुल्उमरा का मन महाराजा से फिर गया था। इसी बीच गुजरात के व्यापारियों में से अनेक ने बादशाह के पास उपस्थित होकर फ़रियाद की। इसपर मोमिनखां महाराजा अभयसिंह के स्थान में गुजरात का सूबेदार नियत हुआ और जवांमर्दखां पाटण का हाकिम बनाया गया। जालोरी राठोड़ों के मददगार थे। जवांमर्दखां के पाटण पहुंचने पर पहाड़खां जालोरी ने जवांमर्दखां का विरोध किया, परन्तु अन्त में उसे पाटण खाली करना ही पड़ा। ऐसा हो जाने पर मोमिनखां ने भी प्रकट रूप से नज्मुद्दौला मोमिनखां बहादुर फीरोज़जंग नाम धारण कर सूबेदारी का कार्य आरम्भ किया। शेरखां बाबी तटस्थ रहने की ग़रज़ से बालासिनोर चला गया और मोमिनखां ने अपनी मदद के लिए रंगोजी को बुलाया। उसने इस शर्त पर मारवाड़ियों को निकालने में सहायता देना स्वीकार किया कि इसमें सफल होने पर अहमदाबाद तथा खंभात को छोड़कर गुजरात की आधी आमदनी उसे दी जाय। जब रत्नसिंह को मोमिनखां की गुजरात में नियुक्ति होने की सूचना मिली तो उसने महाराजा को पत्र लिखकर इस विषय में उसकी आज्ञा जाननी चाही। इस बीच उसने कई मुसलमान अफ़सरों को खंभात में इस उद्देश्य से भेजा कि वे मोमिनखां को तब तक कुछ करने से रोके रहें, जब तक महाराजा के पास से उत्तर न आ जाय। महाराजा का रत्नसिंह के पास यह उत्तर पहुंचा कि वह भरसक मोमिनखां का विरोध करे। तदनुसार रत्नसिंह ने अहमदाबाद की रक्षा करने की तैयारी की। मोमिनखां अपनी फ़ौज के साथ नारणकेसर नामक झील के पास जाकर ठहरा। डेढ़ मास तक वहां रहने के बाद वह सोजत्रा गया, जहां जवांमर्दखां बाबी उसके शामिल हो गया। फिर

महाराजा से गुजरात का सूबा हटाया जाना

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १६४।

ता० १ जमादिउल्अव्वल (भाद्रपद सुदि ३ = ता० २७ अगस्त) को वह जवांमर्दखां एवं रंगोजी के साथ मय तोपखाने और लश्कर के वात्रक नदी से आगे बढ़ा। अहमदाबाद के निकट कांकरिया तालाब पर डेरा कर उसने नैनपुरी की गढ़ी पर अधिकार कर लिया। अनन्तर कालूपुर दरवाज़े के सामने जवांमर्दखां, सारंगपुर दरवाज़े के सामने सीदी बशीर की मस्जिद में मीर अबुल्कासिम, अस्तोड़िया दरवाज़े के सामने नुरुल्ला तथा अफ़ज़लपुर में मलिक ज़ुम्मी रक्खे गये और जमालपुर से लगाकर साबरमती के किनारे तक का भाग मुहम्मद मोमिन बख़्शी तथा रंगोजी के सिपुर्द किया गया। भंडारी ने अपनी रक्षा के लिए दरवाज़ों को ईंटों से चुनवा दिया।

उन्हीं दिनों मोमिनखां के प्रबन्धकर्त्ता विजयराम ने, जो सोनगढ़ से दामाजी को लाने के लिए भेजा गया था, लौटकर सूचना दी कि वह शीघ्र ही शामिल होगा। जोरावरखां भी बुला लिया गया। इसी बीच सूरत में महाराजा के प्रतिनिधियों-द्वारा भेजी गई तोपें मोमिनखां के सैनिकों ने छीन लीं। दूसरी बार जब फिर रत्नसिंह ने महाराजा को मोमिनखां के अहमदाबाद पर चढ़ आने की खबर दी तो वह नाराज़ हो कर बादशाह के सामने से चला गया। इसपर कई सरदारों ने शंकित हो-कर उसे वापिस बुलवा लिया और बादशाह पर दबाव डालकर गुजरात की सूबेदारी पुनः उस (अभयसिंह) के नाम करा दी। लेकिन गुप्त रूप से मोमिनखां को कहलाया गया कि वह महाराजा की नियुक्ति की उपेक्षा कर भंडारी को अहमदाबाद से हटाने में प्रयत्नशील रहे। फलतः उसने [illegible] के साथ अपना कार्य जारी रक्खा। इसी बीच बादशाह के पास से दूसरा आज्ञापत्र पहुंचा, जिसके द्वारा महाराजा की पुनर्नियुक्ति की पुष्टि की गई थी और फ़िदाउद्दीनखां को ५०० आदमियों के साथ नगर की रक्षा [illegible] मोमिनखां को तत्काल [illegible] को लिखा गया था। इसके [illegible] यह भी लिखा था कि चूंकि रत्नसिंह भंडारी ने अत्याचार [illegible] अतएव उसके स्थान में किसी दूसरे व्यक्ति की नियुक्ति [illegible] मोमिनखां को अब [illegible]

आज्ञापत्र का आशय बतलाया गया तो उसने इस शर्त पर खंभात जाना स्वीकार किया कि रत्नसिंह अभयकरण को कार्य-भार सौंपकर नगर का परित्याग करे और फ़िदाउद्दीनखां को अपने आदमियों-सहित नगर में प्रवेश करने की इजाज़त दे; परन्तु रत्नसिंह ने इसको न माना और नगर में रह-कर अन्त तक अपनी रक्षा करने का निश्चय किया। इसी बीच ईसनपुर में दामाजी मोमिनखां के शामिल हो गया। रत्नसिंह को जब दामाजी और मोमिनखां के बीच की शर्त का पता चला तो उसने दामाजी के पास सन्देशा भेजा कि अगर आप मेरा साथ दें तो मैं सारे सूबे की आमदनी देने तथा अपने प्रमुख व्यक्तियों को ओल में भेजने के लिए भी प्रस्तुत हूं। दामाजी ने यह सन्देश मोमिनखां को दिखाकर कहा कि अब क्या कहते हो? लाचार उसे भी उतना ही देना स्वीकार करना पड़ा, लेकिन खंभात के एवज़ में उसने सम्पूर्ण वीरमगांव का इलाका देने की शर्त की। इसके फलस्वरूप दामाजी ने रत्नसिंह से बातचीत बन्द कर दी। अनन्तर दामाजी दूदेसर (Dudesar) की यात्रा को गया, जहां से लौटने पर वह और रंगाजी अहमदाबाद की विजय में लगे। उनकी प्रबल शक्ति देखकर एकबार मोमिनखां का दिल भी दहल गया, क्योंकि उसे निश्चय हो गया कि एकबार मरहटों का उधर क़दम जम जाने पर उन्हें निकालना कठिन ही होगा। ऐसी दशा में उसने "मीरात-इ-अहमदी" के कर्ता को इसलिए रत्नसिंह के पास भेजा कि वह उसे बिना मार-काट के चले जाने के लिए समझावे, पर रत्नसिंह इसके लिए राज़ी न हुआ। कुछ समय बाद कायमअलीखां आदि की अध्यक्षता में मुसलमानों तथा बापूराव की अध्यक्षता में मरहटों ने एक-दम आक्रमण कर अहमदाबाद पर अधिकार करने का यत्न किया, पर एक भीषण लड़ाई के बाद उन्हें पीछे हटना पड़ा। मोमिनखां के घेरे की सख़्ती के कारण शहर के लोगों के पास घास दाना पहुंचना बन्द हो गया और किले के रक्षकों का कार्य कठिन हो गया। इस प्रकार कष्टमय जीवन व्यतीत करते हुए मारवाड़ियों ने जैसे-तैसे डेढ़ मास का समय बिताया। ऐसी परिस्थिति में भंडारी ने अपने जमींदारों एवं सरदारों को बुलाकर

उनसे राय की। उन्होंने कहा कि गत नौ मास के बीच किले की रक्षा के जो-जो उपाय हो सकते थे हमने किये। महाराजा के पास से आज्ञापत्र तो आते हैं, परन्तु किसी प्रकार की दूसरी मदद अथवा ख़ज़ाना नहीं आता। बरसात का मौसिम भी निकट है और शहर के घास-दाने एवं युद्ध सामग्री की स्थिति भी स्पष्ट ही है। इन सब बातों पर दृष्टि रखते हुए उनकी सलाह के अनुसार भंडारी ने हि० स० ११५० (वि० सं० १७६४ = ई० स० १७३७) के मोहर्रम मास के अन्त में नीचे लिखी शर्तों पर सुलह करने का पैग़ाम मोमिनख़ां के पास भिजवाया—

(१) सिपाहियों की तनख़्वाहें, जो बाक़ी रह गई हैं, मोमिनख़ां चुकावे।

(२) सामान ले जाने के जानवर, जो नष्ट हो गये हैं, उनकी पूर्ति मोमिनख़ां करे।

सुलह के लिये भेजे गये लोगों ने परस्पर बातचीत कर यह तय किया कि मोमिनख़ां एक लाख रुपया नक़द देगा और सामान ले जाने के साधनों का प्रबंध कर देगा। साथ ही पूरे रुपयों की पहुंच तथा सामान भिजवाने एवं जब तक मारवाड़ी मार्ग में रहें तबतक के लिए फ़िदाउद्दीनख़ां और मुहम्मद मोमिन भंडारी के पास ओल मे रहेंगे। इन सब बातों के तय हो जाने पर उसका आधा मरहटों ने देना तय किया। अनन्तर भंडारी ने जाने की तैयारी की और नई-पुरानी तोपें, बाकी बचा हुआ बारूद गोला, मुबारिज़ुलमुल्क से मिला हुआ सामान एवं माहाराजा-द्वारा सूरत से लाकर खम्भात में लगाई गई तोपें आदि साथ लेकर ता० ६ सफ़र (ज्येष्ठ सुदि ७ = ता० २५ मई) को सूर्यास्त होते-होते हाजीपुर की बुर्ज के पास के ईडर दरवाज़े से जोधपुर जाने के लिये भंडारी बाहर निकला और उसने दरवाज़ों की चाबियां मोमिनख़ां को सौंप दीं। उसी रात्रि को मोमिनख़ां की तरफ से मुहम्मद यूसुफ शहर का कोतवाल नियत हुआ[१]।

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १९५-२३६। कैम्पबेल, गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी, भाग १, खंड १, पृ० ३१८-२०। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है। उससे पाया जाता है कि

उसी वर्ष शाही अधिकारी खानदौरां से नाराज़गी हो जाने के कारण महाराजा ने बादशाह से स्वदेश जाने की आज्ञा प्राप्त की। भंडारी अमरसिंह ने इस अवसर पर बीच में पड़कर खानदौरां से उसका मेल कराकर सांभर की फ़ौजदारी उसके नाम करा दी। अनन्तर महाराजा रेवाड़ी पहुंचा, जहां से वह सांभर होता हुआ अजमेर जाकर आनासागर की पाल के महलों में ठहरा। वहां एक बरस तक निवास करने के बाद वह वि० सं० १७८४ आश्विन सुदि १० (ता० २२ सितम्बर) को वहां से प्रस्थान कर मेड़ते गया। वहां रहते समय उसने बख़्तसिंह को नागोर से बुलवाया, जो गांव सोगावा में उससे शरीक हुआ। उससे सलाहकर महाराजा ने लगभग सारे भंडारियों को कैद करवा दिया और राज्य-कार्य कायस्थों को सौंपा। अनन्तर उसने पचोली रामकिशन को भिणाय की तरफ भेजा, जिसने गौड़ अमरसिंह से राजगढ़ तथा सावर के शक्तावतों से बटियाली और पीपलाज खाली करा लिये। पीछे से जयपुर के साह नानकदास के बीच में पड़ने से परस्पर मेल हो गया। इसके बाद बख़्तसिंह तो नागोर गया और महाराजा

महाराजा का जोधपुर जाना

डेढ़-दो वर्ष तक लड़ाई होने के बाद भारबरदारी लेकर रत्नसिंह ने नगर ख़ाली कर दिया (जि० २ पृ० १४० [illegible])।

'मिरातुल अहमदी' से यह भी पाया जाता है कि वह [illegible] रहते समय [illegible] ने धन एकत्र करने के लिए अहमदाबाद के निवासियों पर [illegible] के अत्याचार किये जिससे उनकी हालत [illegible] हो गई [illegible] हिंदुस्तानियों [illegible] जो [illegible] रहा करते थे और [illegible] धनवान [illegible] कुओं के बनवाने में बहुत धन खर्च करने [illegible] शुबहा होने से [illegible] ने उसपर [illegible] फतहुल्ल [illegible] क़ैद करवा दिया [illegible] उसका पुत्र भी क़ैद कर [illegible] उसके पुत्र [illegible] और उनके घर [illegible] तरह [illegible] ज़ानखान [illegible] तब वह [illegible]

जोधपुर[1]।

कुछ ही समय बाद महाराजा अभयसिंह और उसके भाई वख़्तसिंह के बीच अनबन होजाने के कारण अभयसिंह ने फ़ौज के साथ जाकर उस-(वख़्तसिंह) के इलाके की सीमा के पास डेरा किया। वख़्तसिंह को अकेले अपने भाई का सामना करने की सामर्थ्य न थी, जिससे उसने बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह से मेल की बात-चीत शुरू की। जब अभयसिंह को इस रहस्य की खबर मिली तो वह तत्काल जोधपुर लौट गया[2]।

वख़्तसिंह तथा बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह में मेल होना

वि० सं० १७९६ (ई० स० १७३९) में जोधपुर की चढ़ाई बीकानेर पर हुई। भंडारी तथा मेड़तिये आदि दस हज़ार फ़ौज के साथ बीकानेर राज्य में प्रवेशकर उपद्रव करने लगे। पंचोली लाला, अभयकरण दुर्गादासोत तथा कनीराम रामसिंहोत-(आसोप) भी एक बड़ी सेना के साथ फलोधी के मार्ग से कोलायत पहुंचे। तीसरी सेना पुरोहित जगन्नाथ तथा साईंदासोत लालसिंह की अध्यक्षता में बीकानेर पहुंच गई। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है वख़्तसिंह तथा जोरावरसिंह में मेल की बात-चीत पहले ही शुरू हो गई थी और उसने बारहट दलपत को इस विषय में बात करने के लिए जोरावरसिंह के पास भेजा था, परन्तु जोरावरसिंह को विश्वास न होता

महाराजा अभयसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १४६-८। उक्त ख्यात में एक जगह यह भी लिखा मिलता है कि उसी समय के आस-पास, जब बीकानेर का स्वामी जोरावरसिंह गोपालपुर की गढ़ी में था, वख़्तसिंह ने चढ़ाई कर उस गढ़ी को घेर लिया। महाराजा की आज्ञा प्राप्त होने पर भंडारी ममरूप, भंडारी विजयराज आदि भी जाकर उसके शरीक हो गये। पीछे से कुछ रुपये देने और कांधलोत लालसिंह को चाकरी के लिए भेजने की शर्त पर सन्धि हो गई तथा ख़रबूजी की पट्टी बीकानेर के महाराजा ने वख़्तसिंह को दे दी (जि० २, पृ० १४७)। इस घटना में कितना सत्य है यह कहना कठिन है, क्योंकि इसका उल्लेख बीकानेर राज्य के इतिहास में नहीं मिलता।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६३। पाउलेट कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट' में भी इसका उल्लेख है।

था, जिससे उसने प्रतीति के लिए प्रमाण मांगा। बख़्तसिंह ने तत्काल मेड़ते पर अधिकार कर अपनी सत्यता का प्रमाण दिया। इसके पश्चात् दोनों में मेल हो गया। तब महाराजा ज़ोरावरसिंह ने कुशलसिंह (भूकरका), दौलतराम अमरावत चौका (महाजन का प्रधान) आदि को बख़्तसिंह के पास भेजा, जिन्होंने वापस आकर बख़्तसिंह और अभयसिंह के बीच वास्तव में फूट पड़ जाने की बात उससे कही। अनन्तर मेहता बख़्तावर-सिंह के अर्ज़ करने पर मेहता मनरूप, एवं सिंढायच अजबराम बख़्तसिंह के पास भेजे गये, जिन्होंने जाकर उससे अभयसिंह की चढ़ाई का सारा हाल बतलाया। इसपर बख़्तसिंह ने ज़ोरावरसिंह के पास लिख भेजा कि आप निश्चिंत रहें मैं यहां से जोधपुर पर चढ़ाई करता हूं, जिससे वाध्य होकर अभयसिंह को अपनी सेना को वापस बुला लेना पड़ेगा परन्तु आप मेरे साथ विश्वासघात न कीजियेगा। ज़ोरावरसिंह की इच्छा स्वयं बख़्त-सिंह की सहायतार्थ जाने की थी परन्तु अपनी आकस्मिक बीमारी के कारण उसे रुक जाना पड़ा और बख़्तावरसिंह आठ हज़ार सेना के साथ भेजा गया। इसके बाद बख़्तसिंह कापरड़ा पहुंचा तथा अभयसिंह बीसल-पुर। जहां युद्ध की तैयारी हुई पर लड़ाई न हुई और अभयसिंह ने अपने प्रधानों को भेजकर बख़्तसिंह से सन्धि कर ली। इस सन्धि के अनुसार मेड़ता वापस अभयसिंह को मिल गया और जालोर की मरम्मत के तीन लाख रुपये उसे बख़्तसिंह को देने पड़े। तदनन्तर बख़्तसिंह नागोर चला गया जहां से उसने बीकानेर के सरदारों को सिरोपाव देकर विदा किया[1]।

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६६-७। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५८। [illegible] हैं। जोधपुर राज्य की ख्यात में [illegible] पर नाम लिखा वर्णन मिलता है।

[illegible]

बीकानेर पर चढ़ाई करने में पिछली बार सफल न होने का ध्यान महाराजा अभयसिंह के हृदय में बना ही रहा। वि० सं० १७९७[1] (ई० स० १७४०) में उसने बीकानेर के विद्रोही ठाकुरों—ठाकुर लालसिंह (भाद्रा), ठाकुर संग्रामसिंह (चूरू) तथा ठाकुर भीमसिंह (महाजन)—के साथ मिलकर पुनः बीकानेर पर चढ़ाई कर दी। देशणोक पहुंचकर उसने करणीजी का दर्शन किया और वहां के चारणों से अपने आपको उसी तरह संबोधन करने को कहा, जिस तरह वे अपने स्वामी (बीकानेर के राजा) को करते थे, परन्तु उन्होंने ऐसा न किया। अनन्तर उसने बीकानेर (नगर) में प्रवेश कर तीन पहर तक लूट की जिससे लगभग एक लाख रुपये की संपत्ति उसके हाथ लगी। नगर की लूट का समाचार सुनकर कुंवर गजसिंह एवं रावल रायसिंह कितने ही साथियों के साथ विरोधी दल का सामना करने को आये, परन्तु महाराजा जोरावरसिंह ने उन्हें भी गढ़ के भीतर बुलवा लिया। महाराजा अभयसिंह का डेरा लक्ष्मीनारायण के मंदिर के निकट पुराने गढ़

अभयसिंह की बीकानेर पर दूसरी चढ़ाई

और उसने श्रावणादि वि० स० १७८५ (चैत्रादि १७८६ = ई० स० १७२९) के आषाढ मास मे मेड़ता पर चढ़ाई की। इसपर महाराजा ने जैतसिंह सूरसिंहोत (मेड़तिया) तथा बोरूदावाले ठाकुर को उसे समझाने के लिए भेजा, परन्तु उसने उनकी बात नहीं मानी और आगे बढ़ता हुआ भाद्रपद मास में वह गाव चादेलाव में पहुंचा। महाराजा भी कूचकर गांव बीसलपुर में पहुचा। महाराजा के पास बड़ी फ़ौज थी और उसके सरदार लड़ाई करने के इच्छुक थे, पर महाराजा ने एक पत्र लिख कर उन्हें ऐसा करने से मना कर दिया। अनन्तर बख़्तसिंह बिना लड़े वहा से कूचकर नागोर चला गया। पाच-सात दिन बाद महाराजा ने भी बीसलपुर से कूच किया। मार्गशीर्ष मास में गांव छिलोड़ी में बख़्तसिंह महाराजा से मिला (जि० १, पृ० १४८-९)।" उपर्युक्त वर्णन से भी दोनों भाइयों के बीच मनमुटाव होना सिद्ध है।

(१) दयालदास की ख्यात में वि० स० १७९६ का प्रारम्भ दिया है (जि० २, पत्र ६४), जो ठीक नहीं है क्योंकि उक्त संवत् के फाल्गुन मास तक तो ठाकुर भीमसिंह (महाजन) का राज्य का पक्षपाती रहना उसी ख्यात से सिद्ध है। जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार यह चढ़ाई श्रावणादि वि० सं० १७९६ (चैत्रादि १७९७) के वैशाख मास में हुई (जि० २, पृ० १४९), जो ठीक जान पड़ता है।

के खंडहरों की तरफ़ था। अनूपसागर कुएं के पास उसकी सेना के कर्म-सोतों, देपालदासोतों एवं पृथ्वीराजोतों का मोर्चा था। दूसरा मोर्चा उसी कुएं की पूर्वी ढाल पर मनरूप जोगीदासोत तथा देवकर्ण भागचन्दोत आदि मंडलावतों का था, तीसरा मोर्चा दंगल्या (दगली साधुओं के अखाड़े) के स्थान पर कूंपावत रघुनाथ (रामसिंहोत) और जोधा शिवसिंह (जूनियां) का था तथा दूसरी तरफ़ पीपल के वृक्षों के नीचे तोपें, पैदल सेना, रिसाला, भाटी हठीसिंह उरजनोत, पाता जोगीदास मुकुन्ददासोत मेड़तिया जैमलोत, सांवलदास एवं पंचोली लाला आदि थे। अन्य जोधपुर के सरदार भी उपयुक्त स्थानों पर नियुक्त थे। सूरसागर पूर्णरूप से आक्रमणकारियों के हाथ में था एवं गिन्नाणी तालाब पर भाद्रा का विद्रोही ठाकुर लालसिंह तथा अनेक राठोड़ एवं भाटी आदि थे। उधर गढ़ के भीतर सारे चीका, बीदावत व रावतोत सरदार आदि महाराजा जोरावरसिंह की सेवा में गढ़ की रक्षार्थ उपस्थित थे और सारी सेना का संचालन भूकरका के ठाकुर कुशलसिंह के हाथ में था। तोपों के गोलों की लगातार वर्षा से गढ़ का बहुत नुकसान हो रहा था। मुख्यत. "शंभुबाण" नाम की एक तोप तो क्षण क्षण पर अपनी भयङ्करता का परिचय दे रही थी। उसको नष्ट करना अत्यन्त आवश्यक था अतएव कुंवर गजसिंह की आज्ञानुसार एक पड़िहार ने "रामचंगी' तोप के सहारे अंत में उसका नाश कर दिया[1], जिससे जोध-पुरवालों का एक प्रबल नाशकारी शस्त्र बेकार हो गया। अनन्तर खवास अजबसिंह आनन्दरामोत तथा पड़िहार चैतसिंह भोजराजोत, भाद्रा के ठाकुर लालसिंह के पास उसे अपनी तरफ़ मिलाने के लिए गये। पीछे से महाराजा जोरावरसिंह भी गुप्त रूप से उससे मिला, परन्तु इसका कोई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि "शंभुबाण" तोप वहां नष्ट नहीं हुई, वरन् धनपतसिंह का घेरा उठने के बाद पचोलों [illegible] तथा पुरोहित [illegible] उसको अपने साथ ले जा रहे थे, उस समय बैलों के थक जाने से उन्होंने उसे एक दूसरी तोप के साथ भूमि में गाड़ दिया। पीछे से उसे खुदवाकर मंगवाया गया (जि० २, पृ० १२०)।

बीकानेर पर चढ़ाई करने में पिछली बार सफल न होने का ध्यान महाराजा अभयसिंह के हृदय में बना ही रहा। वि० सं० १७९७[1] (ई० स० १७४०) में उसने बीकानेर के विद्रोही ठाकुरों—ठाकुर लालसिंह (भाद्रा), ठाकुर संग्रामसिंह (चूरू) तथा ठाकुर भीमसिंह (महाजन)—के साथ मिलकर पुनः बीकानेर पर चढ़ाई कर दी। देशणोक पहुंचकर उसने करणीजी का दर्शन किया और वहां के चारणों से अपने आपको उसी तरह संबोधन करने को कहा, जिस तरह वे अपने स्वामी (बीकानेर के राजा) को करते थे, परन्तु उन्होंने ऐसा न किया। अनन्तर उसने बीकानेर (नगर) में प्रवेश कर तीन पहर तक लूट की जिससे लगभग एक लाख रुपये की संपत्ति उसके हाथ लगी। नगर की लूट का समाचार सुनकर कुंवर गजसिंह एवं रावत रायसिंह कितने ही साथियों के साथ विरोधी दल का सामना करने को आये, परन्तु महाराजा जोरावरसिंह ने उन्हें भी गढ़ के भीतर बुलवा लिया।

अभयसिंह की बीकानेर पर दूसरी चढ़ाई

महाराजा अभयसिंह का डेरा लक्ष्मीनारायण के मंदिर के निकट पुराने गढ़

और उसने श्रावणादि वि० सं० १७८५ (चैत्रादि १७८६ = ई० स० १७२९) के आषाढ मास में मेड़ता पर चढ़ाई की। इसपर महाराजा ने जीतसिंह सूरसिंहोत (मेड़तिया) तथा [illegible] ठाकुर को उसे समझाने के लिए भेजा, परन्तु उसने उनकी बात नहीं मानी और आगे बढ़ता हुआ भाद्रपद मास में वह गांव [illegible] में पहुंचा। महाराजा भी कूचकर गांव वीसलपुर में पहुंचा। महाराजा के पास बड़ी फौज थी और उसके सरदार लड़ाई करने के इच्छुक थे, पर महाराजा ने एक पत्र लिखकर उन्हें ऐसा करने से मना कर दिया। अनन्तर बख़तसिंह बिना लड़े वहां से कूचकर नागोर चला गया। पांच सात दिन बाद महाराजा ने भी वीसलपुर से कूच किया। [illegible] मास में गांव [illegible] में बख़तसिंह महाराजा से मिला (जि० २, पृ० १२८-९)।" उपर्युक्त बयान से भी दोनों भाइयों के बीच मनमुटाव होना सिद्ध है।

(१) दयालदास की ख्यात में वि० सं० १७९६ का आरम्भ दिया है (जि० २, पत्र [illegible]), जो ठीक नहीं है क्योंकि उक्त संवत् के फाल्गुन मास तक तो ठाकुर [illegible] [illegible] [illegible] उसी ख्यात से सिद्ध है। [illegible] [illegible] आषाढ़ादि वि० सं० १७९६ (चैत्रादि १७९७) के [illegible] [illegible]

के खंडहरों की तरफ था। अनूपसागर कुएं के पास उसकी सेना के कर्मसोतों, देपालदासोतों एवं पृथ्वीराजोतों का मोर्चा था। दूसरा मोर्चा उसी कुएं की पूर्वी ढाल पर मनरूप जोगीदासोत तथा देवकर्ण भागचन्दोत आदि मंडलावतों का था, तीसरा मोर्चा दंगल्या (दगली साधुओं के अखाड़े) के स्थान पर कूंपावत रघुनाथ (रामसिंहोत) और जोधा शिवसिंह (जूनियां) का था तथा दूसरी तरफ पीपल के वृक्षों के नीचे तोपें, पैदल सेना, रिसाला, भाटी हठीसिंह उरजनोत, पाता जोगीदास मुकुन्ददासोत मेड़तिया जैमलोत, सांवलदास एवं पंचोली लाला आदि थे। अन्य जोधपुर के सरदार भी उपर्युक्त स्थानों पर नियुक्त थे। सूरसागर पूर्णरूप से आक्रमणकारियों के हाथ में था एवं गिन्नाणी तालाब पर भाद्रा का विद्रोही ठाकुर लालसिंह तथा अनेक राठोड़ एवं भाटी आदि थे। उधर गढ़ के भीतर सारे बीका, बीदावत व रावतोत सरदार आदि महाराजा जोरावरसिंह की सेवा में गढ़ की रक्षार्थ उपस्थित थे और सारी सेना का संचालन भूकरका के ठाकुर कुशलसिंह के हाथ में था। तोपों के गोलों की लगातार वर्षा से गढ़ का बहुत नुकसान हो रहा था। मुख्यतः "शंभुबाण" नाम की एक तोप तो क्षण-क्षण पर अपनी भयङ्करता का परिचय दे रही थी। उसको नष्ट करना अत्यन्त आवश्यक था अतएव कुंवर गजसिंह की आज्ञानुसार एक पड़िहार ने 'रामचंगी' तोप के सहारे अंत में उसका नाश कर दिया[1], जिससे जोधपुरवालों का एक प्रबल नाशकारी शस्त्र बेकार हो गया। अनन्तर खवास अजबसिंह आनन्दरामोत तथा पड़िहार छैतसिंह भोजराजोत, भाद्रा के ठाकुर लालसिंह के पास उसे अपनी तरफ मिलाने के लिए गये। पीछे से महाराजा जोरावरसिंह भी गुप्त रूप से उससे मिला, परन्तु इसका कोई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि "शंभुबाण" तोप वहां नष्ट नहीं हुई, वरन् भीमसिंह का घेरा उठने के बाद पंचोली लाला तथा पुरोहित जग्गा उसको अपने साथ ले जा रहे थे, उस समय बैलों के थक जाने से उन्होंने उसे एक दूसरी तोप के साथ भूमि में गाड़ दिया। पीछे से उसे खुदवाकर मंगवाया गया (जि० २, पृ० १२०)।

परिणाम न निकला।

युद्ध दिन-दिन उग्र रूप धारण कर रहा था। इसी बीच नागोर से बख़्तसिंह का भेजा हुआ केलण दूदा एक पत्र लेकर आया और उसने निवेदन किया कि मेरे स्वामी ने कहलाया है कि आप निश्चिन्त होकर गढ़ की रक्षा करें और अपना एक आदमी मेरे पास भेज दें ताकि सहायता का समुचित प्रबन्ध किया जाय। जोरावरसिंह ने उस समय इसपर कुछ ध्यान न दिया। कुछ दिनों पश्चात् दूसरा मनुष्य बख़्तसिंह के पास से आने पर आनन्दरूप उसके पास भेजा गया, जिसने जाकर निवेदन किया कि गढ़ में सामग्री तो बहुत है, परन्तु बाहर से सहायता प्राप्त हुए बिना विजय पाना असम्भव है[1]। बख़्तसिंह ने उत्तर में कहलाया कि मैं तन-धन दोनों से तुम्हारी सहायता के लिए प्रस्तुत हूं। फिर उसी के परामर्शानुसार आनंदरूप, [illegible] कल्याणदास के साथ जयपुर के सवाई जयसिंह के पास से सहायता प्राप्त करने के लिए भेजा गया, परन्तु जयसिंह को बख़्तसिंह की तरफ़ से कुछ सन्देह था, जिससे इसने कहलाया कि पहले आप मेड़ता [illegible] निश्चय आ सका। यह संदेशा प्राप्त होते ही मेड़ता पर अधिकार कर बख़्तसिंह ने अपनी सच्चाई का प्रमाण दिया[2]। कुछ समय बाद आनंदरूप ने [illegible] कि आपने सहायता देना तो स्वीकार कर ही

[1] [illegible]

[2] [illegible]

लिया है, अब आप इस आशय का एक पत्र बीकानेर लिख दें। जयसिंह ने उसी समय महाराजा जोरावरसिंह के नाम खरीता लिख दिया और हंसी में उससे पूछा कि तुम्हारी करणीजी और लक्ष्मीनारायणजी इस अवसर पर कहां चले गये? चतुर आनन्दरूप ने तुरत उत्तर दिया कि उनका आवेश इस समय आप में ही हो गया है, क्योंकि आप हमारी सहायता के लिए तैयार हो गये हैं। जयसिंह आनन्दरूप की इस अनूठी उक्ति से अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इसी अवसर पर उसके पास सूचना पहुंची कि बादशाह मुहम्मदशाह[1] के पास से इस आशय का पत्र बीकानेर आया है कि यदि वहां अभयसिंह का अधिकार हो गया तब भी वह बाहर निकाल दिया जायगा, जिसके पाने से बीकानेरवालों में नई स्फूर्ति एवं साहस का संचार हो गया है।

अनन्तर जयसिंह ने बीस हज़ार सेना के साथ राजामल खत्री को जोधपुर पर भेजा। बख़्तसिंह उस समय मेड़ते के पास गांव आलोड़े में था तथा मेड़ता में अभयसिंह की तरफ़ के पंचोली मेहकरण आदि दस हज़ार फ़ौज के साथ थे। राजामल के आने का समाचार मिलते ही उन्होंने बख़्तसिंह पर हमला किया, परन्तु उनको विजय प्राप्त न हुई। पीछे से राजामल भी बख़्तसिंह के शामिल हो गया। जयसिंह ने स्वयं अबतक इस लड़ाई में कोई भाग नहीं लिया था। जब बार-बार उससे आग्रह किया गया तो उसने इस विषय में अपने सरदारों से राय ली। अधिकांश लोगों की तो यह राय थी कि अभयसिंह उसका संबंधी (जामाता) है, दूसरे इस युद्ध में अपरिमित धन व्यय होगा, अतएव चढ़ाई करना युक्तिसंगत नहीं है। शिवसिंह (सीकर) ने कहा कि जोधपुर का बीकानेर पर अधिकार होना पड़ोसी राज्यों के लिए हानिकारक सिद्ध होगा, इसलिए शुरू में ही इसका कोई उपाय करना ठीक है। जयसिंह के मन में भी उसकी

---

(१) दयालदास ने इसके स्थान में अहमदशाह लिखा है, जो ठीक नहीं है, क्योंकि उस समय दिल्ली के तख़्त पर मुहम्मदशाह ही था।

बात बैठ गई और उसने तीन लाख सेना के साथ जोधपुर पर चढ़ाई कर दी[1]। जब अभयसिंह को इस चढ़ाई की सूचना मिली तो उसने जयपुर आदमी भेजकर वहां के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को बीकानेर के साथ सन्धि करा देने के लिये बुलाया। अभयसिंह यह चाहता था कि यदि बीकानेर वाले झुक जायं तो वह वापस चला जाय, परन्तु जब बीकानेरवालों ने उसकी अपमानजनक शर्त स्वीकार न की और स्पष्ट कहला दिया कि हमारी ओर से उत्तर जयसिंह देगा तो अभयसिंह को इतने दिनों के परिश्रम के बाद भी निराश होकर लौट जाना पड़ा। इस अवसर पर लौटती हुई जोधपुर की सेना को बीकानेर की फ़ौज ने बुरी तरह लूटा[2]।

जयसिंह के साथ सन्धि होना

अभयसिंह भागा-भागा एक हज़ार सवारों के साथ जोधपुर पहुंचा, क्योंकि जयसिंह की तरफ़ से उसे पूरा-पूरा भय था, परन्तु जयसिंह उस समय तक मार्ग में ही था। उसका वास्तविक उद्देश्य जोधपुर पर अधिकार करना न था। वह तो केवल अभयसिंह को बीकानेर से हटाना और उससे कुछ धन वसूलकर स्वदेश लौट जाना चाहता था। अभयसिंह के पहुंचते ही उससे २१ लाख

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी लिखा है कि जयसिंह ने यह सोचकर कि बीकानेर पर अधिकार कर लेने से अभयसिंह की शक्ति बढ़ जायगी, तत्काल उसे लिखा कि बीकानेर पर से घेरा उठा लो। जब उसने ऐसा न किया, तो उसने जोधपुर पर चढ़ाई कर दी (जि० २, पृ० १४६-५०)।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६४-६६। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ५०-१। "वीरविनोद" (भाग २, पृ० ५०२-३) में भी इस घटना का लगभग ऊपर जैसा ही वर्णन है।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कहीं-कहीं कुछ अन्तर के साथ यह घटना दी है (जि० २, पृ० १४६-५१)। इससे यह निश्चित है कि अभयसिंह की चढ़ाई जिस समय बीकानेर पर हुई थी, उस समय जयसिंह ने जोधपुर पर चढ़ाई की और बख़्तसिंह भी ज़ोरावरसिंह का सहायक हो गया, जिससे अभयसिंह को असफल होकर जोधपुर लौटना पड़ा।

रुपये वसूल कर वह वहां से लौट गया[1]। इस धन में से ११ लाख के तो वे आभूषण थे, जो जयसिंह ने अपनी पुत्री के अभयसिंह के साथ विवाह के अवसर पर उसे दिये थे, परन्तु जयसिंह ने यह कहकर उन्हें स्वीकार कर लिया कि अब ये जोधपुर की निजी सम्पत्ति हैं, अतएव इन्हें लेने में कोई दोष नहीं है[2]।

अपने भाई से मेलकर बख़्तसिंह का जयसिंह पर चढ़ाई करना

महाराजा जयसिंह की जोधपुर पर की विगत चढ़ाई में बख़्तसिंह को आशा हो गई थी कि इससे उसका जोधपुर की गद्दी पर अधिकार करने का स्वार्थ भी सिद्ध होगा, परन्तु जब जयसिंह केवल धन प्राप्त कर लौट गया तो उसकी सारी आशा धूल में मिल गई। वह जयसिंह का विरोधी बन गया और उसने अपने भाई से मेल कर लिया। अनन्तर उसने ससैन्य ढूंढाड़ (जयपुर राज्य) पर चढ़ाई की। यह ख़बर जयसिंह को मिलने पर वह धौलपुर से फ़ौज के साथ उसका सामना करने को गया। गंगवाणा नामक स्थान में दोनों का सामना हुआ। कुछ देर की

---

(१) "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि महाराणा जगतसिंह (दूसरा) ८०००० सेना के साथ जयसिंह की सहायतार्थ उदयपुर से रवाना होकर पुष्कर तक पहुंच गया था। वहां उसे यह ख़बर मिली कि अभयसिंह ने जयसिंह से सन्धि कर ली है। इसपर वह पुष्कर से ही उदयपुर लौट गया (चतुर्थ भाग, पृ० ३२९८-३३०१)। "वीरविनोद" से पाया जाता है कि महाराणा ने जयसिंह द्वारा इस अवसर पर सहायता मंगवाये जाने पर सलूंबर के रावत केसरीसिंह को सेना के साथ भेज दिया था (भाग २, पृ० १२२४)। उसी पुस्तक से यह भी पाया जाता है कि जयसिंह ने अन्य कितने ही राजाओं को भी अपनी सहायतार्थ बुलाया था, जिनसे महाराणा ने मुलाक़ात की।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६६-७। पाउलेट्; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ५१।

जोधपुर राज्य की ख्यात में २० लाख रुपया देना लिखा है और उससे पाया जाता है कि भण्डारी रघुनाथ ने मध्यस्थ बन यह सन्धि कराई थी (जि० २, पृ० १५१)। "वीरविनोद" (भाग २ पृ० ८४८) तथा 'वंशभास्कर' (चतुर्थ भाग, पृ० ३३००) में भी २० लाख रुपया ही दिया है।

लड़ाई के बाद जयसिंह ने बख़्तसिंह को भगा दिया। अभयसिंह उस समय आलणियावास में था। बख़्तसिंह उसके पास चला गया। जयसिंह ने अजमेर पहुंचकर अभयसिंह को युद्ध की चुनौती दी, पर भंडारी रघुनाथ ने बीच में पड़कर मेल करा दिया। अनन्तर जयसिंह ने मेहता आनन्दरूप से कहा कि तुम अपने स्वामी (महाराजा जोरावरसिंह) को लिखो कि वह नागोर पर चढ़ाई करे और शीघ्र आकर मुझसे मिले। जोरावरसिंह उस समय चूरू में था। यह समाचार वहां पहुंचने पर उसने नागोर पर आक्रमण कर वहां का बड़ा बिगाड़ किया; परन्तु जयसिंह के पास वह न गया। कुछ समय बीत जाने पर जयसिंह ने फिर इस बारे में आनन्दरूप से कहा। तब आनन्दरूप स्वयं जोरावरसिंह के पास गया, पर जब उसने उसके प्रस्थान करने का विचार न देखा तो वह लौटकर जयसिंह के पास जाने के लिए रवाना हुआ, परन्तु मार्ग में ही पुष्कर के पास बसी गांव में उसका देहान्त हो गया। इसके बाद ही भंडारी रघुनाथ ने पूजा के सामान का हाथी तथा अन्य सामान आदि जयसिंह से पीछा बख़्तसिंह को दिलाया[1]।

ज़ोधपुर राज्य की ख्यात में इस लड़ाई का भिन्न वर्णन मिलता है, जो नीचे लिखे अनुसार है—

"एक दिन महाराजा अभयसिंह ने दुर्गादास के पौत्र अभयकरण को एक फूल भेंट किया। इसपर अभयकरण ने उत्तर दिया कि फूल या तो पगड़ी में लगाया जाता है या नाक से सूंघा जाता है, पर हमारी तो पगड़ी और नाक दोनों जयसिंह ले गया, अतएव हम फूल लेकर क्या करेंगे? यह सुनकर महाराजा ने उसी समय जयपुर पर चढ़ाई करने का प्रबन्ध किया और स्वयं राई का बाग़ में डेरा किया। वहां बख़्तसिंह के पास से लिखा हुआ आया कि आप अभयकरण को मेरे पास भिजवादें, मुझे कुछ अर्ज़ करनी है। उसके पहुंचने पर बख़्तसिंह ने उसके द्वारा कहलाया कि आप जालोर मुझे दे दें तो मैं मेड़ता छोड़ दूं और मेरे उपस्थित होने

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६७। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ५३। वीरविनोद, भाग २, पृ० १२२४।

पर मुझे २०० रुपया रोज़ दिया जाय तो मैं जयपुर जाकर जयसिंह से युद्ध करूं। इन दोनों बातों को महाराजा ने स्वीकार कर लिया। श्रावणादि वि० सं० १७८७ (चैत्रादि १७८८ = ई० स० १७३१) के ज्येष्ठ मास में महाराजा का डेरा वीसलपुर में हुआ, जहां अजमेर ज़िले के भिणाय, केकड़ी आदि के राजपूत सैनिक भी आकर उसके शरीक हो गये। महाराजा ने इसकी सूचना बख़्तसिंह को दी। अनन्तर मेड़ता में डेरा होने पर बख़्तसिंह ने महाराजा से कहा कि जहां भी जयसिंह मिलेगा, हम उससे युद्ध करेंगे। महाराजा-द्वारा जालोर दिये जाने पर बख़्तसिंह ने मेड़ता से अधिकार हटा लिया। वहां से चलकर महाराजा रीयां में ठहरा तथा बख़्तसिंह ने जाकर अजमेर पर अधिकार कर लिया। इसकी खबर मिलने पर आगरे से प्रस्थान कर जयसिंह गांव ऊंटड़ा में ठहरा। बख़्तसिंह गंगवाणा पहुंचा, जहां दोनों की सेनाओं में युद्ध हुआ[1]। जयसिंह के पास ५०००० फ़ौज थी, जिसमें शाहपुरा का राजा सीसोदिया उम्मेदसिंह[2] और भिणाय का ठाकुर हरोल में थे। बख़्तसिंह के पास केवल ५००० सेना थी, फिर भी वह बड़ी बहादुरी से लड़ा, यहां तक कि वह दो-तीन बार शत्रु सेना के एक छोर से दूसरे छोर तक निकल गया। इस लड़ाई में जयसिंह की फ़ौज के बहुतसे आदमी काम आये, साथ ही बख़्तसिंह के पक्ष के भी अधिकांश सैनिक मारे गये और केवल थोड़े से बच रहे। इसपर उस (बख़्तसिंह) के सरदार रजोत जोधा सरदारसिंह (दुगोली) ने उसको रणक्षेत्र का परित्याग करने पर मजबूर किया। जयसिंह के चढ़कर आने पर बख़्तसिंह ने अभयसिंह को सहायता को आने के लिए लिखा था, पर वह नहीं गया, क्योंकि पहले वह (बख़्तसिंह) जयसिंह को जोधपुर पर चढ़ा लाया था। पीछे से जब

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में इस [illegible] समय [illegible] वि० सं० १७८७ (चैत्रादि १७८८) आषाढ़ वदि [illegible] (ई० स० १७३१ ता० [illegible] मई) दिया है (जि० २, पृ० १२३)। 'वीरविनोद' में भी यही समय लिखा है (भाग २, पृ० ८३८)।

(२) इस युद्ध में उम्मेदसिंह के [illegible]

शाहपुरा के उम्मेदसिंह को दिया है[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस लड़ाई के पूर्व ही जोधपुर के कई सरदारों ने अजीतसिंह के पुत्र राजवी रत्नसिंह को, जो सलेमकोट में क़ैद था, जोधपुर का राज्य दिलाने के लिए जयसिंह को लिखा। इसपर उसने उन्हें अन्य सरदारों को फोड़कर अपने पक्ष में करने के लिए कहलाया, जिसपर उन्होंने सरदारों से मिलकर उन्हें अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न आरम्भ किया। फिर गंगवाणा की लड़ाई हुई, जिसके बाद जयसिंह का डेरा लाडपुरा में हुआ। भंडारी मनरूप उसके साथ ही था। उससे उसने कहा कि जोधपुर के कितने ही सरदार अपने पक्ष में हो गये हैं, अतएव अब तुम जाकर कार्य पूरा करो। भंडारी मनरूप ऊपर से तो विद्रोही सरदारों के शामिल हो गया था, परन्तु भीतर ही भीतर वह अभयसिंह का पक्षपाती था। गांव रीयां में, जहां अभयसिंह था, पहुंचने पर उसने षड्यन्त्र का सारा हाल उससे कह दिया और जयसिंह के सैनिकों के पहुंचने के पूर्व ही उससे जोधपुर का समस्त प्रबन्ध कर लेने को कहा[2]। महाराजा ने तत्काल विद्रोही सरदारों को गिरफ़्तार कर सब जगह अपने

जोधपुर पर क़ब्ज़ा करने का जयसिंह का विफल प्रयत्न

प्राप्त करनेवाले राजा को युद्ध क्षेत्र छोड़कर जाने का अपमान सहन करना पड़ा। उसी समय से यह प्रसिद्धि हुई कि एक राठोड़ दस कछवाहों के बराबर है (जि० २, पृ० १०४९-५१)। टॉड का उपर्युक्त कथन विश्वसनीय नहीं है। बहुधा उसने जो कुछ लिखा है, वह केवल सुनी सुनाई बातों के आधार पर ही है, जो अतिशयोक्तिपूर्ण होने के साथ ही काल्पनिक है। जयसिंह के पास बख़्तसिंह से कई गुना अधिक सैन्य होने पर भी उसका भागना माना नहीं जा सकता। 'वीरविनोद' (भाग २, पृ० ८६८) में भी जयसिंह का ही भागना लिखा है। उसमें भी लगभग ऊपर आई हुई बातों जैसा ही वर्णन है। सरकार-कृत "फ़ॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" (जि० १, पृ० २८१-२) में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है।

(१) चतुर्थ भाग, पृ० ३३१०-११।

(२) भंडारी मनरूप ने इस षड्यन्त्र के आरम्भ में ही महाराजा को सूचना करने का प्रयत्न किया था, पर उस समय वह उनसे मिला हुआ था।

दोनों भाई पुष्कर में मिले, तो इस विषय में बख़्तसिंह ने अपने भाई को बड़ा उपालम्भ दिया। कुछ समय के बाद अभयसिंह ने पुनः युद्ध की तैयारी की। जयसिंह उस समय गांव लाडपुरा में था, पर भंडारी रघुनाथ ने यह कहकर उसे ऐसा करने से रोक दिया कि इससे दोनों राज्यों की स्थिति कमज़ोर हो जायगी। उसी के प्रयत्न से जयसिंह के परबतसर, केकड़ी आदि सात परगने तथा बख़्तसिंह से छीना हुआ देव प्रतिमा का हाथी वापस देने की शर्त पर दोनों राजाओं में मेल हो गया। तब जयसिंह तो जयपुर चला गया और अभयसिंह मेड़ता, जहां उसका डेरा डूदासर तालाब पर हुआ। वहां रहते समय उसने जालोर का अधिकार बख़्तसिंह को दिया[1]।"

उपर्युक्त दोनों वर्णनों में कुछ भिन्नता अवश्य है, पर मुख्य घटना में कोई अन्तर नहीं है। अधिक संभव तो यही जान पड़ता है कि जोधपुर का राज्य मिलने का अपना स्वार्थ सिद्ध न होने के कारण ही बख़्तसिंह ने अपने भाई से मेलकर जयसिंह पर चढ़ाई की हो। सेना थोड़ी होने पर भी पहले उसने बड़ी वीरता दिखलाई, परन्तु अन्त में उसे हारकर भागना पड़ा। "वंशभास्कर" से भी पाया जाता है कि अपनी तरफ के ४७०० सैनिकों के मारे जाने पर बख़्तसिंह बचे हुए ३०० आदमियों के साथ नागोर चला गया। कछवाहों की सेना-द्वारा ठाकुर गिरधारी के मूर्ति के हाथी आदि के लूटे जाने का भी उसमें उल्लेख है और इस विजय का सारा श्रेय

(१) जि० २, पृ० १२२-४।

टॉड का वर्णन उपर्युक्त वर्णनों से पूर्णतया विपरीत है। वह लिखता है कि गंगवाणा नामक स्थान में बख़्तसिंह ने भीषण आक्रमणकर जयपुर की सेना का हर तरफ़ नाश करना शुरू किया। वह कई बार विपक्षी-दल के एक सिरे से दूसरे सिरे तक निकल गया, पर अन्त में उसके पास केवल ६० व्यक्ति ही रह गये। ऐसी अवस्था में गजसिंहपुरा के स्वामी ने उसे जंगल की तरफ़ चलने का इशारा किया, पर बख़्तसिंह ने आगे बढ़ने का आग्रह किया और उधर जयपुर का पचरंगा झंडा दिखाई पड़ते ही उसने पुनः आक्रमण करने की आज्ञा दी। इस अवसर पर चतुर कुंभाणी (कुंभा के वंशज) ने जयसिंह को युद्ध न करने की राय दी और उसे युद्ध-क्षेत्र छोड़कर लौट जाने पर बाध्य किया। इस प्रकार राजवाड़ा के परम शक्तिशाली, बुद्धिमान और सदैव सफलता

विं० सं० १८०१ (ई० स० १७४४) मे उदयपुर के महाराणा जगतसिंह (दूसरा) तथा कोटा के महाराव दुर्जनसाल ने जयपुर का राज्य माधोसिंह को और बूंदी उम्मेदसिंह[1] को दिलाने के इरादे से सेना-सहित प्रस्थान किया। पंडेर गांव के निकट बूंदी से दलेलसिंह और जयपुर से ईश्वरीसिंह भी मुकाबले के लिए गये। उस समय जयपुर के मंत्री राजामल खत्री ने महाराणा के पास जाकर उसे समझाया और पांच लाख रुपये की आय का टोंक का इलाका माधोसिंह को दिलाने की शर्त कर उसे वापस लौटा दिया। इससे दुर्जनसाल बड़ा अप्रसन्न हुआ और अपने पूर्व निश्चय के अनुसार उसने बूंदी पर चढ़ाई करने की तैयारी की एवं अपने सेनापति नागर ब्राह्मण गोविंदराम को पत्र देकर जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के पास से सहायता लाने के लिए भेजा। वह वहां बहुत समय तक रहा, पर जब महाराजा की तरफ से कोई उत्तर न मिला और वह सेना भेजने में टाल-टूल करता रहा, तो वह (गोविंदराम) वहां से लौटा। मार्ग में अजमेर में उसकी गुजरात के सूबेदार फखरुद्दौला से मुलाकात हुई, जिसे एक लाख रुपया देना ठहराकर उसने अपनी सहायता के लिए राज़ी किया। फ़खरुद्दौला ने हाड़ों की सेना के साथ बूंदी जाकर वहां उम्मेदसिंह का अधिकार करा दिया, पर कुछ ही समय पीछे ईश्वरीसिंह ने उम्मेदसिंह को हटाकर बूंदी का अधिकार दलेलसिंह को दिला दिया[2]।

कोटा के महाराव दुर्जनसाल का अभयसिंह से सहायता मांगना

---

(१) महाराव बुधसिंह को बूंदी से हटाकर सवाई जयसिंह ने वहां का अधिकार करवड़ के सालमसिंह के पुत्र दलेलसिंह को दे दिया। तब बुधसिंह बेगूं (मेवाड़) जा रहा और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसका पुत्र उम्मेदसिंह था, जिसने पुनः बूंदी का राज्य प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किया।

(२) वंशभास्कर, चतुर्थ भाग; पृ० ३२२४-३३। गंगासहाय, वंशप्रकाश; पृ० ११७-६।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का जो वर्णन दिया है, उसमें बूंदी का

विश्वासपात्र आदमी नियुक्त कर दिये, जिससे विद्रोही सरदारों और अभयसिंह का प्रयत्न विफल हो गया। मनरूप से महाराजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसे उसने दीवान का ओहदा प्रदान किया[1]।

इस घटना के प्रायः दो वर्ष बाद वि० सं० १८०० आश्विन सुदि १४ (ई० स० १७४३ ता० २१ सितम्बर) को जयसिंह का स्वर्गवास हो गया और उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र ईश्वरीसिंह हुआ।

महाराजा का अजमेर पर क़ब्ज़ा करना

इसे उपयुक्त अवसर जान महाराजा अभयसिंह ने भंडारी सूरतराम को राठोड़ सूरजमल सरदारसिंहोत (आलनियावास), जोधा शिवराजसिंह, रूपनगर के राजा राजसिंह के पुत्र बहादुरसिंह एवं देवगांव, पीसांगन आदि के स्वामियों के साथ अजमेर पर भेजा। उन्होंने सर्वप्रथम सूरजमल गौड़ को निकालकर राजगढ़ पर अधिकार किया। अनन्तर भिणाय, रामसर और पुष्कर पर भी उनका क़ब्ज़ा हो गया। उसी वर्ष अभयसिंह ने भी मेड़ते से प्रस्थान किया। गांव डांगावास में पहुंचने पर बख़्तसिंह भी नागोर से चलकर उसके शामिल हो गया। वहां से चलकर दोनों के डेरे अजमेर में हुए। अनन्तर उसके छातड़ी में पहुंचने पर कोटा का भट गोविंदराम ५००० सेना के साथ उससे मिल गया। इस प्रकार उसके पास सब मिलाकर ३०००० फ़ौज हो गई। उधर जयपुर से ईश्वरीसिंह ने भी उसके मुक़ाबले के लिए प्रस्थान कर गांव ढांणी में डेरा किया। बख़्तसिंह की इच्छा तो उससे लड़ाई करने की थी, पर पुरोहित जगन्नाथ ने राजामल खत्री की मारफ़त बात ठहराकर दोनों पक्षों में मेल करा दिया। इससे नाराज़ होकर बख़्तसिंह नागोर चला गया। अनन्तर दोनों महाराजाओं में परस्पर मुलाक़ात और आनासागर के महलों में गोठ हुई। इस बीच अभयसिंह ने चांदी की तुला की। इसके बाद ईश्वरीसिंह तो जयपुर गया, पर अभयसिंह का डेरा छातड़ी में ही रहा[2]।

(१) जि० २, पृ० १५५-६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १५७। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८४८-६।

वि० सं० १८०१ (ई० स० १७४४) में उदयपुर के महाराणा जगतसिंह (दूसरा) तथा कोटा के महाराव दुर्जनसाल ने जयपुर का राज्य माधोसिंह को और बूंदी उम्मेदसिंह[1] को दिलाने के इरादे से सेना-सहित प्रस्थान किया। पंडेर गांव के निकट बूंदी से दलेलसिंह और जयपुर से ईश्वरीसिंह भी मुकाबले के लिए गये। उस समय जयपुर के मंत्री राजामल खत्री ने महाराणा के पास जाकर उसे समझाया और पांच लाख रुपये की आय का टोंक का इलाक़ा माधोसिंह को दिलाने की शर्त कर उसे वापस लौटा दिया। इससे दुर्जनसाल बड़ा अप्रसन्न हुआ और अपने पूर्व निश्चय के अनुसार उसने बूंदी पर चढ़ाई करने की तैयारी की एवं अपने सेनापति नागर ब्राह्मण गोविंदराम को पत्र देकर जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के पास से सहायता लाने के लिए भेजा। वह वहां बहुत समय तक रहा, पर जब महाराजा की तरफ़ से कोई उत्तर न मिला और वह सेना भेजने में टाल-टूल करता रहा, तो वह (गोविंदराम) वहां से लौटा। मार्ग में अजमेर में उसकी गुजरात के सूबेदार फ़खरुद्दौला से मुलाक़ात हुई, जिसे एक लाख रुपया देना ठहराकर उसने अपनी सहायता के लिए राज़ी किया। फ़खरुद्दौला ने हाड़ों की सेना के साथ बूंदी जाकर वहां उम्मेदसिंह का अधिकार करा दिया, पर कुछ ही समय पीछे ईश्वरीसिंह ने उम्मेदसिंह को हटाकर बूंदी का अधिकार दलेलसिंह को दिला दिया[2]।

कोटा के महाराव दुर्जनसाल का अभयसिंह से सहायता मांगना

(१) महाराव बुधसिंह को बूंदी से हटाकर सवाई जयसिंह ने वहां का अधिकार करवड़ के सालमसिंह के पुत्र दलेलसिंह को दे दिया। तब बुधसिंह बेगूं (मेवाड़) जा रहा और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसका पुत्र उम्मेदसिंह था, जिसने पुनः बूंदी का राज्य प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किया।

(२) वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३३२५-७२। गंगासहाय, वंशप्रकाश; पृ० ११७-६।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का जो वर्णन दिया है, उसमें बूंदी का

जोधपुर की सहायता से अमरसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई

बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह का निःसन्तान देहान्त हो जाने पर, उसके चाचा आनन्दसिंह के ज्येष्ठ पुत्र अमरसिंह के होते हुए भी, वहां के सरदारों ने वि० सं० १८०३ में उस (अमरसिंह) के छोटे भाई गजसिंह को, जो सब भाइयों में अधिक बुद्धिमान था, बीकानेर की गद्दी पर बैठाया। अमरसिंह इससे बड़ा नाराज़ हुआ और अजमेर में अभयसिंह के रहते समय उसके पास चला गया। महाजन का ठाकुर भीमसिंह तथा भादा का लालसिंह उसके पास पहले से ही थे। उन्होंने अमरसिंह को ही बीकानेर की गद्दी दिलाने का निश्चय किया। अनन्तर अभयसिंह ने अपने बहुत से सरदारों एवं भीमसिंह, लालसिंह तथा अमरसिंह के साथ एक विशाल सेना बीकानेर पर भेजी जो मार्ग में लूट-मार करती हुई सरूपदेसर के पास पहुंची। बीकानेरवाले जोधपुर के विगत हमलों के कारण सतर्क रहने लगे थे। इस अवसर पर बीकों, बीदावतों, रावतोतों, बणीरोतों, भाटियों, रूपावतों, [illegible] आदि की सेनाएं एकत्र होकर शत्रु का सामना करने के लिए [illegible] आ [illegible]। कई मास तक सेनाएं एक दूसरी के सम्मुख [illegible] हमलों के अतिरिक्त जमकर युद्ध न हुआ। [illegible] कि यदि भूमि के दो भाग कर दिये [illegible] परन्तु गजसिंह ने यही उत्तर दिया कि हम इस [illegible] भूमि भी न देंगे और [illegible] की शर्त तय होगी। दूसरे दिन अपनी सेना को तीन भागों में विभक्त कर गजसिंह शत्रु के सामने आ

[illegible]

पहुंचा। बीदावतों, रावतोतों और बीका राठोड़ों की बीच की अनी में महाराजा (गजसिंह) स्वयं विद्यमान था। दक्षिण की अनी में भाटी, रूपावत और मंडलावत तथा बाईं अनी में तारासिंह, चूरू का ठाकुर धीरजसिंह तथा मेहता बख्तावरसिंह आदि थे। हरावल में कुशलसिंह (भूकरका), मेहता रघुनाथसिंह तथा दौलतसिंह (बाय) और चंदावल में प्रेमसिंह बाघसिंहोत बीका महाराजा के अंग रक्षकों-सहित था। सुजानदेसर कुएं के पास शत्रुपक्ष में से कुछ ने एक बुर्ज बना ली थी, परन्तु बीकानेरी सेना की दाहिनी अनी के सैनिकों ने हल्ला कर उन्हें वहां से भगा दिया और वहां कब्ज़ा कर लिया। इसपर जोधपुर की सेना में से भंडारी रत्नचंद अपनी सारी सेना के साथ बढ़ा। गजसिंह उस समय घोड़े पर सवार होकर लड़ रहा था। उस घोड़े के गोली लग जाने से वह मर गया तब वह दूसरे घोड़े पर सवार होकर लड़ने लगा। अमरसिंह उस समय तक यही समझ रहा था कि गजसिंह हाथी पर है, अतएव उसने हाथियों की तरफ ही आक्रमण किया। तारासिंह ने उधर घूमकर उसका मुकाबिला किया। इसी बीच गजसिंह का दूसरा घोड़ा भी मारा गया, जिससे वह फिर हाथी पर ही आरूढ़ हो गया। इतनी देर की लड़ाई में ही भंडारी (रत्नचंद), भीमसिंह तथा अमरसिंह इतने घायल हो गये कि अधिक देर तक लड़ना उनके लिए असम्भव हो गया। फिर महाराजा गजसिंह के हाथ का तीर भंडारी रत्नचन्द की आंख में लगते ही शत्रु बची हुई सेना के साथ रणक्षेत्र छोड़कर भाग गया[1]। बीकानेर के जैतपुर के ठाकुर स्वरूपसिंह ने आगे बढ़कर बर्छी के एक वार से भंडारी का काम तमाम कर दिया। इस युद्ध में

---

(१) यह घटना वि० सं० १८०४ श्रावण वदि ३ (ई० स० १७४७ ता० १३ जुलाई) सोमवार को हुई, जैसा कि बीकानेर के नाज़र नामक जैन मन्दिर के पास से मिले हुए नीचे लिखे स्मारक से पाया जाता है—

....

स्वस्ति श्रीमन्नृपसंवत्सरे संवत् १८

०४ वर्षे शाके १६६९ प्रवर्त्तमाने

जोधपुर की बड़ी हानि हुई। बीकानेर के भी कितने ही सरदार मारे गये। जब इस पराजय का समाचार अभयसिंह के पास पहुंचा तो वह बड़ा दुःखित हुआ और उसने भंडारी मनरूप की अध्यक्षता में एक दूसरी सेना रवाना की, जो डीडवाणा तक गई, परन्तु उसी समय बीकानेर से फ़ौज आ जाने के कारण उसे वापस लौट जाना पड़ा। यह घटना वि० सं० १८०४ (ई० स० १७४७) मे हुई[1]।

महामांगल्यप्रदमासोत्तममासे
श्रावणमासे कृष्णपक्षे तिथौ
तृतीयायां ३ सोमवासरे श्री-
बीकानेयर मध्ये महाराजा-
धिराजमहाराजश्रीगज-
[सि]घजीविजयराज्ये काश्यप-
गोत्रे राठोड़कांघलवंशे वणीरो-
त राजश्रीअजबसंघजीतत्पु-
त्रमोहकमसंघजीतस्यात्मज
[स]बाईसंघजी जोधपुर री फो-
ज भागी ताहीरा काम आया

(मूल लेख से)।

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६६-७१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ५५-५६।

जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि जोरावरसिंह का नि:सन्तान देहान्त होने पर उसके चाचा आनन्दसिंह का छोटा पुत्र गजसिंह बीकानेर की गद्दी पर बैठा और बड़े अमरसिंह को गद्दी न मिली। इसपर जोधपुर की सेना ने बीकानेर पर चढ़ाई की, जिसमें अमरसिंह भी साथ था। वि० सं० १८०४ के श्रावण मास में झगड़ा होने पर जोधपुर की तरफ़ के भंडारी रत्नसिंह, कूंपावत रघुनाथसिंह रामसिंहोत (नाडसर), चांपावत अमरसिंह धनराजोत (रयासी) आदि कई सरदार मारे गये (जि० २, पृ० १५८-६)। इस लड़ाई का परिणाम क्या हुआ यह तो उक्त ख्यात में नहीं

इसके बाद पठानों का उपद्रव बढ़ने पर बादशाह (मुहम्मदशाह) ने अभयसिंह तथा बख़्तसिंह को दिल्ली बुलवाया। महाराजा तो इस अवसर पर न गया, परन्तु बख़्तसिंह दिल्ली की तरफ़ रवाना हुआ। इसपर महाराजा ने भंडारी मनरूप एवं चांपावत देवीसिंह महासिंहोत को भेजकर उसे प्रस्थान करने से मना किया, परन्तु वह रुका नहीं। बादशाह ने पठानों के विरुद्ध शाहज़ादे अहमदशाह, वज़ीर कमरुद्दीनखां, जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह आदि को भेजा। लड़ाई होने पर कमरुद्दीनखां तो गोली लगने से मर गया और ईश्वरीसिंह भाग गया। शाहज़ादा लड़ता रहा और उसने पठानों को हराकर भगा दिया[1]।

बादशाह का महाराजा और उसके भाई को दिल्ली बुलवाना

वि० सं० १८०५ (ई० स० १७४८) में बादशाह मुहम्मदशाह का देहान्त हो गया और उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र अहमदशाह हुआ। मुहम्मदशाह के जीवनकाल में ही अपनी सेना-सहित महाराजा अभयसिंह का भाई बख़्तसिंह दिल्ली चला गया था। अहमदशाह ने गद्दीनशीन होने के बाद उसे अपनी सेवा में बहाल रक्खा। बख़्तसिंह अपने भाई के साथ गुजरात के सूबे में रह चुका था और उधर की सूबेदारी का उसे अनुभव था। अमीरुल्उमरा सादातखां की मारफ़त उसने गुजरात की सूबेदारी मिलने की अर्ज़ कराई। अभयसिंह के समय मारवाड़ियों ने गुजरात

बख़्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी मिलना

दिया है, परन्तु आगे चलकर उसनें ही भंडारी मनरूप का चांपावत देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण), ऊदावत कल्याणसिंह (नींबाज), मेड़तिया शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीयां) आदि के साथ पुनः बीकानेर पर भेजा जाना लिखा है (जि० २, पृ० १५-६)। इस से यह निश्चित है कि पहले भेजी हुई सेना की पराजय हुई होगी। उसनें दूसरी बार भेजी गई सेना का भी परिणाम नहीं दिया है और उसके साथ राजा बहादुरसिंह (रूपनगर) तथा अमरसिंह का भी होना लिखा है। "वीरविनोद" में भी दयालदास की ख्यात जैसा ही वर्णन मिलता है (भाग २, पृ० ५०३-४)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १५०।

के लोगों पर जो जुल्म किये थे उनका अमीरुल्उमरा को पता था, जिससे उसने गुजरात का सूबा बख़्तसिंह को दिये जाने के पूर्व उससे निम्नलिखित शर्तों का एक इक़रारनामा लिखवाया—

(१) शाही खालसे के ज़िलों पर मैं अधिकार न करूंगा और माल के अफ़सरों के काम में मदद देता रहूंगा।

(२) बादशाही अमलदारों को मैं पूर्व नियमानुसार कार्य करने दूंगा और उनके साथ अच्छा व्यवहार कर उनको प्रसन्न रखूंगा।

(३) मनसबदारों को तनख़्वाह के एवज़ में जो जागीरें गुजरात में मिली हैं, उन्हें मैं ज़ब्त नहीं करूंगा और उनकी रज़ामंदी के पत्र बादशाह की सेवा में भेजता रहूंगा।

(४) गुजरात के सूबे में रहनेवाले मुसलमानों को मैं अपने अच्छे व्यवहार से प्रसन्न रक्खूंगा और अकारण उनको कष्ट अथवा हानि न पहुंचाऊंगा।

(५) बादशाह मुहम्मदशाह के राज्यकाल में सूबेदार लोग बादशाह की सेवा में जो कुछ पेशकश भेजते थे, वह मैं भी, सूबे का बन्दोबस्त करने के बाद भेजता रहूंगा।

(६) मुसलमानी शरह के अनुसार मुकदमों का फ़ैसला करने के लिए मैं किसी मुसलमान व्यक्ति को नियुक्त करूंगा, नहीं तो बादशाह की तरफ़ से उसकी नियुक्ति की जावे।

बादशाह-द्वारा इस मुचलके (इक़रारनामा) की मंज़ूरी होने पर हि० स० ११६१ में बादशाह की तरफ़ से महाराज बख़्तसिंह को ६ पोशाकें, सरपेच तथा रत्न-जटित मूठवाली तलवार दी गई और फ़खरुद्दौला की बदली कर अहमदाबाद की सूबेदारी पर उसे नियत किया गया। वहां से अमीरुल्उमरा के साथ, जो जोधपुर और अजमेर की व्यवस्था के लिए जा रहा था, उसको भी जाने की आज्ञा मिली। गुजरात पहुंचने से पूर्व उस सूबे और मरहटों की वास्तविक दशा का पता लगाने के लिए बख़्तसिंह ने गुप्त रूप से अपने आदमी वहां भेजे। उन्होंने लौटकर उसे बतलाया कि

गुजरात के सूबे की दशा अच्छी नहीं है और वह बिल्कुल वीरान हो रहा है। इसी बीच बख़्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी मिलने की ख़बर पाकर जवांमर्दख़ां ने उस सूबे की सच्ची हालत के बारे में एक प्रार्थनापत्र बड़े-बड़े सैयदों, शेख़ों, सम्माननीय व्यक्तियों तथा हिन्दू-मुसलमान व्यापारियों के हस्ताक्षरों-सहित बादशाह की सेवा में भिजवाया[1]। उसमें अभयसिंह के समय गुजरात की जो दशा हुई थी उसका भी पूरा पूरा वर्णन था। ऐसी हालत में बख़्तसिंह ने वहां की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेना ठीक न समझा और वहां जाना मुल्तवी रक्खा[2]।

बख़्तसिंह का बीकानेर के गजसिंह को सहायतार्थ बुलाना

पठानों के ख़िलाफ़ बादशाह-द्वारा बुलाये जाने पर, जब बख़्तसिंह ने दिल्ली के लिए प्रस्थान किया तो अभयसिंह ने उसे ऐसा करने से रोका था, पर उसने इसपर कोई ध्यान न दिया[3], फल स्वरूप दोनों भाइयों में मनमुटाव हो गया। पठानों को परास्तकर लौटने पर बादशाह अहमदशाह के समय बख़्तसिंह विशाल शाही फ़ौज के साथ सांभर गया, जहां उसने गजसिंह को भी बुलाया, जिससे उसने मेल स्थापित कर लिया था। अभयसिंह को जब इसकी ख़बर मिली तो उसने मल्हारराव होल्कर को अपनी सहायता के लिए बुलाया। गजसिंह के आ जाने से बख़्तसिंह की सैनिक शक्ति बहुत बढ़ गई। इस सम्बन्ध में उसने गजसिंह से कहा भी कि आपके मिल जाने से हम एक और एक दो नहीं वरन् ग्यारह हो गये हैं। अभय-सिंह ने मरहटों की सहायता के बल पर ही अपने भाई पर आक्रमण किया था, परन्तु उसी समय जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह के भेजे हुए एक आदमी

(१) इस प्रार्थनापत्र का [illegible] "मिरात इ अहमदी" (जि० २, पृ० ३७६-७) में छपा है।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात इ-अहमदी; जि० २, पृ० ३७८-९। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेन्सी" में भी इसका उल्लेख है (जिल्द १, भाग १, पृ० ३१२)।

(३) देखो ऊपर पृ० ६६५।

के लोगों पर जो जुल्म किये थे उनका अमीरुलउमरा को पता था, जिससे उसने गुजरात का सूबा वख़्तसिंह को दिये जाने के पूर्व उससे निम्नलिखित शर्तों का एक इक़रारनामा लिखवाया—

(१) शाही खालसे के ज़िलों पर मैं अधिकार न करूंगा और माल के अफ़सरों के काम में मदद देता रहूंगा।

(२) बादशाही अमलदारों को मैं पूर्व नियमानुसार कार्य करने दूंगा और उनके साथ अच्छा व्यवहार कर उनको प्रसन्न रक्खूंगा।

(३) मनसबदारों को तनख़्वाह के एवज़ में जो जागीरें गुजरात में मिली हैं, उन्हे मैं ज़ब्त नहीं करूंगा और उनकी रज़ामंदी के पत्र बादशाह की सेवा में भेजता रहूंगा।

(४) गुजरात के सूबे में रहनेवाले मुसलमानों को मैं अपने अच्छे व्यवहार से प्रसन्न रक्खूंगा और अकारण उनको कष्ट अथवा हानि न पहुंचाऊंगा।

(५) बादशाह मुहम्मदशाह के राज्यकाल में सूबेदार लोग बादशाह की सेवा में जो कुछ पेशकश भेजते थे, वह मैं भी, सूबे का बन्दोबस्त करने के बाद भेजता रहूंगा।

(६) मुसलमानी शरह के अनुसार मुकदमों का फ़ैसला करने के लिए मैं किसी मुसलमान व्यक्ति को नियुक्त करूंगा, नहीं तो बादशाह की तरफ़ से उसकी नियुक्ति की जावे।

बादशाह-द्वारा इस मुचलके (इक़रारनामा) की मंज़ूरी होने पर हि० स० ११६१ में बादशाह की तरफ़ से महाराज वख़्तसिंह को ६ पोशाकें, सरपेच तथा रत्न-जटित मूठवाली तलवार दी गई और फ़खरुद्दौला की बदली कर अहमदाबाद की सूबेदारी पर उसे नियत किया गया। वहां से अमीरुलउमरा के साथ, जो जोधपुर और अजमेर की व्यवस्था के लिए आ रहा था, उसको भी जाने की आज्ञा मिली। गुजरात पहुंचने से पूर्व उस सूबे और मरहटों की वास्तविक दशा का पता लगाने के लिए वख़्तसिंह ने गुप्त रूप से अपने आदमी वहां भेजे। उन्होंने लौटकर उसे बतलाया कि

गुजरात के सूबे की दशा अच्छी नहीं है और वह बिल्कुल वीरान हो रहा है। इसी बीच वख़्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी मिलने की ख़बर पाकर जवांमर्दखां ने उस सूबे की सच्ची हालत के बारे में एक प्रार्थनापत्र बड़े-बड़े सैयदों, शेखों, सम्माननीय व्यक्तियां तथा हिन्दू-मुसलमान व्यापारियों के हस्ताक्षरों-सहित बादशाह की सेवा में भिजवाया[1]। उसमें अभयसिंह के समय गुजरात की जो दशा हुई थी उसका भी पूरा पूरा वर्णन था। ऐसी हालत में वख़्तसिंह ने वहां की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेना ठीक न समझा और वहां जाना मुल्तवी रक्खा[2]।

बख़्तसिंह का बीकानेर के गजसिंह को सहायतार्थ बुलाना

पठानों के ख़िलाफ़ बादशाह-द्वारा बुलाये जाने पर, जब वख़्तसिंह ने दिल्ली के लिए प्रस्थान किया तो अभयसिंह ने उसे ऐसा करने से रोका था, पर उसने इसपर कोई ध्यान न दिया[3], फल स्वरूप दोनों भाइयों में मनमुटाव हो गया। पठानों को परास्तकर लौटने पर बादशाह अहमदशाह के समय वख़्तसिंह विशाल शाही फ़ौज के साथ सांभर गया, जहां उसने गजसिंह को भी बुलाया, जिससे उसने मेल स्थापित कर लिया था। अभयसिंह को जब इसकी ख़बर मिली तो उसने मल्हारराव होल्कर को अपनी सहायता के लिए बुलाया। गजसिंह के आ जाने से वख़्तसिंह की सैनिक शक्ति बहुत बढ़ गई। इस सम्बन्ध में उसने गजसिंह से कहा भी कि आपके मिल जाने से हम एक और एक दो नहीं वरन् ग्यारह हो गये हैं। अभयसिंह ने मरहटों की सहायता के बल पर ही अपने भाई पर आक्रमण किया था, परन्तु उसी समय जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह के भेजे हुए एक आदमी

---

(१) इस प्रार्थनापत्र की नक़ल 'मिरात इ-अहमदी" (जि० २, पृ० ३७६-७) में छपी है।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात इ-अहमदी, जि० २, पृ० ३७४-७। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में भी इसका संक्षिप्त उल्लेख है (भाग १, खंड १, पृ० ३३२)।

(३) देखो ऊपर, पृ० ६६५।

के पहुंच जाने से बख़्तसिंह और मल्हारराव होल्कर की बात-चीत हो गई और उस(मल्हारराव)ने दोनों भाइयों के बीच मेल करा दिया, पर इससे आन्तरिक मनोमालिन्य दूर न हुआ[1]।

जयपुर की गद्दी के लिए ईश्वरीसिंह का भाई माधोसिंह प्रयत्नशील था और महाराणा जगतसिंह (दूसरा) माधोसिंह के पक्ष में था। महाराणा ने उसको वहां की गद्दी दिलाने के लिए तीन बार जयपुर पर चढ़ाई की तथा होल्कर को भी उसके पक्ष में कर लिया पर उससे कोई विशेष लाभ न हुआ। अन्तिम बार ईश्वरीसिंह ने माधोसिंह को टोड़ा देना स्वीकार कर महाराणा के साथ सन्धि की थी, पर पीछे से उसे तोड़कर उसने टोड़े पर पुनः अधिकार कर लिया[2]। इस पर माधोसिंह ने मल्हारराव होल्कर तथा रावराजा उम्मेदसिंह (बूंदी) को साथ लेकर जयपुर पर चढ़ाई की। मल्हारराव ने महाराणा से भी सहायता चाही, परन्तु उसने स्वयं न जाकर ४००० सवारों के साथ शाहपुरा के उम्मेदसिंह, बेगूं के रावत मेघसिंह, देवगढ़ के रावत जसवन्तसिंह (सांगावत),

जयपुर के माधोसिंह की सहायतार्थ जाना

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७१-२। वीरविनोद, भाग २, पृ० ५०४। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५६-७।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि अहमदशाह के तख़्तनशीन होने पर बख़्तसिंह वहां से फ़ौज ख़र्च तथा सांभर, डीडवाणा, नारनोल और गुजरात की सूबेदारी प्राप्तकर लौटा। महाराजा ने इसकी ख़बर पाकर भंडारी मनरूप एवं चांपावत देवीसिंह को भेज ग्यारह हज़ार रुपया रोज़ाना देना ठहराकर बूंदी से मल्हारराव को बुलाया और बख़्तसिंह के सांभर में डेरे होने पर वह वहां पहुंचा। महाराजा का इरादा जालोर छुड़ा लेने का था, परन्तु बाद में परस्पर मेल हो जाने से वह अजमेर चला गया और बख़्तसिंह नागोर, परन्तु उसने जालोर नहीं छोड़ा (जि० २, पृ० १६०)। उक्त ख्यात में गजसिंह का बख़्तसिंह की सहायता को जाना नहीं लिखा है, पर अधिक सभव तो यही है कि वह उसकी सहायतार्थ गया हो, क्योंकि समय समय पर बख़्तसिंह को बीकानेर से सहायता मिलती रही थी।

(२) विस्तृत विवरण के लिए देखो मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास, जि० २, पृ० ६३७।

राणावत शंभुसिंह[1] और कायस्थ गुलाबराय को भेजा। जब महाराणा ने ठाकुर शिवसिंह[2] को महाराजा अभयसिंह के पास भेजा, तब उसने भी माधोसिंह की सहायता करना स्वीकार कर दो हज़ार सवारों-सहित रीयां के ठाकुर मेड़तिया शेरसिंह और ऊदावत कल्याणसिंह को भेजा। वि० सं० १८०५ भाद्रपद वदि ४ (ई० स० १७४८ ता० १ अगस्त) को बगरू गांव के पास दोनों सेनाओं का मुकाबला हुआ। ईश्वरीसिंह इस युद्ध में परास्त हुआ। तब उसके मंत्री केशवदास खत्री ने एक मरहटे सेनापति को लालच देकर अपनी तरफ़ मिला लिया और उसके-द्वारा मल्हारराव होल्कर को कुछ देकर संधि कर ली। इस संधि के अनुसार ईश्वरीसिंह ने उम्मेदसिंह को बूंदी और माधोसिंह को टोंक, टोडा, मालपुरा और नवाई नामक चार परगने पीछे दे दिये[3]।

महाराजा की बीमारी और मृत्यु

वि० सं० १८०६ (ई० स० १७४९) में महाराजा अभयसिंह रोगग्रस्त हुआ। उसकी बीमारी क्रमशः बढ़ती ही गई। अपना अन्तकाल निकट जान एक दिवस उसने अपने सरदारों को अपने पास बुलाया और कहा कि मेरे भाई बख़्तसिंह ने मेरे जीते जी ही जोधपुर पर अधिकार करने का प्रयत्न किया था। मेरी मृत्यु के बाद वह केवल नागोर से ही सन्तोष न कर मेरे पुत्र रामसिंह को मार जोधपुर ले लेगा। रामसिंह कपूत और निर्बुद्धि है, इस वास्ते मुझे आशंका है कि तुम सब पलट जाओगे और उसके

---

(१) शंभुसिंह सनवाड़ का महाराज तथा ज़ैराबादवाले भारतसिंह का भाई था।

(२) रूपाहेलीवालों का पूर्वज।

(३) वीरविनोद, भाग २, पृ० १२३८-९। वंशभास्कर, चतुर्थ भाग, पृ० ३४८३-३५२७। सर यदुनाथ सरकार, फ़ॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर, जि० १, पृ० २८५।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का विस्तृत वर्णन तो नहीं दिया है, पर मल्हारराव की सहायता के लिए जोधपुर से सेना जाने और उनके द्वारा माधोसिंह को टोडा, टोंक और मालपुरा मिलकर परस्पर सन्धि होने का उल्लेख है (जि० २, पृ० १५६)। उक्त ख्यात ने इस घटना का समय नहीं दिया है

अधीन न रहोगे। इसलिए तुम्हारा इरादा यदि दूसरे (बख्तसिंह) का साथ देने का हो, तो वैसा कह दो, ताकि मैं बख्तसिंह को जोधपुर देकर रामसिंह का प्रबन्ध कर दूं। मुझे इस बात की विशेष चिन्ता है और यही जानने के लिए मैंने तुम लोगों को बुलाया है। तब रीयां के ऊदावत शेरसिंह ने उत्तर दिया कि हमारे जैसे वीर राजपूतों के रहते आपको ऐसे कातर वचन कहना शोभा नहीं देता। रामसिंह के कपूत होने पर भी हम उसका साथ देंगे। यह सुनकर महाराजा ने अन्य सरदारों की भी राय जाननी चाही। इसपर आऊवा के स्वामी चांपावत कुशलसिंह ने कहा कि यह तो दिखाई पड़ रहा है कि कुंवर रामसिंह नीच लोगों की संगति में रहने के कारण अनुचित आचरण कर योग्य व्यक्तियों का आदर घटा देगा। यहां तक तो हम सह लेंगे, पर यदि उसने हमारे डेरे आदि बरबाद करना और हमें दुत्कार कर निकालना प्रारम्भ किया तो हमसे रहा न जायगा[1]। अनन्तर आषाढ सुदि १५ (ई० स० १७४६ ता० १६ जून) सोमवार को अजमेर में रहते समय महाराजा अभयसिंह का देहान्त हो गया। इसकी खबर श्रावण वदि २ (ता० २१ जून) बुधवार को जोधपुर पहुंचने पर उसकी छः राणियां सती हुईं[2]।

राणियां तथा सन्तति

महाराजा अभयसिंह की बारह राणियों के नाम ख्यात में मिलते हैं। उसके दो पुत्र हुए[3]—

(१) रामसिंह।

(२) जोरावरसिंह (इसका बाल्यावस्था में ही स्वर्गवास हो गया)।

महाराजा को भवन इत्यादि बनवाने का बड़ा शौक था। उसने

(१) वंशभास्कर, चतुर्थ भाग, पृ० ३४८३-४, छन्द १३३३।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १६१। उसका दाह संस्कार पुष्कर में हुआ, जहां उसका स्मारक टूटी फूटी दशा में अब तक विद्यमान है।

(३) वही, जि० २, पृ० १६१-२।

कितने ही नये स्थानों का निर्माण कराने के अतिरिक्त कई पुराने स्थानों का जीर्णोद्धार भी कराया था। उसके समय में जोधपुर के चांदपोल के बाहर अभयसागर नामक कुएं का बनना प्रारम्भ हुआ, पर वह उसके जीवन में पूरा न हो सका। मंडोवर में महाराजा अजीतसिंह का स्मारक भी उसने बनवाना शुरू किया, पर वह भी अधूरा ही रहा। इनके अतिरिक्त उसके समय में चारवां नामक स्थान में उद्यान, कोट, महल, अठपहलू कुआं, मंडोवर में गऊमुख से इधर की तरफ़ ड्योढ़ी के ऊपर बंगला तथा महल एवं पहाड़ के बीच का सीतारामजी का मन्दिर; जोधपुर के गढ़ का पक्का कोट, बुर्जें एवं चोकेलाव कुआं बने[1]।

महाराजा के बनवाये हुए स्थान

महाराजा अभयसिंह को काव्य और साहित्य से अनुराग था। उसकी उदारता से प्रेरित होकर कई कवि, चारण आदि उसके आश्रय में रहते थे। चारण कविया करणीदान ने उसके आश्रय में रहकर "सूरजप्रकाश"-नामक ऐतिहासिक काव्य की रचना की, जिसमें रामचन्द्र और पुंजराज तथा उससे चलनेवाली तेरह शाखाओं के विवरण के अनन्तर जयचंद से लगाकर अजीतसिंह तक का संक्षिप्त हाल और अभयसिंह का सरबुलन्दखां के साथ की लड़ाई तक का विस्तृत वर्णन है। पीछे से उसने उक्त पुस्तक से सरबुलन्दखां के साथ की लड़ाई का आशय लेकर उसे भिन्न छन्दों में काव्य-बद्धकर "बिरद-शृंगार[2]"-नामक ग्रन्थ बनाया और उसे महाराजा को सुनाया। महाराजा ने उससे प्रसन्न होकर उसे लाखपसाव में आलावास गांव और कविराजा का खिताब देने के अतिरिक्त उसका यहां तक सम्मान किया कि वह उसको हाथी पर चढ़ाकर स्वयं अश्वारूढ़ हो मंडोर से उसके घर तक पहुंचाने

महाराजा की गुणग्राहकता

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १६०-१।

(२) यह ग्रन्थ बीकानेर के रावजी महाराज कर्नल सर भैरोंसिंह ने वि० सं० १९२८ में "भैरवविनोद" नाम से प्रकाशित किया है।

अधीन न रहोगे। इसलिए तुम्हारा इरादा यदि दूसरे (बख्तसिंह) का साथ देने का हो, तो वैसा कह दो, ताकि मैं बख्तसिंह को जोधपुर देकर रामसिंह का प्रबन्ध कर दूं। मुझे इस बात की विशेष चिन्ता है और यही जानने के लिए मैंने तुम लोगों को बुलाया है। तब रीयां के ऊदावत शेरसिंह ने उत्तर दिया कि हमारे जैसे वीर राजपूतों के रहते आपको ऐसे कातर वचन कहना शोभा नहीं देता। रामसिंह के कपूत होने पर भी हम उसका साथ देंगे। यह सुनकर महाराजा ने अन्य सरदारों की भी राय जाननी चाही। इसपर आऊवा के स्वामी चांपावत कुशलसिंह ने कहा कि यह तो दिखाई पड़ रहा है कि कुंवर रामसिंह नीच लोगों की संगति में रहने के कारण अनुचित आचरण कर योग्य व्यक्तियों का आदर घटा देगा। यहां तक तो हम सह लेंगे, पर यदि उसने हमारे डेरे आदि बरबाद करना और हमें दुत्कार कर निकालना प्रारम्भ किया तो हमसे रहा न जायगा[1]। अनन्तर आषाढ सुदि १५ (ई० स० १७४९ ता० १९ जून) सोमवार को अजमेर में रहते समय महाराजा अभयसिंह का देहान्त हो गया। इसकी खबर श्रावण वदि २ (ता० २१ जून) बुधवार को जोधपुर पहुंचने पर उसकी छः राणियां सती हुई[2]।

महाराजा अभयसिंह की बारह राणियों के नाम ख्यात में मिलते हैं। उसके दो पुत्र हुए[3]—

राणिया तथा सन्तति

(१) रामसिंह।

(२) जोरावरसिंह (इसका बाल्यावस्था में ही स्वर्गवास हो गया)।

महाराजा को भवन इत्यादि बनवाने का बड़ा शौक था। उसने

---

(१) वंशभास्कर, चतुर्थ भाग, पृ० ३४८३-४, छन्द १३३३।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १६१। उसका दाह संस्कार पुष्कर में हुआ, जहा उसका स्मारक टूटी-फूटी दशा में अब तक विद्यमान है।

(३) वही, जि० २, पृ० १६१-२।

कितने ही नये स्थानों का निर्माण कराने के अतिरिक्त कई पुराने स्थानों का जीर्णोद्धार भी कराया था। उसके समय में जोधपुर के चांदपोल के बाहर अभयसागर नामक कुएं का बनना प्रारम्भ हुआ, पर वह उसके जीवन में पूरा न हो सका। मंडोवर में महाराजा अजीतसिंह का स्मारक भी उसने बनवाना शुरू किया, पर वह भी अधूरा ही रहा। इनके अतिरिक्त उसके समय में चारवां नामक स्थान में उद्यान, कोट, महल, अठपहलू कुआं, मंडोवर में गऊमुख से इधर की तरफ़ ड्योढ़ी के ऊपर बंगला तथा महल एवं पहाड़ के बीच का सीतारामजी का मन्दिर, जोधपुर के गढ़ का पक्का कोट, बुर्जें एवं चोखेलाव कुआं बने[1]।

महाराजा के बनवाये हुए स्थान

महाराजा अभयसिंह को काव्य और साहित्य से अनुराग था। उसकी उदारता से प्रेरित होकर कई कवि, चारण आदि उसके आश्रय में रहते थे। चारण कविया करणीदान ने उसके आश्रय में रहकर "सूरजप्रकाश"-नामक ऐतिहासिक काव्य की रचना की, जिसमें रामचन्द्र और पुंजराज तथा उससे चलनेवाली तेरह शाखाओं के विवरण के अनन्तर जयचंद से लगाकर अजीतसिंह तक का संक्षिप्त हाल और अभयसिंह का सरबुलन्दखां के साथ की लड़ाई तक का विस्तृत वर्णन है। पीछे से उसने उक्त पुस्तक से सरबुलन्दखां के साथ की लड़ाई का आशय लेकर उसे निज छन्दों में काव्य-बद्धकर 'बिरद-शृंगार'[2]-नामक ग्रन्थ बनाया और उसे महाराजा को सुनाया। महाराजा ने उससे प्रसन्न होकर उसे लाखपसाव में आलावास गांव और कविराजा का खिताब देने के अतिरिक्त उसका यहां तक सम्मान किया कि वह उसको हाथी पर चढ़ाकर स्वयं अश्वारूढ़ हो मंडोर से उसके डेरे तक पहुंचाने

महाराजा की गुणग्राहकता

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १६०-१।

(२) यह ग्रन्थ [illegible] ने ई० स० १९२८ में '[illegible]' नाम से [illegible] किया है।

गया[1]। उपर्युक्त दोनों ग्रंथ प्रशंसात्मक दृष्टि से लिखे होने से अतिशयोक्ति-रंजित हैं। अन्य कवियों में भट्ट जगजीवन-रचित "अभयोदय"-(संस्कृत), वीरभाण-रचित "राजरूपक[2]", रसपुंज-रचित "कवित्त श्री माताजी रा[3]," एवं माधोराम-रचित "शाक्त भक्ति प्रकाश","शंकर-पचीसी" तथा "माधवराम कुंडली[4]" के उल्लेख मिलते हैं। "बिहारी सतसई" महाराजा को अधिक प्रिय होने से कवि सुरति मिश्र ने वि० सं० १७६४ में "अमरचन्द्रिका" नाम की उसकी टीका बनाई थी। रसचंद, सेवक, प्रयाग, माईदास, सायंतसिंह, प्रेमचंद, शिवचंद, अनंदराम, गुलालचंद, भीमचंद, पृथ्वीराय आदि अन्य कितने ही कवियो को भी उसका आश्रय प्राप्त था[5]। "सूरजप्रकाश" से पाया जाता है कि महाराजा ने नरहर, आढ़ाकिशन, सिंढायच हरि और मेहड़ू वलू को एक-एक, खेम दधिवाड़िया को २, सादूनाथ को ३ एवं आढ़ा महेश को ५ लाख पसाव दिये थे।

महाराजा का व्यक्तित्व

अभयसिंह वीर परन्तु दुर्बल-हृदय नरेश था। राज्यारंभ से ही उसने अपने सरदारों के प्रति उपेक्षा का भाव रक्खा, जिससे समय-समय पर उनके साथ उसका विरोध होता रहा। अपने सरदारों को खुश रखने के लिए उसने एक बार अपने प्रियपात्र

(१) इस सम्बन्ध मे निम्नलिखित दोहा प्रसिद्ध है—

असु चढ़ियो राजा अभो कवि चाढ़े गजराज।
पोहर हेक जळेब में मोहर हले महाराज॥

इस ग्रन्थ का उल्लेख "एनुअल रिपोर्ट ऑन दि सर्च फ़ॉर हिंदी मैन्युस्क्रिप्ट्स" (ई० स० १६०१, पृ० ८२, संख्या १०५) मे भी है।

(२) मिश्रबंधुविनोद, द्वितीय भाग, पृ० ७५१।

(३) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, पहला भाग, पृ० १२१।

(४) मिश्रबंधुविनोद, द्वितीय भाग, पृ० ६७४-५। श्याम बिहारी मिश्र, एम्० ए०, दि सेकन्ड ट्राइएनिएल रिपोर्ट ऑन् दि सर्च फ़ार हिन्दी मैन्युस्क्रिप्ट्स, ई० स० १६०६, १० और ११, संख्या ३१७ पृ० ४२४।

(५) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, पहला भाग, पृ० ३।

भंडारियों को क़ैद में डलवाया, पर यह कार्य केवल ऊपरी दिल से होने के कारण उसका स्थायी परिणाम न निकला। बख़तसिंह को छोड़कर वह अपने दूसरे भाइयों को मरवाना चाहता था, जिससे वे उसके सदा विरोधी रहे और जोधपुर राज्य के आस-पास उपद्रव करते रहे। उसकी अपने पिता को मरवाने से बड़ी बदनामी हुई।

अवसर विशेष पर वह छल-छिद्र करने में भी संकोच न करता था। इससे स्वयं उसका भाई बख़तसिंह, जिसको पिता को मारने के एवज़ में नागोर की जागीर मिली थी, उसको कपटी कहा करता था[1]। वह कान का भी कच्चा था, जिससे साधारण सी झूठी शिकायतों पर उसने कई अच्छे-अच्छे राज-कर्मचारियों तथा अन्य लोगों के साथ बुरा सलूक किया।

ऐसा अनुमान होता है कि अभयसिंह के राज्य-समय में धन का अभाव ही रहा। यही कारण था कि वह अपने सरदारों और अन्य लोगों से ज़ोर-ज़ुल्म से अथवा ओहदों की एवज़ में बड़ी-बड़ी रक़में वसूल किया करता था। बादशाह-द्वारा गुजरात का सूबा मिलने पर उसने रुपये की वसूली के लिए वहां के निवासियों पर भांति-भांति के ज़ुल्म किये। वह वहां के बड़े-बड़े धनी-मानी सेठों को पकड़कर क़ैद में डाल देता और जब तक उनसे अच्छी रक़म वसूल न कर लेता उन्हें न छोड़ता। वहां रहते समय उसने गुजरात के विभिन्न ज़िलों के हाकिमों से सब मिलाकर ८५ लाख से अधिक रुपये वसूल किये[2]। उसके वहां से लौटने के बाद उसके नायब रत्नसिंह भंडारी ने भी प्रजा पर होनेवाले ज़ुल्म की परिपाटी को क़ायम रक्खा, जिसका परिणाम यह हुआ कि अहमदाबाद के कितने ही निवासी स्त्री-पुरुष वहां का वास छोड़कर अन्यत्र चले गये और वह सूबा वीरान हो गया। वह ज़माना मरहटों के उत्कर्ष का था, जिनकी जगह-जगह चौथ लगने लगी थी। अभयसिंह का गुजरात पर अधिकार

(१) [illegible], ऐतिहासिक बातें संख्या [illegible]।

(२) [illegible] जोधपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० [illegible]।

महाराजा अभयसिंह के स्वर्गवास की ख़बर नागोर पहुंचने पर बख़्तसिंह ने बड़ा शोक प्रकट किया और उसके उत्तराधिकारी रामसिंह के लिए पुरोहित विजयराज, धायभाई हरनाथ एवं अपनी धाय[1] के साथ टीके के हाथी, घोड़े आदि भिजवाये। महाराजा ने यह कहकर टीका स्वीकार करने से इनकार कर दिया कि पहले जालोर छोड़ो तब लूंगा। धाय ने जब राजमाता से इस बारे में कहा तो उसने उत्तर दिया कि रामसिंह बालक है, हठ कर बैठा है, अतएव अभी तो जालोर दे दो, दो एक मास बाद पीछा दिलवा दूंगी। नागोर में बख़्तसिंह के पास इसकी सूचना भिजवाने पर उसने कहलाया कि जालोर तो मेरे हिस्से में आया है, उसे मैं नहीं छोड़ सकता, अलबत्तः उसके बदले में दूसरा प्रदेश मैं महाराजा को विजय कर दिला सकता हूं, परन्तु रामसिंह ने इस बात को नामंजूर किया। तब धाय आदि टीका लेकर वापस नागोर चले गये[2]।

बख़्तसिंह का रामसिंह के पास टीका भेजना

महाराजा अभयसिंह की मृत्यु के समय फ़ौज तथा सरदार आदि अजमेर में ही थे। सरदारों के पुत्र जोधपुर में रामसिंह के पास उपस्थित हुए। रीयां के शेरसिंह के पुत्र ज़ालिमसिंह तथा फ़तहसिंह महाराजा के पास रहते और उनपर उसकी विशेष कृपा थी। ढोली अनिया का भी बड़ा सम्मान था, जिसके पट्टे में गांव पांच था। एक दिवस माडा का ठाकुर कुशलसिंह कूंपावत महाराजा के पास गया। उस समय महाराजा शेरसिंह के पुत्रों के साथ ख़िलवत में था, जिन्हें देख कुशलसिंह पीछा लौटने लगा। ज़ालिमसिंह ने महाराजा से कहा कि इसे भी बुलवाइये अन्यथा यह आपकी बदनामी करेगा। महाराजा ने उसे रोकने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह रुका नहीं। अनंतर महाराजा के आदेश से पृथ्वीसिंह फ़तहसिंहोत ने पांचा

महाराजा का अपने सरदारों के साथ दुर्व्यवहार करना और रीयां के ठाकुर से उसके चाकर को मांगना

(१) "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि महाराजा ने इस धाय के साथ बड़ा अपमानजनक व्यवहार किया (चतुर्थ भाग, पृ० ३४८२, छन्द ३२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १६३-४।

लौटते हुए कुशलसिंह को रोककर कहा कि राजा नादान है, तुम्हें बुलाता है तो जाते क्यों नहीं ? इसपर कुशलसिंह ने उत्तर दिया कि मैं खिलवत में नहीं रह सकता और वह चला गया। महाराजा ने पृथ्वीसिंह से कहा कि या तो कुशलसिंह को वापस लाओ या स्वयं भी चले जाओ। तब पृथ्वीसिंह भी चला गया और नागोर पहुंचा, जहां बख़्तसिंह ने उसे अपने पास रखकर उसके गुज़ारे का प्रबंध कर दिया। फिर राहण के ठाकुर बनेसिंह कनीरामोत से उसकी जागीर बिना किसी कारण हटाकर रामसिंह ने लालसिंह मुकुन्दसिंहोत को दे दी। इसपर बनेसिंह भी नागोर चला गया, जहां बख़्तसिंह ने उसे गांव बोड़वा दिया। उन्हीं दिनों मल्हार-राव के पास से टीके का हाथी, घोड़ा, सिरोपाव आदि लेकर २०० व्यक्ति रामसिंह के पास गये। महाराजा ने मल्हारराव होलकर के भेजे हुए हाथी से अपना हाथी लड़ाया[1]। दुर्भाग्यवश महाराजा का हाथी हार गया। इससे क्रुद्ध होकर उसने मल्हारराव के हाथी को तोप से उड़ाने की आज्ञा दी। इसपर टीका लेकर आये हुए मरहटे मरने-मारने को तैयार हो गये। उसके इस आचरण से कई सरदार अप्रसन्न हो गये और उन्होंने महाराजा से कहा कि हाथी गणेश का प्रतीक होता है, अतएव उसे मारना अप-शकुन है, यदि उसे मारना ही है तो किसी को दे डालिये। तब वह हाथी महाराजा ने खींवसर के ठाकुर जोरावरसिंह को दे दिया तथा राठोड़ देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण), कुशलसिंह हरनाथसिंहोत[2] (आउवा), कनीराम रामसिंहोत (आसोप), शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीयां), कल्याणसिंह अमरसिंहोत (नींवाज), प्रेमसिंह राजसिंहोत (पाली), राठोड़ देवीसिंह दौलतसिंहोत (कोसाणा) आदि १८ सरदारों को

(१) "वंशभास्कर" में भी इस घटना का उल्लेख है (चतुर्थ भाग, पृ० ३५८४ छन्द, ३६-४१)।

(२) "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि महाराजा ने उसका भी अपमान किया था, परन्तु अभयसिंह के आदेश को स्मरण कर उसने उसको सहन कर लिया (चतुर्थ भाग, पृ० ३५८५, छन्द ४२-३)।

एक एक हाथी दिया। रीयां के ठाकुर शेरसिंह के साथ उसका विजिया नाम का एक चाकर भी दरबार में जाया करता था। महाराजा को वह चाकर इतना पसन्द आया कि उसने शेरसिंह से उसको मांगा। उस समय तो टाला-टूली कर शेरसिंह विदा हुआ, परन्तु उसके डेरे पर पहुंचते ही महाराजा के अनुचर ने जाकर फिर विजिया को मांगा। शेरसिंह ने उत्तर दिया कि आज तो महाराजा चाकर मांगता है, कल कहेगा कि तुम्हारी स्त्री सुन्दर है उसे दे दो। मैं चाकर को नहीं दूंगा, महाराजा नाराज़ होंगे तो अपना मुल्क रखलेंगे। यह सुनकर महाराजा बड़ा नाराज़ हुआ और उसने शेरसिंह को जोधपुर का परित्याग कर जाने की आज्ञा दी, जिसपर वह अपने ठिकाने रीयां चला गया[1]।

[illegible] (हाशिये की टिप्पणी)

इस प्रकार महाराजा के मूर्खतापूर्ण व्यवहार से तंग आकर उसके कितने ही सरदार बख़्तसिंह के पास नागोर चले गये। तब रामसिंह ने अपने सरदारों को एकत्र कर नागोर पर चढ़ाई करने का इरादा किया। गांव खेड़ूली में डेरा होने पर उसके पास रहनेवाले लोगों ने उससे कहा कि आप नागोर पर चढ़ाई करने का इरादा कर रहे हैं ऐसे अवसर पर शेरसिंह का साथ होना लाभदायक होगा क्योंकि वह बख़्तसिंह का मित्र है। तब महाराजा की आज्ञानुसार [illegible] दौलतसिंह [illegible] कोसणा का। शेरसिंह के पास गये [illegible] उत्सुकता तो दिखलाई परन्तु यह कहा कि [illegible]। साथ ही उसने महाराजा को विजिया को [illegible] का वायदा भी किया। [illegible] ने लौटकर महाराजा [illegible] जिसपर वह स्वयं रीयां गया। शेरसिंह ने सामने जाकर उसका [illegible] और विजिया को उसे सौंप दिया। तब महाराजा ने [illegible] निरपराध [illegible]

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात [illegible] भाग [illegible] में भी महाराजा के [illegible] व्यवहार से [illegible] उसके सरदारों का [illegible] है।

(सोने का आभूषण), सिरोपाव, तुर्रा और कलगी प्रदान कर पालकी में सवार कराया और सवारी में अपने आगे रख अपने साथ ले गया। फिर शेरसिंह को साथ लेकर महाराजा खेडूली पहुंचा। रीयां और खेडूली के बीच शेरसिंह के घोड़ों के थकने पर उसने उसे चार बार नये घोड़े प्रदान किये[1]।

बख़्तसिंह और रामसिंह के बीच लड़ाई होना

अपने ऊपर चढ़ाई करने के महाराजा रामसिंह के इरादे का पता पाकर बख़्तसिंह ने आदमी भेज बीकानेर से सहायता मंगवाई। इसपर महाराजा गजसिंह १८००० सेना के साथ रवाना होकर गांव सरणवास में बख़्तसिंह के शामिल हो गया। अनन्तर बख़्तसागर होते हुए दोनों के डेरे गांव हीलोड़ी में हुए। वहां रहते समय यह पता लगने पर कि महाराजा रामसिंह रूण में है बख़्तसिंह उधर रवाना हुआ। वहां पहुंचने पर उसने भंडारी मनरूप को दग़ा से मरवा डाला[2], परन्तु कोई बड़ी लड़ाई नहीं हुई। इसी बीच रिणी (बीकानेर) में तारासिंह को मारकर अमरसिंह ने वहां अधिकार कर लिया। इस समाचार के मिलने पर भी गजसिंह ने बख़्तसिंह का साथ न छोड़ा और अपने कई सरदारों को सेना देकर उधर भेज दिया। पीछे से ऊंट-सवारों के साथ मेहता मनरूप को भी बख़्तसिंह ने पहले भेजे गये सरदारों की सहायता के लिए भेजा। रामसिंह की सेना में जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह का भेजा हुआ राजावत दलेलसिंह निर्भयसिंहोत (धूला का) ४००० सवारों के साथ था। उसने बख़्तावर-सिंह से बातकर बख़्तसिंह के जालोर छोड़ देने एवं बदले में तीन लाख

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १६५-६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इसका उल्लेख है। उसमें लिखा है कि बख़्तसिंह के इशारे से उसके ड्योढ़ीदार गोयनदास के एक सेवक पातावत ने वि० सं० १८०६ कार्तिक सुदि २ (ई० स० १७४९ ता० १ नवम्बर) को मनरूप को, जब वह अपने डेरे पर पालकी से उतर रहा था, मार डाला (जि० २, पृ० १६८)।

रुपये तथा अजमेर लेने की शर्त पर दोनों में सन्धि करा दी[1]। रुपया चुकाने की अवधि छः मास निश्चित हुई। अनन्तर रामसिंह वहां से लौट गया तथा गजसिंह भी दलेलसिंह से बात-चीत कर बीकानेर गया[2]।

इसके कुछ ही समय बाद बख़्तसिंह सहायता के लिये बादशाह के बख़्शी सलाबतख़ां को लेने गया[3]। उस समय गजसिंह रिणी इलाक़े के गांव

---

(१) इसके विपरीत जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि ईश्वरीसिंह के पास से राजावत दलेलसिंह उसकी पुत्री के विवाह का नारियल लेकर रामसिंह के पास गया हुआ था। उसका इस सन्धि में कोई हाथ नहीं रहा। थोड़ी लड़ाई के बाद बख़्तसिंह ने जालोर छोड़ देने की शर्त कर सन्धि कर ली, परन्तु वहां से उसने अपना अधिकार लड़ाई बन्द होने पर भी नहीं हटाया (जि० २, पृ० १६८-६)। उक्त ख्यात से इस लड़ाई में गजसिंह का बख़्तसिंह के पक्ष में होना नहीं पाया जाता, परन्तु बख़्तसिंह का बीकानेरवालों से इससे बहुत पूर्व ही मेल हो गया था। ऐसी दशा में बख़्तसिंह का गजसिंह को सहायतार्थ बुलाना तथा उसका उसी समय जाना अविश्वसनीय नहीं है।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७२-३। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ५७-८।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कहीं-कहीं कुछ अन्तर के साथ इस घटना का वर्णन दिया है। उसके अनुसार सन्धि के पश्चात् रामसिंह मेड़ते तथा बख़्तसिंह नागोर गया (जि० २, पृ० १६७-६)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सलाबतख़ां को बादशाह की तरफ़ से अजमेर का सूबा मिला हुआ था। आसोपा हरनाथसिंह ने, जो बख़्तसिंह की तरफ़ से दिल्ली में रहता था, उससे बात-चीत की। पीछे से बख़्तसिंह दतेला नंमोरा में जाकर उससे मिला। उसी समय के लगभग महाराजा ने बिना किसी कारण के दिल्लगी में ही आसोप का ठिकाना कूंपावत सांवतो (घाणेराव) को दे दिया। उसके इस व्यवहार से अप्रसन्न होकर ऊदावत केसरीसिंह (राम), कूंपावत कर्णाराम रामसिंहोत (आसोप), चांपावत कुशलसिंह हरनाथसिंहोत (आउवा), मुकनसिंह किशनसिंहोत (गांव नारनंदी), लालसिंह सहसमलोत (बपाड) आदि उसके चांपावत, कूंपावत और ऊदावत सरदार नागोर चले गये। उन दिनों बख़्तसिंह तो नवाब को लेने के लिए गया था और उसका कुंवर विजयसिंह नागोर में था। उक्त ठाकुर आदि उसके शामिल होकर जोधपुर के ख़ालसे के गांवों को लूटने लगे तथा उन्होंने बीलाड़पुर, फ़तेलाव, बपाड आदि बहुत से गांव लूट लिए। इसके थोड़े समय बाद ही हनपुर कोटड़ी (शेखावाटी) में महाराजा

मुसलमानों की सहायता से वख़्तसिंह का जोधपुर पर चढ़ाई करना

मोड़ी में ठहरा हुआ था। वख़्तसिंह ने उसे भी शीघ्र पहुंचने को लिखा। सलावतखां के पास से सहायता लेकर वख़्तसिंह के जोधपुर पहुंचने पर गजसिंह भी अपने राज्य का समुचित प्रबंध कर उससे जा मिला[1]। महाराजा रामसिंह ने इस अवसर पर जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह को बुलाया। गांव सूरियावास में विपक्षी दलों में तोपों की भीषण लड़ाई हुई, जिसमें दोनों तरफ़ के बहुसंख्यक लोग मारे गये। अनन्तर पीपाड़ में भी बड़ा युद्ध हुआ, जिसमें अमरसिंह, ठाकुर शंभुसिंह (पीसांगण) आदि रामसिंह के कई सरदार मारे गये, परन्तु कुछ निर्णय न हुआ। युद्ध से होनेवाली भयंकर हानि देखकर ईश्वरीसिंह मुसलमान सेनापति से मिल गया और वे दोनों युद्धक्षेत्र का परित्याग कर अपने-अपने स्थानों को चले गये। प्रधान सहायकों के अभाव में युद्ध जारी रखना हानिकारक ही सिद्ध होता, अतएव गजसिंह, वख़्तसिंह, रामसिंह आदि भी अपने-अपने स्थानों को लौट गये[2]।

रामसिंह ईश्वरीसिंह के शामिल हुआ। वहां देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण) ने, जो राज्य का प्रधान मन्त्री था, पहले ईश्वरीसिंह से मिलना चाहा तो रामसिंह ने उसे हाथ से धक्का देकर हटा दिया और खींवकरण को आगे किया। इसके बाद अक्षय तृतीया की गोठ (दावत) के अवसर पर भी देवीसिंह के सामने का थाल हटाकर खींवकरण के आगे रक्खा गया। तब वह बिना भोजन किये ही अपने डेरे पर लौट गया। इस प्रकार दो बार अपमानित होने पर देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण), प्रेमसिंह राजसिंहोत (पाली) तथा अन्य कई सरदार महाराजा का साथ छोड़ नागोर में कुंवर विजयसिंह के पास चले गये (जि० २, पृ० १६६-७१)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस अवसर पर रूपनगर (किशनगढ़) का राजा बहादुरसिंह भी वख़्तसिंह के शामिल हो गया था (जि० २, पृ० १७१)।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७४। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ४८। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कुछ अन्तर के साथ इस घटना का लगभग ऐसा ही वर्णन मिलता है। उससे इतना अधिक पाया जाता है कि रामसिंह ने अपनी सहायता के लिए दक्षिणी सरदारों को महाराजा ईश्वरीसिंह की मारफ़त

सय्यद गुलामहुसेनखां-कृत "सैरुलमुताखिरीन" में इस घटना का भिन्न वर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि हि० स० ११६१ (वि० सं० १८०५ = ई० स० १७४८) में बख़्तसिंह ने जोधपुर का राज्य प्राप्त करने का उद्योग किया। बादशाह के पास उपस्थित होकर उसने सआदतखां[1] को अपनी सहायता के लिये तैयार किया। उसके नागोर लौटने के कुछ दिनों पश्चात् सआदतखां भी फ़ौज के साथ रवाना हुआ। मार्ग में सूरजमल जाट के साथ की लड़ाई में उसकी पराजय हुई। उससे मेलकर सआदतखां के नारनोल के निकट पहुंचने पर बख़्तसिंह उसके पास पहुंचा। उधर रामसिंह ने जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह की सहायता प्राप्त की। अजमेर, बूरीगढ़, शेरसिंह का गढ़ और मेड़ता होता हुआ सआदतखां पीपाड़ पहुंचा। बख़्तसिंह ने उससे कहा कि इस मार्ग में रामसिंह की तोपें लगी हैं, अतएव इधर से जाना ठीक नहीं, परन्तु सआदतखां ने इसपर ध्यान न देते हुए कहा कि एक बार किसी तरफ़ मुख कर लेने पर पुरुष उसे मोड़ते नहीं। उसकी ज़िद को देखकर बख़्तसिंह ने उसका साथ छोड़ दिया। सआदतखां की फ़ौज के रामसिंह की तोपों के निकट पहुंचते ही राठोड़ों ने उसपर आक्रमण कर दिया, जिससे मुसलमानी सेना का बहुत नुकसान हुआ। सआदतखां की सारी फ़ौज बिखर गई और धूप की तीव्रता के कारण मुसलमान सिपाही प्यास से व्याकुल हो गये। उनकी

बुलवाया। गांव सूरियावास में परस्पर गोलों की लड़ाई होने पर रामसिंह के पक्ष के अमरसिंह (बीकानेर के महाराजा गजसिंह का बड़ा भाई) और पीलागरा का जोधा शम्भुसिंह फ़तहसिंहोत मारे गये। दोनों पक्षों के और भी बहुतसे आदमी काम आये। सतवाजी को सात हज़ार रुपया रोज़ाना देना तय हुआ। पीछे से कछवाहों की मारफ़त बात तय होकर सन्धि हो गई। उसके अनुसार एक लाख रुपया बादशाह की नज़र का नवाब को और पचास हज़ार नवाब के दीवान को दिया गया तथा बादशाह की तरफ़ से लाया गया टीका, हाथी, घोड़ा वग़ैरह नवाब ने महाराजा रामसिंह को दिया (जि० २, पृ० १०१-२)।

(१) ख्यातों ने सलावतख़ां नाम दिया है और यही नाम सरकार कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में भी मिलता है।

यह दशा देख राठोड़ों ने लड़ाई बन्द कर दी और उनके लिए जल की व्यवस्था कर उन्हें विदा किया। ऐसी भीषण परिस्थिति और वर्षा ऋतु निकट देख तथा लड़ाई के विशेष व्यय पर विचार कर सम्रादतखां कुछ इक़रार कर जाने के लिये तैयार हो गया। बख़्तसिंह ने इसके विपरीत उसे बहुत समझाया, पर उसपर उसकी बातों का असर न हुआ और वह तीन लाख रुपये (रामसिंह से) नक़द लेकर तथा शेष के लिए क़िस्तें मुक़र्रर कर पीपाड़ से अजमेर लौट गया[1]।

(१) आर० कैम्ब्रे एण्ड कंपनी द्वारा प्रकाशित अंग्रेज़ी अनुवाद, जि० १, पृ० ३११-८।

सर जदुनाथ सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में भी इस घटना का विस्तृत वर्णन दिया है। उससे पाया जाता है कि सलावतख़ां बख़्तसिंह का विश्वास नहीं करता था। वह युद्ध करने को भी तैयार न था, क्योंकि बख़्तसिंह ने उसे भरोसा दिलाया था कि उसके रामसिंह की सेना के निकट पहुंचते ही उसके बहुतसे सरदार उस(सलाबतख़ां)से आ मिलेंगे और जब ऐसा न हुआ तो उसने ईश्वरीसिंह को एक पत्र लिखा, जिसमें उसने युद्ध के प्रति अपनी अनिच्छा प्रकट की। फिर जल की तंगी होने से उसके सिपाहियों की हालत ख़राब होने लगी। इससे उसका क्रोध बढ़ गया और उसने अपने डेरों के चारों ओर तोपख़ाना लगा दिया। इसपर बीकानेर के महाराजा गजसिंह ने २००० व्यक्तियों के साथ ता० ६ अप्रेल को बख़्शी (सलाबतख़ां) के डेरे पर जाकर उसे शान्त किया। ईश्वरीसिंह ने भी उसके पास इस बारे में पत्र लिखा। तब सलावतख़ां कुछ रुपये आदि लेकर मेल करने को राज़ी हुआ, पर कई दिनों तक जब कुछ भी तय न हुआ तो विपक्षी दलों में लड़ाई हुई, जिसमें दोनों तरफ़ के कुछ आदमी मारे गये। अनन्तर ता० १६ अप्रेल को सन्धि की शर्तें तय हुईं। ईश्वरीसिंह स्वयं जाकर बख़्तसिंह की मारफ़त सलाबतख़ां से मिला और उसने आगरा की नायब नाज़िमी के एवज़ २७ लाख रुपया देना तय किया। रामसिंह ने तीन लाख रुपया नक़द दिया और शेष चार लाख के लिए क़िस्तें ठहरा लीं। बख़्तसिंह को इस सन्धि से कोई लाभ न हुआ, जिससे वह नाराज़ होकर नागोर चला गया। इसके बाद ईश्वरीसिंह जयपुर, रामसिंह मेड़ता और बख़्शी अजमेर गया (जि० १, पृ० ३०६-१७। सिलेक्शन्स फ़्राम पेशवाज़ दफ़्तर, जि० २, पृ० १६, जिल्द २१, पृ० २७, ३४-५)।

इससे निश्चित है कि रामसिंह को सन्धि के समय सलाबतख़ां को धन देना पड़ा था। "वंशभास्कर" में इस घटना का बिल्कुल भिन्न वर्णन मिलता है, पर उससे भी रामसिंह का बहुतसा धन देना स्पष्ट है (चतुर्थ भाग, पृ० ३२११)।

वि० सं० १८०७ (ई० स० १७५०) में महाराजा ईश्वरीसिंह ज़हर खाकर मर गया और जयपुर की गद्दी पर उसका भाई माधोसिंह बैठा। ईश्वरीसिंह के मरने से रामसिंह का एक प्रधान सहायक जाता रहा। तब मारवाड़ के प्रमुख सरदारों ने, जो बख़्तसिंह के शामिल हो गये थे, उससे जाकर कहा कि रामसिंह इस समय केवल थोड़े से साथियों सहित मेड़ता में है, अतएव चढ़ाई करने का उपयुक्त अवसर है। बख़्तसिंह को भी यह बात जंच गई। बीकानेर से महाराजा गजसिंह इसके पूर्व ही उसके पास पहुंच गया था। दोनों की सम्मिलित सेना ने खेडूली होते हुए दूदासर तालाब पर पहुंच वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष वदि ६ (ई० स० १७५० ता० ११ नवम्बर) को मेड़तियों को हराकर रामसिंह के डेरे आदि लूट लिए। वहां से गजसिंह तथा बख़्तसिंह ने बीलाड़ा जाकर एक लाख रुपये पेशकशी के वसूल किये। पीछे जब वे सोजत में थे रामसिंह ने सेना एकत्र कर उनपर आक्रमण किया, परन्तु उसे हारकर भागना पड़ा[1]। विजयी सेना ने उसके खेमे लूटकर उनमें आग लगा दी। इस अवसर पर ज़ालिमसिंह किशोरसिंहोत-(मेड़तिया) ने शत्रु को रोकने का प्रयत्न किया, पर विपत्ती सेना के अधिक होने के कारण उसे अपने प्राण गंवाने पड़े। अनन्तर युद्ध करने में कोई लाभ न देख रामसिंह समझौता कर जोधपुर चला गया तथा गजसिंह और बख़्तसिंह नागोर गये[2]।

बख़्तसिंह की मेड़ता पर चढ़ाई

(१) सरकार कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि रामसिंह-द्वारा अपमानित होने पर चांपावत कुशलसिंह बख़्तसिंह से जा मिला। अनन्तर दोनों की सम्मिलित सेना ने लूणियावास में ई० स० १७५० ता० २७ नवंबर (वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष सुदि १०) को रामसिंह की सेना पर आक्रमण किया, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का शेरसिंह मेड़तिया और अन्य कई व्यक्ति तथा बख़्तसिंह के सहायक बीकानेर के ६-७ सरदार काम आये। स्वयं बख़्तसिंह के भी कई घाव आये और उसे चार मील पीछा हटना पड़ा, लेकिन अन्त में रामसिंह की पराजय हुई और वह राजधानी में भाग गया (जि० १, पृ० ३१६-२०)।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७४-५। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि

यह दशा देख राठोड़ों ने लड़ाई बन्द कर दी और उनके लिए जल की व्यवस्था कर उन्हें विदा किया। ऐसी भीषण परिस्थिति और वर्षा ऋतु निकट देख तथा लड़ाई के विशेष व्यय पर विचार कर सलावतखां कुछ इक़रार कर जाने के लिये तैयार हो गया। बख़्तसिंह ने इसके विपरीत उसे बहुत समझाया, पर उसपर उसकी बातों का असर न हुआ और वह तीन लाख रुपये (रामसिंह से) नक़द लेकर तथा शेष के लिए क़िस्तें मुक़र्रर कर पीपाड़ से अजमेर लौट गया[1]।

---

(१) आर० कैम्ब्रे एण्ड कंपनी द्वारा प्रकाशित अंग्रेज़ी अनुवाद; जि० १, पृ० ३११-८।

सर जदुनाथ सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में भी इस घटना का विस्तृत वर्णन दिया है। उससे पाया जाता है कि सलावतख़ां बख़्तसिंह का विश्वास नहीं करता था। वह युद्ध करने को भी तैयार न था, क्योंकि बख़्तसिंह ने उसे भरोसा दिलाया था कि उसके रामसिंह की सेना के निकट पहुंचते ही उसके बहुतसे साथी उस (सलावतख़ां) से आ मिलेंगे और जब ऐसा न हुआ तो उसने ईश्वरीसिंह को एक पत्र लिखा, जिसमें उसने युद्ध के प्रति अपनी अनिच्छा प्रकट की। फिर जल की तंगी होने से उसके सिपाहियों की हालत ख़राब होने लगी। इससे उसका क्रोध बढ़ गया और उसने अपने डेरों के चारों ओर तोपख़ाना लगा दिया। इसपर बीकानेर के महाराजा गजसिंह ने २००० व्यक्तियों के साथ ता० ९ अप्रेल को बख़्शी (सलावतख़ां) के पास जाकर उसे शान्त किया। ईश्वरीसिंह ने भी उसके पास इस बारे में पत्र लिखा। तब सलावतख़ां कुछ रुपये और [illegible] भेंट करने को राज़ी हुआ, पर कई दिनों तक जब कुछ भी तय न हुआ तो पिछली रातों में लड़ाई हुई, जिसमें दोनों तरफ़ के कुछ आदमी मारे गये। अनन्तर ता० १४ अप्रेल को सन्धि की शर्तें तय हुईं। ईश्वरीसिंह स्वयं [illegible] बख़्तसिंह की मारफ़त सलावतख़ां से मिला और उसने आगरा की नायब नाज़िमी के [illegible] २० लाख रुपया देना तय किया। रामसिंह ने तीन लाख रुपया नक़द दिया और शेष बाक़ी रक़म के लिए क़िस्तें ठहरा दीं। बख़्तसिंह को इस सन्धि से कोई लाभ न हुआ, इससे वह नाराज़ होकर नागोर चला गया। इसके बाद ईश्वरीसिंह [illegible] और सलावतख़ां आगरे गया (जि० १, पृ० २०१-१०। [illegible] १९३८, जि० २, पृ० ११, [illegible], पृ० १०, २०८)।

[illegible] रामसिंह को सन्धि के समय सलावतख़ां का [illegible] "[illegible]" ने इस घटना का विस्तृत [illegible] लिखा है, [illegible] रामसिंह का [illegible] रुपया देना [illegible] है ([illegible] भाग, पृ० [illegible])।

वि० सं० १८०७ (ई० स० १७५०) में महाराजा ईश्वरीसिंह ज़हर खाकर मर गया और जयपुर की गद्दी पर उसका भाई माधोसिंह बैठा। ईश्वरीसिंह के मरने से रामसिंह का एक प्रधान सहायक जाता रहा। तब मारवाड़ के प्रमुख सरदारों ने, जो बख़्तसिंह के शामिल हो गये थे, उससे जाकर कहा कि रामसिंह इस समय केवल थोड़े से साथियों सहित मेड़ता में है, अतएव चढ़ाई करने का उपयुक्त अवसर है। बख़्तसिंह को भी यह बात जंच गई। बीकानेर से महाराजा गजसिंह इसके पूर्व ही उसके पास पहुंच गया था। दोनों की सम्मिलित सेना ने खेडूली होते हुए दूदासर तालाव पर पहुंच वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष वदि ६ (ई० स० १७५० ता० ११ नवम्बर) को मेड़तियों को हराकर रामसिंह के डेरे आदि लूट लिए। वहां से गजसिंह तथा बख़्तसिंह ने पीलाड़ा जाकर एक लाख रुपये पेशकशी के वसूल किये। पीछे जब वे सोजत में थे रामसिंह ने सेना एकत्र कर उनपर आक्रमण किया, परन्तु उसे हारकर भागना पड़ा[1]। विजयी सेना ने उसके खेमे लूटकर उनमें आग लगा दी। इस अवसर पर ज़ालिमसिंह किशोरसिंहोत (मेड़तिया) ने शत्रु को रोकने का प्रयत्न किया, पर विपक्षी सेना के अधिक होने के कारण उसे अपने प्राण गंवाने पड़े। अनन्तर युद्ध करने में कोई लाभ न देख रामसिंह समझौता कर जोधपुर चला गया तथा गजसिंह और बख़्तसिंह नागोर गये[2]।

बख़्तसिंह की मेड़ता पर चढ़ाई

---

(१) सरकार कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि रामसिंह-द्वारा अपमानित होने पर चांपावत कुशलसिंह बख़्तसिंह से जा मिला। अनन्तर दोनों की सम्मिलित सेना ने लूणियावास में ई० स० १७५० ता० २७ नवंबर (वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष सुदि १०) को रामसिंह की सेना पर आक्रमण किया, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का शेरसिंह मेड़तिया और अन्य कई व्यक्ति तथा बख़्तसिंह के सहायक बीकानेर के ६-७ सरदार काम आये। स्वयं बख़्तसिंह के भी कई घाव आये और उसे चार मील पीछा हटना पड़ा, लेकिन अन्त में रामसिंह की पराजय हुई और वह राजधानी में भाग गया (जि० १, पृ० ३१९-२०)।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७४-५। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि

वि० सं० १८०७ (ई० स० १७५०) में महाराजा ईश्वरीसिंह ज़हर खाकर मर गया और जयपुर की गद्दी पर उसका भाई माधोसिंह बैठा। ईश्वरीसिंह के मरने से रामसिंह का एक प्रधान सहायक जाता रहा। तब मारवाड़ के प्रमुख सरदारों ने, जो बख़्तसिंह के शामिल हो गये थे, उससे जाकर कहा कि रामसिंह इस समय केवल थोड़े से साथियों सहित मेड़ता में है, अतएव चढ़ाई करने का उपयुक्त अवसर है। बख़्तसिंह को भी यह बात जंच गई। बीकानेर से महाराजा गजसिंह इसके पूर्व ही उसके पास पहुंच गया था। दोनों की सम्मिलित सेना ने खेडूली होते हुए दूदासर तालाब पर पहुंच वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष वदि ६ (ई० स० १७५० ता० ११ नवम्बर) को मेड़तियों को हराकर रामसिंह के डेरे आदि लूट लिए। वहां से गजसिंह तथा बख़्तसिंह ने बीलाड़ा जाकर एक लाख रुपये पेशकशी के वसूल किये। पीछे जब वे सोजत में थे रामसिंह ने सेना एकत्र कर उनपर आक्रमण किया, परन्तु उसे हारकर भागना पड़ा[1]। विजयी सेना ने उसके खेमे लूटकर उनमें आग लगा दी। इस अवसर पर ज़ालिमसिंह किशोरसिंहोत-(मेड़तिया) ने शत्रु को रोकने का प्रयत्न किया, पर विपक्षी सेना के अधिक होने के कारण उसे अपने प्राण गंवाने पड़े। अनन्तर युद्ध करने में कोई लाभ न देख रामसिंह समझौता कर जोधपुर चला गया तथा गजसिंह और बख़्तसिंह नागोर गये[2]।

बख़्तसिंह की मेड़ता पर चढ़ाई

---

(१) सरकार कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि रामसिंह-द्वारा अपमानित होने पर चांपावत कुशलसिंह बख़्तसिंह से जा मिला। अनन्तर दोनों की सम्मिलित सेना ने लूणियावास में ई० स० १७५० ता० २७ नवंबर (वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष सुदि १०) को रामसिंह की सेना पर आक्रमण किया, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का शेरसिंह मेड़तिया और अन्य कई व्यक्ति तथा बख़्तसिंह के सहायक बीकानेर के ६-७ सरदार काम आये। स्वयं बख़्तसिंह के भी कई घाव आये और उसे चार मील पीछे हटना पड़ा, लेकिन अन्त में रामसिंह की पराजय हुई और वह राजधानी में भाग गया (जि० १, पृ० ३१९-२०)।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७४-५। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि

बख़्तसिंह आदि के नागोर की तरफ़ प्रस्थान करते ही रामसिंह पुनः मेड़ते जा रहा[1], जिसकी ख़बर लगते ही गजसिंह तथा बख़्तसिंह ने वि० सं० १८०८ आषाढ सुदि ६ (ई० स० १७५१ ता० २१ जून) को सीधे जोधपुर पर चढ़ाई कर वहां चार पहर तक ख़ूब लूट मचाई। गढ़ के भीतर भाटी सुजानसिंह तथा पोकरण के देवीसिंह के श्वसुर थे, जिन्होंने बख़्तसिंह की सेवा में उपस्थित हो गढ़ उसके सुपुर्द कर दिया[2]। तब क़िले

बख़्तसिंह का जोधपुर पर अधिकार होना

बीकानेर स्टेट, पृ० ५८-६।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी सरदारों के कहने से बख़्तसिंह का मेड़ता पर चढ़ाई करना और उस समय उसके साथ बीकानेर के गजसिंह तथा रूपनगर (किशनगढ़) के बहादुरसिंह का होना लिखा है। बख़्तसिंह ने सरदारों के कहने से प्रस्थान तो कर दिया, पर वह हमला करने में हीला-हवाला करता रहा। फिर दूनासर के निकट वि० सं० १८०७ कातिक सुदि ६ (ई० स० १७५० ता० २८ अक्टोबर) को लड़ाई होने पर रामसिंह की तरफ़ के शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीयां), सूरजमल सरदारसिंहोत (आलनियावास), श्यामसिंह अभयसिंहोत (बलूंदा), डूंगरसिंह श्यामसिंहोत (बीखरण्या), सुरताणसिंह फ़तहसिंहोत (सेवरिया) आदि कई सरदार मारे गये तथा बख़्तसिंह की फौज के भी अनेक व्यक्ति काम आये। इसके बाद और कई लड़ाइयां हुईं, जिनमें दुतरफ़ा बहुत से आदमी मारे गये, पर कोई परिणाम न निकला। युद्ध से होनेवाली हानि को देखकर बख़्तसिंह ने पोकरण के देवीसिंह (महासिंहोत) और कुचामण के ज़ालिमसिंह को बुलाकर कहा कि मुझे मेड़ता वापस दिया जाय तो मैं लड़ाई बन्द कर दूं, पर वे इसके लिए राज़ी न हुए। फिर श्रावणादि वि० सं० १८०७ (चैत्रादि १८०८) वैशाख वदि ६ (ई० स० १७५१ ता० ६ अप्रेल) की लड़ाई के बाद, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का राठोड़ ज़ालिमसिंह किशोरसिंहोत (कुचामण) अपने दो कुंवरों चैनसिंह और सुरताणसिंह एवं ७० व्यक्तियों-सहित मारा गया, वह (रामसिंह) शीघ्रता से प्रस्थान कर जोधपुर चला गया (जि० २, पृ० १७३-७)।

(१) सरकार कृत "फ़ाल आव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि जोधपुर पर आक्रमण होने पर जब रामसिंह उसकी रक्षा न कर सका तो वह जयपुर चला गया (जि० १, पृ० ३२०)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि महाराजा रामसिंह के जोधपुर जाते ही बख़्तसिंह ने पुनः मेड़ते की तरफ़ प्रस्थान किया। इसकी ख़बर पाकर

में प्रवेशकर गजसिंह ने बख्तसिंह को गद्दी पर बैठाया और इसकी बधाई दी। बख्तसिंह ने इसके उत्तर में कहा कि यह आपकी समयोचित सहायता

रामसिंह के सरदारों ने उसे समझाया कि मेड़ता पर बख़्तसिंह का अधिकार होना अच्छा न होगा, अतएव आप शीघ्र उधर प्रस्थान करें। महाराजा ने ऐसा ही किया और वह मेड़ते आ रहा। इसकी ख़बर हरकारों ने बख़्तसिंह को देकर उससे कहा कि रामसिंह का तोपख़ाना अभी गंगरारे में ही अटका हुआ है। इसपर बख़्तसिंह गंगरारे गया, पर उसके वहां पहुंचने के पूर्व ही तोपख़ाना मेड़ते में दाख़िल हो गया। अनन्तर बख़्तसिंह ने रास के ठाकुर केसरीसिंह के कहने पर जैतारण होते हुए बलूंदा पर चढ़ाई की, जहां के स्वामी फतहसिंह ने गांव बांजाकुड़ी में उपस्थित हो उसकी अधीनता स्वीकार की। वहां से बख़्तसिंह नींबाज गया, जहां कल्याणसिंह ने उसका अच्छा आदर-सत्कार किया और वहां पड़ा हुआ महाराजा का तोपख़ाना उसको दिया। फिर रायपुर से भाखरसिंह के पुत्र पद्मसिंह को साथ ले वह जोधपुर की ओर अग्रसर हुआ। मार्ग में उसने बीलाड़ा और पाल गांवों को लूटा और श्रावणादि वि० सं० १८०७ (चैत्रादि १८०८) आषाढ सुदि ६ (ई० स० १७५१ ता० २१ जून) को वह रातानाडा पहुंचा। उस समय गढ़ के प्रबन्ध के लिए क़िलेदार भाटी सुजानसिंह (लवेरा) तथा चौहान राव मोहकमसिंह (साचोर) और नगर के इन्तज़ाम के लिए राठोड़ दौलतसिंह, जोधा सूरजमल दुर्जनसिंहोत (पाटोदी), भाटी महेशदास नाथावत (कोटरोद), जैतकरण मेहकरणोत (वागावास) आदि नियुक्त थे। जोधपुर के सिंधी सिपाही बख़्तसिंह से मिल गये और उसके सिवांची दरवाज़े पर पहुंचने पर उन्होंने द्वार खोल दिया। इसपर धायभाई देवकरण आदि, जो शहरपनाह के मोर्चे पर थे, भागकर गढ़ में चले गये और बख़्तसिंह, गजसिंह और राजा बहादुरसिंह तलहटी के महलों में प्रविष्ट हुए। गजसिंह ने शहर लूटने की राय दी, परन्तु बख़्तसिंह ने इसे स्वीकार न किया। भाटी सुजानसिंह एवं धायभाई देवकरण ने ज़नानी ड्योढ़ी पर जाकर राणी नरूकी (रामसिंह की माता) से कहलाया कि आपके पुत्र से सरदारों का नियन्त्रण नहीं होता। आप कहें तो रत्नसिंह और रूपसिंह (अजीतसिंह के पुत्र) को, जो क़ैद में हैं, छुड़ाकर गढ़ सौंप दें। इससे बख़्तसिंह के पक्ष में गये हुए कितने ही सरदार अपनी तरफ़ आ जायगे, परन्तु नरूकी ने इसकी स्वीकृति नहीं दी। फिर चांपावत सूरजमल रामसिंहोत (समाडिया) तथा जोधा उदयसिंह हिन्दूसिंहोत (देधाणा) ने नरूकी को भाटी सुजानसिंह एवं चौहान मोहकमसिंह को मरवाने और गढ़ न छोड़ने की राय दी, क्योंकि उनके कथनानुसार वे दोनों बख़्तसिंह से मिले हुए थे, पर इसका भेद प्रकट हो गया, जिससे काम सधा नहीं। फिर बख़्तसिंह ने पोकरण के ठाकुर को सुजानसिंह आदि से बात करने को भेजा। उसने वहां जाकर

बख़्तसिंह आदि के नागोर की तरफ़ प्रस्थान करते ही रामसिंह पुनः मेड़ते जा रहा[1], जिसकी ख़बर लगते ही गजसिंह तथा बख़्तसिंह ने वि० सं० १८०८ आषाढ सुदि ६ (ई० स० १७५१ ता० २१ जून) को सीधे जोधपुर पर चढ़ाई कर वहां चार पहर तक खूब लूट मचाई। गढ़ के भीतर भाटी सुजानसिंह तथा पोकरण के देवीसिंह के श्वसुर थे, जिन्होंने बख़्तसिंह की सेवा में उपस्थित हो गढ़ उसके सुपुर्द कर दिया[2]। तब क़िले

बख़्तसिंह का जोधपुर पर अधिकार होना

बीकानेर स्टेट, पृ० ५८-६।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी सरदारों के कहने से बख़्तसिंह का मेड़ता पर चढ़ाई करना और उस समय उसके साथ बीकानेर के गजसिंह तथा रूपनगर (किशनगढ़) के बहादुरसिंह का होना लिखा है। बख़्तसिंह ने सरदारों के कहने से प्रस्थान तो कर दिया, पर वह हमला करने में हीला-हवाला करता रहा। फिर दूदासर के निकट वि० सं० १८०७ कातिक सुदि ६ (ई० स० १७५० ता० २८ अक्टोबर) को लड़ाई होने पर रामसिंह की तरफ़ के शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीयां), सूरजमल सरदारसिंहोत (आलनियावास), श्यामसिंह अभयसिंहोत (वलूंदा), डूंगरसिंह श्यामसिंहोत (बीखरण्या), सुरताणसिंह फतहसिंहोत (सेवरिया) आदि कई सरदार मारे गये तथा बख़्तसिंह की फ़ौज के भी अनेक व्यक्ति काम आये। इसके बाद और कई लड़ाइयां हुईं, जिनमें दुतरफ़ा बहुत से आदमी मारे गये, पर कोई परिणाम न निकला। युद्ध से होनेवाली हानि को देखकर बख़्तसिंह ने पोकरण के देवीसिंह (महासिंहोत) और कुचामण के ज़ालिमसिंह को बुलाकर कहा कि मुझे मेड़ता वापस दिया जाय तो मैं लड़ाई बन्द कर दूं, पर वे इसके लिए राज़ी न हुए। फिर श्रावणादि वि० सं० १८०७ (चैत्रादि १८०८) वैशाख वदि ६ (ई० स० १७५१ ता० ६ अप्रेल) की लड़ाई के बाद, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का राठोड़ ज़ालिमसिंह किशोरसिंहोत (कुचामण) अपने दो कुंवरों चैनसिंह और सुरताणसिंह एवं ७० व्यक्तियों-सहित मारा गया, वह (रामसिंह) शीघ्रता से प्रस्थान कर जोधपुर चला गया (जि० २, पृ० १७३-७)।

(१) सरकार कृत "फ़ाल आव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि जोधपुर पर आक्रमण होने पर जब रामसिंह उसकी रक्षा न कर सका तो वह जयपुर चला गया (जि० १, पृ० ३२०)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि महाराजा रामसिंह के जोधपुर जाते ही बख़्तसिंह ने पुनः मेड़ते की तरफ़ प्रस्थान किया। इसकी ख़बर पाकर

में प्रवेशकर गजसिंह ने बख़्तसिंह को गद्दी पर बैठाया और इसकी बधाई दी। बख़्तसिंह ने इसके उत्तर में कहा कि यह आपकी समयोचित सहायता

रामसिंह के सरदारों ने उसे समझाया कि मेड़ता पर बख़्तसिंह का अधिकार होना अच्छा न होगा, अतएव आप शीघ्र उधर प्रस्थान करें। महाराजा ने ऐसा ही किया और वह मेड़ते जा रहा। इसकी ख़बर हरकारों ने बख़्तसिंह को देकर उससे कहा कि रामसिंह का तोपख़ाना अभी गंगराणे में ही अटका हुआ है। इसपर बख़्तसिंह गंगराणे गया, पर उसके वहां पहुंचने के पूर्व ही तोपख़ाना मेड़ते में दाख़िल हो गया। अनन्तर बख़्तसिंह ने रास के ठाकुर केसरीसिंह के कहने पर जैतारण होते हुए बलूंदा पर चढ़ाई की, जहां के स्वामी फ़तहसिंह ने गांव बांजाकुड़ी में उपस्थित हो उसकी अधीनता स्वीकार की। वहां से बख़्तसिंह नींबाज गया, जहां कल्याणसिंह ने उसका अच्छा आदर-सत्कार किया और वहां पड़ा हुआ महाराजा का तोपख़ाना उसको दिया। फिर रायपुर से भाखरसिंह के पुत्र पद्मसिंह को साथ ले वह जोधपुर की ओर अग्रसर हुआ। मार्ग में उसने बीलाड़ा और पाल गांवों को लूटा और श्रावणादि वि० सं० १८०७ (चैत्रादि १८०८) आषाढ सुदि ६ (ई० स० १७५१ ता० २१ जून) को वह रातानाडा पहुंचा। उस समय गढ़ के प्रबन्ध के लिए क़िलेदार भाटी सुजानसिंह (लवेरा) तथा चौहान राव मोहकमसिंह (सांचोर) और नगर के इन्तज़ाम के लिए राठोड़ दौलतसिंह, जोधा सूरजमल दुर्जनसिंहोत (पाटोदी), भाटी महेशदास नाथावत (कीटणोद), जैतकरण मेहकरणोत (बागावास) आदि नियुक्त थे। जोधपुर के सिंधी सिपाही बख़्तसिंह से मिल गये और उसके सिवाची दरवाज़े पर पहुचने पर उन्होंने द्वार खोल दिया। इसपर धायभाई देवकरण आदि, जो शहरपनाह के मोर्चे पर थे, भागकर गढ़ में चले गये और बख़्तसिंह, गजसिंह और राजा बहादुरसिंह तलहटी के महलों में प्रविष्ट हुए। गजसिंह ने शहर लूटने की राय दी, परन्तु बख़्तसिंह ने इसे स्वीकार न किया। भाटी सुजानसिंह एवं धायभाई देवकरण ने ज़नानी ड्योढ़ी पर जाकर राणी नरूकी (रामसिंह की माता) से कहलाया कि आपके पुत्र से सरदारों का नियन्त्रण नहीं होता। आप कहें तो रत्नसिंह और रूपसिंह (अजीतसिंह के पुत्र) को, जो क़ैद में हैं, मुक्तकर गढ़ सौंप दें। इससे बख़्तसिंह के पक्ष में गये हुए कितने ही सरदार अपनी तरफ़ आ जावेंगे, परन्तु नरूकी ने इसकी स्वीकृति नहीं दी। फिर चांपावत सूरजमल रामसिंहोत (सनाडिया) तथा जोधा उदयसिंह हिन्दूसिंहोत (देधाणा) ने नरूकी को भाटी सुजानसिंह एवं चौहान मोहकमसिंह को मरवाने और गढ़ न छोड़ने की राय दी, क्योंकि उनके कथनानुसार वे दोनों बख़्तसिंह से मिले हुए थे, पर इसका भेद प्रकट हो गया, जिससे काम सधा नहीं। फिर बख़्तसिंह ने पोकरण के ठाकुर को सुजानसिंह आदि से बात करने को भेजा। उसने वहां जाकर

प्रकृति के व्यक्ति उसके प्रीतिभाजन थे, जिनके संसर्ग में उसका अधिक समय बीतता था। सरदारों के प्रति उसका व्यवहार अच्छा नहीं था। अपने ओछे स्वभाव के कारण वह उनके सम्मान का ध्यान नहीं रखता था। अपनी मृत्यु से पूर्व ही अभयसिंह को ज्ञात हो गया था कि उसका निर्बुद्धि पुत्र रामसिंह अपने सरदारों को नाराज़ कर अधिक समय तक राज्य-सुख न भोग सकेगा। इसलिए अपने अन्तिम समय में उसने अपने सरदारों को अपने निकट बुलाकर उनसे सदा रामसिंह का पक्ष लेने का अनुरोध किया था। सरदारों ने जहां तक संभव था, अभयसिंह के अंतिम अनुरोध की रक्षा की और रामसिंह के दुर्व्यवहार को सहन किया, परन्तु जब उसका आचरण सीमा को पार कर गया तो उन्हें अपनी सम्मान-रक्षार्थ उसका साथ छोड़ बख़्तसिंह का पक्ष ग्रहण करना पड़ा। इसका परिणाम यह हुआ कि राज्य-प्राप्ति के केवल दो वर्ष बाद ही उसे जोधपुर के सिंहासन से हाथ धोना पड़ा। उसके समय में राज्य और प्रजा दोनों की दशा बुरी रही।

बख़्तसिंह

महाराजा बख़्तसिंह का जन्म वि० सं० १७६३ भाद्रपद वदि ८ (ई० स० १७०६ ता० २० अगस्त) को हुआ था। वि० सं० १८०८ आषाढ सुदि १० (ई० स० १७५१ ता० २२ जून) को अपने भतीजे रामसिंह की सेना को परास्त कर उसने जोधपुर नगर पर कब्ज़ा कर लिया। उसी वर्ष श्रावण वदि २ (ता० २६ जून) शनिवार को उसने जोधपुर के गढ़ में प्रवेश किया और श्रावण वदि १२ (ता० ८ जुलाई) को उसका वहां कब्ज़ा हो गया। फिर उसने नागोर आदमी भेजकर अपने परिवार को जोधपुर बुलवा लिया[1]।

जन्म तथा जोधपुर पर अधिकार होना

उन दिनों भाद्राजूण का ठाकुर विद्रोही हो रहा था। उसका दमन

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८०।

करने के लिए महाराजा ने अपने पुत्र विजयसिंह को पांच हज़ार फ़ौज के साथ भेजा। उसने वहां जाकर राज्य का थाना स्थापित किया। महाराजा ने चौरासी गांवों के साथ भाद्राजूण का ठिकाना पाली के ठाकुर प्रेमसिंह के नाम लिख दिया। अनन्तर बख़्तसिंह ने अपने टीके का मुहूर्त निकलवाया।

ठाकुरों के ठिकानों में परिवर्तन करना

एक दिन जब वह अकेला राजकीय भंडारों का निरीक्षण कर रहा था, दौलतखाने में देवीसिंह, केसरीसिंह, कल्याणसिंह, प्रेमसिंह, दलजी आदि सरदार जमा थे। दलजी ने उनसे कहा कि बख़्तसिंह ने हमसे अभयसिंह की गद्दी पर विजयसिंह को बैठाने का वायदा किया था, परन्तु अब वह अपने लिए मुहूर्त निकलवा रहा है। यदि सलाह हो तो उसे भंडार के भीतर ही बन्द कर दिया जाय। इसपर सरदारों ने उत्तर दिया कि इसकी जल्दी क्या है, अभी तो बहुत समय है। पोकरण के ठाकुर देवीसिंह तथा रास के ठाकुर केसरीसिंह ने इस मंत्रणा की सूचना गुप्त रूप से सिंघवी फ़तेहचन्द को देदी। उसने बख़्तसिंह से जाकर सारा हाल कहा, जिसपर वह भंडार के बाहर निकल आया। इसके कुछ ही समय बाद बख़्तसिंह ने राजा बहादुर किशोरसिंह को हटाकर ४४ गांवों के साथ राजगढ़ की जागीर रास के ठाकुर ऊदावत केसरीसिंह के नाम, बलूंदा की जागीर फ़तहसिंह के छोड़ जाने पर चांदावत ज़ालिमसिंह उदयसिंहोत के नाम और कोसाणा की जागीर चांदावत बहादुरसिंह सबलसिंहोत के नाम कर दी। भाटी किशनसिंह के नाम ५०००० का पट्टा किया गया और आउवा के चांदावत जैतसिंह के पट्टे में वृद्धि की गई। पोकरण के ठाकुर देवीसिंह को भी बख़्तसिंह नया पट्टा देता था, परन्तु उसने लेना स्वीकार न किया। इस अवसर पर बख़्तसिंह ने कोतवाल आदि अधिकारियों की भी नये सिरे से नियुक्ति की[1]।

उन्हीं दिनों महाराजा बख़्तसिंह ने अपने भाइयों रत्नसिंह और रूपसिंह को, जो क़ैद में थे, नागोर के क़िले में भिजवाया। फिर जब उसने उनके

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १८०-१।

अन्धे किये जाने की आज्ञा निकाली तो उन्होंने आत्मघात कर लिया। अनन्तर बख़्तसिंह ने रामसिंह की माता नरूकी को गढ़ से उतारकर उसकी सारी संपत्ति छीन ली। बख़्तसिंह के अन्य विरोधी भंडारी, पंचोली, मेहता, व्यास आदि क़ैद किये गये। उनमें से पंचोली लालजी का पुत्र मेहकरण हाथ-पैर काटकर मार डाला गया और जोशी हरकिशन ने आत्महत्या कर ली[1]।

अन्य विरोधियों को सज़ा देना

उसी वर्ष दिल्ली से बादशाह अहमदशाह की तरफ़ से टीके का हाथी, सिरोपाव आदि लेकर व्यास हरनाथ जोधपुर गया। हरनाथ को महाराजा ने अपनी ओर से हाथी देकर विदा किया[2]।

बादशाह की तरफ़ से टीका मिलना

जोधपुर से अधिकार हटने के बाद रामसिंह मेड़ता से मारोठ चला गया, जहां परबतसर तथा सांभर के परगनों पर उसका अधिकार बना रहा[3]। कुछ समय बाद उसकी तरफ़ से पुरोहित जगू, भंडारी सवाईराम, ज़ोरावरसिंह (खींवसर), इंद्रसिंह (खैरवा), कूंपावत सांवतजी तथा चांपावत देवीसिंह मल्हारराव के पास गये[4], जो उन दिनों कुमाऊं के पहाड़ों पर

मरहटों की सहायता से रामसिंह का अजमेर पर क़ब्ज़ा करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १८३।

(२) वही, जि० २, पृ० १८३।

(३) वही, जि० २, पृ० १८०।

(४) सर जदुनाथ सरकार-कृत 'फ़ॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर' से पाया जाता है कि राज्य खोने पर रामसिंह ने पुरोहित जगु को भेजकर मरहटों की सहायता प्राप्त की (जि० २, पृ० १७२)। "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि पुरोहित जगु एवं खींवसर के ठाकुर के साथ स्वयं रामसिंह मरहटों के पास गया। जयआपा सिंधिया तथा मल्हारराव होल्कर ने उसका स्वागत किया और जयआपा ने उसके साथ अपनी पगड़ी बदली एवं उसे पीछा जोधपुर का राज्य दिलाने का आश्वासन दिया (चतुर्थ भाग, पृ० ३६३०-३१ छन्द, १३, १४)।

गया हुआ था। वह उनको साथ लेकर आपा (जयआपा) के पास गया, जिसने रामसिंह से भाईचारा स्थापित कर उसकी मदद करने का वचन दिया। इसी समय दक्षिण से लिखा आने पर, उसे अचानक उधर जाना पड़ा, परन्तु जोधपुर के सरदारों के प्रार्थना करने पर उसने साहबां पटेल[1] को दस हज़ार फ़ौज-सहित उनके साथ कर दिया। उनके मारोठ पहुंचने पर रामसिंह उन्हें तथा मेड़तियों को साथ ले अजमेर गया और उसने वहां क़ब्ज़ा कर लिया[2]। इसके बाद ही फलोधी पर भी रामसिंह का क़ब्ज़ा हो गया। जब बख़्तसिंह को यह ख़बर मिली तो उसने बीकानेर से महाराजा गजसिंह को सहायता के लिए बुलाया और स्वयं सेना-सहित अजमेर की तरफ़ बढ़ा। लाडपुरा में दोनों एकत्र हो गये। वहां से चलकर दोनों पुष्कर में ठहरे। उनका आगमन सुनते ही रामसिंह और मरहटे बिना लड़े चले गये[3]।

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में इसके स्थान में महादजी पटेल का नाम दिया है (जि० २, पृ० १०५८)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १८३-४।

(३) इस सम्बन्ध में जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा मिलता है कि बख़्तसिंह ने इस अवसर पर एक चाल चली। उसने रामसिंह के सरदारों के नाम इस आशय की चिट्ठियां तैयार कीं कि तुम्हारी अर्ज़ी आई, हमारा नगारा बजते ही तुम रामसिंह को गिरफ़्तार कर लेना। दक्षिणियों को तो मैं मार लूंगा। इस सेवा के बदले में मैं तुम्हें एक-एक लाख का पट्टा दूंगा। ये पत्र उसने क़ासिद के हाथ दक्षिणियों की चौकी की तरफ भिजवाये। क़ासिद से वह पत्र छीनकर दक्षिणियों ने साहबा पटेल को दिया। उसको पढ़ते ही उसे रामसिंह के सरदारों की तरफ से सन्देह हो गया और वह उसे लेकर रामसर चला गया। तब सब सरदार भी अपने अपने ठिकानों को लौट गये। पीछे से जब साहबा पर इस कपट का भेद खुला तो उसने बड़ा खेद प्रकट किया और उसी समय लड़ने की तैयारी की, परन्तु सारी फौज बिखर जाने के कारण क्या हो सकता था। अनन्तर रामसिंह मंदसोर चला गया (जि० २, पृ० १८४-५)।

इसके विपरीत सरकार ने "तारीख़-इ-आलमगीरसानी" के आधार पर "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में लिखा है कि ई० स० १७५२ (वि० स० १८०६) के मई मास के अन्तिम दिनों में जयआपा सिन्धिया की अध्यक्षता में पांच हज़ार मरहटी सेना रामसिंह के भेजे हुए आदमियों के साथ बख़्तसिंह के साथ युद्ध करने के लिए अजमेर

तब गजसिंह भी बीकानेर लौट गया[1]।

चांदावतों को अजमेर में रखकर बख़्तसिंह गांव गूगरे में ठहरा, जहां शाहपुरा के स्वामी उम्मेदसिंह ने उसके पास उपस्थित होकर उसे एक हाथी नज़र किया। अनन्तर बख़्तसिंह ने अपने आदमी भेजकर जयपुर के महाराजा माधोसिंह से

बख़्तसिंह की मृत्यु

कहलाया कि आपका मल्हारराव से वैर है और मेरा आपा (जयआपा) से, अतएव हम और आप मिलकर नरबदा पार मरहटों पर कर लगा दें और मालवे को आपस में आधा-आधा बांट लें। महाराजा माधोसिंह ने उस समय इसका यह उत्तर भिजवाया कि अभी तो चौमासा (वर्षा ऋतु) है, चढ़ाई कैसे की जाय। इसपर बख़्तसिंह ने उससे मिलने के लिए जयपुर की तरफ प्रस्थान किया। उसके सोनोली पहुंचने की ख़बर वकीलों द्वारा प्राप्त होने पर माधोसिंह मेंह बरसते में वहां जाकर उससे मिला। दूसरे दिन दोनों में इस विषय पर बात-चीत हुई कि मरहटों को नरबदा के उस पार ही रोकने का क्या उपाय करना चाहिये। वहां से लौटते ही अचानक बख़्तसिंह की तबियत ख़राब हो गई, जो फिर न सुधरी[2]। बहुत कुछ

पहुंची। उन्होंने नगर में लूट मचाकर कई घर जला दिये और विरोध करनेवालों को मार डाला। यह समाचार सुनकर बख़्तसिंह अपनी पूरी सेना के साथ अजमेर से लग-भग आठ मील दूर जाकर ठहरा। कुछ समय तक वह बिना युद्ध किये वहीं ठहरा रहा। जुलाई में उसने आक्रमण किया। एक पहाड़ी पर तोपख़ाना लगाया और जगह-जगह नाकेबन्दी कर उसने मरहटी सेना पर गोलाबारी की जिससे उधर के कई व्यक्ति और एक सेनापति मारा गया। इससे मरहटे निराश हो रामसिंह के साथ, दक्षिण की तरफ भाग गये (जि० २, पृ० १७३)

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७६। वीरविनोद, भाग २, पृ० ५०२। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ६०।

(२) मुन्शी देवीप्रसाद ने "जोधपुर राज्य के महाराजाओं रानियों राजकुमारों कुंवरियों की नामावली" नामक पुस्तक में लिखा है कि इसे माधोसिंह ने ज़हर दे दिया था, जिससे इसकी मृत्यु हो गई (पृ० ६४)। टॉड उसका माधोसिंह की [illegible] द्वारा ज़हरीली पोशाक दिये जाने पर मारा जाना लिखता है (राजस्थान; जि० २, पृ० ८६०)।

इलाज होने पर भी बख़्तसिंह अच्छा न हुआ और सोनोली गांव में ही वि० सं० १८०९ भाद्रपद सुदि १३ (ई० स० १७५२ ता० २२ सितम्बर) गुरुवार को उसकी मृत्यु हो गई[1]।

ख्यातों आदि में कहीं बख़्तसिंह की राणियों और सन्तति के नाम एक स्थल पर नहीं मिलते। एक जगह उसकी मृत्यु होने पर उसकी पांच राणियों का उसके साथ सती होना लिखा है।

राणियां तथा सन्तति

उसका एक पुत्र विजयसिंह था[2]।

महाराजा बख़्तसिंह का राज्य-काल एक वर्ष के क़रीब रहा, परन्तु उसने इसी बीच कई नवीन स्थान आदि बनवाये। जगह-जगह चौक बनवाने के लिए उसने पहले के बने हुए कई मकानों आदि को तुड़वा दिया। आनंदघन का मन्दिर उसके समय में ही बना था[3]।

महाराजा के बनवाये हुए स्थान

जैसा कि ऊपर लिखा गया है बख़्तसिंह लगभग एक वर्ष गद्दी पर रहा, परन्तु इतनी अल्प अवधि में ही उसने जिस नृशंसता का परिचय दिया, उसका उदाहरण इतिहास में दूसरा नहीं मिलता। वीर वह था और राजनीतिज्ञ भी, इसमें सन्देह नहीं। अपनी वीरता और चातुर्य्य के बल पर ही जोधपुर का बड़ा राज्य उसने अपने अधिकार में कर लिया था। जोधपुर का स्वामित्व प्राप्त

महाराजा का व्यक्तित्व

सर जदुनाथ सरकार लिखता है कि वह हैज़े की बीमारी से मरा (फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० १७४)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १८५-६।

दयालदास की ख्यात में बख़्तसिंह की मृत्यु की तिथि भाद्रपद वदि १३ दी है (जि० २, पत्र ७६), जो ठीक नहीं है। "वीरविनोद" में भी भाद्रपद सुदि १३ ही दी है (द्वितीय भाग, पृ० ८०५)। मिलान करने से उस दिन गुरुवार आता है, अतएव वही तिथि ठीक जान पड़ती है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १८६ और १८०।

(३) वही, जि० २, पृ० १८२।

होने के पूर्व और उसके बाद भी उसने युद्ध से कभी मुख न मोड़ा। सच्चे राजपूत के समान ही उसका जीवन सदैव लड़ाई में ही बीता, परन्तु उसने अपने उसी वीरतापूर्ण काल में कई ऐसे कार्य किये, जिससे उसका नाम सदा के लिए कलंक-कालिमा से मंडित हो गया। उसकी न्यायशीलता की कई बातें प्रसिद्ध हैं, जिनसे पाया जाता है कि उसका अपनी प्रजा के साथ उदार व्यवहार रहा। चारण कवियों ने उसके द्वारा अजीतसिंह की मृत्यु होने से उसकी बदनामी की। इसपर नाराज़ होकर उसने उनकी जीविका छीन ली थी। जब महाराजा मरण शय्या पर पड़ा हुआ था और उसको होश नहीं था, उस समय पोकरण के ठाकुर देवीसिंह चांपावत ने चारणों की जीविका पुनः बहाल करने का संकल्प महाराजा के हाथ से करवा कर संकल्प का जल अपने हाथ पर झेल लिया, जिससे पीढ़ी उनकी जीविकाएं उनको मिल गईं। उसने अपने आश्रितों के साथ बड़ा बुरा व्यवहार किया। पिता को मारकर वह अपने हाथ पहले ही रंग चुका था। फिर राजा होते ही उसने और भी बुरे काम किये, जिनका ख्यातों आदि में जगह-जगह उल्लेख मिलता है। महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास उसके संबन्ध में अपनी पुस्तक "वीरविनोद" में लिखता है—"यह महाराजा अव्वल दर्जे के बहादुर, सख्त मिज़ाज, ज़मीन के लोभी, ज़ालिम, फैयाज़ और दगाबाज़ थे। कौल का ध्यान अपने मतलब के साथ रखते थे। इनके थोड़े से राज्य करने से ही मारवाड़ी लोगों के नाक में दम आ गया था। इसने कई लोगों के हाथ पैर कटवाये और अफसर को मरवा डाला। ईश्वर ऐसे बेरहम राजा के हाथों में लाखों मनुष्यों का इन्तज़ाम ज्यादह नहीं रखता'।"

---

(१) भाग २ पृ० ८२१।

विजयसिंह की तरफ़ के बहुत से सरदार काम आये[1]। बहादुरसिंह अपनी सारी सेना के कट जाने से कृष्णगढ़ लौट गया। सैन्य बहुत कम हो जाने से उस स्थल पर लड़ाई जारी रखना उचित न समझ विजयसिंह तथा गजसिंह भी नागोर चले गये[2]।

---

(१) सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" (जि० २, पृ० १७५-७६) में भी इस लड़ाई का वृत्तान्त दिया है, परन्तु उसमें दी हुई तारीख़ें भिन्न हैं।

जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार उसकी तरफ़ के मारे जानेवाले प्रमुख सरदारों के नाम नीचे लिखे अनुसार हैं—

(१) राठोड़ प्रेमसिंह राजसिंहोत—पाली (२) राठोड़ मोहकमसिंह पद्मसिंहोत—सरवाड़ (३) राठोड़ लालसिंह सहसमलोत—सथलाणा (४) राठोड़ उम्मेदसिंह सूरजमलोत—धांधिया (५) राठोड़ जैतसिंह केसरीसिंहोत—मंढावा (६) राठोड़ बहादुरसिंह कनकसिंहोत—खाटू (७) राठोड़ लखधीर मुकन्दसिंहोत—बरणेल (८) राठोड़ भोमसिंह मुकुंदसिंहोत—बरणेल (९) राठोड़ कीरतसिंह गोपीनाथोत—हेवतसर (१०) राठोड़ सवाईसिंह किशोरसिंहोत—मेरवास (११) राठोड़ नवासिंह पद्मसिंहोत—धांमली (१२) राठोड़ जोरावरसिंह कूंपोत—समाडिया (१३) राठोड़ शुभकरण ज्ञानसिंहोत—गेठिया (१४) राठोड़ जोरावरसिंह नाहरखानोत—जैतपुर (१५) राठोड़ रायसिंह दुरजनसिंहोत—लूणवा (१६) राठोड़ सूरसिंह सावतसिंहोत—मारोठ (१७) राठोड़ मोतीसिंह जोधसिंहोत—मारोठ (१८) राठोड़ जुम्भारसिंह दीपसिंहोत—खारिया (१९) महेचा सरदारसिंह करणसिंहोत—थोब (२०) भाटी शुभकरण सूरसिंहोत—रामपुरा (२१) भाटी बल्लसिंह लाखावत—कयालिया (२२) भाटी कीरतसिंह लाखावत—खारिया (२३) भाटी प्रेमसिंह मुकन्दसिंहोत—मोदावास (२४) भाटी महेशदास नाथावत—कीटणोद (२५) भाटी जैतसिंह डूंगरसिंहोत—पाता का बाड़ा।

(जि० ३, पृ० ५-६)

दयालदास की ख्यात के अनुसार इस लड़ाई में गजसिंह की तरफ़ के बीदावत इन्द्रभाण मोहकमसिंहोत (कक्कू), बीका कीरतसिंह किशनसिंहोत, नीबावत धर्मसिंह नारायणदासोत आदि कई प्रमुख सरदार मारे गये (जि० २, पत्र ७६)।

(२) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५२-३।

टॉड ने अपने ग्रन्थ "राजस्थान" में इस लड़ाई का विस्तृत वर्णन दिया है, जो

नागोर पहुंचने पर विजयसिंह ने वहां के गढ़ की मज़बूती कर ...

इस प्रकार है—

"रामसिंह के जयआपा के साथ मारवाड़ में प्रवेश करने पर विजयसिंह भी अपनी सेना एकत्र कर शत्रु का सामना करने के लिए अग्रसर हुआ। पहले दिन केवल तोपों की लड़ाई हुई। दूसरा दिन भी ऐसे ही बीता और राठोड़ सेना की टुकड़ियों ने मरहटों का कई बार बिगाड़ किया। इसी बीच राठोड़ सेना ने मरहटों को परास्तकर लौटते हुए अपने ही सिलेपोशों को रामसिंह के सैनिक समझकर धोखे में तोपों में गोलियां भरकर मौत के घाट उतार दिया। साथ ही एक घटना और हुई, जिससे राठोड़ों की जीत पराजय में परिणत हो गई। रूपनगर (कृष्णगढ़) के राज्य-वंचित स्वामी ने, जो मरहटों की तरफ़ था, दूसरी ओर लड़ती हुई राठोड़ सेना में अपना एक सवार भेजा, जिसने यह प्रसिद्ध किया कि विजयसिंह तोप का गोला लगने से मर गया है, अतएव अब लड़ाई करना व्यर्थ है। यह सुनते ही राठोड़ों के हाथ-पैर ढीले पड़ गये और वे भाग निकले। इन दो घटनाओं से विजयसिंह का पक्ष कमज़ोर हो गया और उसने तथा उसके साथियों ने वहां से प्रयाण करना ही उचित समझा। गजसिंह और किशनगढ़ का राजा अपने-अपने स्थानों को लौट गये। विजयसिंह भी नागोर की तरफ़ चला, पर वह मार्ग भूल गया, जिससे उसने लालसिंह (रीयां) को ठीक मार्ग तलाश करने को कहा, परन्तु वह इसकी उपेक्षा कर पूर्ववत् ही चलता रहा। राजवाना होता हुआ विजयसिंह देगवाना पहुंचा। चूंकि घोड़े थक गये थे और नागोर सोलह मील दूर था, अतएव विजयसिंह ने बिना अपना परिचय दिये एक जाट से पांच रुपये में नागोर पहुंचा देना तय किया। जाट ने उसे बैलगाड़ी में बैठाकर पूरे वेग से अपने बैल दौड़ाये, पर इससे भी महाराजा को सन्तोष न हुआ और वह उससे बराबर अधिक तेज़ी से हांकने का आग्रह करता रहा। कई बार इन शब्दों के दुहराये जाने पर खीझकर अन्त में जब जाट से चुप न रहा गया तो उसने बिगड़कर उत्तर दिया—'क्या हांक हांक लगाई है? तुम कौन हो जो ऐसे भागे जा रहे हो? ऐसी मज़बूत बैलगाड़ी तो विजयसिंह के साथ मेड़ता में होनी चाहिये थी न कि इस प्रकार नागोर जाते हुए। ऐसा जान पड़ता है जैसे तुम्हारे पीछे दक्षिणी लगे हुए हों। अब चुप बैठना, क्योंकि मैं इससे तेज़ गाड़ी न चलाऊंगा।' सुबह होने पर जब गाड़ीवान ने भीतर बैठी हुई सवारी को देखा तो वह महाराजा को पहचानकर अपने रात्रि के आचरण पर बड़ा लज्जित हुआ। नागोर पहुंचने पर पांच रुपये देने के साथ ही विजयसिंह ने भविष्य में उसे और इनाम देने की प्रतिज्ञा की (राजस्थान, जि० २, पृ० ८३८-४० तथा १०३१-२)।" कुछ अन्तर के साथ जाट की बैलगाड़ी पर सवार हो महाराजा के नागोर जाने की कथा जोधपुर राज्य की ख्यात में भी मिलती है (जि० ३, पृ० १०)।

शरण ली[1]। तब रामसिंह तथा जयआपा[2] ने वहां पहुंचकर ताऊसर में डेरा किया। अनन्तर मरहटों ने मोर्चाबन्दी कर वि० सं० १८११ कार्तिक सुदि १५ (ई० स० १७५४ ता० ३१ अक्टोबर) गुरुवार को नागोर घेर लिया तथा ५०००० फ़ौज के साथ जयआपा के पुत्र जनकू ने जोधपुर पर आक्रमण किया। उसका डेरा अभयसागर के पास हुआ। गढ़ में उस समय हरसोलाव का ठाकुर चांपावत सूरतसिंह, शोभावत गोयन्ददास, खींची सुन्दर आदि थे। जनकूजी के साथ की फ़ौज ने कई बार आक्रमण किया, पर उसको भीतर प्रवेश करने का अवसर न मिला। इसी प्रकार जालोर तथा फलोधी पर भी आक्रमण हुए[3]। विजयसिंह ने नागोर में रहकर शत्रु का

रामसिंह आदि का नागोर को घेरना

टॉड ने आगे चलकर (राजस्थान, जि० २, पृ० १०१४ में) तीनों राजाओं (जोधपुर, बीकानेर एवं किशनगढ़) की पराजय के सम्बन्ध में निम्नलिखित प्राचीन दोहा उद्धृत किया है.—

चाद घणा दिन आवसी, आपावाली हेल।
भागा तीनों भूपती, माल खज़ाना मेल॥

(१) नागोर के निकट पहुंचने पर वहां के हाकिम प्रतापमल ने आगे जाकर महाराजा का स्वागत किया। अनन्तर सरदारों ने विजयसिंह से हाथी पर सवार होकर चलने की प्रार्थना की, परन्तु महाराजा ने उत्तर दिया कि मैं कौनसी विजयकर आया हूं, जो हाथी पर चढ़ूं। अन्त में सरदारों के विशेष अनुरोध करने पर महाराजा हाथी पर आरूढ़ हुआ और देवीसिंह (पोकरण) उसकी खवासी में रहा (जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ७)।

(२) सरकार-कृत 'फ़ॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पता लगता है कि पेशवा ने जयआपा को चढ़ाई का आदेश देकर नागोर का क़िला छीन लेने को कहा था। वह चाहता था कि विजयसिंह और रामसिंह में राज्य बांटकर यह झगड़ा बिना अधिक लड़ाई के तय कर दिया जाय, पर जयआपा ने इनके विरुद्ध विजयसिंह को हराने का निश्चय स्थिर रक्खा (जि० २, पृ० १३६-३८)

(३) "फ़ॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर' में ई० स० १७५४ ता० २१ अक्टोबर को मरहटों का एक टुकड़ी का अजमेर पर भी आक्रमण करना लिखा है (सरकार-कृत, जि० २, पृ० १०८)।

वीरतापूर्वक सामना किया, पर व्यर्थ होनेवाले धन-जन की हानि को रोकने के लिए अन्त में उसने महाराणा राजसिंह (द्वितीय) को लिखकर सन्धि कराने के लिए उदयपुर से चूंडावत रावत जैतसिंह कुबेरसिंहोत (सलूंबर) को बुलाया। जैतसिंह ने नागोर जाकर जयआपा से समझौते के संबंध में बातचीत की, परन्तु कोई परिणाम न निकला[1]।

जयआपा का मारा जाना

मरहटों का नागोर के चारों ओर बड़ा कड़ा घेरा था। वे रसद पहुंचानेवालों के नाक-हाथ काट लेते थे। इससे महाराजा को बड़ा दुःख होता था। ऐसी स्थिति में खोखर केसरखां तथा एक गहलोत सरदार ने व्यर्थ प्राण गवाने से आपा को मारकर मरना अच्छा समझा और उसके लिए महाराजा की अनुमति मांगी। महाराजा ने भी इस कार्य के एवज़ में उन्हें दस-दस हज़ार का पट्टा देना स्वीकार किया। तब दोनों ने मेल करानेवालों के साथ जाकर दक्षिणियों की छावनी में दुकान लगाई। एक दिन उपयुक्त अवसर पाकर आपस में लड़ते हुए उन्होंने आपा के निकट जाकर उसे मार डाला[2], पर

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२३। जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ७-८। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ६२।

"फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि ई० स० १७५५ के मार्च में ही नागोर में जल का अभाव और अकाल के कारण खाद्य पदार्थों की महंगाई के सबब लोग नागोर छोड़कर जाने लगे। तब महाराजा ने गुसाईं विजयभारती को भेजकर मरहटों के साथ सन्धि करना चाहा, लेकिन जयआपा ने ५० लाख की रक़म मांगी, जिससे वह चर्चा स्थगित रही। इस बीच जयआपा के दल में भी रसद का अभाव होने पर वह ताऊसर में आ ठहरा। फ़रवरी मास के अन्त में मल्हार और खंडेराव आये तथा मार्च के प्रारम्भ में रघुनाथराव ने उसकी मदद को जाना चाहा तो उसने इसे अनावश्यक बता उन्हें लौटा दिया (सरकार कृत, जि० २, पृ० १०८-९)।

(२) जयआपा की स्मारक छत्री नागोर से २ मील दक्षिण में विद्यमान है।

जयआपा के मारे जाने के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न पुस्तकों में भिन्न भिन्न वर्णन मिलते हैं। साथ ही उनमें आपा को मारनेवालों के नाम भी भिन्न भिन्न दिये हैं। "तवारीख़

वे भी जीवित न बचे और मारे गये। यह ख़बर फैलते ही मरहटे बड़े क्रुद्ध हुए और उन्होंने बड़े भीषण वेग से विजयसिंह के राजपूतों पर आक्रमण किया। इसी लड़ाई में सलूंबर का रावत जैतसिंह एवं चौहान राजसिंह अपनी सेना-सहित वीरतापूर्वक लड़ते हुए व्यर्थ मारे गये। उधर जयपुर का महाराजा माधोसिंह भी इस उद्योग में था कि जोधपुर का राज्य रामसिंह को मिले तो अपने यश में वृद्धि हो, परन्तु इसी बीच विजयसिंह के पास से आदमी आ जाने से उसने उसकी सहायता करना निश्चयकर बीकानेर से भी सेना मंगवाई, जो मेहता बख़्तावरसिंह की अध्यक्षता में डीडवाणे में जयपुर की सेना के शामिल हो गई। मरहटों ने इसकी सूचना पाते ही उस फ़ौज को घेरकर उसका आगे बढ़ना रोक दिया। इस प्रकार उधर से आई हुई सेना की सहायता से भी विजयसिंह को वंचित रहना पड़ा। जब चौदह मास तक भी घेरा न उठा तो अपने सरदारों से सलाहकर विजयसिंह एक रात्रि को एक हज़ार सवारों के साथ गढ़ छोड़कर बीका-नेर की ओर रवाना हो गया और ३६ घंटे में देशणोक जा पहुंचा[1]।

हु-आलमगीर सानी" एवं हरिचरणदास कृत "चहार गुलज़ार शुजाई" के आधार पर सरकार ने अपनी पुस्तक 'फ़ॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में मेल करानेवाले व्यक्तियों के साथ गये हुए राठोड़ों (राजपूतों) के साथ कहासुनी हो जाने पर जयआपा के महाराजा के प्रति अपशब्द व्यवहार करने से क्रुद्ध होकर उनका उसको मार डालना लिखा है (जि० २, पृ० १८०-१)। परन्तु फ़ारसी तवारीख़ों का कथन सन्दिग्ध ही है। 'चहार गुलज़ार" में जयआपा का सिर काटकर बचे हुए तीन राजपूतों का उसे लेकर बख़्तसिंह के पास जाना लिखा है (इलियट; हिस्टरी ऑव् इंडिया, जि० ८, पृ० २१०), पर उस समय तो जोधपुर का शासक विजयसिंह था। सरकार ने मारनेवालों को राठोड़, फ़ारसी तवारीख़ों में राजपूत और "वंशभास्कर" में ईंदा (पड़िहार) लिखा है। इस सम्बन्ध में मूल में दिया हुआ कथन ही अधिक माननीय है।

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७१। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८०२-६। जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ८१०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ५२।

सरकार कृत 'फ़ॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि जयआपा म[illegible]

विजयसिंह के आगमन का समाचार बीकानेर पहुंचने पर गजसिंह ने उसके आदर-सत्कार का समुचित प्रबंध किया और मेहता रघुनाथसिंह आदि कई व्यक्तियों को उसका स्वागत करने के लिए भेजा। अनन्तर परस्पर मिलकर शत्रु पर आक्रमण करने के पूर्व माधोसिंह की सहायता प्राप्त आवश्यक समझ गजसिंह तथा विजयसिंह जयपुर गये। वहां करौली के महाराजा गोपालसिंह तथा बूंदी के रावराजा कृष्णसिंह से उनकी भेंट हुई। कुछ ही समय बाद माधोसिंह के यहां पुत्र उत्पन्न होने से उत्सव आदि के कारण उनके रहने की अवधि बढ़ती गई और जिस कार्य के लिए वे गये थे उसके संबंध में कोई बात न हुई। एक दिन उपयुक्त अवसर देखकर विजयसिंह की सहायता की चर्चा गजसिंह ने माधोसिंह के आगे की, पर उसने कोई ध्यान न दिया। फिर जब उसने मेहता भीमसिंह आदि को इस संबंध में स्पष्ट उत्तर मांगने के लिए भेजा तो माधोसिंह की इच्छानुसार हरिहर बंगाली ने कहा कि यदि विजयसिंह को सहायता दी गई तो जयपुर को मरहटों से लोहा लेना पड़ेगा, जिसमें एक करोड़ रुपया खर्च होगा। इतना रुपया विजयसिंह दे तो उसे सहायता दी जा सकती है। यह उत्तर पाकर गजसिंह तथा विजयसिंह वहां व्यर्थ समय गंवाना उचित न समझ माधोसिंह से विदा प्राप्त करने गये। उस समय माधोसिंह ने गजसिंह को एकान्त में ले जाकर, दोनों राज्यों की पारस्परिक मैत्री का स्मरण दिलाते हुए कहा कि आपके राज्य के फलोधी आदि के ८४ गांव, जो

विजयसिंह का बीकानेर से गजसिंह के साथ जयपुर जाना

अन्य पड़ोसी राज्यों से सहायता मंगवाने के अतिरिक्त महाराजा ने दिल्ली में बादशाह के पास भी सहायतार्थ अपने आदमी भेजे और मरहटों को निकालने के एवज़ में दस हज़ार रुपया प्रति दिवस लड़ाई के समय देने का इक़रार किया, परन्तु वहां से कोई सहायता न आई। इधर इसी बीच जयसलमेर, पोकरण और जोधपुर तथा जयपुर के सरदारों के साथ आई हुई सेनाओं को मरहटों ने हराया। साथ ही पेशवा ने भी और सहायक सेना भिजवाई। इन सब कारणों एवं अकाल पड़ जाने के कारण जब गढ़ में अधिक टिक सकना कठिन हो गया तो ई० स० १७५५ ता० १२ नवंबर को विजयसिंह अपने चार सौ अनुयायियों सहित नागोर से निकल गया (जि० २, पृ० १८२)।

अजीतसिंह ने जोधपुर राज्य में मिला लिये थे वे सब मैं रामसिंह से कह-कर वापस दिला दूंगा। रहा विजयसिंह उसका प्रबंध यहां कर दिया जायगा (मरवाया या क़ैद कर दिया जायगा), परन्तु गजसिंह ने यह घृणित प्रस्ताव स्वीकार करने से इनकार कर दिया। माधोसिंह ने फिर भी बहुत ज़ोर दिया, पर वह अपने निश्चय पर स्थिर रहा। तब माधोसिंह ने उसका विवाह करने के बहाने उसे यहां रोकना चाहा, पर उसने यही उत्तर दिया कि पहले विजयसिंह को अपने राज्य की सीमा तक पहुंचा दूं, तब लौट सकता हूं। फिर माधोसिंह ने गजसिंह से कहा कि आप पधारें, मैं विजयसिंह से बातें करलूं। गजसिंह के मन में उसकी बातों से शंका तो पैदा हो ही गई थी, उसने उसी समय प्रेमसिंह किशनसिंहोत बीका तथा हठीसिंह बणीरोत को विजयसिंह की रक्षा पर नियुक्त कर दिया[1]।

माधोसिंह का विजयसिंह पर चूक करने का निष्फल प्रयत्न

विजयसिंह के पक्ष का रीयां का ठाकुर जवानसिंह सूरजमलोत, जयपुर के नाथावतों के यहां व्याहा था। उसकी स्त्री ने जवानसिंह को उसके स्वामी (विजयसिंह) पर चूक होने की सूचना ठीक समय पर देदी। इसपर वह विजय-सिंह को, जो उस समय माधोसिंह से बातें कर रहा था, सावधान करने के लिए गया। माधोसिंह ने लघुशंका करने के बहाने वहां से हटना चाहा, परन्तु उसी समय बीकानेर के पूर्वोक्त ठाकुरों ने उसकी कमर में हाथ डालकर उसे बैठा दिया और कहा कि हमें

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ७६-८१। वीरविनोद, भाग २, पृ० २०१। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ६२-३।

जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि पहले विजयसिंह का पक्ष ग्रहण कर माधोसिंह दक्षिणियों से लड़ा था, पर बाद में सरदारों के यह समझाने पर कि रामसिंह को जयपुर की कुंवरी व्याही है, अतएव उसका साथ देने से उसपर एहसान ही रहेगा वह दक्षिणियों का पक्षपाती हो गया। उसने उनसे कहा कि यदि मेरे साथ तीन हज़ार फ़ौज दी जाय तो मैं विजयसिंह को गिरफ़्तार करने अथवा मार डालने का ज़िम्मा लेने को तैयार हूं (जि० ३, पृ० ११)।

आशंका है, अतएव आप न जावें। इसपर जयपुर के ठाकुर उसपर आक्र-
मण करने को उद्यत हुए, परन्तु माधोसिंह के मना करने से वे रुक गये।
विजयसिंह भी पूर्वोक्त ठाकुरों के कहने पर गजसिंह के पास चला गया।
अनन्तर उन ठाकुरों ने माधोसिंह से अपने आचरण की क्षमा मांग ली।
गजसिंह ने भी मेहता बख़्तावरसिंह को उसके पास भेजकर उसे प्रसन्न
कर लिया। फिर अपने जयपुर लौट आने तक के लिए मेहता भीमसिंह
आदि को वहां छोड़कर गजसिंह ने विजयसिंह के साथ प्रस्थान किया[1]।

पाटण, पचेरी और लोहारू होते हुए वे दोनों रिणी पहुंचे, जहां
नागोर से समाचार पहुंचा कि वि० सं० १८१२ माघ सुदि २ (ई० स०

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५३-४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का कुछ भिन्नता के साथ वर्णन मिलता है, जो इस प्रकार है—

"... विजयसिंह माधोसिंह से मिलने गया। वहां ... [illegible] ... माधोसिंह को ... [illegible] ... (विजयसिंह) ... [illegible] ... अनन्तर ... [illegible]

[illegible]

मरहटों के साथ सन्धि स्थापित होना

१७५६ ता० २ फ़रवरी) को मरहटों से संधि हो जाने के कारण उन्होंने अपना घेरा उठा लिया है[1]। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि मरहटों से सन्धि जोधपुर के दो सरदारों—सिंघवी फ़तहचंद तथा देवीसिंह महासिंहोत—के उद्योग से हुई थी। इसके अनुसार जोधपुर, नागोर, मेड़ता आदि मारवाड़ का आधा राज्य विजयसिंह को तथा जालोर, मारोठ, सोजत आदि आधा राज्य रामसिंह को मिला एवं लड़ाई बन्द करने के एवज़ में ५१००००० रुपये[2] तथा अजमेर का इलाका मरहटों को देना तय हुआ[3]। इस समाचार से बड़ी प्रसन्नता हुई तथा गजसिंह ने बहुत सा सामान भेंट में देकर विजयसिंह को जोधपुर भेजा, जहां पहुंचने पर उसने बख़्तसिंह-द्वारा तागीर किये हुए ५२ गांवों की सनद तथा सवा लाख रुपये नकद भेजे, जैसी कि उसने बीकानेर में रहते समय प्रतिज्ञा की थी[4]।

इसके कुछ समय बाद वि० सं० १८१३ (ई० स० १७५६) में

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८२। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ६४।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार इसमें से कुछ रुपये तो उसी समय दे दिये गये और शेष के एवज़ में फ़तहचंद का भाई सिंघवी बुधमल तथा अन्य कई व्यक्ति ओल में दिये गये (जि० ३, पृ० १२)। दयालदास की ख्यात के अनुसार यह रक़म २०००००० रुपये थी (जि० २, पत्र ८१)। सरकार ५०००००० लिखता है। उसके अनुसार इस रक़म का आधा एक साल में और शेष आधा अगले दो वर्षों में देना तय हुआ (फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर, जि० २, पृ० १८८)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० १२। सरकार; फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर, जि० २, पृ० १८८। इसी पुस्तक से पाया जाता है कि ऊपर दी हुई अन्तिम शर्त के अतिरिक्त दूसरी दो शर्तों का पालन नहीं हुआ। मरहटों को दी जाने वाली रक़म बहुत अधिक होने से ई० स० १७५७ के जून मास में जब मरहटों की तरफ़ से रघुनाथ राजपूताने में गया तो जोधपुर के मन्त्रियों ने उसके पास उपस्थित हो शर्तों में कुछ कमी करने की प्रार्थना की, परन्तु उसने सिंधिया के मामले में हस्तक्षेप करना उचित न समझा (जि० २, पृ० १६३-४)।

(४) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ८१। पाउलेट, गैज़ेटियर, ऑव्

जोधपुर राज्य में बड़ा भीषण अकाल पड़ा। रामसिंह अपनी सुसराल झलाय (जयपुर) चला गया। उसकी अनुपस्थिति में जोधपुर के सरदारों ने जालोर, सोजत, मेड़ता आदि रामसिंह को दिये हुए परगनों पर अधिकार करने का इरादा प्रकट किया। पोकरण के ठाकुर देवीसिंह ने यह कहकर इसका विरोध किया कि हमने मरहटों से एक वर्ष का वादा किया है, जिसमें अभी पांच मास और शेष हैं, अतएव इतनी अवधि तक हमें शांत रहना चाहिये; परन्तु अकाल की तकलीफ़ों के कारण जोधपुर के सरदारों की हालत दिन-दिन बिगड़ रही थी, जिससे उन्होंने महाराजा की आज्ञा प्राप्तकर आक्रमण कर ही दिया और वहां उनका अधिकार हो गया। इसकी खबर पाकर मरहटे बड़े अप्रसन्न हुए तथा जनकोजी ने स्वयं चढ़ाई करने का विचार किया, परन्तु पीछे से सानूजी जादव (यादव) उसकी आज्ञा पाकर अपनी एवं रामसिंह की सम्मिलित फ़ौज के साथ मेड़ते गया। इस अवसर पर पोकरण के देवीसिंह ने उसका विरोध न किया। इस तरह जोधपुर के सरदारों के दो दल हो गये—एक महाराजा के पक्ष में और दूसरा उसके विपक्ष में। देवी[illegible] तथा राजभक्त सरदारों ने महाराजा को आने को लिखा। उसने सरदारसिंह ([illegible]), रघुनाथ नरसिंहोत आदि के साथ ससैन्य जाकर कई [illegible] सरदारों एवं मरहटों की सेनाओं को परास्त किया तथा पीसांगन आदि से पेशकशी वसूल की। कुछ दिनों बाद जब उसने देखा कि उसको [illegible] की कमी है और जितने व्यक्ति उसके साथ हैं, उनको [illegible] भी ठीक नहीं है, तो उसने आसोप [illegible] रघुनाथसिंह, सुरताणसिंह आदि कई व्यक्तियों को भेजकर मरहटों से संधि की बात की। जनकूजी, [illegible] आदि ने बात तयकर रामसिंह को जितनी भूमि दिलाई थी वह उसे वापस दिलवाई गई, जिसके

[illegible]

[illegible]

अनुसार जालोर, मेड़ता आदि विजयसिंह को खाली कर देने पड़े[1]।

इसी बीच जोधपुर में कुछ सरदार मनमानी करने लगे। इसकी सूचना पाकर, मरहटों के साथ पुनः सन्धि स्थापित होने के बाद महाराजा ने जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। उन दिनों बावरियों के झुंड धाड़े मारकर बड़ा नुक़सान करते थे। उनमें नींबाज के बावरी मुख्य थे। बावरी पांचिया के झुंड के गांव कुडछीग्रणा को लूटकर बाघोरिया के पहाड़ में छिप जाने की खबर पाने और उस संबंध में फ़रियाद होने पर ड्योढ़ीदार अणदू, कछवाहा जैसा आदि को नागोर के आसामियों के साथ उनका प्रबंध करने के लिए भेजा। वे उन्हें समझा-बुझाकर उनके मुखियों को साथ ले आये, जिन्हें इशारा पाते ही सिलेपोशों ने मार डाला। इस प्रकार उस दिन से देश में बावरियों का उत्पात बंद हुआ। यह समाचार जब नींबाज के कल्याणसिंह के पास पहुंचा तो वह बहुत नाराज़ हुआ[2]।

महाराजा का उपद्रवी बावरियों को मरवाना

वि० सं० १८१४ (ई० स० १७५७) के फाल्गुन मास में विजयसिंह जोधपुर पहुंचा। उस समय कुछ सरदारों ने जाने की आज्ञा मांगी, जिसके न मिलने पर भी ठाकुर देवीसिंह (पोकरण), ठाकुर कल्याणसिंह (नींबाज), ठाकुर छतरसिंह (पाली), जगतसिंह तथा भाटी दौलतसिंह अपने-अपने ठिकानों को चले गये[3]।

कुछ सरदारों का बिना आज्ञा जोधपुर से चले जाना

इन्हीं दिनों मारवाड़ के कितने एक सरदार उपद्रवी हो गये। छोटी खाटू का ज़ालिमसिंह, मगरासर का नारणोत हठीसिंह तथा डीडवाणा के पास शेखावत और आयूणी की तरफ़ करमसोत लूट-मार करने लगे। इसपर उनका दमन करने के लिए नागोर से सेना भेजी गई।

उपद्रवी सरदारों से दंड वसूल करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० १३-१६।

(२) वही, जि० ३, पृ० १६।

(३) वही, जि० ३, पृ० १६-१७।

इससे भी जब सरदारों का उपद्रव शांत न हुआ तो धायभाई जगू इस कार्य के लिए नियुक्त किया गया। अन्य सरदारों ने जब उसके साथ जाना स्वीकार नहीं किया तब अकेले ही पांच हज़ार फ़ौज एकत्र कर उसने कुछ सरदारों पर चढ़ाई की और बड़ी खाटू, झाड़ोद, मगरासर आदि ठिकानों और शेखावतों, लाडखानियों आदि से दंड वसूल किया। इसके बाद वह जोधपुर लौट गया[1]।

महाराजा का विरोधी सरदारों को राज़ी करना

मरहटों के साथ की हुई सन्धि के विपरीत महाराजा की अनुमति से उसके सरदारों ने रामसिंह की अनुपस्थिति में उसको मिले हुए इलाक़ों पर क़ब्ज़ा कर लिया था। इससे पोकरण का ठाकुर देवीसिंह नाराज़ होकर अपने ठिकाने में बैठ रहा था। वि० सं० १८१५ में महाराजा ने दो बार अपना आदमी भेजकर उसे बुलाया, पर वह गया नहीं और उसने कहला दिया कि महाराजा को तो रास का ठाकुर केसरीसिंह प्रिय है, उसको मेरी क्या आवश्यकता? तब महाराजा ने केसरीसिंह को उसे लाने के लिए भेजा, पर वह भी नाकामयाब रहा। इसी बीच ठाकुर कल्याणसिंह (नींबाज) का देहांत हो जाने पर बिना महाराजा की आज्ञा के ही केसरीसिंह का पुत्र दलसिंह वहां गोद चला गया। इससे महाराजा को बड़ा असन्तोष हुआ, जिससे केसरीसिंह (रास), ठाकुर मदनसिंह (जावला) और हाड़ा दलसिंह भी उसका साथ छोड़कर चले गये और मंडोवर में ठहरे। इसकी खबर मिलने पर महाराजा ने सिंघवी फ़तहचंद तथा पीपाड़ का ठिकाना देकर गोयन्ददास को उधर भेजा। कुछ समय बाद जगतसिंह (पाली), छत्रसिंह (आसोप), उदयसिंह (भाद्राजूण) तथा भाटी दौलतसिंह (लवेरा) भी महाराजा से विदा मांग नींबाज में केसरीसिंह के शामिल हो गये और उन्होंने रामसिंह से पत्रव्यवहार किया। यह समाचार पाकर महाराजा ने सिंघवी फ़तहचंद को नींबाज भेजा, जो वि० सं० १८१६ (ई० स० १७५९) में विरोधी सरदारों को अपने साथ ले जोधपुर के बख़्तसागर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० १७-२०।

पर आया। महाराजा ने उनसे अपनी-अपनी हवेलियों में डेरा करने के लिए कहलाया तो उन्होंने उत्तर दिया कि आजकल धायभाई की बात मानी जाती है, यदि उसका वचन दिलाया जाय तो हम सब हवेलियों में जाकर ठहरें। इसपर कह-सुनकर महाराजा ने धायभाई जगा को सरदारों के पास भेजा, जो देवीसिंह के डेरे पर बैठे थे, पर उचित आदर-सत्कार न होने से वह नाराज़ होकर वापस लौट गया। सरदार वहां से कूचकर गांव बणाड़ चले गये। तब जोधा रघुनाथसिंह, चांपावत सूरतसिंह और सिंघवी फ़तहचंद पुनः उनके पास भेजे गये। उन्होंने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया, पर सरदारों का क्रोध शान्त न हुआ। सरदारों ने कहा कि महाराजा की भूमि तो स्वामी आत्माराम रक्खेगा और उसे तो धायभाई की ज़रूरत है हमारी नहीं। अनन्तर वे वहां से कूचकर बीसलपुर गये। तब महाराजा ने स्वयं जाकर उनसे बात की और वह उनका समाधान कर उन्हें अपने साथ जोधपुर ले गया, जहां वे अपनी-अपनी हवेलियों में ही ठहरे[1]।

उपद्रवी सरदारों में से कुछ का छल से क़ैद किया जाना

उसी वर्ष फाल्गुन वदि १ (ई० स० १७६० ता० २ फ़रवरी) को महाराजा के गुरु स्वामी आत्माराम का देहान्त हो गया, जिसका महाराजा को बड़ा दुःख हुआ, क्योंकि वह उसकी बड़ी भक्ति करता था। इसपर खींची गोवर्द्धन ने सरदारों को कहलाया कि महाराजा बड़ा उदास है, आप मिट्टी देने को आवें। तब देवीसिंह (पोकरण), केसरीसिंह (रास), छत्रसिंह (आसोप), भगवंतसिंह, रघुनाथसिंह तथा जवानसिंह वहां गये। उनके साथ के आदमी बाहर ही रोक दिये गये और फिर राणियों के आत्माराम की मृत देह का आखिरी दर्शन करने के लिए आने के बहाने फाटक का द्वार बन्द कर दिया गया। इतने में नींबाज का ठाकुर दलजी आया, जो इमरती पोल की खिड़की के मार्ग से भीतर गया, पर आगे लोहापोल के बन्द होने से वह वहीं बैठ गया। महाराजा सूरजपोल तक आत्माराम की अर्थी के साथ गया, इसके बाद सरदारों ने उसे सान्त्वना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० २०-२२।

देकर पीछा भेज दिया, जिसपर वह शृंगार चौकी पर जाकर खड़ा हो गया। वहां एकान्त देख धायभाई ने उससे निवेदन किया कि इस समय सरदारों को गिरफ़्तार करने का अच्छा मौक़ा है, क्योंकि वे अकेले ही हैं। खींची गोवर्द्धन ने भी जब इस बात का अनुमोदन किया तो महाराजा ने यह कहकर एक प्रकार से अपनी सम्मति दे दी कि जो अच्छा समझो करो। तब उनके कहने से ड्योढ़ीदार गोयन्ददास महाराजा को ढ़ाढ़स देने के बहाने उन्हें बुलाने गया। रघुनाथसिंह (नाहरसिंहोत) और जवानसिंह (सूरजमलोत) तो कुछ आगे रवाना हो गये। पीछे से देवीसिंह, केसरीसिंह तथा छत्रसिंह ने भी, भगवन्तसिंह को आने के लिए कहकर प्रस्थान किया। नगारखाने की पोल से जाते समय जब उन्होंने लवापोल को बन्द देखा तो देवीसिंह ने कहा कि आज का दिन तो बड़ा भयावना प्रतीत होता है। केसरीसिंह ने उत्तर दिया कि कुछ नहीं केवल तुम्हारा भ्रम है। इसके बाद ये ज़नानी ड्योढ़ी से आगे बढ़े ही थे कि उन्हें वहां छिपे हुए राज्य के आदमियों ने निकलकर पकड़ लिया। गोयन्ददास ने, जो कुछ पीछे आ रहा था, जब बीच-बचाव करने की कोशिश की तो धायभाई के इशारे से वह भी पकड़ लिया गया। रास के ठाकुर केसरीसिंह का पुत्र दौलतसिंह, जो नींबाज गोद गया था, पीछे से पहुंचा था और लवापोल बन्द देख बाहर ही बैठ गया था। भीतर हल्ला सुनकर वह बाहर चला तो भावसिंह ने उसे रोका, जिसपर दोनों ने एक दूसरे के घाव किये। अनन्तर दोनों द्वार खोल अन्दर ले लिये गये, जहां महाराजा ने दौलतसिंह की मरहमपट्टी करने की आज्ञा दी। अनन्तर उसका प्रबन्ध (क़ैद) किया गया। देवीसिंह, केसरीसिंह और छत्रसिंह भी क़ैद मे डाल दिये गये। देवीसिंह ने क़ैदखाने में अन्न-जल ग्रहण करना छोड़ दिया। क़ैद की ही हालत में तीनों क्रमशः छः दिवस, तीन साल तथा एक मास बाद मर गये। दौलतसिंह पीछे से मुक्त कर दिया गया। अनन्तर महाराजा ने बीकानेर से राठोड़ कनीराम रामसिंहोत को बुलाकर आसोप और बड़लू का पट्टा उसके नाम लिख दिया[1]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० २३-२६। वीरविनोद, भाग २,

देवीसिंह की मृत्यु का उसके पुत्र सबलसिंह को बड़ा दुःख हुआ और वह फ़ौज-सहित पाली गया, जहां उसके पास चांपावतों, कूंपावतों, ऊदावतों, भाटियों आदि की दस हज़ार सेना एकत्र हुई। तब उनके विरुद्ध जोधपुर से पांच हज़ार फ़ौज के साथ धायभाई जगा रवाना हुआ। नागोर से दो हज़ार फ़ौज आसोप क़ायम कर बड़लू पहुंची, जहां के स्वामी ने कुछ दिनों तक तो उसका सामना किया, परन्तु इसके बाद एक रोज़ रात्रि के समय वह वहां से निकल गया। फिर वह फ़ौज पीपाड़ गई। धायभाई के प्रस्थान करने का समाचार सुनकर सबलसिंह ने लड़ाई करने की इच्छा प्रकट की, पर पीछे से पाली के जगतसिंह ने इस कार्य की हानि दिखलाकर उसको लड़ने से मना किया, जिससे उस समय लड़ाई न हुई[1]।

विरोध करने के लिए एकत्र हुए सरदारों पर सेना भेजना

उन्हीं दिनों जोधपुर में भासरसिंह (रायपुर) ने महाराजा से कहा कि यदि पीपाड़ की फ़ौज मेरे साथ की जाय तथा दो भारी तोपें दी जायं तो मैं नींबाज खाली करालूं। इसपर फ़ौज तथा बागण, नागण एवं अडगयाण नाम की तीन तोपों के साथ वह उधर रवाना हुआ। वहां पहुंचकर उसने एक तरफ़ मोर्चा लगाया। उसका पुत्र केसरीसिंह भी सात सौ फ़ौज के साथ उसके शामिल हो गया और सारा प्रबंध करने लगा। इस बीच बालू जोशी, जो जयपुर गया हुआ था, वहां से लौटता हुआ मेड़ते पहुंचा। जब उसने उस स्थान को खाली देखा तो आकर इसकी सूचना महाराजा को दी और यह कहकर उसे मेड़ते पर अधिकार करने की सलाह दी कि रामसिंह को लेकर सरदार उधर आ रहे हैं, जिनका यहां

महाराजा का सेना भेजकर मेड़ता पर क़ब्ज़ा करना

पृ० ८२४। इस सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है—

केहर देवो छत्रमल, दौलो राजकुमार।
मरते मोड़े मारिया, चोटीवाला चार॥

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० २६।

क़ब्ज़ा होना अपने लिए हानिकर होगा। इसपर महाराजा ने उसे ही उधर जाने की अनुमति दी। नींबाज पहुंचकर उसने पंचोली रामकरण एवं खींची शिवदान से सलाह कर वहां से घेरा हटवा दिया। अनंतर जैतारण में कुछ तोपें रखता हुआ वह कालू पहुंचा। वहां रहनेवाले फ़तहसिंह रामसिंहोत को जब निश्चय हो गया कि जोधपुर की सेना मेड़ता जा रही है तो उसने इसकी सूचना तत्काल पंडित के पास, जो एक सौ दक्षिणी सवारों के साथ वहां रहता था, भिजवाई, पर इतनी शीघ्रता में फ़ौज एकत्र करना असंभव था। इतने में तो जोधपुर की सेना वहां जा पहुंची और सफ़ील के ऊपर चढ़कर भीतर घुस गई। ऐसी स्थिति में पंडित भागकर मालकोट में चला गया। अनन्तर देराणी दरवाज़ा खोल-कर सारी सेना भीतर घुस गई और उसने एक पहर तक मेड़ता में खूब लूट मचाई। फिर जगह-जगह सरदारों के पास परवाने भेजे जाने पर राठोड़ सरदारसिंह (नींवड़ी), राठोड़ बख़्शीराम (नोखा), राठोड़ सुलतानसिंह (कूंपड़ावास) आदि मेड़ता में उपस्थित हो गये[1]।

रामसिंह का मेड़ते पर अधिकार करने का विफल प्रयत्न

रामसिंह उस समय हरसोर में था। मेड़ते पर जोधपुर का क़ब्ज़ा होने की खबर पाकर उसने मेड़तियों, चांदावतों, चांपावतों, ऊदावतों आदि की सत्रह हज़ार सेना एकत्र कर वहां से कूच किया और मेड़ता पहुंचकर मालकोट में ठहरा। मेड़ते को घेरकर उसने कई बार आक्रमण कर भीतर प्रवेश करने का प्रयत्न किया, परन्तु गढ़ के भीतर के लोगों के सतर्क रहने के कारण उसे सफलता न मिली। अनन्तर गढ़ के रक्षकों ने धाय-भाई के पास रामसिंह के घेरे की सूचना भेजकर उससे सहायता चाही। धायभाई उस समय चांपावतों के प्रबन्ध मे व्यग्र था। उन्हें जालोर में भगाकर वह मेड़ता की ओर चला। उसके साथ तोपखाना होने की भी खबर थी, जिससे रामसिंह के साथ के सरदारों ने उस समय उसे वहां से

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० २६-७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५४।

हट जाने की सलाह दी। इसपर प्रातःकाल के समय कूचकर रामसिंह भैरूंदा चला गया तथा उसके सहायक सरदार अपने-अपने ठिकानों को लौट गये। तब धायभाई परबतसर गया, जहां के कई सरदार उसकी सेवा में उपस्थित हो गये। रामसिंह परबतसर होता हुआ रूपनगर चला गया। इस बीच खेरवा, बोरूंदा, राहण आदि के विद्रोही सरदारों ने महाराजा की अधीनता स्वीकार करली, जिनकी जागीरों में राज्य की तरफ़ से वृद्धि की गई[1]।

पंचोली रामकरण का विरोधी सरदारों का दमन करना

उन्हीं दिनों अन्य विद्रोही चांपावत सरदार राज्य में उपद्रव करते-करते सोजत तक पहुंच गये। इसपर धायभाई ने परबतसर से पंचोली रामकरण को राठोड़ पृथ्वीसिंह (फ़तहसिंहोत, चंडावल का), राठोड़ पहाड़सिंह (जैतावत, बगड़ी का), राठोड़ भूरसिंह (कूंपावत, चांदेलाव का), राठोड़ फ़तहसिंह (श्यामसिंहोत, बलूंदा का), राठोड़ लालसिंह (रायमलोत, राहण का), साहबसिंह (बिशनसिंहोत, बोरूंदा का), केसरीसिंह (भाखरसिंहोत, रायपुर का), जैतसिंह (भवानीसिंहोत, लांपिया का) तथा कई दूसरे छोटे-मोटे सरदारों के साथ उनका दमन करने के लिए रवाना किया। कुछ झगड़े के बाद राज्य के सरदारों ने चांपावतों का अच्छी तरह से दमन कर दिया, पर इसमें रामकरण ज़ख्मी हुआ और पृथ्वीसिंह (चंडावल का) मारा गया। अनन्तर रामकरण ने कूंपावतों से बात की। जगराम ने कहा कि आसोप का पट्टा दिया जाय तो मैं चाकरी स्वीकार करूं, परन्तु आसोप का ठिकाना इससे पूर्व ही कर्णराम को दिया जा चुका था, अतएव उसे गजसिंहपुरा, रडोद, रतकुड़िया तथा जालपुरा का २०००० का नया पट्टा और आसोप के बराबर कुरब दिया गया। इसी प्रकार दूसरे कई सरदारों को भी नये पट्टे दिये गये, जिसपर उन्होंने राज्य की सेवा स्वीकार कर ली। चांपावतों का इस समय भी थोड़ा-थोड़ा उपद्रव जारी

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० २७-२९। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८५४-५।

था, अतएव रामकरण पुनः उनके निकट गया। गांव अटाड़ा में उसका डेरा होने पर धायभाई भी उसके शामिल हो गया। नाथावत सोजत के निकट थे। जब उन्हें यह समाचार मिला तो वे रात्रि के समय वहां से निकल गये। तब जोधपुर की सेना का सोजत पर अधिकार हो गया। अनन्तर रामकरण ने जालोर से दक्षिणियों को निकालकर वहां भी जोधपुर का अधिकार स्थापित किया। वहां से वह साचोर गया[1]।

जोशी बालू का कई ठिकानों से पेशकशी वसूल करना

मेड़ते में रहते समय धायभाई ने वि० सं० १८४८ (ई० स० १७९१) में जोशी बालू को तीन हज़ार सेना के साथ दूसरे कुछ विरोधी सरदारों के विरुद्ध भेजा। उसने पीसांगण, गोविन्दगढ़, सरवा, मसूदा, देवलिया, टांटोटी, भिणाय (अजमेर-मेरवाड़ा के ठिकाने) आदि से पेशकशी वसूल की। बड़ली के ठाकुर ने रुपया दिया नहीं, जिसपर बालू ने धायभाई को लिखा कि मैं बड़ली और केकड़ी पर आक्रमण करूंगा, अतएव आप चार बड़े सरदारों को मेरे पास भेज दें। इसपर जोधपुर में रहते समय धायभाई ने राठोड़ ज़ालिमसिंह (शेरसिंहोत), राठोड़ फ़तहसिंह (श्यामसिंहोत), राठोड़ दलेलसिंह (अभयसिंहोत) एवं राठोड़ सालमसिंह (लखधीरोत, सरनावड़ा का) को जाने की आज्ञा दी, परन्तु वे इसमें ढील-ढाल करते रहे। इस बीच बालू जोशी ने बड़ली, जूनिया, सावर, गुलगांव, पारा (अजमेर मेरवाड़ा के अन्य ठिकाने) आदि से पेशकशी ठहराई और राजगढ़ पर अधिकार कर लिया[2]।

राठोड़ सेना का अजमेर पर अधिकार करने का विफल प्रयत्न

अनन्तर बालू ने ससैन्य अजमेर पहुंचकर उसे घेर लिया। तीन दिन तक तो दक्षिणियों ने राठोड़-सेना का सामना किया, पर जब तोपों की मार से नगरकोट की सफ़ील का कंगूरा गिर गया तो वे गढ़ के भीतर चले गये। तब नगर में विजयसिंह का अधिकार स्थापित हो गया। राठोड़-सेना का डेरा बीसला तालाब पर था। उसने फिर गढ़

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० २६-३२।

(२) वही, जि० ३, पृ० ३२-४।

बीटली (तारागढ़) पर घेरा डाला। दक्षिणी सरदारों ने माधवजी (महादजी) सिंधिया को लिखा कि गढ़ राठोड़ों ने घेर लिया है और सामान की कमी है, अतएव आप सहायता को जल्द आवें, अन्यथा गढ़ छूट जायगा और तीनों मुल्कों (मेवाड़, जयपुर और मारवाड़) से हमारा अधिकार हट जायगा। इसपर महादजी सिंधिया ने अजमेर की तरफ प्रस्थान किया और वहां (अजमेर) के अपने सैनिकों को कहला दिया कि एक सप्ताह तक डटे रहना तब तक मैं आता हूं। उसके आने का समाचार सुनकर जोधपुरवालों ने घेरे में सख़्ती की। श्रावणादि वि० सं० १८४८ (चैत्रादि १८४९) ज्येष्ठ सुदि १० (ई० स० १७९२ ता० ९ जून) को, जब जोधपुर के सैनिक असावधान थे, दक्षिणियों ने गढ़ से बाहर निकलकर उनपर आक्रमण कर दिया, जिसमें दोनों तरफ के कई व्यक्ति मारे गये। इतने में जोधपुर के और सरदार सावधान हो गये और उन्होंने गोली चलाकर दक्षिणियों को पीछा गढ़ में घुसने पर बाध्य किया। इसी बीच दक्षिणियों की सहायक सेना निकट आ गई, जिसकी सूचना मिलने पर बालू घेरा उठाकर भांवता चला गया, जहां उसने गांव के पास डेरा कर अपनी रक्षा का समुचित प्रबन्ध किया। दक्षिणी सेना अजमेर पहुंची। धायभाई उन दिनों मेड़ते में था। उसने वहां से गुलाबराय आसोपा को दक्षिणियों से बात करने के लिए भेजा। महादजी ससैन्य अजमेर से कूचकर बुधवाड़ा और वहां से चलकर दूसरे दिन बालू की सेना के निकट जा पहुंचा। इस अर्से में जोधपुर की सेना के ऊदावत, मेड़तिये आदि कितने ही सरदार महादजी से मिल गये और उन्होंने उससे जोशी को पकड़वा देने का वायदा किया। जोशी को इसकी खबर मिलने पर उसने उन्हें रोकना चाहा, पर वे रुके नहीं। तब उसने उनका पीछा करने का इरादा किया, परन्तु इसकी हानि बतलाकर अजानसिंह ने उसे ऐसा करने से रोक दिया। सरदारों के चले जाने से जोधपुर की सेना में खलबली मच गई और लोग जोशी का साथ छोड़कर मेड़ता की तरफ़ चले गये। कुछ यहां रह गये, जिनमें देवलिया (अजमेर ज़िला) का ठाकुर रघुनाथसिंह भी था। उन्हें साथ लेकर रनूंदा होता

हुआ जोशी मेड़ता पहुंचा। धायभाई को जब सारा हाल मालूम हुआ तो अपने सरदारों पर से उसका विश्वास उठ गया और उसने जोधपुर आना चाहा। जोरावरसिंह (खींवसर का) तथा इन्द्रसिंह (खेरवा का) ने उसे आश्वासन देकर रोका और मेड़ते की मज़बूती की। इसी बीच गुलाबराय आसोपा के पास से दूत ने आकर खबर दी कि नौ लाख रुपया पेशकशी का ठहराकर उसने महादजी को पीछा लौटा दिया है[1]।

महादजी के लौटते ही चांपावत आदि विद्रोही सरदार रायपुर के केसरीसिंह के साथ मारवाड़ में घुस वहां उपद्रव करने लगे। इस पर धायभाई ने गांव मजल और कुनाड़ा तक उनका पीछा किया, जिसपर सारे ऊदावत तो अपने अपने घर लौट गये और चांपावत चौरासी की तरफ गये। तब धायभाई ने प्रथम पाली पर आक्रमण कर कुछ दिनों की लड़ाई के बाद विद्रोहियों को निकाल वहां राज्य का अधिकार स्थापित किया। अनन्तर इसने रायपुर और नींबाज के विद्रोही सरदारों को भी अधीन बनाया। चांपावत और भंडारी सवाईराम उन दिनों हरसोर में थे, जहां से वे नागौर में प्रवेश करना चाहते थे। जब उन्हें पाली के अधीन हो जाने की सूचना मिली तो वे [illegible] चले गए। इसके कुछ समय बाद [illegible], गूलर आदि के विद्रोहियों का दमन किया[2]।

[illegible] विद्रोही चांपावतों आदि का दमन करना

इस बीच [illegible] ने धायभाई की इस बात की शिकायत की कि यह राज्य [illegible] कर रहा है और इसने अपना [illegible] बहुत बढ़ा लिया है। इसपर महाराजा ने इसे जोधपुर बुलाकर इसका दीवानगी आदि का पद छीन लिया। इससे धायभाई का [illegible] हुआ। अनन्तर [illegible] महाराजा ने [illegible] को अपना प्रधान मंत्री नियुक्त कर

[illegible]

[illegible]

यालू जोशी को क़ैद किया। इसके बाद ही वि० सं० १८२१ के श्रावण मास (ई० स० १७६४ जुलाई) में धायभाई का देहांत हो गया[1]।

उन्हीं दिनों महाराजा ने मेड़ते में रहते समय जावला के ठाकुर बदनसिंह को क़ैद कर उसके ठिकाने पर राजकीय सेना भेज दी, जिसने वहां अधिकार कर लिया। फिर जैतसिंह के कहने पर बदनसिंह छोड़ दिया गया तो वह रूपनगर होता हुआ जयपुर चला गया[2]।

जावला के ठाकुर का क़ैद किया जाना

वि० सं० १८२२ (ई० स० १७६५) में उज्जैन की तरफ़ से महादजी सिंधिया ने पुनः मारवाड़ पर चढ़ाई की। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने एक व्यक्ति को उससे बात करने के लिए भेजा। उसने मन्दसोर पहुंच तीन लाख रुपया देना ठहराकर उसे वापस लौटाया। इस अवसर पर खानूजी (मरहटा सरदार) सन्धिवार्ता से अलग रहा। महादजी के प्रस्थान करते ही विद्रोही चांपावतों ने खानूजी को साथ ले मारवाड़ की तरफ कूच किया। इसकी ख़बर मिलने पर जोधपुर से मुंहणोत (मेहता) सूरतराम की अध्यक्षता में सेना रवाना हुई और मेड़ता वग़ैरह से भी फ़ौजें गईं। लड़ाई होने पर दक्षिणी तथा चांपावत हारकर भाग गये। खानूजी तथा चांपावतों के लौट जाने पर सूरतराम ने पीह के ऊदावतों से पेशकशी ठहराई तथा सिंघवी भीमराज ने बसी की गढ़ी को घेरकर मोहनसिंह से दंड ठहराया[3]।

दक्षिणियों के साथ पुनः लड़ाई होना

उसी वर्ष से राज्य में 'रेख बाब' नामक कर लगना शुरू हुआ। वि० सं० १८२३ के वैशाख (ई० स० १७६६ मई) में महाराजा ने नाथद्वारा जाकर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३ पृ० ३९-४०। 'वीरविनोद' में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ८४४)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० ३ पृ० ४०। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८४४।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० ३, पृ० ४०-४१।

महाराजा का वैष्णव धर्म स्वीकार करना

वैष्णव धर्म स्वीकार किया और अपने राज्य भर में मद्य और मांस की बिक्री बन्द करवा दी। उसी वर्ष कार्तिक मास (नवम्बर) में वह अन्नकूट के उत्सव पर फिर नाथद्वारा गया[1]।

उन्हीं दिनों खींची गोवर्द्धन ने, जो अपनी तीर्थ-यात्रा के समय जाटों का प्रभुत्व देख चुका था, महाराजा से निवेदन किया कि यदि राठोड़ और

महाराजा का जाटों से मेल करना

जाट एकत्र हो जायं तो दक्षिणियों को नर्मदा नदी के उस पार ही रोका जा सकता है। इसपर महाराजा ने पंचोली परसादीराम तथा छत्रसाल रघुनाथसिंहोत जोधा को इस संबंध में बातें तय करने के लिए भेजा। उन्होंने डीग में भरतपुर के स्वामी जवाहरसिंह से बात कर उसे इस कार्य के लिए राज़ी किया। फिर वि० सं० १८२४ (ई० स० १७६७) में प्रस्थान कर वे पुष्कर गये। उस समय उन्होंने मार्ग में पड़नेवाले जयपुर के गांवों को लूटा। इस से महाराजा माधोसिंह बड़ा नाराज़ हुआ। पुष्कर में जवाहरमल के डेरे होने पर महाराजा विजयसिंह वहां जाकर उससे मिला[2]। ई० स० १७६७ ता० ६ नवंबर (वि० सं० १८२४ कार्तिक सुदि १५) को पुष्कर के किनारे जवाहरसिंह और विजयसिंह पगड़ीबदल भाई बने और राजपूतों एवं जाटों के एकत्र होकर मरहटों और नजीबखां (रुहेला) को दबाने के संबंध में परस्पर प्रतिज्ञाएं हुईं। विजयसिंह ने माधोसिंह को भी इस ऐक्य को दृढ़ करने के लिए पुष्कर में आने को लिखा, पर उस अभिमानी कछवाहे ने जाने से इनकार कर यह उत्तर दिया कि आपने जाट के साथ, जो हमारा ख़िराजगुज़ार है और हमारा परवाना प्राप्त होते ही सदा हमारी सेवा में उपस्थित हो जाया करता है, बराबरी का आसन ग्रहणकर अपनी प्रतिष्ठा गिरा दी है। केवल महाराणा (उदयपुर का), रावराजा (बूंदी का) और आप हमारी बराबरी के राजाओं में हैं। इस उत्तर से

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ४१-२। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८५१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ४३।

जवाहरसिंह का क्रोध माधोसिंह पर अत्यंत ही बढ़ गया[1]। जब
आचरण के लिए विजयसिंह ने खेद प्रकट किया तो माधोसिंह ने अ
बीमारी का कारण बतलाकर उपस्थित होने में विवशता प्रकट क
इसी बीच जवाहरसिंह ने आक्रमण करने का भय दिखलाकर माधोसि
से कुछ भूमि मांगी, जिसपर उसने उदयपुर से फ़ौज मंगवाने के अतिरि
जाटों के लिए दक्षिणियों की सेना भी बुलवाली। इस अवसर पर उसने
पास अपनी ५०००० सेना के अतिरिक्त उदयपुर की ३०००, कोटा की
३००० और दक्षिणियों की १०००० सेना हो गई। विजयसिंह की ओर से
जवाहिरसिंह से छेड़ छाड़ न करने के लिए कहलाने पर उस (माधोसिंह)-
ने अपना वकील भेज विश्वास दिलाया तब महाराजा ने जाटों को
विदा किया और कुछ दूर तक वह स्वयं उनके साथ गया।
अनन्तर वह अपनी कुछ सेना उनके साथ देकर साभर होता
हुआ मारोठ लौट गया। अपनी प्रतिज्ञा के विपरीत कछवाहों की
सेना ने लौटती हुई जाटों की सेना पर आक्रमण कर दिया। गांव
मावड़ा (जयपुर राज्य) में दोनों दलों में तोपों की भीषण लड़ाई हुई,
जिसमें कछवाहों की तरफ के राजा हरसहाय और उसका भाई गुरसहाय
खत्री तथा धूला का राजावत दलेलसिंह एवं उसका पुत्र लक्ष्मणसिंह
आदि मारे गये[2] तथा जाटों के साथ की राठोड़ सेना के सूरतसिंह पद्मसिंहोत

(१) सरकार फ़ॉल ऑव दि मुग़ल एम्पायर जि० २ पृ० ४२२। सूर्यमल्ल
वंशभास्कर चतुर्थ भाग पृ० ३७२०, छन्द २१४। मिलिटरी ऑफ़ दि पेशवाज़
दफ़्तर, जि० २९ पृ० १८२, १६४५।

(२) इन चारों की स्मारक छतरियां मावडे के विशाल रणक्षेत्र में बनी हुई
है। उनके अतिरिक्त और भी वीरों के चबूतरे वीर पुरुषों के स्मारक और छतरियां वहां
विद्यमान हैं, जो मावड़ा के भीषण युद्ध का स्मरण दिलाता है। हरसहाय की छतरी
पर वि० सं० १८२५ (ई० स० १७६८) का लेख है। दलेलसिंह और उसके
पुत्र लक्ष्मणसिंह की छतरियों पर वि० सं० १८०७ (ई० स० १७५०)
के लेख हैं। ये छतरियां यहां पीछे से बनाई गई हैं। दोनों पिता-पुत्र की मृत्यु
तो मावड़ा में ही हुई थी, पर उनका दाह संस्कार उनके अधीनस्थ गांव वराई

तथा चांपावत, पातावत, मेड़तिया आदि सरदार काम आये। इस लड़ाई के समय फ्रांसीसी समरू[1] भी जाटों की तरफ़ था। अन्त में जाटों के पक्ष के मुसलमान सैनिकों के पैर उखड़ जाने के कारण उनकी फ़ौज के दूसरे विभागों में भी भगदड़ मच गई। कुछ जाटों ने जयपुर पर आक्रमण करने का विचार किया था, परन्तु जब उन्होंने अपनी सेना के हारने का समाचार सुना तो वे भी लौट गये। महाराजा विजयसिंह को जब इस

में हुआ, जो पपुरना नामक स्थान से चार मील दूर है वहां उनकी छतरियां बनी हुई हैं, जिनपर वि० सं० १८२४ पौष वदि ६ (ई० स० १७६७ ता० ११ दिसंबर) के लेख हैं। दलेलसिंह की छतरी के गुम्बज के भीतरी भाग में नाचती हुई स्त्रियों (अप्सराओं) के चित्र बने हैं। उसके पुत्र लक्ष्मणसिंह की छतरी के गुम्बज के भीतरी भाग में तीन वृत्त हैं, जिनमें सुन्दर चित्र बने हैं। सबसे नीचे के वृत्त में समुद्र-मथन तथा अवतारों आदि के चित्र हैं। उसके ऊपर के वृत्त में मावड़े की लड़ाई का चित्र है, जिसमें सैकड़ों सवार लड़ते हुए दिखाये गये हैं। एक स्थल पर हाथी पर बैठे हुए जवाहरसिंह पर अश्वारूढ़ दलेलसिंह को भाला मारते हुए बतलाया गया है। उसके घोड़े के दोनों अगले पैर हाथी की सूंड़ पर लगे हुए हैं। ऊपर के वृत्त में राम रावण युद्ध के चित्र हैं।

(१) समरू का मूल नाम वाल्टर रैनहार्ड था। उसका जन्म ई० स० १७२० (वि० सं० १७७७) में हुआ था। वह फ्रांस से एक फ्रांसीसी जहाज़ में खलासी होकर यहां आया था। पांडीचेरी में जहाज़ को छोड़कर सौमर्स नाम से वह सेना में भर्ती हुआ, जिससे अन्य लोग उसको सौम्ब्रे कहते थे और हिन्दुस्तानी समरू। फिर वहां से भागकर वह ढाका में ईस्ट इंडिया कम्पनी की सेना में भर्ती हुआ, परन्तु १८ दिन बाद नौकरी छोड़कर चन्द्रनगर चला गया। तदनंतर अवध के नवाब सफ़दरजंग के यहां वह नौकर हुआ। वहां से भी काम छोड़कर वह सिराजुद्दौला और मीर क़ासिम की सेवा में रहा। उस समय पटना में उसने छल से कई अंग्रेज़ों को मार डाला। वहां से भागकर वह ई० स० १७६३ (वि० सं० १८२०) में अवध के नवाब वज़ीर के पास जा रहा। वहां भी स्थिर न रहकर भरतपुर और जयपुर राज्यों की सेवा में रहने के बाद वह बादशाह शाहआलम के वज़ीर नजफ़ख़ां की सेवा में चला गया, जहां उसे सरधना का इलाक़ा जागीर में मिला। उसने काश्मीर की रहनेवाली जार्जियन ज़ेबुन्निसा से विवाह किया, जो बेग़म समरू के नाम से प्रसिद्ध हुई। समरू का देहांत आगरे में ई० स० १७७८ (वि० सं० १८३५) में हुआ (बकलैंड, डिक्शनरी ऑव् इण्डियन बायग्राफ़ी, पृ० ३७२। एच्० काम्प्टन, यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचरर्स ऑव् हिन्दुस्तान; पृ० ४००-४०५)।

घटना की सूचना मिली तो उसने जयपुर के वकील को बड़ा उपालम्भ दिया[1]।

उसी वर्ष फाल्गुन मास में जयपुर के महाराजा माधोसिंह का देहांत हो गया। तब जाटों के पीछे गई हुई कछवाहों की सेना वापस जयपुर चली गई। उधर महाराजा विजयसिंह की सेना भी, जो जाटों की सहायतार्थ गई हुई थी, वापस नागोर की तरफ़ लौटी। कछवाहों ने इस अवसर पर दक्षिणियों को कहलाया कि राठोड़ जाटों से धन लेकर जा रहे हैं, जो उनसे छीनने का बड़ा अच्छा मौका है। यह जानते ही दक्षिणी प्रस्थान कर राठोड़ों के पीछे परबतसर तक गये। मेहता सूरतराम ने जब मेड़ते जाकर महाराजा को इसकी खबर दी तो उसने बातकर दक्षिणियों को वापस लौटा दिया। तब नागोर की फ़ौज मेड़ता लौट गई[2]।

दक्षिणियों का महाराजा की सेना का पीछा करना

उदयपुर के महाराणा राजसिंह (दूसरा) की मृत्यु के समय उसकी झाली राणी गर्भवती थी, परन्तु अन्तःपुर से अरिसिंह (राजसिंह का चाचा और महाराणा जगतसिंह (द्वितीय) का दूसरा पुत्र) के भय से सरदारों के पूछने पर कहला दिया गया कि उसके गर्भ नहीं है। इसपर सरदारों ने अरिसिंह को ही जो हक़दार था वि० सं० १८१७ चैत्र वदि १३ (ई० स० १७६१ ता० ३ अप्रेल) को मेवाड़ की गद्दी पर बिठाया। अरिसिंह स्वभाव का बहुत उग्र और क्रोधी था। उसने गद्दी पर बैठते ही सरदारों का अपमान करना शुरू किया जिससे वे उसके विरोधी हो गये। इसी बीच झाली राणी के गर्भवती होने का समाचार कुछ-कुछ प्रकट हो गया। कुछ समय बाद उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम रत्नसिंह रक्खा गया उसकी परवरिश उसके मामा जसवन्तसिंह (गोगूंदा का स्वामी)

महाराणा का गोडवाड़ पर अधिकार होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० ३, पृ० ६४-५। वंशभास्कर पृ० ३७२१, छन्द संख्या १-२२।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० ३, पृ० ४५-६।

के यहां हुई[1]। सरदार महाराणा से अप्रसन्न तो थे ही, अब वे उसे पदच्युत करने तथा उसके स्थान में रत्नसिंह को गद्दी पर बैठाने का उद्योग करते लगे। महाराणा ने ऐसी अवस्था देख दमन नीति से कार्य लिया, पर उसका परिणाम उलटा ही हुआ[2]। बीच में सरदारों को नाराज़ करने की

---

(१) पसूंद गांव के निवासी आसिया बख़्तराम-कृत "कीरति प्रकाश" से पाया जाता है कि रत्नसिंह को जोधपुर के महाराजा विजयसिंह के पास भी ले गये थे—

पूत राजसी पहल, कढ़े नग मात तोत कर।
जा पहुंचे जोधाण, दीह वह प्रछन रहे दुर।
सुताज गढ़ यक समय, पूछ सिसु कवण कहो पत।
भण नृप तुझ भतीज, सही रतनो राजड़ सुत।
यम वजा वयण सुण राण उत, दीधा खत बध बूदसी।
पेदास हुओ बाचल प्रकट, खवर रखण वन खूचसी॥
यम्रड़ा खत उणवार, आय प्रछन उदयापुर।
राय गुलाब करग्ग, चढत वंचे कथ चातुर।
सुण जालि कथ सरब, राण हूंता किय जाहर।
बहन रतन सुण वयण, अधप अरसीह धखे उर।
कर तोल खाग यम वयण कह, जरेहु संघर जंगरी।
भरलेऊं झेल मयणाग भुज, अठे वेल इकलिंगरी॥

हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से।

(२) इस अवसर पर अरिसिंह ने जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न किया। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि अरिसिंह की तरफ़ से उक्त महाराजा के पास वकील पहुंचने पर उसने सेना व्यय देने के इक़रार पर सिंघवी फ़तहचंद और भीमराज को अपनी सेना के साथ भेजा और उनके साथ नागोर की सेना भी करदी, जिसने जाकर भाडेसर में मुक़ाम किया। वहां कुंभलगढ़ से रत्नसिंह के वकील भी पहुंचे और उन्होंने उनसे कहा कि जितना रुपया अरिसिंह देगा, उतना हम दे देंगे, तुम रत्नसिंह की मदद करो। फिर रत्नसिंह की तरफ़ से रुपये मिल जाने पर भाडेसर से सेना बिखेर दी गई और जोधपुर के दोनों मुत्सद्दी वापस चले गये। रत्नसिंह की तरफ़ से सींवसर के ठाकुर जोरावरसिंह के पास सहायता देने के लिए रक़म भेजी गई,

कई और भी घटनाएं हुईं, जिससे विरोध बढ़ता ही गया। रत्नसिंह अधिक समय तक जीवित न रहा और सात वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई। इसपर सरदारों ने उसी अवस्था के एक दूसरे बालक को रत्नसिंह घोषितकर महाराणा को राज्यच्युत करने का अपना प्रयत्न जारी रक्खा। माधवराव सिंधिया ने रत्नसिंह का पक्ष लेकर वि० सं० १८२५ (ई० स० १७६८) में क्षिप्रा नदी के निकट महाराणा की सेना को हराया और उदयपुर को घेर लिया। नगर का समुचित प्रबन्ध होने के कारण छः मास तक घेरा रहने पर भी वह वहां अधिकार न कर सका। उधर उदयपुर में खाद्य-सामग्री का धीरे-धीरे अभाव होने लगा। तब उदयपुरवालों ने संधि की चर्चा शुरू की। माधवराव भी यही चाहता था। अन्त में ६३½ लाख रुपये मिलने की शर्त पर उसने घेरा उठा लिया। उस समय किये गये शर्तनामे के अनुसार फ़र्ज़ी रत्नसिंह का मन्दसोर में रहना निश्चित होकर महाराणा ने उसके लिए ७५००० रुपये आय की जागीर निकाल दी। पर वह मन्दसोर जाकर न रहा और विद्रोही सरदारों एवं महापुरुषों[1] की फ़ौज के साथ मेवाड़ में लूट-मार करने लगा। महाराणा को जब यह खबर मिली तो उसने विद्रोहियों को हराकर भगा दिया। एक साल तक शान्त रहने के अनन्तर विद्रोही सरदार पुनः उपद्रव करने लगे। रत्नसिंह का कुंभलगढ़ पर अधिकार था, जहां रहकर वह मेवाड़ के गोड़वाड़ ज़िले पर भी अधि-

---

जिससे वह अपने राजपूतों सहित रत्नसिंह के शामिल हो गया। रत्नसिंह दो वर्ष तक तो जवाहरसिंह को तनख़्वाह देता रहा, उसके बाद सेरा [illegible] का परगना देना स्थिर हुआ (जि० १ पृ० ४७)। दयालदास लिखता है कि मेवाड़ का गृहकलह बढ़ाने में विजयसिंह का हाथ था और वह गोड़वाड़ को अपने राज्य में मिलाना चाहता था (दयालदास की ख्यात जि० २ पत्र १२)।

(१) ये दादूपंथी साधु थे जो जयपुर की सेना में बड़ी संख्या में रहते थे और वहीं से रत्नसिंह के पक्षवाले इन्हें मेवाड़ में लाये थे। इनको महापुरुष भी कहते थे। अबतक ये जयपुर की सेना में किसी क़दर विद्यमान हैं। ये विवाह नहीं करते हैं।

कार करने का प्रयत्न करने लगा। इसपर महाराणा ने अपने काका महाराज बाघसिंह को दूसरे कई सरदारों एवं सेना के साथ विद्रोहियों के विरुद्ध भेजा। उन्होंने विद्रोहियों पर विजय तो प्राप्त की, पर कुंभलगढ़ पर रत्नसिंह का ही अधिकार बना रहा। महाराज बाघसिंह ने गोड़वाड़ का प्रबंध करने के पीछे उदयपुर लौटकर महाराणा से निवेदन किया कि गोड़वाड़ पर अधिकार रखने के लिए वहां यथेष्ट सेना का होना ज़रूरी है। इसपर महाराणा ने जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को लिखा कि रत्नसिंह को दबाने के लिए वह अपनी तीन हज़ार सेना कुछ समय के लिए नाथद्वारे में रखे और जब तक वह सेना वहां रहे, तब तक उसके वेतन के लिए गोड़वाड़ की आय लेता रहे; परन्तु वहां के सरदार हमारे ही अधीन रहेंगे। इसपर महाराजा ने उत्तर भिजवाया कि आम तौर से २०० सवार तथा ५०० सिपाही रहेंगे, और लड़ाई के समय तीन हज़ार सेना कर दी जायगी[1]। तदनुसार महाराजा

---

(१) इस सम्बन्ध के पत्र-व्यवहार के सिलसिले में विजयसिंह ने जो वादा किया था उसका उल्लेख महाराणा के प्रधान और मुसाहिब कायस्थ जसवन्तराय के नाम के वि० सं० १८२८ पौष सुदि १३ (ई० स० १७७१ ता० ३० दिसम्बर) के मेहता श्रीनाथ के लिखे पत्र में हुआ है, जिसका आशय इस प्रकार है—

"गोड़वाड़ के लिए रावत अर्जुनसिंह (कुरावड़ का) का पत्र आया, जिसमें यह बात लिखी है कि वहां के सरदार महाराणा के अधीन रहेंगे और आमदनी हासिल महाराजा (विजयसिंह) को दिया जायगा। इस पत्र को महाराजा के सामने पेश करने पर हुक्म हुआ कि ठीक है, सरदारों पर महाराणा प्रसन्नता से अपना अधिकार रक्खें और आमदनी हमको दें, परन्तु इतनी सेना वहां नहीं रह सकती। दो सौ सवार तथा पांच सौ पैदल महाराणा की सेवा में उपस्थित रहेंगे और जब कभी सेना की चढ़ाई होगी उस समय ३००० सवारों की सेना प्रस्तुत करदी जायगी। .... उदयपुर के मतालबदार (मांगनेवाले) तरह-तरह के वहम पैदा करते हैं, परन्तु यहां बदल ऐसी बात नहीं है। ... उनको साफ साफ लिखा दिया जावे कि किसी बात का वहम न करें। दीवान (महाराणा) जितने दिन हमारी सेना रक्खेंगे, उतने दिन गोड़वाड़ के परगने पर हमारा अमल रहेगा और जिस दिन महाराणा हमारी सेना को रुख़सत देंगे, उसी दिन गोड़वाड़ के परगने पर हम पीछा उनका अधिकार करा देंगे ......।"

वीरविनोद; भाग २, पृ० [illegible]।

ने सेना नाथद्वारे में भेजकर गोड़वाड़ के परगने पर अधिकार कर लिया, परन्तु रत्नसिंह को कुंभलमेर से निकालने का प्रयत्न न किया। महाराणा के कई बार लिखने पर भी जब महाराजा ने कोई ध्यान न दिया तो उस- (महाराणा) ने उसको गोड़वाड़ का परगना छोड़ देने को लिखा, परन्तु विजयसिंह ने लालच में आकर उस समय इसे टाल दिया। वि० सं० १८२८ के माघ (ई० स० १७७२ के फरवरी) मास में महाराजा विजयसिंह, महाराजा गजसिंह (बीकानेर का) तथा राजा बहादुरसिंह (कृष्णगढ़) तीनों नाथद्वारा गये और महाराणा भी वहां पहुंचा। गोड़वाड़ के संबंध में चर्चा छिड़ने पर नाथद्वारा के गोस्वामी और महाराजा गजसिंह ने महाराजा विजय- सिंह को गोड़वाड़ का परगना छोड़ देने के लिए बहुत समझाया, परन्तु महाराजा ने स्पष्ट रूप से कोई बात स्वीकार न की[1]। उस समय करमसोत ठाकुर जोरावरसिंह (खीवसर का) ने महाराजा विजयसिंह पर गोड़वाड़ के लिए अधिक दबाव देख उत्तर दिया कि विजयसिंह हमारे मालिक हैं पर ज़मीन देना इनके अधिकार की बात नहीं है। जब तक पचास हज़ार राठोड़ों के धड़ पर सिर हैं, गोड़वाड़ नहीं दी जावेगी। इससे यह चर्चा बंद हो गई और परस्पर विवाद बढ़ता देख खिन्नचित्त हो महाराणा उदयपुर को और तीनों राजा अपने अपने देश की तरफ रवाना हुए। मार्ग में गजसिंह ने विजयसिंह के कहने पर रीयां के ठाकुर जालिमसिंह से जो बहुत बिगाड़ करता था, उसका समझौता करा दिया और फिर वह बीकानेर को लौटा[2]।

वि० सं० १८२९ (ई० स० १७७२) में राज्यच्युत महाराजा रामसिंह का देहात हो गया[3]। इस घटना से जो गड़बड़ी पैदा हो गई उससे लाभ उठाकर

---

(१) मेरा राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० १३०।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७०। जोधपुर राज्य की ख्यात; पृ० १४१०१।

(३) वीरविनोद में पाया जाता है कि इसकी मृत्यु जयपुर में हुई (भाग २ ... ८४५)।

रामसिंह के मरने पर महाराजा की सेना का उसके हिस्से के सांभर पर क़ब्ज़ा करना

केशोदासोत, सुरताणोत, रघुनाथसिंहोत आदि मेड़तियों की २००० सेना के साथ जाकर नांवा के हाकिम मनरूप उपाध्याय ने सांभर पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसकी सूचना महाराजा को मिलने पर वह उस (मनरूप) से बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसे ही वहां का हाकिम नियत किया[1]।

इसके बाद महाराजा ने राज्य की अवज्ञा करनेवाले सरदारों के प्रबंध की ओर ध्यान दिया। चांपावत जैतसिंह (आउवा) का अन्य सरदारों

आउवा के ठाकुर को छल से मरवाना

के साथ ठीक व्यवहार नहीं था, जिसकी महाराजा के पास कई वार शिकायत हो चुकी थी। वि० सं० १८३१ के भाद्रपद मास में महाराजा ने इंद्रसिंह (खैरवा), सवाईसिंह (पोकरण), कर्णसिंह (खींवसर), जैतसिंह आदि अपने बड़े-बड़े सरदारों को गढ़ मे बुलवाया। जैसे ही जैतसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो मुजरा करने के लिए झुका, वैसे ही सिंघवी खूबचंद ने कटारी के दो वार कर उसे मार डाला। अनन्तर आउवा पर क़ब्ज़ा करने के लिए आज्ञा होने पर सिंघवी बनेचंद ने ५०० सवारों के साथ वहां जाकर राज्य का अधिकार स्थापित किया। उन्हीं दिनों सिंघवी भीमराज पर महाराजा की कृपा बढ़ी। उसके पुत्र को परबतसर का हाकिम बनाने के साथ महाराजा ने उस (भीमराज) को बख़्शी के पद पर नियुक्त किया[2]।

वि० सं० १८३४ (ई० स० १७७७) में दक्षिणी आंबाजी इंगलिया अपनी सेना सहित ढूंढाड़ की तरफ़ आया। उस समय महाराजा के वकीलों ने

दक्षिणी आंबाजी के विरुद्ध सेना भेजना

महाराजा को लिखा कि वह उसे खिराज न दे। इसपर महाराजा ने सिंघवी भीमराज के साथ १५ हज़ार सेना रवाना की। इसकी निश्चित सूचना मिलने पर आंबाजी मेवाड़ चला गया[3]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ४८।

(२) वही, जि० ३, पृ० ५१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५५-६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ५५।

कुंवर फ़तहसिंह का देहांत

उसी वर्ष कार्तिक मास में महाराजकुमार फ़तहसिंह बीमार पड़ा। बहुत कुछ चिकित्सा होने पर भी उसकी हालत न सुधरी और कार्तिक सुदि ३ (ई० स० १७७७ ता० ३ नवंबर) को उसका देहांत हो गया[१]।

बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उसके कुंवर में विरोध की उत्पत्ति

इसके कुछ ही समय बाद बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उसके कुंवर राजसिंह के बीच किसी कारणवश विरोध उत्पन्न हुआ। इसपर महाराजा ने मुंहणोत सवाईराम को उधर जाने की आज्ञा दी। उसने नागोर पहुंच कर सेना एकत्र की, पर इसी बीच पिता और पुत्र के बीच का झगड़ा शांत हो गया, जिससे सवाईराम का उधर जाना स्थगित रहा[२]।

विरोधी सरदारों का दमन करना

अनंतर सवाईराम को मसूदा की तरफ जाने और रायपुर के विद्रोही ठाकुर को समझाने की आज्ञा दी गई। इसपर नागोर से प्रस्थान कर वह मेड़ता पहुंचा, जहां से उसने शंभूदान चौहान को रायपुर के ठाकुर के पास बातचीत करने के लिए भेजा। इस बीच कुछ फौज ने जाकर मसूदा से धन वसूल किया। शंभुदान ने जाकर रायपुर के ठाकुर केसरीसिंह को आश्वासन देने का प्रयत्न किया परन्तु वह महाराजा की तरफ से छल होने के सन्देह के कारण दरबार में जाकर चाकरी करने के लिए तैयार न हुआ। तब सवाईराम के कहलाने पर दौलतसिंह (नींबाज का) जवानसिंह (रास का) भारतसिंह (लांबिया का) तथा जैतसिंह (छीपिया का) आदि रायपुर के स्वामी का दमन करने के लिए भेजे गये। जोधपुर की सेना का बहुत समय तक तो केसरीसिंह ने बड़ी वीरता के साथ सामना किया परन्तु अन्त में उसे हारकर मेवाड़ में शरण लेनी पड़ी। इस प्रकार रायपुर पर जोधपुर राज्य का अधिकार हो गया। पीछे से महाराजा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० ३ पृ० ८४।

(२) वही, जि० ३ पृ० ८८।

ने रायपुर की जागीर केसरीसिंह के पुत्र फतहसिंह के नाम कर दी[1]।

सिंध के हैदराबाद और उमरकोट[2] का स्वामी मियां गुलामअलीखां किलोड़ा था। लीली ताजा तथा सावटिया ताजा उसके दीवान एवं टाल-पुरिया बीजड़ फ़ौजदार था। क्रमशः बीजड़ ने बड़ी शक्ति प्राप्त कर ली, यहां तक कि उसने मियां को एक प्रकार से बन्दी कर लीखियों तथा सावटियों को वहां से निकाल दिया[3]। हैदराबाद का क़िला गुलामअली की माता के

महाराजा विजयसिंह का उमरकोट पर क़ब्ज़ा होना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ५५-७।

(२) उमरकोट सुमरा जाति के उमर नाम के सरदार ने बसाया था, जिससे इसका नाम उमरकोट पड़ा, परन्तु उसके बसाये जाने के समय का पता नहीं चलता (इम्पीरियल गैज़ेटियर; जि० २४, पृ० ११८)।

टॉड लिखता है कि मुसलमानों का आधिपत्य उमरकोट पर स्थापित होने से पूर्व वहां सोढ़ा (परमार) राजपूतों का अधिकार था और वह उनकी राजधानी थी। क्रमशः राठोड़ों एवं उमरकोट के वर्तमान शासक वंश के पूर्वजों ने वहां से उनका प्रभुत्व हटाया। महाराजा विजयसिंह के राज्यकाल में कलोड़ा जाति का मियां नूरमोहम्मद सिंध का शासक था। जब कन्दहार की सेना ने उसे वहां से निकाला तो वह जैसलमेर आ रहा और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसके ज्येष्ठ पुत्र अतरखां तथा उसके भाइयों ने बहादुरखां खइरानी की शरण ली। इसी बीच उनका एक अनौरस भाई गुलामशाह हैदराबाद की गद्दी का मालिक बन बैठा। दाउदपोतों ने अंतरखां आदि का पक्ष ग्रहण किया और गुलामशाह को हटाने के लिए खइरानी जाति के सरदारों तथा अंतरखां के साथ उन्होंने हैदराबाद की तरफ प्रस्थान किया। गुलामशाह उनका सामना करने को आगे बढ़ा। उबौरा नामक स्थान में विरोधी दलों का सामना होने पर गुलामशाह की विजय हुई। अंतरखां क़ैद कर सिंधु नदी के द्वीप गज-का-कोट में भेज दिया गया। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र सरफ़राज़ हुआ (राजस्थान, जि० ३, पृ० १२८७-८)।

(३) टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि गुलामशाह के उत्तराधिकारी सरफ़राज़ ने बीजड़ की बहिन से शादी करनी चाही थी, जो उस(बीजड़)के पिता ने मंजूर न की। इसका परिणाम यह हुआ कि सरफ़राज़ ने तमाम टालपुरियों को मरवाना शुरू किया। बीजड़ किसी प्रकार बच गया और उसने गुलामशाह के वंशजों से बदला लेना शुरू किया (जि० ३, पृ० १२८८-९)।

अधिकार में रहा। वह उसने टालपुरियों को नहीं सौंपा। बीजड़ के पास प्रचुर संपत्ति थी और वह बड़ा शक्तिशाली था। वह मियां के पास जाता तो उससे सदा यही कहता कि मैं तो आपका सेवक हूं, पर एक प्रकार से वही स्वामी था। टालपुरियों को केवल इतने से ही संतोष न हुआ। उन्होंने मारवाड़ और सिन्ध की सीमा पर गिराब के निकट पराऊ की गढ़ियां गिराईं। अनन्तर ५०००० सेना के साथ जाकर टालपुरियों ने पोकरण, फलोधी और कोटड़ा को दबाने का विचार किया। जब इसकी खबर महाराजा विजयसिंह के पास पहुची तो उसे बड़ी चिन्ता हुई और उसने मुंहणोत सवाईराम एवं सिंघवी भीमराज आदि से सलाह की। उन्होंने कहा कि राज्य की तरफ से टालपुरियों का दमन करने के लिए सेना भेजनी चाहिये। अनन्तर महाराजा ने सोजत से सिंघवी खूबचंद को बुलाकर उससे भी इस संबंध में राय की। उसने कहा कि निश्चित रूपसे कुछ भी करने के पूर्व वकील भेजकर उधर की परिस्थिति समझना आवश्यक है। महाराजा ने इसपर यह कार्य उसे ही सौंप दिया। उसने सोजत के एक चतुर कार्यकर्ता सेवक (भोजक) थानजी एवं नादिया के भाटी प्रतापसिंह को सिंध की तरफ भेजा। उनके बीजड़ के पास पहुंचने पर उसने दोनों की बड़ी खातिर की और कहा कि मैं तो महाराजा का सेवक हूं परन्तु उसके मन में उन्हें कपट ही जान पड़ा। वहां से लौटते समय उन्होंने बीजड़ के वकील शेख रहमतअली को अपने साथ ले लिए और जोधपुर पहुंचकर बीजड़ के कपट की बात महाराजा से कही। इसपर महाराजा ने उसका अन्त करने का निश्चय किया। सिंघवी खूबचन्द ने स्वयं इस कार्य के लिए जाने की इच्छा प्रकट की पर महाराजा ने उसे जाने न दिया। तब नाडोल के हरनाथसिंह एवं पाता मुहकमसिंह ने बीजड़ के मारने का कार्य अपने ऊपर लिया। थानजी को साथ लेकर वे जोधपुर के वकीलों की हैसियत से बीजड़ के पास पहुंचे। थानजी को तो उन्होंने वहां से लौटा दिया और बीजड़ से कहलाया कि जोधपुर से एक खास पत्र आया है जो आपको एकान्त में दिखलाना है। इसपर बीजड़ ने उन्हें अपने पास बुलाया। इस अवसर से

लाभ उठाकर उन्होंने बीजड़ का खातमा कर दिया और स्वयं भी बारहट जोगीदास आदि कई व्यक्तियों के साथ मारे गये। यह घटना वि० सं० १८३६ कार्तिक वदि १२ (ई० स० १७७६ ता० ५ नवंबर) को हुई। इस कार्य को अंजाम देनेवाले व्यक्तियों के वंशजों को महाराजा ने गांव, कुएं आदि दिये।

गुलामअलीखां इस घटना के पूर्व ही डेरा ग़ाज़ीखां में चला गया था। उसने काबुल के पठानों को सहायतार्थ बुलाया और जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को लिखा कि उमरकोट सदैव से ही भारतवर्ष का एक भाग रहा है, अतएव वह मैं आपको देता हूं। इसपर महाराजा ने भी उसे अपना पगड़ी-बदल भाई बनाया। उन्हीं दिनों सिंघवी खूबचंद ने हैदराबाद (सिंध) के क़िले को अधीन करने का विचार प्रकट किया। उसी समय मियां (अब्दुलनबीखां—गुलामअलीखां का पुत्र) ने जोधपुर से फ़ौज भेजने को लिखा। ताजा सावटिया आदि, जो बीजड़ के भय से भुज की तरफ चले गये थे, उन्हीं दिनों जोधपुर आकर रातानाड़ा में ठहरे। ताजा लीखी चतुर व्यक्ति था। उसने महाराजा से मिलकर उमरकोट दिये जाने के संबंध में पक्की बात-चीत की। उधर बीजड़ के मारे जाते ही उसके पुत्र अब्दुल्ला, भाई फ़तहखां तथा साले मिर्ज़ा ने महाराजा के पास कहलाया कि बीजड़ को मारा तो क्या मारा, हम सब बीजड़ ही बीजड़ हैं और उन्होंने पचास हज़ार फ़ौज एकत्र कर ली। इधर जोधपुर की तरफ़ से पोकरण, आसोप वग़ैरह की आठों मिसलें तैयार हुईं और सिंघवी शिवचंद, बनेचंद तथा भीनमाल से लोढ़ा साहामल आकर उक्त सेना के साथ शामिल हो गये। इस प्रकार जोधपुर की सात-आठ हज़ार सेना एकत्र हुई और सांचोर, भाटकी तथा बीराबाव होती हुई सिंध की ओर अग्रसर हुई। चोबारी में उक्त सेना के डेरे होने पर टालपुरियों की फ़ौज अधिक होने के कारण, रक्षा के लिए चारों ओर खाइयां आदि खोदकर मोर्चाबन्दी की गई। वि० सं० १८३७ माघ सुदि १० (ई० स० १७८१ ता० ४ फ़रवरी) को विरोधी दलों में सामना होने पर अल्पसंख्यक राठोड़ बड़ी वीरता से लड़े। इस लड़ाई में दोनों ओर से खूब

गोलियां चलीं और पोकरण के ७२ आदमियों में से ७१ रणक्षेत्र में जूझते हुए मारे गये। केवल एक जीवित डेरों को लौटा। धीरे-धीरे राठोड़-सेना में गोली-बारूद की कमी हो गई। दिन भर तो किसी प्रकार युद्ध जारी रक्खा गया, पर रात्रि होने पर जोधपुर के सरदारों ने युद्धक्षेत्र से हट जाने का निश्चय किया। तदनुसार एक-एक कर सब सरदार वहां से निकल गये। आसोप का ठाकुर महेशदान तथा सिंघवी खूबचंद सबके निकल जाने पर गये। इसके दूसरे दिन बचे हुए राठोड़ों से चोबारी में टालपुरियों ने फिर लड़ाई की, जिसके बाद वे सिंध को लौट गये। महाराजा को यह समाचार मिलने पर वह खूबचंद से अप्रसन्न नहीं हुआ, क्योंकि लड़ने के सामान की कमी तथा फौज थोड़ी होने से युद्ध जारी रखने में व्यर्थ जन-हानि होने के अतिरिक्त लाभ नहीं होता। इस युद्ध में पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह ने बड़ी वीरता दिखलाई थी। खूबचंद के इस संबंध में निवेदन करने पर महाराजा ने वि० सं० १८३१ में उस सवाईसिंह को प्रधान मंत्री का पद प्रदान करने के साथ पालकी, मोतियों की कंठी, सिरपेच, तलवार, कटार आदि दी। पीछे से काबुल के टोपीवाले पठानों ने मियां की मदद को आकर उमरकोट को घेर लिया। गढ़ के भीतर उस समय फतहखां था, जो गिरफ्तार कर लिया गया, पर वह वहां से किसी प्रकार निकल गया। मियां के पास उन दिनों जोधपुर की तरफ से सेवग थानजी वकील था। उसने टालपुरियों तथा मियां में बात ठहराकर उन्हें उसका अधीन बना दिया। अब टालपुरिये [illegible] सिन्धु नदी के उस पार ठहरे थे, वहां से बीजड़ के साथ अब्दुल फतहखां तथा मिर्जा ५०० व्यक्तियों के साथ मियां के पास उपस्थित हो गये, जिन्हें उसने पीछे से दगा से मरवा डाला। अनन्तर मियां ने उमरकोट महाराजा को सौंप दिया, जहां सेवग थानजी ने जाकर दरबार का अधिकार स्थापित किया। उन दिनों भंडारी गंगाराम सिन्ध में था। उसने बीजड़ द्वारा वहां बनाई हुई सिराऊ की गढ़ी नष्ट कर दी। हैदराबाद पर पूर्वानुसार मियां की माता का ही अधिकार रहा। इन झगड़ों में यद्यपि टालपुरियों

के बहुत से आदमी मारे जा चुके थे तथापि उनकी शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी। उन्होंने फ़तहअली की अध्यक्षता में पुनः सिर उठाया और पठानों के जाते ही सिंध में जाकर मियां से लड़ाई की। इस लड़ाई में मिया की फ़ौज का फ़ौजदार ताजा सावटिया काम आया तथा मियां डेरा गाज़ीखां एवं ताजा लीखी भुज की तरफ़ चले गये। ऐसी परिस्थिति में महाराजा ने सिंघवी भीमराज तथा कई अन्य व्यक्तियों को उमरकोट के प्रबंध के लिए जाने को कहा, पर उन्होंने यह कहकर जाने से इनकार कर दिया कि जिसने उमरकोट लिया है वही भेजा जाय। इसपर खूबचंद को जाने की आज्ञा हुई, परन्तु उसके संबंधियों ने उसे जाने न दिया। तब उसकी बहन का पुत्र लोढ़ा साहामल भेजा गया, जिसने जाकर उमरकोट पर क़ब्ज़ा किया। यह खबर टालपुरियों को मिलने पर उन्होंने तत्काल उमरकोट को घेर लिया। क़िले के भीतर खाद्य-सामग्री की बहुत कमी थी, लोगों को नपा-तुला अन्न मिला करता था, लेकिन इतना होने पर भी साहामल बड़ी वीरता से टालपुरियों का सामना कर रहा था। यह समाचार जोधपुर पहुंचने पर महाराजा को बड़ी चिन्ता हुई। तब जोधा शिवदानसिंह भारत-सिंहोत, जिसे खूबचन्द ने लाडणू का पट्टा दिलवाया था, अपने सम्बन्धियों एवं ८०० आदमियों के साथ महाराजा के पास गया और उसने टाल-पुरियों से युद्ध करने के लिए जाने की इच्छा प्रकट की। महाराजा ने अपनी स्वीकृति देने के साथ ही मेहता लालचन्द बागरेचा, सिंघवी चैनमल बाघ-मलोत (कोलियावाला), पातावत सरदारों, सिलेपोशों आदि को उसके साथ कर दिया। गिराब में जाकर सिंघवी बनेचन्द भी उक्त सेना के साथ मिल गया। उनके उमरकोट की तरफ बढ़ने का समाचार पाकर टालपुरियों ने दो कोस सामने आकर उनपर आक्रमण किया। वि० सं० १८३८ के माघ मास (ई० स० १७८२ फ़रवरी) में दोनों दलों में खूब लड़ाई हुई। पातावतों ने रसद की रक्षा का भार अपने ऊपर लिया और जोधा राठोड़ों ने टालपुरियों से लोहा लिया। इस लड़ाई में दोनों तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये। फिर जब टालपुरियों ने पातावतों पर

आक्रमण किया तो उन्होंने उनपर एक साथ गोलियों की ऐसी मार की कि उन्हें हारकर पीछा हटना पड़ा। इस प्रकार युद्ध में विजय प्राप्तकर राठोड़ों ने उमरकोट से टालपुरियों का घेरा उठा दिया। इस लड़ाई में काम आने अथवा अच्छी सेवा बजाने के उपलक्ष्य में जोधा शिवदानसिंह भारतसिंहोत के भाई पद्मसिंह, जोधा मालुमसिंह भारतसिंहोत के पुत्र रणजीतसिंह एवं जोधा जयसिंह, रामसिंह, उम्मेदसिंह आदि को आभूषण आदि दिये जाने के साथ ही उनकी जागीरों में वृद्धि की गई। राठोड़ों-द्वारा पराजित होकर टालपुरियों ने उमरकोट विजय करने की आशा छोड़ दी और वे फतहअली की अध्यक्षता में सिंध की दूसरी तरफ़ चले गये। इतने दिनों तक तो मियां की मा ने हैदराबाद पर अपना क़ब्ज़ा क़ायम रक्खा, पर अब फतहअली ने उसे क़ैद कर वि० सं० १८४० (ई० स० १७८३) में वहां अधिकार कर लिया। इस प्रकार टालपुरियों ने, जो पहले साधारण सेवक थे सिंध का स्वामित्व प्राप्त किया। मियां गुलामअलीखां की डेरा गाज़ीखां में जहां वह पहले से ही चला गया था मृत्यु हुई। उसके पुत्र बहुत समय तक पोकरण में आकर रहे। फिर वि० सं० १८८५ (ई० स० १८२८) में उनके जोधपुर जाने पर महाराजा ने उन्हें [illegible] की चुंगी उगाहने का हक और हैदराबाद गांव दिया, जो अब तक उनके वंशजों के पास है। जिस समय उमरकोट पर जोधपुर का अधिकार स्थापित हुआ, वहां की हालत अच्छी नहीं थी और प्रबन्ध के लिए दूसरे इलाकों से धन भेजना पड़ता था। [illegible] वरस तक रहने के अनन्तर वि० सं० [illegible] ई० स० [illegible] में [illegible] और उसके स्थान में सिंघवी चैनमल की नियुक्ति हुई।

बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उसके पुत्र राजसिंह के बीच मनमुटाव होने का उल्लेख ऊपर आ गया है। वि० सं० [illegible] (ई० स० [illegible]) में राजसिंह [illegible] से जोधपुर चला [illegible] गया। इस पर महाराजा विजयसिंह ने उसे [illegible]

[illegible]

पूर्वक अपने पास रक्खा[1]।

महाराजा विजयसिंह का जोधपुर में टकसाल खोलना

दिल्ली की बादशाहत की कमज़ोरी की हालत में राजपूताने के कई राजाओं ने बादशाह की आज्ञा प्राप्तकर उस (बादशाह) के नाम के सिक्के बनाने के लिए अपने-अपने राज्यों में टकसालें खोलीं। इसपर महाराजा विजयसिंह ने भी वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) में शाहआलम (दूसरा) के समय उसकी आज्ञा से अपनी राजधानी में टकसाल खोली, जहां वि० सं० १९१५ (ई० स० १८५८) तक उक्त बादशाह के नाम के सोने, चांदी और तांबे के सिक्के बनते रहे। महाराजा विजयसिंह के समय बनने से वे सिक्के लोगों में "विजयशाही" कहलाते हैं और उनपर नाम उक्त बादशाह का है[2]।

महाराजा गजसिंह का राजसिंह को बीकानेर बुला-कर कैद करना

वि० सं० १८४२ (ई० स० १७८५) में महाराजा गजसिंह के पत्र लिखने पर महाराजा विजयसिंह ने अपने बहुत से सैनिकों को साथ देकर कुंवर राजसिंह को बीकानेर विदा किया। कुछ दिनों बाद गजसिंह ने अपने दूसरे पुत्रों सुलतानसिंह, अजबसिंह और मोहकमसिंह को भेजकर राजसिंह के सीढ़ियां चढ़ते समय उसे क़ैद करवा दिया। जोधपुर से आये हुए सरदारों ने लड़ाई करनी चाही, परन्तु विजयसिंह ने यह कहलाकर उन्हें वापस बुलवा लिया कि वह गजसिंह का कुंवर है, वह जो चाहे उसके साथ करे[3]।

वि० सं० १८४४ (ई० स० १७८७) में महाराजा गजसिंह का देहांत होने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र राजसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ। गजसिंह

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०७। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७२।

(२) देखो मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड, पृ० १६-२०।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ६४। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७२।

पूर्वक अपने पास रक्खा[1]।

महाराजा विजयसिंह का जोधपुर में टकसाल खोलना

दिल्ली की बादशाहत की कमज़ोरी की हालत में राजपूताने के कई राजाओं ने बादशाह की आज्ञा प्राप्तकर उस (बादशाह) के नाम के सिक्के बनाने के लिए अपने अपने राज्यों में टकसालें खोलीं। इसपर महाराजा विजयसिंह ने भी वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) में शाहआलम (दूसरा) के समय उसकी आज्ञा से अपनी राजधानी में टकसाल खोली, जहां वि० सं० १९१५ (ई० स० १८५८) तक उक्त बादशाह के नाम के सोने, चांदी और तांबे के सिक्के बनते रहे। महाराजा विजयसिंह के समय बनने से ये सिक्के लोगों में "विजयशाही" कहलाते हैं और उनपर नाम उक्त बादशाह का है[2]।

वि० सं० १८४२ (ई० स० १७८५) में महाराजा गजसिंह के पत्र लिखने पर महाराजा विजयसिंह ने अपने बहुत से सैनिकों को साथ देकर

महाराजा गजसिंह का राजसिंह को बीकानेर बुलाकर क़ैद करना

कुंवर राजसिंह को बीकानेर विदा किया। कुछ दिनों बाद गजसिंह ने अपने दूसरे पुत्रों सुलतानसिंह, अजबसिंह और मोहकमसिंह को भेजकर राजसिंह के सीढ़ियां चढ़ते समय उसे क़ैद करवा दिया। जोधपुर से आये हुए सरदारों ने लड़ाई करनी चाही, परन्तु विजयसिंह ने यह कहलाकर उन्हें वापस बुलवा लिया कि वह गजसिंह का कुंवर है, वह जो चाहे उसके साथ करे[3]।

वि० सं० १८४४ (ई० स० १७८७) में महाराजा गजसिंह का देहांत होने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र राजसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ। गजसिंह

---

(१) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ९४। वीरविनोद, भाग २, पृ० ५०७। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७२।

(२) देखो मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड, पृ० १९-२०।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ९४। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७२।

राजसिंह के बीकानेर का स्वामी होने पर उसके छोटे भाइयों का जोधपुर जाना

की दग्ध क्रिया होने के बाद ही देवीकुंड से उस-(राजसिंह) के भाई सुलतानसिंह[1], मोहकमसिंह[2] तथा अजबसिंह[3] जोधपुर चले गये[4]।

वि० सं० १८४४ (ई० स० १७८७) में जब माधोजी सिंधिया ने जयपुर पर चढ़ाई की[5] तो वहां के महाराजा प्रतापसिंह ने महाराजा विजयसिंह से

---

(१) दयालदास की ख्यात में सुलतानसिंह को महाराजा गजसिंह का पन्द्रहवां पुत्र लिखा है, परन्तु पाउलेट के "गैजेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट", "ताज़ीमी राजवी ठाकुर और खवासवालों की पुस्तक" तथा अन्य जगह उसे गजसिंह का दूसरा पुत्र लिखा है। सुलतानसिंह बीकानेर से जोधपुर और वहां से उदयपुर गया, जहां महाराणा भीमसिंह ने उसे जागीर देकर अपने पास रक्खा। मेवाड़ में रहते समय उसने अपनी पुत्री पद्मकुंवरी का विवाह महाराणा भीमसिंह से किया, जिसने पीछोला तालाब के तट पर भीमपद्मेश्वर नाम का शिवालय बनवाया। उक्त शिवालय की प्रशस्ति में उसके पितृपक्ष की महाराजा रायसिंह से लगाकर गजसिंह तक वंशावली दी है। उसमें उसको सूरतसिंह का कनिष्ठ भ्राता लिखा है—

तस्माच्छ्रीगजसिंहभूपतिमहाराजान्ववायोऽभ्यभू-
त्तस्मात् सूरतसिंहइंद्रविभवो राठोडवंशैकभूः।
तद्भ्राता सुलतानसिंह इति यः कनिष्ठोभवत्-
तज्जा पद्मकुमारिकेयमतुला श्रीभीमसिंहप्रिया ॥ २५ ॥

सुलतानसिंह के पुत्र गुमानसिंह और अजबसिंह के बीकानेर जाने पर महाराजा रत्नसिंह ने गुमानसिंह को बणीसर और अजबसिंह को छाजूसर की जागीर दी।

(२) मोहकमसिंह के वंशजों के पास नरेसर का ठिकाना है।

(३) जोधपुर में अजबसिंह को लोहावट की जागीर मिली थी। वहां से वह जयपुर गया जहां भी उसे जागीर मिली।

(४) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ८६।

(५) जयपुर के महाराजा पृथ्वीसिंह की मृत्यु होने पर प्रतापसिंह वहां का स्वामी हुआ। पृथ्वीसिंह का एक पुत्र मानसिंह था, जो उस समय उसकी ननिहाल भेज दिया गया। कुछ वर्षों पश्चात् उसके सिंधिया के पास पहुंचने पर उसने उसको जयपुर की गद्दी दिलाने के लिए चढ़ाई की। इस चढ़ाई के समय जयपुर राज्य का सम्पादक माचेड़ी का राव प्रतापसिंह नरूकों की तरफ था।

महाराजा विजयसिंह का जयपुर के महाराजा की सहायता करना

सहायता की प्रार्थना की। इसपर विजयसिंह ने सिंघवी भीमराज को सेना देकर वहां भेजा। माधोजी सिंधिया को जब इसकी सूचना मिली तो उसने अपने पास रहनेवाले जोधपुर के वकील से कहा कि जयपुर के लिए महाराजा मुझ से वैर क्यों बांधता है? उस समय वकील ने उसे समझाया कि जोधपुर की सेना जयपुर की सहायता के लिए नहीं बल्कि अपनी सीमा के प्रबंध के लिए जा रही है। तब माधोजी ने उसका समाधान कर उसे इस विषय में महाराजा को लिखने को कहा। उधर भीमराज अपनी बीस हज़ार सेना के साथ सांभर जा पहुंचा। इसी बीच हमदानी[1] को भी महाराजा ने आगरा आदि पर अधिकार कराने का वचन देकर अपने पक्ष में कर लिया। उसके साथ इस्माइलबेग[2] भी था। इसपर माधोजी ने पुनः जोधपुर के वकील से इस संबंध में कहा तो उसने बात टाल दी। तब माधोजी ने उसे आश्वासन दिया कि मैं जोधपुर पर आक्रमण नहीं करूंगा और वह मथुरा की तरफ चला गया। अनन्तर राठोड़-सेना ने कागलिया के बाग़ में डेरा किया। कुछ सरदारों का वहां से आगे बढ़ने का इरादा नहीं था, परन्तु हमदानी के समझाने पर फिर यही राय रही कि मरहटों को देश से बाहर कर देने का यह अच्छा अवसर खोना नहीं चाहिये। वहां से बसी तथा बासका में डेरा करती हुई राठोड़ सेना आगे बढ़ी। सिंधिया राठोड़ों के पीछे आने की ख़बर पाकर लालसोट की पहाड़ियों में जा रहा। राठोड़ों को जब यह पता लगा कि मरहटे पीछे चाटसू की तरफ बढ़ रहे

(१) इसका पूरा नाम मुहम्मदबेग हमदानी था। यह मुग़ल सल्तनत के मीरबख़्शी मिर्ज़ा नजफ़ख़ां ज़ुल्फ़िक़ारुद्दौला के चार मुख्य सेनानायकों में से एक था। यह जितना चतुर था, उतना ही धोखेबाज़ और ख़ूंख़ार था। इसके चरित्र-बल एवं युद्ध-प्रियता के कारण मिर्ज़ा नजफ़ख़ां की मृत्यु होने पर उसके अधिकांश अनुयायी हमदानी के शामिल हो गये और इसने धीरे धीरे काफ़ी शक्ति प्राप्त कर ली।

(२) यह मुहम्मदबेग हमदानी का भतीजा और अपने समय का बड़ा लड़ाका सरदार था। मुग़ल बादशाहत का अवसान समीप जान, यह भी अपने लिए, अन्य मुग़ल सरदारों के समान, हिन्दुस्तान में एक विशाल रियासत क़ायम करना चाहता था।

ईं तो वे महाराजा प्रतापसिंह के साथ प्रस्थान कर वीड़ियाणा तथा माधोगढ़ होते हुए तुंगा नामक स्थान में पहुंचे, जहां कछवाहों की और सेना भी आकर शामिल हो गई। उन्होंने मरहटों के पास रसद का पहुंचना रोक दिया। राठोड़ तथा अन्य लोग दौड़-दौड़ कर उनको बड़ा तंग करते। मरहटों ने जब यह अवस्था देखी तो युद्ध करने का निश्चय किया और अपना तोपखाना आगे रवाना किया। विपक्षी दलों में मुठभेड़ होने पर दोनों तरफ से तोपों की भीषण लड़ाई हुई। अनन्तर राठोड़ों ने पैदल ही तोपख़ाने पर प्रबल आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई में राठोड़ों की तरफ़ के राठोड़ हररूप गजसिंहोत (नथावड़ी का) राठोड़ दलेलसिंह जोरावरसिंहोत (ढावा का), राठोड़ उदयसिंह भगवंतसिंहोत (डुमाणी का), राठोड़ दलेलसिंह संग्रामसिंहोत (तिगरा का), राठोड़ नाथूसिंह ज़ालिमसिंहोत (घोड़ावड़ का) आदि कितने ही प्रमुख सरदार काम आये तथा कितने ही घायल हुए। कुछ समय की लड़ाई के बाद ही राठोड़ों और कछवाहों की सम्मिलित सेना ने मरहटों के तीन तोपखाने छीन लिये और उनपर ऐसी बुरी मार की कि उन्हें पीछे हटना पड़ा। फिर वे उन्हें मारते हुए उनके डेरों तक ले गये। अनन्तर तोपों से गोलों की मारकर दो ही दिवस में राठोड़ों ने मरहटों को भागने पर बाध्य किया। भागती हुई मरहटों की सेना का तोपख़ाना, डेरे आदि राठोड़ों की सेना ने लूटे[1]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० ३ पृ० ९३-९६। ग्राण्ट डफ़ हिस्ट्री ऑव् दि मरहट्टाज़ भाग २ पृ० १८१। सरकार कृत 'फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर' में इस लड़ाई का भिन्न वर्णन मिलता है।

टाड कृत 'राजस्थान' में भी इस लड़ाई का उल्लेख है। उसके अनुसार भी इस लड़ाई में राठोड़ों और कछवाहों की सम्मिलित सेना के साथ इस्माइलबेग और हमदानी शामिल थे। उसमें राजपूतों का पूरा विजय हुई और उन्होंने डी बाइन की अध्यक्षता में आई हुई सिंधिया की सुशिक्षित सेना को हराकर भगा दिया। इस सम्बन्ध में राठोड़ों के चारण ने कछवाहों की ओर संकेत करते हुए निम्नांकित पद कहा—

ऊदलती आंबेर ने राखी राठोडां

(जि० २, पृ० ८३८-३९)।

रुपया लेना तय कर वहां से चला गया। महाराजा ने उसे घटियाली तक पहुंचाया[1]।

रूपनगर तथा कृष्णगढ़ के विरुद्ध सेना भेजना

उसी वर्ष महाराजा विजयसिंह ने करकेड़ी के राजा अमरसिंह के नाम रूपनगर की जागीर लिख दी और अपनी सेना को लिखा कि रूपनगर और कृष्णगढ़, दोनों खाली कराले। तदनुसार दोनों स्थानों पर घेरा डाला गया, परन्तु जब इस में व्यय विशेष होने लगा, तो यह कार्य स्थगित रक्खा गया[2]।

बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह के विरुद्ध सेना भेजना

बीकानेर के महाराजा गजसिंह का देहान्त होने पर उसका पुत्र राजसिंह वि० सं० १८४४ वैशाख वदि २ (ई० स० १७८७ ता० ४ अप्रेल) को वहां की गद्दीपर बैठा[3], परन्तु २१ दिन राज्य करने के बाद ही उसकी भी मृत्यु हो गई[4]। उसका एक पुत्र प्रतापसिंह था। पिता की मृत्यु होने पर वह सूरतसिंह की संरक्षकता में बीकानेर की गद्दी पर बैठाया गया। राज कार्य

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ११-१०। टाड कृत 'राजस्थान' में भी इस घटना का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८५८)।

डब्ल्यू० पामर ने सा० डब्ल्यू० मलेट के नाम सिंधिया की छावनी से ई० स० १७८७ ता० २१ दिसंबर (वि० सं० १८४४ पौष वदि [illegible]) को एक पत्र लिखा था। उसमें उसने लिखा था कि जोधपुर के राजा ने अजमेर पर अधिकार कर लिया है (पूना रेज़िडेंसी कॉरेस्पॉन्डेन्स [illegible] पत्र सं० [illegible])। इसके बाद के ता० [illegible] दिसंबर [illegible] पौष वदि [illegible] के [illegible] के नाम के पत्र में डब्ल्यू० पामर लिखता है कि अजमेर के [illegible] पर [illegible] ने इसका विरोध किया [illegible] परन्तु ऊपर आये हुए ख्यात के कथन से निश्चय है [illegible]

[illegible]

[illegible]

(२) [illegible]

(३) [illegible]

(४) [illegible]

सारा उसका चाचा सूरतसिंह ही करता था। धीरे-धीरे जब सरदारों पर उसका प्रभाव जम गया, तो उसने प्रतापसिंह का अन्त करने का निश्चय किया, परन्तु इस कार्य में उस(प्रतापसिंह)की बड़ी बहिन ने बाधा डाली। तब सूरतसिंह ने उसका विवाह नरवर में कर दिया। उसके विवाह होने के बाद ही प्रतापसिंह अपने महलों में मरा हुआ पाया गया। कहा जाता है कि सूरतसिंह ने अपने हाथों से गला घोटकर उसे मारा था[1]। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सूरतसिंह के गद्दी बैठने के कुछ समय बाद ही महाराजा विजयसिंह ने उससे कहलाया कि तुम राजसिंह के पुत्र प्रतापसिंह को मारकर बीकानेर के स्वामी हुए हो, अतएव कुछ रुपये भरो नहीं तो सुख से राज्य नहीं करने पाओगे। तब सूरतसिंह ने उत्तर दिया कि मेरे लिए टीका भेजो (अर्थात् मुझे राजा स्वीकार करो) तो मैं तीन लाख रुपये दूं। अनन्तर जोधपुर से टीका जाने पर सूरतसिंह ने रुपये भेज दिये[2]।

अनन्तर माधोजी सिंधिया ने अलवर का परित्याग कर आगरे की तरफ़ प्रस्थान किया। यह खबर पाकर इस्माइलबेग ने राठोड़ों के पास

---

(१) टॉड, राजस्थान; जि० २, पृ० ११३८-४०।

बीकानेर राज्य की ख्यातों आदि में प्रतापसिंह का उल्लेख तो अवश्य आया है, पर उसका गद्दी बैठना नहीं लिखा है, परन्तु ठाकुर बहादुरसिंह लिखित "बीदावतों की ख्यात" से इसकी पुष्टि होती है (जि० २, पृ० २३६)। मरहटों (सिंधिया) के जोधपुर के ख़बरनवीस कृष्णाजी ने अपने स्वामी के नाम ता० ९ जून ई० स० १७८७ (आषाढ बदि ४ वि० सं० १८४४) को एक पत्र लिखा था। उसमें भी लिखा है कि राजसिंह का क्रिया-कर्म हो जाने पर प्रतिष्ठित सरदारों ने सूरतसिंह को राजा बनाना चाहा, परन्तु उसके यह कहने पर कि जिस राज्य के लिए मेरे बड़े भाई की ऐसी दशा हुई वह मुझे नहीं चाहिये, उन्होंने राजसिंह के पुत्र प्रतापसिंह को गद्दी पर बैठाया और शासक की बाल्यावस्था होने के कारण सब राजकार्य सूरतसिंह करता रहा।

(२) जि० ३, पृ० ७०। दयालदास की ख्यात तथा बीकानेर राज्य के इतिहास से संबंध रखनेवाली अन्य पुस्तकों में बीकानेर राज्य से रुपये दिये जाने का उल्लेख नहीं है।

इस्माइलबेग की दक्षिणियों से लड़ाई

सहायता के लिए लिखा। भीमराज ने तो राठोड़ों को उधर जाने की आज्ञा दे दी, परन्तु इसी बीच जयपुर का महाराजा प्रतापसिंह उन्हें अपने विवाह में तंवरों की पाटण में ले गया, जिससे इस्माइलबेग को अकेले ही दक्षिणियों से लोहा लेना पड़ा। तीसरे आक्रमण में उसने उन्हें हराकर भगा दिया और धौलपुर पर भी क़ब्ज़ा कर लिया[1]।

बादशाह को झूठी हुंडियां देना

इसके कुछ ही समय बाद बादशाह (शाहआलम, दूसरा) दिल्ली से प्रस्थान कर रेवाड़ी पहुंचा। वहां कछवाहों तथा राठोड़ों की सेनाएं भी उसके शामिल हो गई। महाराजा प्रतापसिंह तथा अन्य लोगों ने बादशाह को नज़रें पेश कीं और बादशाह की तरफ से उन्हें भी सिरोपाव आदि दिये गये। राठोड़ों और कछवाहों दोनों ने बादशाह से निवेदन किया कि आप यदि कूच करें तो दक्षिणियों को नर्मदा पार भगा दें। बादशाह ने उत्तर दिया कि दक्षिणी मुझे पांच हजार रुपये रोज देते हैं, यदि इतना ही तुम लोग देना मंजूर करो तो जहां चाहें वहां कूच किया जा सकता है। इसपर राठोड़ों और कछवाहों ने परस्पर सलाह कर बादशाह को दो लाख रुपयों की झूठी हुंडिया दीं और उसका वहां से दिल्ली की तरफ कूच कराया। उन्हीं दिनों बीमारी फैल जाने के कारण जोधपुर की सेना के रीयां, बगडी आदि कई ठिकानों के ठाकुरों की मृत्यु हो गई[2]।

कुछ सरदारों का महाराजा से भीमराज की शिकायत करना

इसके बाद जोधपुर की सारी सेना भी अपने-अपने ठिकानों को लौट गई। सिंघवी भीमराज मेड़ता होता हुआ जोधपुर पहुंचा। उसकी अच्छी कारगुजारी के कारण महाराजा ने उसका बड़ा सम्मान किया और उसकी इज़्ज़त औरों से अधिक बढ़ाई। यह देख कितने ही सरदार उससे जलने लगे। उन्होंने महाराजा से उसकी झूठी शिकायत की

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात जि० ३ पृ० १०१।

(२) वही, जि० ३ पृ० ११-१२।

कि दक्षिणियों से एक लाख रुपया ले लेने के कारण ही उसने उनका पीछा न किया। इसपर महाराजा भीमराज से अप्रसन्न हो गया, परन्तु पीछे से सारी बातें ठीक-ठीक मालूम हो जाने पर उसकी नाराज़गी दूर हो गई[1]।

उसी वर्ष पौष मास में जोधपुर की सेना ने किशनगढ़ पर घेरा डाला था। सात मास के घेरे के बाद क्रमशः रूपनगर एवं किशनगढ़ पर राज्य का अधिकार हो गया। तब वहां के स्वामी प्रतापसिंह ने तीन लाख रुपया देना ठहराकर सुलह कर ली। इस रक़म में से दो लाख तो उसने नक़द दिये और पचास हज़ार के गहने तथा शेष पचास हज़ार दो किश्तों में देना तय किया। अनन्तर प्रतापसिंह के महाराजा के पास उपस्थित होने पर उसने उसका उचित सत्कार किया[2]।

किशनगढ के स्वामी से दंड लेना

वि० सं० १८४६ (ई० स० १७८९) में महादजी ने सेना एकत्र कर धौलपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। इस अवसर पर मरहटी सेना के एक बड़े भाग का संचालन एवं तोपखाना डी बोइन के हाथ में था। यह देखकर इस्माइलबेग ने जयपुर और जोधपुर के शासकों को लिखा कि आप दस हज़ार फ़ौज भेज दें तो मैं दक्षिणियों को निकाल दूं। फ़ौज तो दोनों में से किसी ने न भेजी, परन्तु जोधपुर से महाराजा विजयसिंह ने अपने कार्यकर्त्ताओं से रायकर तीस हज़ार रुपयों की हुंडी अपने दिल्ली के वकील के नाम भेज दी। इस बीच ग़ुलामकादिर रुहेला[3] ने सोलह हज़ार फ़ौज के साथ जाकर डीग को लूटा और फिर वह इस्माइलबेग के शामिल हो गया, जिसने मरहटों से जीते हुए मुल्क में से आधा उसे देना स्वीकार किया। दूसरे दिन सुबह जब सिंधिया ने उनपर

इस्माइलबेग पर मरहटों की चढ़ाई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ७४।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ७४-५। वीरविनोद, भाग २, पृ० १२४।

(३) यह रुहेला सरदार नजीबुद्दौला का पौत्र एवं अमीरुलउमरा ज़ाबिताख़ां का पुत्र था। इसका इतिहास यथास्थान आगे दिया जायगा।

कि दक्षिणियों से एक लाख रुपया ले लेने के कारण ही उसने उनका पीछा न किया। इसपर महाराजा भीमराज से अप्रसन्न हो गया, परन्तु पीछे से सारी बातें ठीक-ठीक मालूम हो जाने पर उसकी नाराज़गी दूर हो गई[1]।

किशनगढ के स्वामी से दंड लेना

उसी वर्ष पौष मास में जोधपुर की सेना ने किशनगढ़ पर घेरा डाला था। सात मास के घेरे के बाद क्रमशः रूपनगर एवं किशनगढ़ पर राज्य का अधिकार हो गया। तब वहां के स्वामी प्रतापसिंह ने तीन लाख रुपया देना ठहराकर सुलह कर ली। इस रक़म में से दो लाख तो उसने नक़द दिये और पचास हज़ार के गहने तथा शेष पचास हज़ार दो किश्तों में देना तय किया। अनन्तर प्रतापसिंह के महाराजा के पास उपस्थित होने पर उसने उसका उचित सत्कार किया[2]।

इस्माइलबेग पर मरहटों की चढ़ाई

वि० सं० १८४६ (ई० स० १७८९) में महादजी ने सेना एकत्र कर धौलपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। इस अवसर पर मरहटी सेना के एक बड़े भाग का संचालन एवं तोपखाना डी बोर्ने के हाथ में था। यह देखकर इस्माइलबेग ने जयपुर और जोधपुर के शासकों को लिखा कि आप दस हज़ार फ़ौज भेज दें तो मैं दक्षिणियों को निकाल दूं। फ़ौज तो दोनों में से किसी ने न भेजी, परन्तु जोधपुर से महाराजा विजयसिंह ने अपने कार्यकर्त्ताओं से रायकर तीस हज़ार रुपयों की हुंडी अपने दिल्ली के वकील के नामे भेज दी। इस बीच गुलामकादिर रुहेला[3] ने सोलह हज़ार फ़ौज के साथ जाकर डीग को लूटा और फिर वह इस्माइलबेग के शामिल हो गया, जिसने मरहटों से जीते हुए मुल्क में से आधा उसे देना स्वीकार किया। दूसरे दिन सुबह जब सिंधिया ने उनपर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ७४।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ७४-५। वीरविनोद, भाग २, पृ० ५३४।

(३) यह रुहेला सरदार नजीबुद्दौला का पौत्र एवं अमीरुल्उमरा ज़ाबिताख़ां का पुत्र था। इसका इतिहास यथास्थान आगे दिया जायगा।

आक्रमण किया तो गुलामक़ादिर की फ़ौज के पैर उखड़ गये और वह दिल्ली की तरफ भाग गया। इस्माइलबेग ने इसके बाद भी एक पहर तक दक्षिणियों का मुक़ाबला किया, पर अन्त में उसे भी रणक्षेत्र छोड़ना पड़ा। दक्षिणियों ने उसका पीछा किया, तब वह जमुना पार कर दिल्ली पहुंचा। गुलामक़ादिर ने दिल्ली पहुंचते ही बादशाह (शाहआलम) को क़ैद कर उसकी आंखें फोड़ दीं और उसके दो शाहज़ादों को मार डाला। इस घटना की खबर मिलने पर सिंधिया ने आगरे से प्रस्थान किया और इस्माइलबेग के पास अपने आदमी भेजकर उसे अपने पक्ष में कर लिया। अनन्तर उन्होंने वहां से धन आदि ले जाते हुए गुलामक़ादिर पर आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई में गुलामक़ादिर की पराजय हुई और उसने भागने की कोशिश की, परन्तु एक ब्राह्मण के घर से जहां वह छिपा हुआ था, वह क़ैद कर लिया गया। सिंधिया ने उसकी आंखें निकलवाकर उसे मरवा दिया[1] और इस्माइलबेग को नजफकुली के अधिकार में जो भूमि थी उसपर कब्जा करने को कहा। इसपर इस्माइलबेग दस हज़ार फ़ौज के साथ कूचकर रेवाड़ी पहुंचा जहां अधिकार कर उसने गोकुलगढ़ छीन लिया। अनन्तर नजफकुली के साथ उसकी लड़ाई शुरू हुई। इसी समय मारवाड़ के वकीलों, तंवर कर्णसिंह तथा भंडारी खीचंद ने समझा-बुझा कर एका करा दोनों में भूमि विभक्त कर दी[2]।

महाराजा विजयसिंह का मरहटों से सम्बन्ध-विच्छेद पहले से ही चला आता था। उनकी प्रभुता का अन्त करने के लिए यह समय [illegible]

(१) सरकार [illegible] विस्तृत विवरण मिलता है। [illegible]

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात [illegible]

महाराजा का अंग्रेज़ सरकार के साथ पत्र-व्यवहार

रहता था। उन दिनों अंग्रेज़ों का प्रभुत्व भारतवर्ष के पूर्वी भाग पर स्थापित हो चुका था। उनकी शक्ति को दूसरे लोग भी स्वीकार करने लगे थे। उससे लाभ उठाने के लिए महाराजा विजयसिंह ने लॉर्ड कॉर्नवालिस से पत्र व्यवहार किया, पर उसका कोई परिणाम न निकला। उसने लॉर्ड कॉर्नवालिस को कई पत्र लिखे थे, जिनमें से एक पेशवा के अंग्रेज़ी दफ़्तर में अब तक विद्यमान है, जिसका आशय नीचे दिया जाता है—

"श्रीमान्! आपके दो मित्रतापूर्ण पत्रों का, जो मुझे लगभग एक ही समय में मिले थे और जिनको पढ़कर मुझे बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ था, उत्तर दिया जा चुका है। मुझे विश्वास है कि मेरे उत्तर देख लिए गये होंगे। मेरे मित्र, अंग्रेज़ जाति के पूर्वी देशों में प्रवेश करने के दिन से ही उनके अच्छे स्वभाव की—जो उन देशों के शासकों एवं ज़मींदारों को कष्ट पहुंचाने अथवा उन्हें उनके स्थानों से हटाने के विरुद्ध है—महिमा सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश की तरह फैल गई है। इसी गुण के कारण इस जाति का वैभव दिन-दिन बढ़ रहा है। यह जानकर हिन्दुस्तान के राजाओं और ज़मींदारों की भावनाएं भी बदल गई हैं। उनके दिलों में इस बात का विश्वास जम गया है कि हिन्दुस्तान की सल्तनत—जो अत्याचारियों के ज़ुल्म की आंधी से झुलस गई है और जिसने हर नवागत जाति के हाथों दुःख पाया है और जहां के अत्याचारी मरहटे यह चाहते हैं कि उनके राज्य-प्रसार में कोई शक्ति बाधक न हो—अंग्रेज़ों की सहायता प्राप्त होने से पुनः उन्नत हो सकती है। यह उन्नति ऐसी होगी, जिसका कभी अवसान न होगा और स्वयं अंग्रेज़ों की सफलता भी इतनी प्रभावशाली हो जायगी कि उसका कभी नाश न होगा। भाग्य के अपरिवर्तनशील विधान के कारण भारत विनाश की ओर बढ़ा और अनेक बड़े तथा सम्माननीय घरानों का नाश निश्चित सा हो गया, क्योंकि सिंधिया ने अचानक अवतीर्ण होकर हिन्दुस्तानियों के साथ दग़ा करना एवं उनके घरों का नाश करना शुरू किया। जिस किसी के साथ भी उसने इक़रारनामा किया उसके

साथ ही उसने असत्यतापूर्ण व्यवहार किया। प्रथम उसने अंग्रेज़ी सेना पर आक्रमण किया। फिर उस सेना के अध्यक्ष को सिन्धिया ने वादे कर तब तक धोखे में रक्खा जब तक कि उसका ग्वालियर के क़िले पर अधिकार न हो गया। दूसरी बार उसने अमीरुल्उमरा नवाब अफ़ासियाबखां को मित्रता का वचन देकर निमंत्रित किया और धर्म की अनेक क़समें खाकर वह उसके शामिल हो गया। ज्योंही उसको अपने इस कार्य में सफलता मिली उसने उसको धोखे से मार डाला। उसके वंशजों के साथ उसने कैसा व्यवहार किया, वह दुनिया जानती है। स्वयं आपको भी वह सब ज्ञात है। इस समय मरहटों का सब से पहला इरादा यह है कि वे अंग्रेज़ों के शत्रु बनकर उन्हें धोखा दें और उधर युद्ध की अग्नि प्रज्वलित करें। लेकिन जब तक सिन्धिया इधर के राजाओं (जोधपुर तथा जयपुर) की तरफ़ से निश्चित नहीं हो जाता, तब तक वह अंग्रेज़ों के साथ मित्रता करने के लिए झूठे वायदे करता रहेगा। यदि आज ही हमारे साथ उसका समझौता हो जाय तो वह अंग्रेजों के साथ युद्ध करने में देर न करेगा। लेकिन हमको इस जाति के वचनों पर बिलकुल भरोसा नहीं है। ईश्वर की कृपा से आपको सारी बातों और परिस्थिति का पूरा पूरा ज्ञान है तथा आप सच झूठ को पहचानने में समर्थ हैं। मुझे विश्वास है कि आप मरहटों से बात करने के पूर्व प्रत्येक बात का पूरा पूरा विचार करेंगे।

"मैंने सुना है कि कुछ स्वार्थी लोग आपको झूठी खबरें देते हैं। फिर भी मुझे विश्वास है कि आप उनकी छलपूर्ण बातों पर ध्यान न देंगे और न उनके धोखे में फंसेंगे। सदैव से आप और हम हिन्दुस्तान के जमींदार रहे हैं और इस देश की उन्नति तथा निर्धनता हमारी सम्पन्नता, इसकी भलाई बुराई हम पर ही निर्भर है। आप सदा अपने वचनों पर स्थिर रहे हैं इसलिए हम आपकी सैन्य वृद्धि तथा सम्पन्नता की कामना करते हैं। आपका हमारे साथ संधि कर लेना कई प्रकार से लाभदायक सिद्ध होगा। हम अपने किए हुए वायदों से कभी पीछे न हटेंगे। मैंने

सेठ रामसिंह को आपके पास अपनी आन्तरिक अभिलाषा प्रकट करने के लिए भेजा है। मैं चाहता हूं कि जो कुछ वह आपके समक्ष प्रकट करे उसे आप सत्य और छल-छिद्र-रहित समझें। ईश्वर की कृपा से आपकी दृढ़ सरकार भारत के पूर्वी भाग में क़ायम हो गई है। यदि ईश्वर की कृपा से हम दो राजाओं (जोधपुर तथा जयपुर) तथा अंग्रेज़ों के बीच सन्धि स्थापित हो जाय तो आवश्यकता पड़ने पर राजपूत आपकी और आप राजपूतों की मदद करेंगे। आपकी सरकार सदैव के लिए स्थापित हो जायगी और सारे हिन्दुस्तान के मामले तय करने का हम सम्मिलित प्रयत्न करेंगे। इस प्रकार अंग्रेज़ों की अभिलाषा पूर्ण हो जायगी। यदि मरहटे विजयी हो गये तो एक न एक दिन अंग्रेज़ों को उनकी शक्ति के दुष्प्रभाव का अनुभव करना पड़ेगा। मैंने यह सब केवल सूचनार्थ लिखा है[1]।"

इस्माइलबेग और महादजी सिंधिया में वैर तो पहले से ही चला आता था। कई बार उसे माधोजी सिंधिया की विशाल वाहिनी के हाथों हार खानी पड़ी थी। वि० सं० १८४७ (ई० स० १७९०) में जयपुर तथा जोधपुर के राजाओं की सहायता प्राप्त कर वह (इस्माइलबेग) अजमेर जा पहुंचा।

पाटण और मेड़ते की लड़ाइयां

सिन्धिया ने सर्वप्रथम उसकी सेना के लोगों में फूट डालने का प्रयत्न किया, परन्तु जब इससे कोई लाभ न हुआ तो उसने मथुरा से लकवा दादा[2]

(१) पूना रेज़िडेंसी करेसपॉन्डेंस, जि० १ (सर जदुनाथ सरकार-सम्पादित) पृ० ३६१-३, पत्र संख्या २४८।

(२) लकवा दादा लाड, सारस्वत (शेणवी) ब्राह्मण था। उसके पूर्वजों ने सावंतवाड़ी राज्य के पारखा और आरोबा के देसाइयों को बीजापुर के सुलतान से सरदारी दिलाई थी। इसी कृतज्ञता के कारण उन्होंने लकवा के पूर्वजों को आरोबा व चीखली गांवों में जागीरें दीं थी, जो अब तक उनके वंश में चली आती हैं। युवा होने पर लकवा सिंधिया के मुख्य मुत्सद्दी बालोबा तात्या पागनीस के पास चला गया और वहां प्रारम्भ में अहलकार तथा पीछे से सिंधिया के ५२ रिसालों का अफ़सर बना। सेनापति जिवबा दादा की अध्यक्षता में वह अपने अधीनस्थ रिसाले के साथ कई लड़ा-

९०००० थी।""""हमारी विजय सचमुच आश्चर्यप्रद है, क्योंकि केवल मुट्ठी भर सेना के सहारे हमने इतनी बड़ी सेना पर विजय प्राप्त करने में सफलता पाई है। ईश्वर को अनेक धन्यवाद है कि मैं सिंधिया की आज्ञा पूर्ण करने में समर्थ हुआ[1]।"

'कलकत्ता गज़ट' में प्रकाशित इसी लड़ाई के एक दूसरे वृत्तान्त से कुछ नई बातें ज्ञात होती हैं, जिनका उल्लेख करना भी आवश्यक है। उससे पाया जाता है कि यह लड़ाई ता० २३ मई को प्रारम्भ हुई थी, परन्तु शुरू-शुरू में शत्रु की संख्या बहुत अधिक होने के कारण कोई विशेष लाभ न हुआ[2]। फिर शत्रु का ता० २० जून को युद्ध करने का इरादा जानकर

---

(१) हर्बर्ट कॉम्प्टन, यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचरर्स ऑव् हिन्दुस्तान, पृ० ५१-२।

आगरे से लिखे हुए ता० २३ जून, २६ जून और ११ जुलाई ई० स० १७९० के डब्ल्यू० पामर के और लगभग उसी समय के महादजी सिंधिया के अर्ल ऑव् कार्नवालिस के नाम के पत्रों में भी पाटण में राठोड़ों की पराजय होने का उल्लेख है (पूना रेज़िडेंसी कॉरिसपॉडेंस, जि० १ पृ० २६६-७० पत्र संख्या २१०-१)। गोविंद सखाराम सरदेसाई-द्वारा संपादित "महादजी शिंदे यांची कागदपत्रें" में भी इसका उल्लेख है (पत्र संख्या ५७४)। डब्ल्यू० पामर के ता० ११ अगस्त ई० स० १७९० के अर्ल ऑव कार्नवालिस के नाम के पत्र से पाया जाता है कि इसी लड़ाई के बाद विजयसिंह बीमार पड़ गया (पूना रेज़िडेंसी कॉरसपॉडेंस जि० १ पृ० २७०-१ पत्र संख्या २१४)।

टॉड के अनुसार तुंगा नामक स्थान की लड़ाई में जो अपमान कछवाहों का राठोड़ों के हाथ हुआ था (देखो ऊपर पृ० [illegible]), उसका ध्यान उन्हें बना रहा और पाटण की लड़ाई में वे राठोड़ों को नीचा [illegible] मरहटों से मिलकर युद्धक्षेत्र छोड़ गये। फिर भी राठोड़ों की [illegible] वीरता से लड़े और [illegible] तोपों के मुंह तक जा पहुंचे पर अन्त में उनकी पराजय हुई और उन्हें भागना पड़ा। इस प्रकार अपना बदला लेकर जयपुर के कछवाहों को यह दोहा कहने का अवसर प्राप्त हुआ—

घोड़ा जोड़ा पागड़ी, मूंछवालीग मरोड़ ।
पाटण में पधरायगा, [illegible] पांच राठोड़ ।

राजस्थान जि० २, पृ० ८३६-७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में आषाढादि वि० सं० १८४६ (चैत्रादि

डी बोइने आगे बढ़ा और मुठभेड़ होने पर केवल तीन घंटे की लड़ाई के बाद उसने इस्मालबेग को पूरी तरह हरा दिया। सिंधिया को जब अपनी सेना की विजय का समाचार ज्ञात हुआ तो राजपूत राजाओं का पूर्णरूप से दमन करने के लिए उसने डी बोइने को जोधपुर पर आक्रमण करने की आज्ञा भिजवाई। इस आज्ञा के प्राप्त होते ही डी बोइने ने सर्वप्रथम अजमेर पर अधिकार करने का इरादा किया, क्योंकि जयपुर तथा जोधपुर के बीच में होने से उस समय उसका बड़ा महत्वपूर्ण स्थान था। वह वहां ता० १५ अगस्त को पहुंचा। घेरा डाला गया, परन्तु शीघ्र उसका कोई लाभदायक परिणाम होता दिखाई न दिया। अतएव दो हज़ार सवार एवं पर्याप्त पैदल सेना वहां छोड़कर शेष सेना के साथ उसने जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान किया[1]। उसकी सेना के एक अफ़सर ने अपने

१८४७) ज्येष्ठ सुदि ११ (ई० स० १७९० ता० २४ मई) को दक्षिणियों की सेना का पाटण पहुंचना लिखा है। उसके अनुसार प्रारम्भ में डी बोइने की पराजय हुई, जिसपर सिंधिया ने धन का लालच देकर राठोड़ों की तरफ़ के कितने ही प्रमुख व्यक्तियों—बनेचंद, साहामल, सूरजमल (कुचामन) आदि—को रणक्षेत्र से हटा दिया। साथ ही इस्माइलबेग भी चला गया, जिससे राठोड़ों की सेना को वहां से हटना पड़ा (जि० ३, पृ० ८०-१)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि अजमेर पर अधिकार करने के पूर्व दक्षिणियों की सेना ने क्रमशः सांभर एवं परबतसर पर क़ब्ज़ा किया था (जि० ३, पृ० ८४)।

टॉड लिखता है कि इस चढ़ाई के समय किशनगढ़ का बहादुरसिंह (?) डी बोइने से जा मिला और उसका पथप्रदर्शक बन गया (जि० २, पृ० ८७८)। टॉड के ग्रन्थ में दिया हुआ बहादुरसिंह नाम ग़लत है, क्योंकि उसका तो वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) में ही देहांत हो गया था। वस्तुतः यह नाम प्रतापसिंह (बहादुरसिंह का पौत्र) होना चाहिये, जो उस समय वहां का राजा था। "वीरविनोद" से पाया जाता है कि करकेड़ी के स्वामी अमरसिंह पर महाराजा विजयसिंह की विशेष कृपा होने तथा उसको रूपनगर दे देने के कारण मन ही मन प्रतापसिंह विजयसिंह से वैर रखता था (भाग २, पृ० ५३२-४)। इसीलिए मरहटों का जोधपुर पर आक्रमण होने पर वह उनके शरीक हो गया होगा।

ई० स० १७६० ता० १ सितम्बर (वि० सं० १८२७ भाद्रपद वदि ७) के पत्र में इस घटना का इस प्रकार वर्णन किया है—

"यद्यपि इस गढ़ को घेरे हुए हमें १५ दिन हो गये हैं, लेकिन अभी तक हमारे घेरे का कोई असर नहीं हुआ है। हमारी तोपें भी बेकार सी हैं। क़िले तक पहुंचने का तंग मार्ग प्राकृतिक रूप से ही इतना सुरक्षित है कि ऊपर से कुछ बड़े पत्थरों को लुढ़काकर ही हमें सहज में रोका जा सकता है। उन पत्थरों से उत्पन्न होनेवाली आवाज़ की समता मैं वज्र से करता हूं। मुझे आशंका है कि घेरे की अवधि बढ़ानी पड़ेगी, क्योंकि गढ़ के भीतर लोगों के पास ६ मास तक के लिए अन्न और [illegible] के लिए भोजन-सामग्री मौजूद है। मैं समझता हूं कि हमें अपनी सेना के दो भाग कर एक यहां रखना और दूसरा मेड़ते में भेजना पड़ेगा, जहां [illegible] के होने का समाचार मिला है। विजयसिंह ने [illegible] साथ छोड़ने के एवज़ में अजमेर और उसके आस पास [illegible] तक की भूमि देने को कहा, परन्तु उसने उत्तर दिया कि अजमेर और [illegible]पुर तो पहले से ही सिंधिया ने मेरे नाम कर दिये हैं।"

मेड़ते की ही ओर से [illegible] सेना की लड़ाई का [illegible] दूसरे अफ़सर ने अपने ई० स० १७६० ता० १३ सितम्बर (वि० सं० १८२७ भाद्रपद सुदि ५) के पत्र मे इस प्रकार लिखा है—

"सत्रह दिनों तक अजमेर पर डेरा रहने के [illegible] जब मेड़ते [illegible] की तैयारी का पता लगा तो दो हजार सवारों [illegible] सेनापत्व [illegible] ने [illegible] सेना के साथ मेड़ते [illegible]

[illegible]

डी बोइने आगे बढ़ा और मुठभेड़ होने पर केवल तीन घंटे की लड़ाई के बाद उसने इस्मालबेग को पूरी तरह हरा दिया। सिंधिया को जब अपनी सेना की विजय का समाचार ज्ञात हुआ तो राजपूत राजाओं का पूर्णरूप से दमन करने के लिए उसने डी बोइने को जोधपुर पर आक्रमण करने की आज्ञा भिजवाई। इस आज्ञा के प्राप्त होते ही डी बोइने ने सर्वप्रथम अजमेर पर अधिकार करने का इरादा किया, क्योंकि जयपुर तथा जोधपुर के बीच में होने से उस समय उसका बड़ा महत्वपूर्ण स्थान था। वह वहां ता० १५ अगस्त को पहुंचा। घेरा डाला गया, परन्तु शीघ्र उसका कोई लाभदायक परिणाम होता दिखाई न दिया। अतएव दो हज़ार सवार एवं पर्याप्त पैदल सेना वहां छोड़कर शेष सेना के साथ उसने जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान किया[1]। उसकी सेना के एक अफ़सर ने अपने

१८४७) ज्येष्ठ सुदि ११ (ई० स० १७६० ता० २४ मई) को दक्षिणियों की सेना का पाटण पहुंचना लिखा है। उसके अनुसार प्रारम्भ में डी बोइने की पराजय हुई, जिसपर सिंधिया ने धन का लालच देकर राठोड़ों की तरफ़ के कितने ही प्रमुख व्यक्तियों—वनेचंद, साहामल, सूरजमल (कुचामन) आदि—को रणक्षेत्र से हटा दिया। साथ ही इस्माइलबेग भी चला गया, जिससे राठोड़ों की सेना को वहां से हटना पड़ा (जि० ३, पृ० ८०-१)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि अजमेर पर अधिकार करने के पूर्व दक्षिणियों की सेना ने क्रमशः सांभर एवं परबतसर पर क़ब्ज़ा किया था (जि० ३, पृ० ८४)।

टॉड लिखता है कि इस चढ़ाई के समय किशनगढ़ का बहादुरसिंह (?) डी बोइने से जा मिला और उसका पथप्रदर्शक बन गया (जि० २, पृ० ८७८)। टॉड के ग्रन्थ में दिया हुआ बहादुरसिंह नाम ग़लत है, क्योंकि उसका तो वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) में ही देहांत हो गया था। वस्तुतः यह नाम प्रतापसिंह (बहादुरसिंह का पौत्र) होना चाहिये, जो उस समय वहां का राजा था। "वीर-विनोद" से पाया जाता है कि करकेड़ी के स्वामी अमरसिंह पर महाराजा विजयसिंह की विशेष कृपा होने तथा उसको रूपनगर दे देने के कारण मन ही मन प्रतापसिंह विजयसिंह से वैर रखता था (भाग २, पृ० ५३२-४)। इसीलिए मरहटों का जोधपुर पर आक्रमण होने पर वह उनके शरीक हो गया होगा।

ई० स० १७९० ता० १ सितम्बर (वि० सं० १८४७ भाद्रपद वदि ७) के पत्र में इस घटना का इस प्रकार वर्णन किया है—

"यद्यपि इस गढ़ को घेरे हुए हमें १५ दिन हो गये हैं, लेकिन अभी तक हमारे घेरे का कोई असर नहीं हुआ है। हमारी तोपें भी बेकार सी हैं। किले तक पहुंचने का तंग मार्ग प्राकृतिक रूप से ही इतना सुरक्षित है कि ऊपर से कुछ बड़े पत्थरों को लुढ़काकर ही हमें सहज में रोका जा सकता है। उन पत्थरों से उत्पन्न होनेवाली आवाज़ की समता मैं वज्र से करता हूं। मुझे आशंका है कि घेरे की अवधि बढ़ानी पड़ेगी, क्योंकि गढ़ के भीतर लोगों के पास ६ मास तक के लिए जल और साल भर के लिए भोजन-सामग्री मौजूद है। मैं समझता हूं कि हमें अपनी सेना के दो भाग कर एक यहां रखना और दूसरा मेड़ते में भेजना पड़ेगा, जहां शत्रु के होने का समाचार मिला है। विजयसिंह ने डी बोइने को सिंधिया का साथ छोड़ने के एवज़ में अजमेर और उसके आस-पास की पचास कोस तक की भूमि देने को कहा, परन्तु उसने उत्तर दिया कि जयपुर और जोधपुर तो पहले से ही सिंधिया ने मेरे नाम कर दिये हैं[1]।"

मेड़ते की डी बोइने की सेना की लड़ाई का हाल उसके ही एक दूसरे अफसर ने अपने ई० स० १७९० ता० १३ सितम्बर (वि० सं० १८४७ भाद्रपद सुदि ५) के पत्र में इस प्रकार किया है—

'सत्रह दिनों तक अजमेर पर घेरा रहने के बाद जब मेड़ते में शत्रु की तैयारी का पता लगा तो दो हजार सवारों को वहां छोड़कर हमारे जनरल (डी बोइने) ने शेष सेना के साथ मेड़ते की तरफ प्रस्थान किया।

(१) हर्बर्ट कॉम्पटन [illegible] पृ० ४४।

(२) [illegible] 'राजस्थान' [illegible] डी बोइने का [illegible] मराठों [illegible] सरदारों ने [illegible] (जि० २ पृ० ८३८-९)।

कर मेड़ता पर अधिकार कर लिया। तीन दिवस तक वहां ऐसी लूट मची कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। इस लड़ाई में हमारी तरफ़ के छः-सात सौ व्यक्ति काम आये। राठोड़ों का सेनाध्यक्ष भंडारी गंगाराम वहां से भागता हुआ पकड़ा गया। केसरिया वस्त्र धारणकर लड़नेवाले राठोड़ों की वीरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। मैंने स्वयं देखा कि उनके दस-दस, बीस-बीस के जत्थे हमारी हज़ारों की तादाद की सेना पर आक्रमण करते और वीरतापूर्वक लड़ते हुए मारे जाते थे। राठोड़ों की तरफ़ के पांच सरदार मारे गये, जिनमें राजा का भतीजा और सेना का बख़्शी भी शामिल थे। जब उन पांचों ने देखा कि भाग निकलना असंभव है तो वे अपने ग्यारह साथियों सहित घोड़ों से उतर पड़े और लड़ते हुए मारे गये। इस विजय का सारा श्रेय हमारे जेनरल को है[1]। इस्माइलबेग लड़ाई के दूसरे दिन नागोर पहुंचा[2]।"

इस लड़ाई के बाद शीघ्रता से एकत्रित किये हुए अपने आदमियों के साथ इस्माइलबेग महाराजा विजयसिंह से जाकर मिला। उसने महाराजा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार इस लड़ाई में राठोड़ों की तरफ़ के ठाकुर बिशनसिंह (घाणेराव), ठाकुर शिवसिंह (देवली), शेखावत ज़ालिमसिंह (बलाड़ा), ठाकुर महेशदास (आसोप), ठाकुर मालमसिंह (नाडलाई), ठाकुर जगतसिंह (पाली), ठाकुर सूरजमल (हरियाढाणा), ठाकुर भारतसिंह अर्जुनसिंहोत (नुदरा) आदि कितने ही सरदार काम आये एवं घायल हुए (जि० ३, पृ० १०१)। टॉड कृत 'राजस्थान' से भी इसकी पुष्टि होती है (जि० १, पृ० ८८०)।

ऐसी प्रसिद्धि है कि आसोप के ठाकुर महेशदास के मेड़ते के युद्ध में मारे जाने पर भी महाराजा ने आसोप की जागीर जगरामसिंह [illegible] के नाम, जो स्वयं लड़ाई से भाग आया था, करदी थी परन्तु उसी समय किसी चारण के निम्नलिखित दोहा कहने पर वह उसने फिर महेशदास के वारिसों के नाम करदी—

मरज्यो मती महेशा डरो, गढ़ दिवै धन गेर ।
झगड़ा में भागो जगो, उन पाई आसोप ॥

ठाकुर [illegible] पृ० ११०।

(२) हर्बर्ट कॉम्पटन; पूर्वोक्त 'मिलिटरी ऐडवेंचर्स ऑफ़ हिन्दुस्तान' पृ० १०।

से युद्ध जारी रखने का बहुत आग्रह किया और फ़ौज एकत्र करने का भी प्रयत्न किया, परन्तु अन्त में दिसंबर मास में महाराजा ने कोआपुर (Koapur) में डी बोइने के पास अपना वकील भेजकर संधि की बातचीत की। एक बड़ी रक़म और अजमेर का सूबा दिये जाने की शर्त पर सुलह हो गई[1]। अजमेर लकवा दादा को दे दिया गया। सन्धि हो जाने पर डी बोइने ने वापस मथुरा की तरफ़ प्रस्थान किया। ई० स० १७९१ ता० १ जनवरी (वि० सं० १८४७ पौष वदि १२) को वहां पहुंचने पर उसका बड़ा स्वागत हुआ और माधोजी सिंधिया ने इनाम-इकराम देकर उसे सम्मानित किया। इस विजय के कारण डी बोइने की सेना "बेरी (उड़ाकू) फ़ौज" के नाम से प्रसिद्ध हुई[2]।

कुछ सरदारों का विरोधी होना

महाराजा के गुलाबराय नाम की जाट जाति की एक पासवान थी, जिसपर उसकी विशेष कृपा थी। वह उसके कहने में चलता था तथा एक प्रकार से राज्य-कार्य का संचालन उसके इशारे से ही होता था[3]। वि० सं० १८४८ (ई० स० १७९१) में महाराजा ने जालोर का पट्टा उसके नाम

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार साठ लाख रुपया मिलने की शर्त पर मरहटी सेना ने लौट जाना स्वीकार किया। इस रक़म का आधा हिस्सा तो उसी समय दे दिया गया और शेष आधे के चुकाये जाने तक के लिए सांभर, नांवा, परबतसर, मारोठ तथा मेड़ता दक्षिणियों के कब्ज़े में रख दिये गये और कुछ व्यक्ति ओल में सौंपे गये। पीछे से ख़ास आज्ञापत्र पहुंचने पर सिंघवी धनराज ने अजमेर का गढ़ ख़ाली कर दक्षिणियों को सौंप दिया (जि० ३, पृ० ६८-९)। टॉड भी केवल ६० लाख रुपया ही देना लिखता है (राजस्थान, जि० २, पृ० १०७४)। "वीरविनोद" में भी ६० लाख ही दिया है (जि० २, पृ० ८५६)।

(२) हर्बर्ट कॉम्पटन; यूरोपियन मिलिटरी एडवेंचरर्स ऑव् हिंदुस्तान; पृ० ५२। गोविंद सखाराम सरदेसाई द्वारा संपादित "महादजी शिंदे ह्यांचीं कागदपत्रें" में भी सांभर, अजमेर और मेड़ता में दक्षिणियों की विजय होने का उल्लेख है (पत्र संख्या ५०१)।

(३) दत्तात्रेय बळवंत पारसनीस संगृहीत "जोधपुर येथील राजकारणें" (लेखांक २०, पृ० २८) में लिखा है कि इसी पासवान के कारण राज्य में ख़राबी होती गई।

कर दिया, जिसपर उसने अपने कार्यकर्ता वहां भेज दिये। गुलाबराय की महाराजा की शेखावत राणी से नहीं बनती थी, क्योंकि बचपन में उस-(शेखावत)का पौत्र भीमसिंह, गुलाबराय के पुत्र तेजसिंह से लड़ा करता था। इस वजह से अपने पुत्र तेजसिंह की मृत्यु हो जाने पर गुलाबराय की कृपा देवड़ी राणी के पुत्रों पर बढ़ गई और वह कुंवर गुमानसिंह के पुत्र मानसिंह को गोद लिए हुए पुत्र के समान रखती थी। उसके कहने पर अधिकांश सरदारों का विरोध होते हुए भी महाराजा ने शेरसिंह (देवड़ी राणी के पुत्र) को अपना युवराज नियत किया[1]। फलस्वरूप कितने ही चांपावत, कूंपावत, ऊदावत और मेड़तिये सरदार महाराजा से अप्रसन्न हो देश में लूट-मार एवं बिगाड़ करने लगे और मालकोसणी में एकत्र हुए[2]। ऐसी दशा देख गुलाबराय ने शेरसिंह तथा मानसिंह को जालोर भिजवा दिया। इसी बीच गढ़ के अन्य सरदार भी महाराजा का साथ छोड़कर चले गये और गांव डुंगली में ठहरे। तब फाल्गुन वदि १२ (ई० स० १७९२ ता० १९ फरवरी) को रात्रि के समय महाराजा ने विरोधी सरदारों को मनाने के लिए प्रस्थान किया और डीगाडी, बीसलपुर एवं भावी होता हुआ वह मालकोसणी पहुंचा, जहां सारे सरदार उसके पास उपस्थित हो गये। उन्हीं दिनों महाराजा ने सीसोदणी राणी से उत्पन्न कुंवर ज़ालिमसिंह से उसका पट्टा नावा हटाकर शेरसिंह के नाम कर दिया। इसपर जालिमसिंह अप्रसन्न होकर बगड़ी में लूट-मार करता हुआ बीलाड़ा पहुंचा, जहां महाराजा की तरफ से चांपावत जेतमाल (वामणी का) उसको

(१) "जोधपुर येर्थील राजकारणें" में लिखा है कि पासवान ने सब सरदारों से कहा कि बड़ा सरदार एक हाथी और छोटा सरदार एक घोड़ा नज़र कर शेरसिंह को राजा स्वीकार करे। इसपर सब सरदार बड़े नाराज़ हुए और रास के ठाकुर जवानसिंह ने कहा कि हम जिसको राजा बनावेंगे वही राजा होगा (लेखाक २०, पृ० ६४)।

(२) "जोधपुर येथील राजकारणें" से पाया जाता है कि पासवान सरदारों के साथ बड़ा बुरा व्यवहार करती थी। उसने जवानसिंह आदि सरदारों के गांव ज़ब्त कर लिये, जिससे वे एकत्र होकर उसके नाश का उद्योग करने लगे (लेखाक २०, पृ० ६४)।

समझाने के लिए गया। अनन्तर सरदारों आदि के समझाने और विश्वास दिलाने पर श्रावणादि वि० सं० १८४८ (चैत्रादि १८४९) वैशाख वदि ७ (ई० स० १७९२ ता० १३ अप्रेल) को ज़ालिमसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो गया, जिसे उसने गोड़वाड़ का इलाक़ा देने के साथ ही देसूरी की बहाली का ख़ास रुक्का लिखकर दे दिया[1]।

महाराजा की पासवान गुलाबराय के असद्व्यवहार और प्रभाव से प्रायः सब सरदार उससे अप्रसन्न रहते थे। जैसा ऊपर लिखा गया है

सरदारों का चूककर पासवान गुलाबराय को मरवाना

गुलाबराय मानसिंह के पक्ष में थी और सरदार भीमसिंह के, जो वास्तविक हक़दार था। भीमसिंह का बढ़ता हुआ प्रभुत्व देखकर और नगर में उसका बन्दोबस्त हो जाने पर गुलाबराय ने महाराजा को लिखा कि भीमसिंह मुझे मरवा देगा। तब महाराजा की तरफ़ से पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह और रास का ठाकुर जवानसिंह उसके पास गये और उन्होंने झूठा आश्वासन देकर उसे गढ़ में चलने पर राज़ी किया। जैसे ही वह पालकी में बैठने लगी, सरदारों के आदमियों ने उसे चूककर मार डाला और उसका सामान आदि लूट लिया[2]। यह घटना वैशाख वदि १०

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ९९-१०१। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५९। टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० १०७७।

(२) "जोधपुर येथील राजकारणें" से पाया जाता है कि सरदारों ने पहले जो प्रयत्न पासवान को मारने का किया, उसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। उसमें लिखा है कि जब विजयसिंह भंडारी को पासवान ने दीवान नियुक्त किया तो सरदारों को बहुत बुरा लगा और उन्होंने आपस में राय की कि अब क्या करना चाहिये, क्योंकि सब राजपूतों की इज़्ज़त जाती है, राज्य भ्रष्ट हो रहा है और राजा पराधीन (पासवान के अधीन) हो गया है। अनन्तर सरदारों ने एक होकर रत्नसिंह(कूंपावत) को, जिसके पास २०००० राजपूत थे, अपनी ओर मिलाने की सलाह की। जवानसिंह (रास) और सवाईसिंह अर्द्धरात्रि के समय रत्नसिंह के पास गये और उन्होंने उसे अपनी तरफ़ मिलाया। दूसरे दिन बाग़ में जाकर पासवान को क़ैद करने का निश्चय हुआ। सरदारों में से एक खींवसरवाले भीमसिंह ने बदलकर पासवान को षड्यंत्र की सूचना दे दी। फलस्वरूप वि० सं० १८४८ पौष सुदि ८ (ई० स० १७९२ ता० १ जनवरी) रविवार को, जिस दिन सरदार

ता० १६ अप्रेल) सोमवार को हुई और इस कार्य को करने में पाली का ठाकुर रूपावत सरदारसिंह मुख्य था। गुलाबराय पर चूक होने की खबर बहुत समय तक महाराजा को नहीं हुई[1]।

अनन्तर ज़ालिमसिंह को मालकोसणी में ही रख सरदारों ने महाराजा को लेकर प्रस्थान किया और वैशाख वदि १४ (ता० २० अप्रेल) को चैनपुरा में डेरे कर वे वैशाख सुदि ६ (ता० २७ अप्रेल) को बालसमंद पहुंचे। उस समय महाराजा के साथ सूरजमल शोभासिंहोत (कुचामण), रिडमलसिंह (मीठड़ी), फतहसिंह श्यामसिंहोत (बलूंदा), बिड़दसिंह बख़्तावरसिंहोत (रीयां) एवं हरिसिंह शेरसिंहोत (चंडावल) थे, जो भीमसिंह के षड्यन्त्र में शरीक नहीं थे। उन्हीं दिनों सरदारों से प्रोत्साहन पाकर भीमसिंह ने जोधपुर के गढ़ और नगर पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने लोढ़ा साहामल एवं मेहकरण को लिखा कि भीमसिंह के पक्ष के सरदारों का बिगाड़ करो। इसपर साहामल ने उन सरदारों का बिगाड़ करना शुरू किया और उनका बहुत सा मुल्क लूट लिया। अनन्तर भाद्रपद वदि १२ (ता० १४ अगस्त) मंगलवार को महाराजा का डेरा डीगाड़ी में हुआ। इस प्रकार महाराजा को बाहर रहते जब दस मास हो गये तो सवाईसिंह आदि सरदारों ने [illegible] भीमसिंह को गढ़ छोड़ने के लिए समझाया [illegible]

सरदारों का समझाकर भीमसिंह को गढ़ से हटाना

[illegible]

(१) [illegible]

[illegible]

१६

प्राप्तकर वह श्रावणादि वि० सं० १८४६ (चैत्रादि १८५०) चैत्र सुदि ८ (ई० स० १७६३ ता० २० मार्च) को गढ़ का परित्याग कर चला गया। उसी रात महाराजा ने गढ़ में प्रवेश किया[1]।

गढ़ में प्रवेश करने के बाद महाराजा ने पहला कार्य यह किया कि सिंघवी अखैराज को इस्माइलबेग की सेना के साथ भीमसिंह को पकड़ लाने के लिए भेजा। दिन निकलते-निकलते वह भंवर गांव में जा पहुंचा, जहां भीमसिंह ठहरा हुआ था। वहां दोनों दलों में सामना होने पर भीमसिंह को सकुशल सिवाणा तक पहुंचाने के लिए गये हुए सरदारों में से कुछ तो राजकीय सेना का सामना करने के लिए रुक गये और सवाईसिंह भीमसिंह को साथ ले पोकरण चला गया। इधर शाम तक लड़ाई होती रही, जिसमें हरीसिंह (चंडावल), सूरजमल (कुचामण), दानसिंह (सेवरिया) आदि काम आये तथा फ़तहसिंह (चलूंदा) घायल हुआ। फिर भीमसिंह के निकल जाने की खबर पाकर महाराजा ने खास रुक्का लिख अपनी सेना को वापस बुला लिया। साथ ही मृत सरदारों के यहां जाकर महाराजा ने उनकी तसल्ली की और उनके उत्तराधिकारियों को जागीरें आदि दीं[2]।

महाराजा का भीमसिंह के पीछे सेना भेजना

गोडाटी (गौड़ों की चौरासी) और मेड़ता वगैरह के सरदार भीमसिंह के षड्यंत्र में शामिल थे, अतएव महाराजा ने बख्शी अखैराज सिंघवी को उधर भेजा। उसने वहां पहुंचकर जूसर, जावला, मखरी, बडू, बोरावड़, आलणियावास, कुड़की, मोरेड़ और चिंदियाद से पेशकशी वसूल की। इसके

मेड़ता आदि जिलों के ठिकानों से दंड लेना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४३। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०३-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४३-४। सूर्यमल्ल मिश्रण; वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ४१२१-२। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७६-७।

अतिरिक्त उसने ऊदावतों के ठिकाने बंवाल का गढ़ गिरा दिया, जहां अजीतसिंह ऊदावत लड़कर मारा गया[1]।

उन्हीं दिनों के आस-पास महाराजा ने परबतसर का परगना ज़ालिमसिंह के नाम कर दिया। वहां कुंवर ने अपनी तरफ़ से उदयपुर के मुत्सद्दी पीतांबरदास को भेजा। उसने वहां इतना अच्छा प्रबंध किया कि परबतसर अब तक "पीतांबरवाड़ा" कहलाता है[2]।

कुंवर ज़ालिमसिंह को परबतसर का परगना देना

महाराजा की वृद्धावस्था तो थी ही। वैसे में वायु का प्रकोप हो जाने से उसका सारा शरीर रह गया। वि० सं० १८५० आषाढ़ वदि १० (ता० ३ जुलाई) बुधवार को उसकी तबियत अधिक ख़राब हुई। इसके चार दिन बाद आषाढ़ वदि १४ (ता० ७ जुलाई) को अर्द्धरात्रि के समय उसका स्वर्गवास हो गया[3]।

महाराजा की बीमारी और मृत्यु

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० १०४।

(२) वही, जि० ३, पृ० १०५।

(३) वही, जि० ३, पृ० १०५। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८५७। टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० १०७७। दस्तावेज बाबत पालन स [illegible] "जोधपुर [illegible] राजकार्यों" से भी इसकी पुष्टि होती है (लेखांक २१, पृ० ८०)।

उसी पुस्तक में आगे चलकर लिखा है कि अपनी मृत्यु से [illegible] दिन पूर्व महाराजा विजयसिंह ने [illegible], [illegible] देव तथा [illegible] को अपने पास बुलाकर कहा कि मेरी गद्दी को एक तरह से बचाने के लिए [illegible] (सामन्तसिंह का पुत्र) को राज्य देना। मानसिंह को तो [illegible] गद्दी पर [illegible] न देना, क्योंकि उससे [illegible] नहीं। [illegible] होगा और मैं तुम्हारा [illegible] रहूंगा। महाराजा की मृत्यु होने पर [illegible] ने समस्त [illegible] को इसकी [illegible] की सूचना दे दी, परन्तु [illegible] वे पूरा न कर सके और मानसिंह [illegible] से आकर जोधपुर का स्वामी बन गया (जोधपुर [illegible], जिल्द ११, पृ० ८३-[illegible])।

महाराजा विजयसिंह के सात राणियां थीं, जिनसे उसके निम्नलिखित सात पुत्र हुए[1]—(१) फ़तहसिंह,[2] (२) भीमसिंह[3], (३) ज़ालिमसिंह[4], (४) सरदारसिंह[5], (५) शेरसिंह (६) गुमानसिंह[6], और (७) सांवतसिंह[7]।

राणियां तथा संतति

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०७-९। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८५७-८। टॉड, राजस्थान; जि० २, पृ० १०१५।

(२) जन्म वि० सं० १८०४ श्रावण वदि ४ (ई० स० १७४७ ता० १४ जुलाई)। वि० सं० १८३४ कार्तिक सुदी ८ (ई० स० १७७७ ता० ८ नवंबर) को इसकी निस्सन्तान मृत्यु हो गई।

(३) जन्म वि० सं० १८०६ द्वितीय भाद्रपद सुदि १० (ई० स० १७४९ ता० १० सितंबर)। मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८२५ (चैत्रादि १८२६) वैशाख वदि १३ (ई० स० १७६९ ता० ४ मई)। इसका पुत्र भीमसिंह, फ़तहसिंह के गोद गया और विजयसिंह की मृत्यु के बाद जोधपुर राज्य का स्वामी हुआ।

(४) जन्म श्रावणादि वि० सं० १८०६ (चैत्रादि १८०७) आषाढ सुदि १ (ई० स० १७५० ता० २८ जून। मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८५४ (चैत्रादि १८५५) में सिरियारे के घाटे पर काछवली गाव में हुई। इसे क्रमशः नावां, गोड़वाड़ और परबतसर के इलाक़े जागीर में मिले थे।

(५) जन्म श्रावणादि वि० सं० १८०८ (चैत्रादि १८०९) ज्येष्ठ सुदि १२ (ई० स० १७५२ ता० १४ मई)। मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८२५ (चैत्रादि १८२६) वैशाख वदि ७ (ई० स० १७६९ ता० २८ अप्रेल)।

(६) जन्म वि० सं० १८१८ कार्तिक सुदि ९ (ई० स० १७६१ ता० ६ नवंबर)। मृत्यु वि० सं० १८४८ आश्विन वदि १३ (ई० स० १७९१ ता० २६ सितंबर)। इसका पुत्र मानसिंह, भीमसिंह के पीछे जोधपुर राज्य का स्वामी हुआ। दत्तात्रेय बलवंत पारसनीस-संगृहीत "जोधपुर येथील राजकारणें" में पासवान गुलाबराय का गुमानसिंह को विष देकर मरवाना लिखा है (लेखांक २०, पृ० ६३)।

(७) जन्म वि० सं० १८२५ फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १७६९ ता० १५ मार्च)। इसको तथा इसके पुत्र सूरसिंह को, जिसका जन्म वि० सं० १८४१ कार्तिक सुदि ३ (ई० स० १७८४ ता० १७ अक्टोबर) को हुआ था, भीमसिंह ने वि० सं० १८५१ (ई० स० १७९४) में चूक कर मरवाया।

महाराजा विजयसिंह ने पूरे चालीस वर्षों तक जोधपुर पर राज्य
किया, पर उसके इस दीर्घ शासनकाल में राज्य में कभी पूर्ण शान्ति का

महाराजा का व्यक्तित्व

निवास न रहा। उसके राज्य का प्रारम्भिक समय
अपने चचेरे भाई रामसिंह (राज्यच्युत) के साथ के
बखेड़ों में बीता। सरदारों के झगड़े तो न्यूनाधिक अंत तक बने ही रहे।
इसका कारण उसका सरदारों के प्रति अनुचित व्यवहार और छोटे लोगों
की तरफ़ विशेष झुकाव था।

अपने शत्रु अथवा विरोधी का अंत करने में छल का आश्रय लेने में
वह अपने पूर्वजों से कम न था। जयआपा सिंधिया के कठिन घेरे के
अवसर पर जब उसको हराने में वह समर्थ न हुआ तो उसने उसे छल से
मरवा दिया। यही नहीं जिन सरदारों पर राज्य का अस्तित्व कायम रहता
है उनमें से भी कई को उसने दगा से मरवाया। राजपूत जाति के इतिहास
में शत्रु से दगा करने के उदाहरण बहुत कम देखने में आते हैं और इस दृष्टि से
उसके ये कार्य प्रशंसनीय नहीं कहे जा सकते। इसका परिणाम भी जोध-
पुर राज्य के लिए बुरा हुआ क्योंकि इससे मरहटों का रोब बढ़ गया
और सरदार भी विरोधाचरण करने लगे। इससे उनके मारवाड़ पर कई
आक्रमण हुए जिनसे राज्य के धन-जन की प्रत्येक बार बड़ी हानि हुई।
इससे राज्य की आर्थिक स्थिति भी गिरी और प्रजा भी दुखी रही।
मरहटों के इस बढ़े हुए प्रभुत्व का वह अन्त करना चाहता था।
इसके लिए उसने राजपूताना के विभिन्न राजाओं का एका करने का उद्योग
भी किया पर उसमें वह सफल न हो सका। पीछे से अंग्रेज़ों के पैर
भारतवर्ष में जमने पर उसने उनसे भी इस संबंध में पत्र-व्यवहार किया पर
उसका भी कोई परिणाम न निकला।

वह सदैव अपने कुछ विशेष प्रियपात्रों के कहने का अनुसरण किया
करता था और अपनी बुद्धि का बिलकुल उपयोग नहीं करता था। सरदारों
और उसके बीच निरंतर विरोध रहने का एक मुख्य कारण यह भी
था कि अपने ज्येष्ठ पुत्र फ़तहसिंह की मृत्यु के बाद उसने अपनी पासवान

गुलाबराय की मर्ज़ी के अनुसार कभी एक कभी दूसरे (शेरसिंह और ज़ालिमसिंह) पुत्र को अपना उत्तराधिकारी नियत किया। यही नहीं, अपनी मृत्यु के कुछ समय पूर्व उसने अपने छोटे पुत्रों में से सावंतसिंह के पुत्र सूरसिंह को गद्दी दिलाने के लिए अपने कर्मचारियों से अनुरोध किया था। इससे स्पष्ट है कि वह दृढ़चित्त न था। उसके जीते जी ही उसके पौत्र भीमसिंह ने राज्य पर अधिकार कर लिया था, जिसे उसने क्षमा प्रदान करने पर भी पीछे से सेना भेजकर गिरफ़्तार करना चाहा। उसके इस अविवेकपूर्ण आचरण का परिणाम यह हुआ कि उसकी मृत्यु के बाद शेरसिंह, सावंतसिंह और सूरसिंह निरपराध मारे गये। गोड़वाड़ के संबंध में भी महाराणा से की हुई अपनी प्रतिज्ञा का उसने पालन नहीं किया। यह इलाक़ा उसे कुछ शर्तों के साथ रत्नसिंह को कुंभलगढ़ से निकालने के एवज़ में मिला था, पर रत्नसिंह को निकालना तो दूर वह सारा का सारा इलाक़ा स्वयं हज़म कर गया।

उसकी पासवान गुलाबराय का उसके ऊपर विशेष प्रभुत्व था। वह उसके कहने में इतना हो गया था कि एक प्रकार से सारा राज्यकार्य उसके इशारे से ही होता था। वह जो कहती वही होता था। कविराजा श्यामलदास के शब्दों में—"इन (महाराजा) को जहांगीर और (पासवान को) नूरजहां का नमूना कहना चाहिये।" पासवान का बढ़ता हुआ प्रभुत्व और दुर्व्यवहार सरदारों को बड़ा असह्य था, जिससे उन्होंने साज़िश कर अन्त में उसे छल से मरवा दिया।

उसने स्वयं कभी किसी युद्ध में वीरता का परिचय नहीं दिया और ऐसे अवसरों पर सदा पीठ ही दिखाई। वस्तुतः उसके वीर, स्वामीभक्त और कर्मनिष्ठ सरदारों और कर्मचारियों के बल पर ही उसका राज्य क़ायम रहा था।

इन सब बुराइयों के होते हुए भी विजयसिंह में कई गुण थे। वह अच्छी सेवा करनेवाले व्यक्तियों का उचित आदर-सत्कार करता और उनको जागीरें आदि देकर सम्मानित करता था। वह धार्मिक वृत्ति का

मांगा। भीमसिंह ने उसी समय वचन दे दिया और पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह ने भी उसकी पुष्टि कर दी। तब उपर्युक्त व्यक्तियों ने गढ़ के द्वार खोल उसे भीतर लिया और सलामी की तोपें दागी गईं, जिनकी आवाज़ सुनकर मृत महाराजा के पुत्र ज़ालिमसिंह तथा पौत्र मानसिंह, जो जोधपुर जाकर उस समय वहां हीशे रावत के तालाब पर लोढ़ा साहामल, आसोप के ठाकुर कूंपावत रत्नसिंह, जसूरी के ठाकुर मेड़तिया पहाड़सिंह आदि के साथ ठहरे हुए थे, राज्य मिलने की आशा न देख प्रातःकाल के समय वहां से रवाना हो गये और मुल्क में लूट मार करने लगे[1]। आषाढ सुदि १२ (ता० २० जुलाई) को भीमसिंह ने सिंहासनासीन होने के पश्चात् सिंघवी बनराज को मेड़ता भेजा। उसने वहां पहुंचकर समुचित प्रबंध किया और लोढ़ा साहामल के वहां आने पर उसे हराया[2]।

(१) टॉड-कृत "राजस्थान में भी इसका उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि ज़ालिमसिंह को भीमसिंह की सेना ने पीछा कर हराया, जिसपर वह उदयपुर चला गया, जहां राणा ने उसके नाम जागीर निकाल दी। वहां पर ही उसका जीवन व्यतीत हुआ (जि० २, पृ० १०७७)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ११६-२०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४८।

महाराजा विजयसिंह के जीवनकाल में तथा उसकी मृत्यु के पीछे भी राज्या-धिकार प्राप्त करने के लिए भीमसिंह और ज़ालिमसिंह ने बखेड़े किये थे। इस संबंध में अधिक प्रकाश डालने के लिए नीचे विजयसिंह का वंशवृक्ष दिया जाता है—
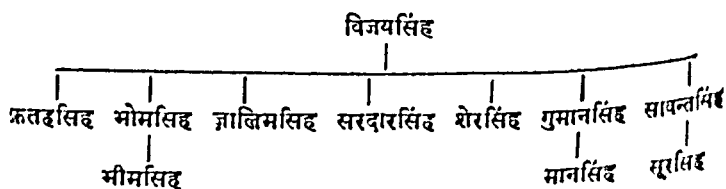
उपर्युक्त वंशवृक्ष से प्रकट है कि महाराजा विजयसिंह का ज्येष्ठ कुंवर फ़तहसिंह था, जिसकी वि० सं० १८३४ में निस्संतान मृत्यु हो गई। फ़तहसिंह से छोटा भोमसिंह था।

लोढ़ा साहामल का बलूंदा के ठाकुर चांदावत फ़तहसिंह श्यामसिंहोत से, जो जोधपुर में रहता था, वैर था। वि० सं० १८५० भाद्रपद सुदि ४ (ई० स० १७९३ ता० ९ सितंबर) को साहामल ने बलूंदा पर चढ़ाई कर वहां बड़ा नुक़सान किया। अनन्तर वह जैतारण होता हुआ बीलाड़े चला गया। वहां वह अपने भाई मेहकरण के शामिल रहने लगा। मानसिंह पीछा जालोर और ज़ालिमसिंह गांव सिरियारी (मेरवाड़ा) जा रहा। महाराजा भीमसिंह ने जोधपुर से सर्वप्रथम बख़्शी सिंघवी अखैराज को लोढ़ा साहामल एवं मेहकरण के विरुद्ध भेजा। उसके पहुंचने पर साहामल तो किसी प्रकार निकल गया, परन्तु मेहकरण ने केसरिया धारणकर युद्ध किया और लड़ता हुआ कार्तिक वदि १ (ता० २० अक्टोबर) को मारा गया। इस लड़ाई में चंडावल के ठाकुर बिशनसिंह ने अच्छी वीरता बतलाई। इस प्रकार बीलाड़े पर राजकीय अधिकार स्थापित हुआ। साहामल और आसोप का ठाकुर रत्नसिंह आदि सोजत गोड़वाड़ आदि परगनों में होते हुए मेवाड़ में गये। उन दिनों साहामल का पुत्र [illegible] इस्माइलबेग की फ़ौज के साथ डीडवाणे में था। मरोठ के हाकिम सिंघवी हिन्दूमल ने गौड़ावाटी एवं चौरासी के सरदारों सहित जाकर उससे झगड़ा किया जिसपर वह भाग गया और उसकी फ़ौज को

साहामल का दमन करना

उसकी भी पहले ही मृत्यु [illegible]
जित प्रथा के अनुसार [illegible]
होने के समय विजयसिंह [illegible]
वही हक़दार माना जाना [illegible]
था। उसका विजयसिंह [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
हुआ कि [illegible]

राजकीय सेना ने लूट लिया[1]।

अनन्तर सेना के साथ जाकर सिंघवी अखैराज ने देसूरी पर कब्ज़ा किया। इस लड़ाई में अखैराज के भाई इन्द्रराज के गोली लगी। फिर उस (अखैराज) ने जालोर, गोड़वाड़ आदि परगनों में समुचित प्रबन्ध किया। इससे आमदनी में पर्याप्त वृद्धि हुई। लगभग उसी समय महाराजा ने पोकरण के ठाकुर के साथ अपने अन्य कृपापात्र व्यक्तियों को अतिरिक्त जागीरें आदि दीं[2]।

सिंघवी अखैराज का उपद्रव के स्थानों का प्रबंध करना

भीमसिंह को अपने भाइयों की तरफ़ से सदैव खटका बना रहता था, अतएव उसने अवसर प्राप्त होते ही शेरसिंह एवं सावंतसिंह तथा उसके पुत्र सूरसिंह को मरवा डाला और इस प्रकार निरपराध व्यक्तियों की हिंसा का पाप उठाकर उसने अपना मार्ग निष्कंटक किया[3]।

महाराजा का अपने भाइयों को मरवाना

राज्य के बखेड़ों में प्रारम्भ से ही उलझे रहने पर भी महाराजा का अपने सरदारों की तरफ़ पूरा-पूरा ध्यान था। उसने पुराने सरदारों के पट्टे पूर्ववत् बहाल रखने के साथ ही उनमें से कई को नये गांव प्रदान किये थे[4]। पोकरण का सवाईसिंह फलोधी का इलाक़ा अपने नाम लिखाना चाहता था, परन्तु सिंघवी जोधराज ने समझा-बुझाकर महाराजा को ऐसा

लकवा दादा की मारवाड़ पर चढ़ाई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२०।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२०।

(३) वीरविनोद, भाग २, पृ० ८५८। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी शेरसिंह, सांवन्तसिंह एवं सूरसिंह को मरवाने का उल्लेख है (जि० ३, पृ० १०८-९)। टॉड के अनुसार भीमसिंह ने सरदारसिंह को भी मरवा दिया। शेरसिंह की उसने आंखें निकलवाई थीं। पीछे से उसने आत्महत्या कर ली (जि० २, पृ० १०७७-८)।

(४) ख्यात के अनुसार महाराजा ने कुचामण के ठाकुर मेड़तिया शिवनाथसिंह को परबतसर परगने का गांव गंगावा, बलूंदा के ठाकुर फ़तहसिंह चांदावत को गांव बयाड एवं केकींदड़ा तथा चंडावल के ठाकुर कूंपावत विशनसिंह को गांव भटवड़ा और सवालिया दिये।

करने से रोक दिया, क्योंकि इससे दूसरे सरदारों की नाराज़गी के बढ़ जाने की आशंका थी। इससे सवाईसिंह बड़ा अप्रसन्न हुआ। कुछ समय बाद जब वह गंगास्नान के लिए रवाना हुआ तो मार्ग में दिल्ली जाकर दक्षिणियों से मिला। इसके बाद वि० सं० १८५१ (ई० स० १७९४) में तकवा दादा ने मारवाड़ पर चढ़ाई की। उस समय महाराजा ने सवाईसिंह की ही मारफ़त बात कर कुछ रुपया देना ठहराकर उसे वहां से वापस लौटाया। अनन्तर महाराजा ने सवाईसिंह को अतिरिक्त पट्टा दिया[1]।

भंडारी शोभाचंद का धाणेराव पर भेजा जाना

वि० सं० १८५२ (ई० स० १७९५) में महाराजा ने राज्य के कार्यकर्त्ताओं में हेर-फेर किये। उसी वर्ष सेना-सहित भंडारी शोभाचंद धाणेराव पर गया, परन्तु वहां उसका अधिकार न हो सका[2]।

जालोर पर सेना भेजना

वि० सं० १८५३ (ई० स० १७९६) में भंडारी गंगादास के स्थान में सिंघवी जोधराज का पुत्र दीवान हुआ। कार्य सारा जोधराज करता था, परन्तु वह किसी सरदार की भी खातिरदारी नहीं करता था जिससे वे सब उससे अप्रसन्न रहते थे। उन दिनों मानसिंह जालोर में रहकर अपने को स्वतन्त्र राजा मानता था[3]। महाराजा भीमसिंह की बहुत समय से यह अभिलाषा थी कि किसी प्रकार वहां अपना कब्ज़ा हो जाय। वि० सं० [illegible] (ई० स० [illegible]) में महाराजा ने फ़ौज देकर [illegible] जालोर पर भेजा। उसने वहां जाकर घेरा डाला, परन्तु जालोर [illegible]

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १००-१।

(२) वही; जि० ३, पृ० १०१।

(३) [illegible] वि० सं० १८५३ [illegible] ई० स० १७९८ [illegible] मानसिंह के [illegible] [illegible] [illegible] ... पृ० १४०।

जाने पर भी जब कई मास तक घेरा रहने पर गढ़ और नगर पर कब्ज़ा करने में वह समर्थ न हुआ तो महाराजा की आज्ञा से वह क़ैद कर लिया गया। कई मास तक क़ैद में रहने के बाद ६०००० रुपया देने की शर्त पर वह मुक्त किया जाकर पुनः बख़्शी के पद पर नियुक्त किया गया[1]। इस चढ़ाई के समय मानसिंह ने उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के नाम इस आशय का पत्र भेजा कि यहां कार्य उत्पन्न हुआ है, इसलिये आंबाजी की सेना सहित कूचकर अविलंब घाटा उतरकर आ जावें; इधर से मैं आपके शामिल होकर गोड़वाड़ आपको दिला दूंगा[2]। महाराजा विजयसिंह की उदयपुर की राणी से उत्पन्न उसके पुत्र ज़ालिमसिंह को महाराणा जोधपुर की गद्दी दिलाना चाहता था, अतएव वह स्वयं तो न गया; परन्तु यह अवसर ज़ालिमसिंह के लिए उपयुक्त समझ उसने अपनी सेना के साथ उसको रवाना किया। महाराजा भीमसिंह को इसकी सूचना मिलने पर उसने ज़ालिमसिंह को रोकने के लिए सिंघवी बनराज को भेजा, जिसने उस (ज़ालिमसिंह) के पहुंचने के पूर्व ही सिरियारी गांव में डेरा डाला और उधर का मार्ग बन्द कर दिया। ज़ालिमसिंह आंबाजी की सेना के साथ काछबली (मेरवाड़ा) गांव में ठहरा रहा। उस समय उसके भाग्य ने साथ न दिया और कुछ समय बाद ही श्रावणादि वि० सं० १८५४ (चैत्रादि १८५५) आषाढ वदि ५ (ई० स० १७९८ ता० ३ जून) को उसकी वहीं मृत्यु हो गई, जिससे भीमसिंह को ज़ालिमसिंह की तरफ़ का खुटका जाता रहा[3]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० १२१-२।

(२) वीरविनोद, भाग २, पृ० १५७४।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० १०८। "जोधपुर [illegible] कारण" से पाया जाता है कि महाराणा भीमसिंह ने सिंघवी को ज़ालिमसिंह का मददगार बनाकर उसके मारफ़त नागोर और मारवाड़ का आधा राज्य उसे (ज़ालिम-सिंह) को दिला देने की बातचीत चलाई थी ([illegible])। परन्तु मानसिंह के राज्य का वास्तविक हक़दार होने से मारवाड़ के अधिकांश सरदार उसके पक्ष में थे और ज़ालिमसिंह का पक्ष कमज़ोर था, जिससे [illegible] न हुआ और [illegible] चार वर्ष तक चलता रहा।

दूड़ा गांव में पहुंचे। पहले उन्होंने शांति के साथ मानसिंह को समझाने का प्रयत्न किया, परन्तु जब उसने कोई ध्यान न दिया तो लड़ाई हुई और मानसिंह को बाध्य होकर वह स्थान छोड़ना पड़ा[1]। इस लड़ाई में महाराजा की तरफ़ का रामा का ठाकुर अमरसिंह जोधा और मानसिंह के पक्ष का खेजडला के ठाकुर जसवंतसिंह का भाई मारा गया। अन्य कितने ही

---

(१) इस लड़ाई के विषय में ऐसी प्रसिद्धि है कि मानसिंह के पक्ष के सरदारों में से हरसोलाव ठिकाने के छोटे भाइयों में से चांपावत कर्णसिंह (सालावास) ने मानसिंह के चारों तरफ़ से घिर जाने पर उससे कहा कि आप यहां से चले जाय अन्यथा मारे जांयगे। इसपर मानसिंह वहां से निकलकर जालोर चला गया और उसके स्थान में कर्णसिंह ने जोधपुर की सेना का वीरतापूर्वक मुक़ाबिला किया, जिससे मानसिंह की प्राण-रक्षा हुई। महाराजा भीमसिंह का देहांत होने पर जब मानसिंह गद्दी पर बैठा तब भीमसिंह की मृत्यु के बाद उत्पन्न धोंकलसिंह का अधिकांश सरदारों ने पक्ष लिया। उस समय कर्णसिंह ने भी धोंकलसिंह का पक्ष ग्रहण किया। इससे नाराज़ होकर मानसिंह ने कर्णसिह की सालावास की जागीर ज़ब्त कर ली। कर्णसिंह की तरफ़ से अपनी पूर्व सेवा का स्मरण दिलाये जाने पर महाराजा मानसिंह ने उसके पास यह दोहा लिख भेजा—

पिंडरी गई प्रतीत, गाढ़ रिजक दोनों गया।
चांपा हवे नचीत, कनक उडावो करणसी ॥

भावार्थ—तुम्हारे शरीर का विश्वास जाता रहा और साथ में तुम्हारी दृढ़ता और रिज़्क़ (निर्वाह का साधन) दोनों चले गये। हे चांपावत कर्णसिंह! अब निश्चित होकर कनक (काग अथवा पतंग) उड़ाओ।

इसके उत्तर में कर्णसिंह ने महाराजा की सेवामें नीचे लिखा दोहा कहलाया—

पिंडरी हुती प्रतीत, साकदड़े देखी सही।
इण घर आही रीत, दुरगो सफरां दागियो ॥

भावार्थ—मेरे शरीर का विश्वास साकदड़े में भली प्रकार देखा गया है, परन्तु इस घर में ऐसी ही रीति है कि दुर्गा का भी दाह सस्कार चिप्रा के तट पर हुआ अर्थात् अपनी मृत्यु के समय वह अपनी जन्मभूमि तक न देख सका।

टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि इस लड़ाई में मानसिंह अवश्य पकड़ा जाता; परन्तु आहोर का ठाकुर उसे बचाकर निकाल ले गया (जि० २, पृ० १०३६)।

व्यक्ति भी काम आये। इस विजय का समाचार पुष्कर में महाराजा भीमसिंह के पास पहुंचने पर उसने चैनकरण आदि को गांव आदि देकर सम्मानित किया[1]।

राजकीय सेना का उपद्रवी सरदारों का दमन करना

अनन्तर महाराजा की आज्ञानुसार सिंघवी बनराज ने पुनः ससैन्य जाकर जालोर पर घेरा डाला। उन्हीं दिनों भंडारी धीरजमल ने फ़ौजकशी कर गांव भड़या, गोंडा, सनावड़ा आदि से धन वसूल किया। चौरासी के ठाकुर भी उपद्रवी हो रहे थे। धीरजमल ने परवतसर परगने में जाकर बडू के ठाकुर अजीतसिंह से पचीस हज़ार रुपये लिये और गांव मोटड़े में बनवाई हुई उसकी गढ़ी को गिरा दिया। तब पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह का पुत्र सालिमसिंह, आउवा का ठाकुर माधोसिंह, रोहट का ठाकुर कल्याणसिंह, आसोप का ठाकुर केसरीसिंह, चंडावल का ठाकुर बिशनसिंह, रास का ठाकुर जवानसिंह, नींबाज का ठाकुर शंभूसिंह, रीयां का ठाकुर बिड़दसिंह एवं अन्य कितने ही छोटे-बड़े सरदार गांव कालू में एकत्र होकर उपद्रव करने लगे। धीरजमल ने ससैन्य जाकर उन्हें भी परास्त किया, जिससे उपद्रवी सरदार अपने-अपने ठिकानों को लौट गये। अनन्तर धीरजमल ने गांव धनेरिया एवं रास की गढ़ियां गिराई और लांबिया पर क़ब्ज़ा किया। फिर नींबाज जाकर वह छः मास तक लड़ा। उसके घेरे के समय ही वहां का ठाकुर शंभुसिंह मर गया। तब उसके पुत्र सुलतानसिंह के अधीनता स्वीकार कर लेने पर नींबाज, बराटिया एवं सोनावास का २५००० का पट्टा उसके नाम कर दिया गया। अनन्तर धीरजमल परवतसर की तरफ़ गया, जिसके बाद उसने दक्षिणियों को रुपया दे सांभर से उनका क़ब्ज़ा हटाया और अजमेर के संबंध में भी उनसे बात ठहराई[2]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० १२७-८।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२८-९।

महाराजा मानसिंह

विलास-प्रिय राजा था। यह भी सुना जाता है कि उसके समय में कवि रामकर्ण ने "अलंकारसमुच्चय" नामक पुस्तक की रचना की थी।

उसकी मुहर में निम्नलिखित लेख नागरी अक्षरों में खुदा हुआ मिलता है—

"श्रीकृष्णचरणशरणराजराजेश्वरमहाराजाधिराजमहाराजश्रीभीवसिंघजीकस्य मुद्रिका"

इससे स्पष्ट है कि वह कृष्ण का भक्त था।

मानसिंह

महाराजा मानसिंह का जन्म वि० सं० १८३९ माघ सुदि द्वितीय ११ (ई० स० १७८३ ता० १३ फरवरी) गुरुवार को हुआ था। ऊपर

महाराजा का जन्म और गद्दीनशीनी

भीमसिंह के वृत्तान्त में जालोर के घेरे का वर्णन आ गया है। जोधपुर राज्य की सेना ने जालोर के गढ़ का घेरा इतना कठिन कर दिया था कि रसद आदि की तंगी हो जाने के कारण मानसिंह ने गढ़ खाली कर देने का इरादा किया और इस सम्बन्ध में उसने सिंघवी इन्द्रराज से बात चलाई। यह बात वि० सं० १८६० आश्विन सुदि १ (ई० स० १८०३ ता० १६ सितम्बर) को हुई। इन्द्रराज भी इसके लिए तैयार हो गया और दीवाली के दिन गढ़ खाली कर देने की बात तय हुई। गढ़ के भीतर जलन्धरनाथ का एक

हालनेवाला [illegible] सू-

सानरोद [illegible]

पञ्चपुरटे [illegible] वरन,

सुफत [illegible]

हस्तव्रर्षन, [illegible]

सानन्तवर्षन [illegible] वरन,

सकलहर्षवरन, [illegible]

[illegible]

मन्दिर था, जहां का पुजारी आयस देवनाथ था। मानसिंह वहां दर्शनार्थ जाया करता था। आयस देवनाथ ने महाराजा से एक दिन निवेदन किया कि मुझे जलन्धरनाथ की आज्ञा हुई है कि यदि कार्तिक सुदि ६ तक महाराजा गढ़ नहीं छोड़े तो गढ़ उससे कभी नहीं छूटेगा और जोधपुर का राज्य भी उसे ही मिल जायगा। इसपर महाराजा ने उससे कहा कि यदि ऐसा हुआ तो मैं आपको वचन देता हूं कि मेरे राज्य में आपकी ही आज्ञा चलेगी। दीवाली निकट आने पर इन्द्रराज ने गढ़ खाली कर देने के लिए कहलाया तो महाराजा ने उत्तर दिया कि कार्तिक सुदि ६ तक ठहरो, फिर मैं गढ़ अवश्य खाली कर दूंगा और इस बात की पक्की लिखा-पढ़ी कर दी। इसी बीच कार्तिक सुदि ४ (ता० १६ अक्टोबर) को जोधपुर में महाराजा भीमसिंह का स्वर्गवास हो गया। तब भंडारी शिवचंद, धाय-भाई शंभूदान, मुंहणोत ज्ञानमल आदि ने जोधपुर से सिंघवी इन्द्रराज को लिखा कि घेरा जिस प्रकार है उसी प्रकार रखना, महाराणी के गर्भ है। सवाईसिंह को पोकरण से बुलाया है। उसके आने पर जैसा निश्चय होगा लिखा जायगा। यह समाचार कार्तिक सुदि ५ (ता० २० अक्टोबर) को जालोर पहुंचने पर इन्द्रराज आदि ने परस्पर विचार कर यह तय किया कि मानसिंह को ही राजा बना देना उचित है, क्योंकि वह जवान और सब प्रकार से योग्य है। अनन्तर उन्होंने ललवाणी अमरचंद को मानसिंह के पास भेजकर भीमसिंह के देहांत की सूचना दी, जिसपर उसने इन्द्रराज एवं गंगाराम को अपने पास बुलाया। उन्होंने उससे कहा कि आप जोधपुर पधारें। उनकी यही राय देखकर मानसिंह ने उनकी खातिरी के खास रुक्के लिख दिये और सरदारों आदि के पट्टे निश्चित कर उनकी मान-मर्यादा में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आने का इकरारनामा भी लिख दिया। तब इन्द्रराज ने दूत भेजकर जोधपुर लिखा कि विजयसिंह के युवा पौत्र मानसिंह के होते हुए और कोई सलाह निश्चित करना ठीक नहीं। विजयसिंह के समान ही मानसिंह किसी सरदार का बिगाड़ नहीं करेगा, इसका हमने वचन ले लिया है, अतएव इस विषय में किसी प्रकार की

शंका न करें। इस पत्र के जोधपुर पहुंचने पर वहां के लोगों ने अपनी कमज़ोरी और सारी फ़ौज जालोर के अधिकारियों के पास होने के कारण इन्द्रराज के पास उत्तर भिजवाया कि मर्ज़ी आवे जैसा करो, हमें उज़्र नहीं है, पर सरदारों के संबंध में पक्की लिखा-पढ़ी अवश्य करा लेना। सवाईसिंह ने जब जोधपुर पहुंचकर यह हाल सुना तो वह मृत महाराजा भीमसिंह की देरावरी राणी के गर्भवती होने अथवा मानसिंह को राजा बनाये जाने के संबंध में अपनी राय न ली जाने के कारण सरदारों के विचार से सहमत नहीं हुआ, पर वह अकेला क्या कर सकता था। अनन्तर जालोर से प्रस्थान कर मानसिंह गांव सालावास पहुंचा, जहां निकट के छोटे-मोटे सरदार एवं परवतसर से भंडारी धीरजमल तथा जोधपुर से सवाईसिंह, शिवनाथसिंह आदि उसके पास उपस्थित हो गये। महाराजा ने सब का यथोचित सत्कार किया। जोधपुर नगर के निकट पहुंचने पर मानसिंह हाथी पर आरूढ़ हुआ, जिसके पीछे चंवर करने के लिए पोकरण का सवाईसिंह बैठा। इस प्रकार वि० सं० १८६० मार्गशीर्ष वदि ७ (ई० स० १८०३ ता० ५ नवंबर) को मानसिंह जोधपुर के गढ़ में दाखिल हुआ और उसी समय शेष सरदार आदि भी उसके पास उपस्थित हो गये[1]।

मानसिंह के गढ़ में दाखिल होने से पूर्व ही सवाईसिंह आदि सरदारों की राय से भीमसिंह की दो राणियों—देरावरी तथा तंवराणी—को

चोपासणी से भीमसिंह की राणियों को बुलवाना

चोपासणी भिजवा दिया गया था। पहले के विरोधी सरदारों को जो भीमसिंह के समय अलग हो गये थे और अब मानसिंह के पास उपस्थित हो गये थे, राणियों का चोपासणी रहना अनुचित प्रतीत हुआ और उन्होंने इस संबंध में मानसिंह से कहा तो उसने उत्तर दिया कि मैंने तो उन्हें भिजवाया नहीं है, आप समझाकर ले आवें। इसपर सवाईसिंह ने उत्तर दिया कि देरावरी राणी गर्भवती है, कदाचित् उसके पुत्र हुआ तो उसका क्या करेंगे

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १०८। वीरविनोद; भाग ३, पृ० ८१०।

होगा? तब महाराजा ने इस बात का रुक्का लिख दिया कि यदि उक्त महाराणी के पुत्र हुआ तो वही जोधपुर का शासक होगा तथा मैं जालोर चला जाऊंगा और यदि पुत्री हुई तो उसका विवाह जयपुर अथवा उदयपुर कर दिया जायगा[1]। वह रुक्का चोपासणी के गुसांई विट्ठलराय को सौंप दिया गया। पीछे चोपासणी से राणियों ने प्रस्थान किया और वे सवाईसिंह आदि सरदारों की राय के अनुसार जोधपुर पहुंचकर तलहटी के महलों में ही ठहर गई; जहां महाराजा की तरफ से चौकी पहरे का पूरा-पूरा प्रबंध कर दिया गया[2]।

महाराजा का जोधपुर में गद्दी बैठना

इसके बाद माघ सुदि ५ (ई० स० १८०४ ता० १७ जनवरी) को मानसिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठा। इस अवसर पर उसने पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह को अपना प्रधान मंत्री नियतकर भंडारी गंगाराम को दीवान, सिंघवी मेघराज और राजोत को बख़्शी, सिंघवी इन्द्रराज को मुसाहिब तथा सिंघवी कुशलराज और उसके भाई सुखराज को क्रमशः जालोर एवं सोजत का हाकिम बनाया[3]।

महाराजा का सिंघवी जोरावरमल के पुत्रों को बुलाना

मानसिंह के जालोर में रहते समय सिंघवी जोरावरमल के पुत्र उसका साथ छोड़कर भीमसिंह के शामिल हो गये थे। जोधपुर का राज्य प्राप्त करने के बाद महाराजा ने उन्हें हाजिर होने को कहलाया तो जीतमल और सूरजमल तो आ गये, परन्तु फतहमल एवं शंभूमल नहीं आये और क्रमशः सिरोही तथा आउवा में बने रहे[4]।

---

(१) टॉड लिखता है कि महाराजा ने पुत्र होने पर उसे नागोर और सिवाणा की जागीर एवं पुत्री होने पर उसका विवाह ढूंढाड़ (जयपुर) में कर देने का वचन दिया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०८१)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ५। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८६०। दयालदास की ख्यात में भी कुछ अन्तर के साथ इस घटना का ऐसा ही उल्लेख मिलता है। जि० २, पत्र ६७)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६।

(४) वही, जि० ४, पृ० ६।

कुछ समय बाद यह संवाद प्रसिद्ध हुआ कि तलहटी के महलों में, जहां महाराजा भीमसिंह की राणियां रहती थीं, देरावरी राणी के गर्भ से पुत्र उत्पन्न हुआ है और वह भाटी छत्रसिंह के साथ ठाकुर सवाईसिंह आदि की सहायता से खेजड़ी पहुंचा दिया गया है[1]। उसका नाम धोकलसिंह रक्खा गया। इस बात की खबर महाराजा को होने पर वह सवाईसिंह से नाराज़ हो गया। पीछे से महाराजा की मर्ज़ी न होने पर भी सवाईसिंह अपने पांच-सात सौ आदमियों के साथ पोकरण चला गया[2]। भीमसिंह के पुत्र होने की कथा को महाराजा अपने विरोधियों का प्रपंच मानने लगा।

धोकलसिंह का जन्म

ई० स० १८०३ (वि० सं० १८६०) में लॉर्ड वेलेज़्ली के समय अंग्रेज़ों की ईस्ट इंडिया कम्पनी ने, जिसका उत्तरी भारत में काफ़ी प्रभुत्व बढ़ गया था, महाराजा मानसिंह के साथ संधि की बातचीत की। दोनों पक्षों में परस्पर मैत्री रखने, जोधपुर राज्य के ख़िराज से मुक्त रहने, अवसर उपस्थित होने पर सहायता देने और अपनी सेना में अंग्रेज़ों अथवा

अंग्रेज़ों के साथ सन्धि की बातचीत होना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से तो यही पाया जाता है कि महाराजा पुत्रोत्पत्ति की बात को विरोधियों का प्रपन्च मानता था, परन्तु जोधपुर के कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों के मुख से सुना गया कि महाराजा भीमसिंह की मृत्यु के बाद उसकी एक राणी से पुत्र अवश्य उत्पन्न हुआ था। उसके वास्तविक हक़दार होने के कारण ही पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह उसके पक्ष में हो गया था। पुत्रोत्पत्ति की पुष्टि एक बात से और होती है। पोकरण के ठाकुर की अनुपस्थिति में हां जो पत्र जोधपुर के अधिकारियों ने सिंघवी इन्द्रराज के पास जालोर लिखा था उसमें उन्होंने स्पष्ट लिखा था कि मृत महाराजा की राणी के गर्भ है (जोधपुर राज्य की ख्यात जि० ४ पृ० २)। ऐसी दशा में [illegible] से पुत्र होना असम्भव की बात नहीं है। राजपूताने की कई रियासतों—उदयपुर, जयपुर आदि—में ऐसी घटनाएँ होने के उदाहरण पाये जाते हैं।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १४। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८६१।

दयालदास की ख्यात में भी उपर्युक्त ऐसा ही उल्लेख है (जि० २, पत्र ६०)।

फ्रांसीसियों को नौकर रखने के पूर्व कम्पनी की राय लेने आदि के संबंध का एक अहदनामा तैयार हुआ, जिसपर वि० सं० १८६० पौष सुदि ६ (ई० स० १८०३ ता० २२ दिसंबर) को कम्पनी की तरफ़ से माननीय जेनरल जेरार्ड लेक का हस्ताक्षर अकबराबाद सूबे के सरहिन्द नामक स्थान में हुआ। ई० स० १८०४ ता० १५ जनवरी (वि० सं० १८६० माघ सुदि ३) को गवर्नर जेनरल ने भी उसके विषय में अपनी स्वीकृति दे दी, पर महाराजा ने एक दूसरा ही संधिपत्र अपनी तरफ से पेश किया। साथ ही उसने अंग्रेज़ों के शत्रु जसवंतराव होल्कर से मेल कर लिया, जिससे उपर्युक्त अहदनामा पीछे से रद्द कर दिया गया[1]।

जसवंतराव होल्कर का मारवाड़ में जाना

उसी वर्ष चैत्र मास में जसवन्तराव होल्कर अंग्रेज़ों के मुकाबले में डीग की लड़ाई में हारकर मारवाड़ में गया और अजमेर के गांव हरमाड़े में ठहरा। महाराजा ने उसके मुक़ाबले के लिए मेड़तियों की सेना के साथ सिंघवी गुलराज, भंडारी धीरजमल और बलूंदे के ठाकुर शिवनाथसिंह को भेजा। युद्ध आरंभ होने के पूर्व ही लोढ़ा कल्याणमल ने वकील भेजकर होल्कर से बात ठहरा ली, जिससे महाराजा और उसके बीच भाईचारा स्थापित हो गया। अनन्तर जसवन्तराव वहां से प्रस्थान कर मालवा चला गया[2]।

उन्हीं दिनों सिंघवी जोधराज का पुत्र विजयराज भागकर बगड़ी जा रहा। उसी समय के आसपास पंचोली गोपालदास को कैद कर

महाराजा का पचोली गोपालदास पर दंड लगाना

उसपर पचास हज़ार रुपया दंड लगाया गया, जिसमें से केवल बाइस हज़ार ही वसूल हुए। अनन्तर वह सांभर का कार्यकर्ता नियुक्त हुआ[3]।

(१) एचिसन, ट्रीटीज़, एंगेज्मेंट्स एण्ड सनद्ज़, जि० ३, पृ० ११४ तथा १२६-७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १४-५।

महेशदास ने खेतड़ी में विवाह न करने का वचन दे अपनी सफ़ाई कर ली। अनन्तर बाचरियावास (जयपुर राज्य) तथा दूसरे छोटे मोटे ठिकानों से उसने दंड के रुपये वसूल किये[1]।

महाराजा भीमसिंह के समय राज्य छोड़कर चले जानेवाले सरदारों को पीछा बुलाना

महाराजा भीमसिंह के समय उसके बुरे व्यवहार से तंग आकर कितने ही प्रतिष्ठित सरदार उसका साथ छोड़कर दूसरे राज्यों में चले गये थे। मानसिंह ने उन्हें वापिस बुलाकर उनके पट्टे आदि पूर्ववत् बहाल कर दिये। उनमें माधोसिंह चांपावत (आउवा का), केसरीसिंह (आसोप का), जवानसिंह (रास का), सुलतानसिंह (नीवाज का) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। उसी समय उसने आसिया चारण बांकीदास[2]

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १६।

(२) कविराजा बांकीदास जोधपुर राज्य के पचपद्रा परगने के भांडियावास गांव का निवासी आशिया कुल का चारण था। वि० सं० १८२८ (ई० स० १७७१) में उसका जन्म हुआ। कविता का सामान्य ज्ञान प्राप्त करने के अनन्तर वह वि० सं० १८४४ (ई० स० १७८७) में जोधपुर गया और वहां उसने भाषा काव्य और संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया, जिससे उसकी बड़ी ख्याति हुई तथा उसकी रचनाएं भी प्रसाद गुणयुक्त होने लगीं। वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में जालोर से जाकर महाराजा मानसिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठा, उस समय उसने अपने राज्याभिषेक के अवसर पर उसको लाख पसाव दिया और फिर उसको कविराजा की उपाधि से विभूषित कर अपना दरबारी कवि बनाया। बांकीदास बड़ा सत्यवादी और निर्भीक व्यक्ति था। राजा हो अथवा राणी, प्रत्येक के संबंध में वह सत्य बात कहने में कभी संकोच न करता था। महाराजा उसका बड़ा आदर करता था, परन्तु एक बार जब बांकीदास ने नाथों के विरुद्ध एक छन्द कहा तो वह उससे नाराज़ हो गया और उसने उसको बंदी करना चाहा। यह देख वह शीघ्रगामी ऊंट पर सवार होकर मारवाड़ छोड़ उदयपुर चला गया। वहां के स्वामी महाराणा भीमसिंह ने, जो बड़ा दानी और काव्यप्रेमी नरेश था तथा उसको आग्रहपूर्वक अपने यहां बुलाना चाहता था, उसे अपने यहां रखा। महाराजा मानसिंह भी काव्य का ज्ञाता, मर्मज्ञ, विद्यानुरागी और गुणग्राहक नरेश था, अतएव उसको बांकीदास की अविद्यमानता खटकने लगी। निदान उसने आग्रहपूर्वक उसको उदयपुर से जोधपुर बुलवा लिया। इतिहास और अन्य भाषाओं का बांकीदास को समुचित ज्ञान था। एक बार महाराजा मानसिंह के समय जोधपुर में ईरान से कोई एलची आया।

(गांव भांडियावास का रहनेवाला) को लाख पसाव[1], दूसरे दो-एक चारणों को कई तथा मोती एवं उत्तम सेवा बजा लाने के एवज़ में मेड़तिया रत्नसिंह पहाड़सिंहोत आदि कई व्यक्तियों को गांव आदि दिये[2]।

महाराजा का बीकानेर के गांव लाखासर के बख़्तावरसिंह की पुत्री से विवाह होना

इसी वर्ष (वि० सं० १८६१ में) महाराजा का विवाह बीकानेर राज्य के गांव लाखासर के स्वामी तंवर बख़्तावरसिंह की पुत्री के साथ हुआ, जिसके नाम दस हज़ार का पट्टा किया गया[3]।

महाराजा भीमसिंह के जालोर के घेरे के समय मानसिंह ने हिफ़ाज़त की दृष्टि से अपने ज़नाने एवं कुंवर छत्रसिंह को महाराव घेरीघात

उसने महाराजा से किसी इतिहास के जानकार व्यक्ति को बुलवाया। तब महाराजा ने बांकीदास को उक्त एलची के पास भेजा। बातचीत होने पर ईरानी एलची बांकीदास के केवल भारतवर्ष ही नहीं, सुदूरवर्ती देशों के इतिहास की भी जानकारी से बड़ा प्रभावित हुआ। वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में महाराजा मानसिंह की राजकुमारी सिरेकुंवर का विवाह रूपनगर में जयपुर के महाराजा जगतसिंह से और जगतसिंह की बहिन का विवाह मानसिंह से हुआ। उस समय हिंदी भाषा के महाकवि पद्माकर से उस (बांकीदास) की काव्य-चर्चा हुई, जिसमें बांकीदास का पक्ष प्रबल रहा। बांकीदास की ६२ वर्ष की आयु में वि० सं० १८९० (ई० स० १८३३) में मृत्यु हुई, जिससे महाराजा मानसिंह को पूरा दुःख हुआ तथा स्वयं उसने उसकी प्रशंसा में कुछ दोहे बनाये और उन्हें अपने मुख से कहकर खेद प्रकट किया। कविराजा बांकीदास-रचित कोई बड़ा ग्रंथ तो नहीं मिलता, परन्तु कई छोटे छोटे काव्य मिले हैं, जिनमें से काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने "बांकीदास ग्रंथावली" के पहले भाग में ७, दूसरे भाग में १० और तीसरे भाग में १० काव्य महामहोपाध्याय राजपूत चारण पुस्तकमाला में प्रकाशित किये हैं। उसकी वीर रस की कविताएं बड़ी प्रभावशालिनी होती थीं। उसने अपने जीवनकाल में लगभग तीन हज़ार ऐतिहासिक बातों का संग्रह किया था जो बड़ा महत्व-पूर्ण है। उससे कई स्थलों पर इतिहास की गुत्थियां सुलझाने में बड़ी मदद मिलती है।

(१) लाख पसाव में महाराजा [illegible] के समय से केवल १२०० रुपये ही दिये जाते थे (देखो मेरा राजपूताने का इतिहास; जि० [illegible], पृ० १३० टि० ३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १८८; [illegible], पृ० ८६१।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० १८।

महाराजा का सिरोही पर सेना भेजना

के पास सिरोही भेजा था, परन्तु उसने महाराजा भीमसिंह के साथ की अपनी मैत्री में अन्तर आने के भय से उनको अपने यहां रखने से इनकार कर दिया, जिससे उनको लौटना पड़ा। लौटते समय कुंवर छत्रसिंह की आंख एक दरख़्त की शाख लगने से जाती रही[1]। महाराव के इस बर्ताव से मानसिंह उससे नाराज़ हो गया। उसका बदला लेने के लिए वि० सं० १८६० में महाराजा मानसिंह ने मुंहणोत ज्ञानमल एवं मेहता अखैचंद की सलाह के अनुसार नवलमल (ज्ञानमल का पुत्र) तथा सूरजमल आलोरी को आसोप, नींबाज, रास, लांबिया, रीयां, बलूंदा, रायण आदि के सरदारों, १०००० फ़ौज और तोपख़ाने के साथ सिरोही पर भेजा। उनके सिरोही राज्य में प्रवेश करते ही वहां के भोमिये भील, मीने आदि पहाड़ों में चले गये। अनन्तर सिरोही के पाड़ीव, कालिंद्री, जुवाड़ा आदि के अधि[illegible]दारों पर दंड निर्धारित कर वि० सं० १८६१ के प्रारम्भ में जोधपुर की सेना ने सिरोही नगर पर आक्रमण कर वहां अधिकार कर लिया। इसपर महाराव सिरोही छोड़ कर भीतरोट परगने में चला गया। इस समाचार के जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने बड़ी खुशी मनाई[2]।

इसी अवसर पर महाराजा ने [illegible] के ठाकुर मेड़तिया [illegible] पर, [illegible] नाराज़ था, मेहता [illegible] की फ़ौज [illegible] भेजा। [illegible] सेना में कई [illegible] के अतिरिक्त [illegible] आई हुई [illegible] की फ़ौज भी थी। [illegible]

[illegible]

[illegible]

ठहराकर गढ़ खाली कर दिया। इस प्रकार घाणेराव पर जोधपुर का अधिकार स्थापित हुआ और वहां का कोट नष्ट कर दिया गया। इस समाचार के मिलने पर महाराजा को बड़ी प्रसन्नता हुई और मेहता साहबचंद का छोटा भाई माणकचंद वहां का हाकिम नियत हुआ[1]।

सिरोही नगर पर जोधपुर राज्य का क़ब्ज़ा हो जाने पर वहां का राव भीतरोट परगने में जा रहा था, जिसका उल्लेख ऊपर आ गया है। वह वहां रहते हुए मुल्क में बिगाड़ करने लगा। साथ ही भील, मीणे आदि भी उपद्रव करते थे। इधर खालसा किये हुए घाणेराव, चाणोद एवं नारलाई ठिकानों के सरदार भी पर्वतों का आश्रय लेकर नित्य बिगाड़ करते थे, जिससे उधर का प्रबन्ध करने में भी बड़ी कठिनता होती थी। महाराजा को इस सम्बन्ध में पूरी चिन्ता थी। इसपर ड्योढ़ीदार नथकरण ने महाराजा को उपर्युक्त स्थानों के प्रबन्ध में हेर-फेर करने की राय दी, जिसे महाराजा ने भी स्वीकार किया। तदनुसार सिंघवी गुलराज और भंडारी गंगाराम सिरोही तथा सिंघवी फतहराज घाणेराव के प्रबन्ध के लिए भेजे गये। भंडारी मानमल तथा उसका भाई बख्तावरमल फतहराज के साथ गये। गुलराज तथा गंगाराम ने सिरोही पहुंचकर उचित स्थान पर थाना स्थापित किया और जगह-जगह उपद्रवी मीणों आदि तथा महाराव की सेना से लड़ाई कर उन्हें हराया। उधर घाणेराव में भेजे हुए हाकिमों ने भी वहां उत्तम प्रबन्ध कर अराजकता मिटाई। इसी बीच छागाणी कचरदास के ताल्लुके के गांव मुरडावा में बिगाड़ होने का समाचार मिलने पर इस सम्बन्ध में सिंघवी इन्द्रराज को लिखा गया, जिसने गांव केलवाद में थाना स्थापित किया और वहां पंचोली अखैमल को रख समुचित व्यवस्था की[2]।

महाराजा का सिरोही एवं घाणेराव के प्रबन्ध के लिए आदमी भेजना

सिंघवी जोरावरमल के पुत्र जालोर से ही मानसिंह का साथ छोड़कर भीमसिंह के पास चले गये थे। उनमें से जीतमल नींबाज जा रहा था।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० २१-२। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८२१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० २४-५।

सिंघवी जीतमल, सूरजमल, इन्द्रमल आदि का क़ैद होना

मानसिंह ने सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् उन्हें बुलाया तो जीतमल तथा सूरजमल तो उपस्थित हो गये, परन्तु फ़तहमल तथा शंभुमल नहीं आये थे। उनमें अपनी तरफ़ से विश्वास उत्पन्न कराने के लिए मानसिंह ने जीतमल को नागोर का हाकिम नियुक्त किया। वि० सं० १८६१ के माघ मास में जीतमल ने अपने पुत्र इन्द्रमल का विवाह स्थिर किया। उसमें फ़तहमल और शंभूमल के शरीक होने की संभावना थी। महाराजा उनसे अप्रसन्न तो था ही उसने उन्हें गिरफ़्तार करने के लिए मूंडवा के मेले का प्रबंध करने के बहाने धांधल उदयराम को पचास सवारों के साथ उधर भेज दिया। शंभूमल तथा फ़तहमल तो उक्त विवाह में शरीक न हुए, परन्तु उनके पुत्र गंभीरमल तथा धीरजमल गये, जिन्हें विवाह समाप्त होते ही सपरिवार उदयराम ने पकड़ लिया। स्त्रियां तो नागोर के क़िले में रक्खी गई और पुरुष—जीतमल, सूरजमल, इन्द्रमल आदि—सलेमकोट (जोधपुर) में रक्खे गये। अनन्तर देवनाथ के उद्योग से रुपये देने पर अन्य सब तो छोड़ दिये गये, केवल जीतमल क़ैद में बना रहा[1]।

नाथ संप्रदाय के महामन्दिर नामक विशाल मन्दिर के निर्माण का कार्य मानसिंह की राज्य-प्राप्ति के समय ही शुरू कर दिया गया था। उसके सम्पूर्ण

महामन्दिर की प्रतिष्ठा होना

हो जाने पर वि० सं० १८६१ माघ सुदि ५ (ई० स० १८०५ ता० ४ फ़रवरी) को उसकी प्रतिष्ठा हुई और देवनाथ वहां का अधिकारी नियत किया गया[2]।

श्रावणादि वि० सं० १८६१ (चैत्रादि १८६२) के आषाढ मास में खेतड़ी, झूंझणू, नवलगढ़, सीकर आदि के समस्त शेखावतों को साथ ले

धोकलसिंह के पक्षपाती सरदारों का डीडवाणे में उपद्रव करना

भाटी छत्रसिंह तथा तंवर मदनसिंह ने धोकलसिंह के नाम से डीडवाणे पर अधिकार कर लिया और वहां खूब लूट मार की, जिससे वहां का

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० २५।

(२) वही, जि० ४, पृ० २६।

हाकिम भागकर दौलतपुर चला गया। यह खबर जोधपुर पहुंचने पर मुहणोत ज्ञानमल फ़ौज के साथ उधर गया। अन्य सरदारों और हाकिमों को भी डीडवाणा जाने की आज्ञा हुई, जिसपर कुचामण, मीठड़ी, मारोठ आदि के सरदार भी ज्ञानमल की सेना के शामिल हो गये। इस फ़ौज के निकट पहुंचते ही विद्रोही डीडवाणे का परित्याग कर चले गये। तब जोधपुर की सेना ने उनका छोड़ा हुआ सामान लूट लिया और डीडवाणे पर राज्य का अधिकार स्थापित हुआ[1]।

महाराजा का सेना भेज शाहपुरा मोहनसिंह को दिलाना

महाराजा अभयसिंह का एक विवाह शाहपुरा (शेखावाटी का) में हुआ था। शेखावतों से नाराज़गी और झाड़ोद के गांव दयालपुर के मोहनसिंह पर कृपा होने के कारण महाराजा ने ज्ञानमल को लिखा कि वह जाकर शाहपुरे पर मोहनसिंह का अधिकार करा दे। तदनुसार डीडवाणा से चलकर जोधपुर की सेना ने शाहपुरे पर आक्रमण किया। दस दिन की लड़ाई के पश्चात् वहां जोधपुर की सेना का अधिकार हो गया और वह इलाका मोहनसिंह को दे दिया गया। इस लड़ाई में क़िले की एक बुर्ज गिर जाने से फ़ौज के बहुत से आदमी मारे गये[2]।

उदयपुर की राजकुमारी कृष्णकुमारी के विवाह के लिए जयपुर और जोधपुर के राजाओं के बीच विवाद होना

भूतपूर्व महाराजा भीमसिंह का संबंध उदयपुर के महाराणा भीमसिंह की पुत्री कृष्णकुमारी से हुआ था, परन्तु वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में महाराजा भीमसिंह का देहांत हो गया तब महाराणा ने अपनी पुत्री की सगाई जयपुर के महाराजा जगतसिंह के साथ कर दी। पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह की पौत्री की सगाई भी जगतसिंह के साथ हुई थी। उस समय वैवाहिक कार्य जयपुर में होना तय हुआ था। तदनुसार सवाईसिंह ने अपनी पौत्री को

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० २६। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८२१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० २८-९।

पोकरण से जयपुर ले जाना चाहा। इसकी खबर मिलने पर महाराजा मानसिंह ने सवाईसिंह से कहलाया कि ऐसा करना उचित नहीं है, यदि विवाह ही करना है तो पोकरण बारात बुलाकर विवाह करो। इसके उत्तर में सवाईसिंह ने पीछा निवेदन कराया कि आपका कहना ठीक है, पर मेरा भाई उम्मेदसिंह जयपुर में रहता है, जिसकी हवेली से विवाह होगा। इसमें कोई अपमान की बात नहीं है। हां, आपके लिए एक बात विचारणीय है। उदयपुर के महाराणा की पुत्री का संबंध महाराजा भीमसिंह के साथ तय हुआ था, अब उसका ही संबंध जयपुर हो रहा है, यह कैसे ठीक कहा जा सकता है? इसपर महाराजा ने अपने सेवकों से इस विषय में पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया कि सगाई तो अवश्य हुई थी, परन्तु टीका नहीं आया और इसी बीच महाराजा (भीमसिंह) का देहांत हो गया। तब महाराजा ने जयपुर के पंचोली सताबराय को इस संबंध में महाराजा से कहने के लिए लिखा। साथ ही उसने उदयपुर भी कहलाया कि आप यह संबंध अब जयपुर कैसे कर रहे हैं, परन्तु उदयपुरवालों ने इसपर किंचित् ध्यान न दिया और टीका जयपुर रवाना कर दिया। यह समाचार महाराजा को मिलते ही वह बिना विशेष सोच-विचार किये ही वि० सं० १८६२ माघ वदि अमावास्या (ई० स० १८०६ ता० १६ जनवरी) को शीघ्रतापूर्वक कूचकर मेड़ते पहुंचा। वहां से उसने शेखावाटी में रक्खी हुई अपनी सेना को बुलवाया और सिरोही की अपनी सेना को भी शीघ्र आने को लिखा। इसके साथ ही जसवंतराव होलकर को भी उसने सहायतार्थ आने को लिखा और मारवाड़ के अन्य छोटे-मोटे सरदारों के पास भी आने के लिए आज्ञापत्र भेजे। इस तरह मेड़ते में १५ दिन में लग-भग ५०००० फ़ौज उसके पास एकत्र हो गई। उदयपुर से टीका ले जानेवालों के खारी के ढावे में ठहरने का पता पाकर, महाराजा ने स्वयं उनपर जाने का इरादा प्रकट किया, परन्तु इस कार्य का अनौचित्य बतलाकर सिंघवी इन्द्रराज ने अपने जाने की आज्ञा प्राप्त की। आउवा, आसोप आदि के सरदारों की २०००० सेना के साथ इन्द्रराज के टीका रोकने के लिए प्रस्थान करने की सूचना

पाकर उदयपुर से टीका ले आनेवाले व्यक्ति शाहपुरा (मेवाड़) चले गये। तब वह (इन्द्रराज) शाहपुरे पर सेना लेकर गया, जिसपर शाहपुरावालों ने टीका वापस उदयपुर भिजवाने की शर्त कर उसे लौटाया। इस बीच अपनी तथा परदेसियों की मिलाकर एक लाख फ़ौज महाराजा के पास जमा हो गई। जसवन्तराव ने भी कहलाया कि मेरे पहुंचने में अब देर नहीं है। उधर जयपुर के महाराजा जगतसिंह ने भी जयपुर के बाहर जाकर सेना एकत्र करना शुरू किया। उस समय उसके दीवान रायचन्द ने उसे समझाया कि राठोड़ों के पास विशाल फ़ौज है और होलकर भी शीघ्र उनसे मिल जायगा। तब जगतसिंह ने आगे कुछ न किया। इस बीच महाराजा मेड़ते से प्रस्थान कर आलणियावास पहुंचा, जहां सवाईसिंह का पुत्र हिम्मतसिंह उसके पास उपस्थित हो गया। सेनाओं का दोनों ओर जमाव हो गया था और संभव था कि परस्पर लड़ाई भी हो जाती परन्तु [इसी बीच] इन्द्रराज ने ललवाणी अमरचंद को जयपुर के दीवान रायचन्द के पास भेजकर कहलाया कि हम आप तो सदा एक रहे हैं हमारा आपस में [विरोध करना] ठीक नहीं। सीसोदिये तो सदा हमसे अलग रहे हैं। अन्त में यह तय हुआ कि उदयपुर की पुत्री के साथ दोनों महाराजाओं में से कोई भी विवाह न करे और महाराजा जगतसिंह की बहिन का विवाह महाराजा मानसिंह के साथ और मानसिंह की पुत्री सि[रे]कंवरबाई का विवाह जगतसिंह के साथ हो। इस संबंध में परस्पर [illegible] हो जाने पर जोधपुर [illegible] से टीका लेकर व्यास चतुर्भुज [illegible] और जयपुर से टीका लेकर [illegible] चतुर्भुज [illegible] गये। इसके बाद [illegible] हुआ पर इसके साथ [illegible] महाराजा से नाराज हो गया [illegible]।

इसके कुछ समय बाद [illegible]

(१) [illegible]

[illegible]

को सवाईसिंह को लाने के लिए पोकरण भेजा, पर उसने आने से इन्कार कर दिया। नथकरण ने लौटकर सारी हक़ीक़त महाराजा से कही, परन्तु महाराजा ने मुंहणोत ज्ञानमल के बहकाने से नथमल को भी सवाईसिंह से मिला हुआ होने का सन्देह कर क़ैद करवा दिया। तदनंतर सावाईसिंह भी, जो भीमसिंह के पुत्र धोकलसिंह को जोधपुर का राजा बनाना चाहता था, प्रत्यक्षरूप से मानसिंह का विरोधी यनकर धोकलसिंह का सहायक बन गया और बड़लू का ठाकुर कूंपावत शार्दूलसिंह भी धोकलसिंह के पक्ष में हो गया। रास के ऊदावत ठाकुर जवानसिंह ने भी युद्ध के अवसर पर धोकलसिंह का पक्ष ग्रहण करने का निश्चय किया। शार्दूलसिंह का बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह से मेल-जोल था। उसके-द्वारा बातचीत होने पर सूरतसिंह ने भी उस(धोकलसिंह)का ही पक्ष लेना स्वीकार कर लिया। गीजगढ़ के ठाकुर उम्मेदसिंह-द्वारा उदयपुर का टीका वापस जाने से उत्पन्न यदनामी की वात सुझाये जाने और सवाईसिंह के प्रतिज्ञा-बद्ध होने पर जयपुर का महाराजा जगतसिंह भी महाराजा मानसिंह से बदला लेने को तैयार हो गया[1]।

धोकलसिंह के पक्षपाती

उसी वर्ष आश्विन मास में महाराजा नांद से मेड़ते गया। जोधपुर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ३०-१। दयालदास की ख्यात से पाया जाता है कि धोकलसिंह को सहायता देने के एवज़ में विरोधी दल ने महाराजा जगतसिंह को सांभर का इलाक़ा और फौज ख़र्च देना स्वीकार किया। बीकानेर की सहायता के बिना सफल होना असंभव देख जगतसिंह ने एक पत्र देकर सवाईसिंह को बीकानेर भेजा। सवाईसिंह ने महाराजा सूरतसिंह को सहायता देने के बदले में ८४ गांवों के साथ फलोधी का परगना, जो अजीतसिंह के समय जोधपुर राज्य में मिला लिया गया था, वापस दिये जाने के सम्बध में तहरीर कर दी। उस समय मानसिंह ने भी सूरतसिंह से कहलाया कि फलोधी तो मैं ही आपको दे दूंगा, आप मेरे विरोधियों को सहायता न दें, परन्तु उसने मानसिंह का कथन स्वीकार न किया और मेहता ज्ञानजी, पुरोहित जवानजी आदि को आठ हज़ार फौज के साथ भेजकर वि० सं० १८६३ फाल्गुन वदि ३ (ई० स० १८०७ ता २५ फ़रवरी) को फलोधी पर अधिकार कर लिया। उधर जयपुर की सेना ने साभर पर क़ब्ज़ा किया (जि० २, पत्र ६७-८)।

की विगत चढ़ाई में बहुत ख़र्च हुआ था, जिससे देश में दंड लगाया गया।

महाराजा का सेना भेजकर उपद्रवी सरदारों का दमन करना

उन्हीं दिनों घाणेराव, चाणोद और नारलाई के मेड़तियों ने, जो मेवाड़ में थे, पाली में जाकर उसको लूटा। इसपर मेहता साहबचंद उनपर भेजा गया, जिसके साथ केसरीसिंह (बगड़ी), बख़्शीराम (चंडावल), ज्ञानसिंह (पाली) आदि सरदार, दस हज़ार फ़ौज और नागों की सेना थी। उन्होंने वहां पहुंचकर सोजत, पाली और गोड़वाड़ का समुचित प्रबंध किया, जिसपर विद्रोही सरदार पहाड़ियों में चले गये[1]।

मुंहणोत ज्ञानमल तथा अखैचंद आदि जालोर के समय के कार्यकर्ताओं की सलाह से मेड़ता के मुकाम पर महाराजा ने सिंघवी इन्द्रराज,

मानसिंह और भीमसिंह के पक्षपातियों के बीच लड़ाई होना

गुलराज, भंडारी गंगाराम, भंडारी मानमल आदि कतिपय व्यक्तियों को क़ैद करवा दिया। इन्द्रराज और गंगाराम जोधपुर के सलेमकोट में, गुलराज की बीमारी के कारण वह अपने मकान में तथा अन्य लोग मेड़ता की कचहरी में रक्खे गये[2]। इस समाचार के ज्ञात होते ही चांदावत बहादुरसिंह (मेड़तिया, कुड़कीवालों का पूर्वज) जयपुर जाकर महाराजा के विरोधियों से मिल गया। सवाईसिंह ने यह ख़बर सुनकर हंसते हुए कहा कि दोनों धनियों ने मेरी सलाह के बिना मानसिंह को गद्दी पर बैठाया, जिसका फल

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ३१।

(२) इस घटना के कुछ समय बाद मानसिंह ने सिंघवी इन्द्रराज और भंडारी गंगाराम को मेहता अखैचंद के समझाने पर मरवा देने की आज्ञा जोधपुर लिखवाई। इसके उत्तर में ठाकुर अनाड़सिंह (आहोर) ने मानसिंह के पास अर्ज़ी लिखवाई कि पारस्परिक शत्रुता के कारण झूठी शिकायतों पर आपने इन्हें क़ैद करवाया है और अब मरवाने का हुक्म निकाला है। ये दोनों नौकर वही हैं जिन्होंने आपको जालोर से जोधपुर लाकर गद्दी बैठाया है। यदि ये दोनों सवाईसिंह के साथी होते तो आपको जोधपुर न आने। इनको क़ैद किया यहां तक तो ठीक, परन्तु मरवाने की मेरी सलाह नहीं है, क्योंकि ऐसे नौकर मिल न सकेंगे। इसपर महाराजा ने उनके मरवाने का हुक्म रद्द कर दिया (जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ३२)।

शीघ्र ही उन्हें मिल गया। फिर वह भी अपनी सेना के साथ जयपुर चला गया[1]। ठाकुर शार्दूलसिंह (बड़लू) के लिखने पर महाराजा सूरतसिंह ने भी ससैन्य बीकानेर से धोकलसिंह की सहायतार्थ प्रस्थान किया। खेतड़ी से शेखावत अभयसिंह भी पर्याप्त मनुष्यों के साथ जयपुर पहुंचा। महाराजा जगतसिंह ने भी अपने डेरे बाहर करवाये[2]। उन दिनों मानसिंह की तरफ़ से जयपुर में वकील के पद पर अमरचंद लख धाणी नियुक्त था, परन्तु उसकी मृत्यु हो गई। तब उसके स्थान में मोदी दीनानाथ नियत हुआ। उसने सवाईसिंह के जयपुर पहुंचने और महाराजा जगतसिंह का डेरा बाहर होने का समाचार मानसिंह के पास भिजवाया, जिसपर उसने मेड़ता से परबतसर की तरफ़ कूच किया। वहां उसके आदेशानुसार उसके अधीनस्थ सरदार उपस्थित हो गये। उस समय बूंदी के महाराव राजा बिशनसिंह तथा किशनगढ़ के महाराजा कल्याणसिंह की ओर से भी सेनाएं मानसिंह की सहायतार्थ पहुंचीं। साथ ही उसने जसवंतराव होल्कर को भी सहायता के लिए आने को लिखा। उधर विरोधी दल मे बीकानेर का स्वामी सूरतसिंह[3] और शाहपुरा (मेवाड़) का राजा अमरसिंह अपनी-अपनी सेनाओं के साथ जाकर शरीक हो गये। उस समय पच्चीस लाख रुपये जगतसिंह ने इस मुहिम के लिए अपने खज़ाने से निकलवाये। मानसिंह के सहायक सरदारो को भी सवाईसिंह ने अपने

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि सवाईसिंह अपने साथ धोकलसिंह को भी जयपुर ले गया, जहां महाराजा जगतसिंह ने उसे अपने शामिल भोजन कराया (जि० २, पृ० १०८३)।

(२) मेजर जेनरल सर जॉन मालकम कृत "रिपोर्ट ऑन् दि प्रॉविंस ऑव् मालवा एण्ड एड्ज्वाइनिग डिस्ट्रिक्ट्स" (ई० स० १८२७ का संस्करण) से पाया जाता है कि चढ़ाई करने के पूर्व जयपुर के वकीलों ने अंग्रेज़ों को अपने पक्ष में करने का और उनकी सहायता प्राप्त करने का बहुत उद्योग किया, परन्तु वे इसमें कृतकार्य न हुए (पृ० १४१ और टि० ३)

(३) दयालदास की ख्यात के अनुसार वह सादू तथा पलसाणा के बीच शामिल हुआ था (जि० २, पत्र ६८)।

पक्ष में हो जाने के लिए कहलाया। इसपर रास के ऊदावत ठाकुर जवान-सिंह ने उत्तर में कहलाया कि अभी आकर क्या करेंगे, यहां पर जो सरदार हैं उनको अपने शामिल ही समझना। आउवा और आलोप के ठाकुर यहां हैं, परंतु वे महाराजा को युद्ध नहीं करने देंगे और उसे लेकर लौट जायेंगे। युद्ध के समय अन्य सरदार भी आपके शामिल हो जायेंगे। अनन्तर सब सरदारों ने सवाईसिंह के पास उपस्थित होकर उपर्युक्त बातें पक्के तौर पर तय कीं। बलूंदा के मेड़तिया चांदावत शिवसिंह ने भी सवाईसिंह का पक्ष लेना स्वीकार किया।

जसवंतराव होलकर से जब मानसिंह की मुलाकात हुई थी उस समय मीरखां[1] (अमीरखां, टोंक के नवाबों का पूर्वज) को सम्मान देने में उसने इनकारी की थी, इसलिए उससे अप्रसन्न होकर वह सवाईसिंह के प्रयत्न से होलकर के शामिल हो गया। मानसिंह के बुलाने पर जसवंतराव रवाना होकर किशनगढ़ के गांव तीहोद में आकर ठहरा, जहां से उसने मानसिंह को खर्च भेजने के लिए लिखा। उस समय मानसिंह के पास खर्च की तंगी थी, जिससे उसने बालकृष्ण के मन्दिर के आभूषण, रत्न आदि तथा महाराजा विजयसिंह के समय बनवाये हुए सोने और चांदी के बर्तन अपने काम में लिये। साथ ही प्रजा से भी ज़ोर-ज़बर्दस्ती से धन वसूल किया गया। इसी बीच सवाईसिंह ने महाराजा जगतसिंह-द्वारा दो-तीन लाख रुपये जसवन्तराव के पास भिजवाकर उसे दोनों पक्षों में से किसी का भी साथ न देने के लिए राज़ी किया। फलतः जब मान-सिंह ने अभैचंद के साथ जसवंतराव के पास खर्च के लिए रुपये भिजवाये तो उसने यह कहकर उन्हें स्वीकार न किया कि इतनी थोड़ी रक़म से मेरा काम नहीं चल सकता। अनंतर सिंगोली के मुक़ाम पर मानसिंह स्वयं उससे जाकर मिला, पर वह (जसवंतराव) उसका साथ न देकर दक्षिण

(१) मालकम लिखता है कि वहां होते हुए भी सिंधिया तथा होल्कर ने अपने-अपने आदमियों को उससे धन लाने के लिए भेजा। (मेमॉयर ऑव् सेंट्रल इंडिया इन्क्लूडिंग मालवा एण्ड एडजॉइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स, पृ० ११८-९)।

की तरफ़ चला गया। जयपुर का महाराजा जगतसिंह एवं बीकानेर का महाराजा सूरतसिंह क़रीब एक लाख सेना के साथ मारोठ पहुंचे। उनके परदेशी सैनिकों की संख्या अधिक होने से जगतसिंह को अपनी विजय के संबंध में आशंका थी। सवाईसिंह ने उसकी शंका निर्मूल करने का भरसक प्रयत्न किया, परन्तु जब वह उसमें सफल न हुआ तो वह अकेला ही मीरखां आदि की सेना-सहित महाराजा मानसिंह के मुकाबिले के लिए आगे बढ़ा और नाहरगढ़ के नाके होता हुआ गींगोली पहुंचा। यह समाचार मिलने पर महाराजा मानसिंह भी सेना-सहित लड़ने को सन्नद्ध हुआ, परंतु तोप की एक आवाज़ होते ही हरसोलाव, सेनणी, पूनलू, सथलाणा, चवां, सवराड़, पाली, गजसिंहपुरा, चंडावल, बगड़ी, खींवसर, वेराई, देवलिया, रीयां, मारोठ तथा बलूंदा के सरदार महाराजा की सेना से अलग होकर धोकलसिंह के सहायकों के शामिल हो गये। महाराजा मानसिंह के पक्ष में केवल आसोप का कूंपावत केसरीसिंह, आउवा का चांपावत बख़्तावरसिंह, नींबाज का ऊदावत सुरताणसिंह, रास का ऊदावत जवानसिंह, लाम्बिया का ऊदावत भानसिंह, कुचामण का मेड़तिया शिवनाथसिंह, बूड़सू का मेड़तिया प्रतापसिंह और खेजड़ला का भाटी जसवंतसिंह रह गये[1]। महाराजा ने आक्रमण करने की आज्ञा दी, परन्तु जवानसिंह (रास) ने यह कहकर उसे रोक दिया कि इतनी थोड़ी सेना के साथ शत्रु का सामना करने में लाभ नहीं होगा, अतएव पीछा जोधपुर चलना चाहिये। महाराजा ने फिर भी लड़ने का आग्रह किया, पर उक्त सरदार तथा धांधल उदयराम ने जबरन उसका घोड़ा फेर दिया। जो सामान आदि जोधपुर के सरदार अपने साथ ले जा सके वह तो वे ले गये, शेष सामान तोपखाना, खज़ाना, फ़ीलखाना, फ़र्राशखाना आदि जयपुर की सेना ने लूट लिया। इस अवसर पर जयपुरवालों ने खोखर, अडाणी, श्यामपुरा और गींगोली गांवों को भी लूटा। मारोठ पहले ही लूटा जा चुका था।

(१) दयालदास की ख्यात में इस घटना का समय वि० सं० १८६३ फाल्गुन सुदि २ (ई० स० १८०७ ता० ११ मार्च) दिया है (जि० २, पत्र १८)।

परबतसर के पड़िहार किलेदार ने वहां की चाबियां शत्रुओं को सौंप दीं। इस विजय का समाचार मिलने पर महाराजा जगतसिंह एवं सूरतसिंह नागोर से कूचकर परबतसर पहुंचे। फाल्गुन सुदि में महाराजा मानसिंह मेड़ता पहुंचा। वह जालोर जाना चाहता था, परन्तु कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंह तथा हिन्दालखां ने कहा कि यदि आप जालोर जावेंगे तो जोधपुर गमा बैठेंगे, अतएव आप जोधपुर ही चलें। इसपर वह जोधपुर गया और वहां पहुंचकर नगर तथा क़िले की उसने मज़बूती की। इसी बीच मार्ग से रास का ठाकुर अपने परिवार को रास से निकालने के बहाने रुख़सत लेकर रवाना हो गया और शत्रु से जा मिला। अनन्तर सवाईसिंह के आदेशानुसार उसके पक्ष के एक दल ने अचानक नागोर पर चढ़ाई कर वि० सं० १८६३ फाल्गुन सुदि १५ (ई० स० १८०७ ता० २३ मार्च) को वहां क़ब्ज़ा कर लिया। उसी समय के आस पास सोजत पर भी शत्रु पक्ष के लोगों ने अधिकार कर लिया। इस अवसर पर पाली का [illegible] ज्ञानसिंह, बगड़ी का जैतावत केसरीसिंह और धड़ाचल का [illegible] [illegible]राम, जो गोड़वाड़ में घाणेराव के ठाकुर को दंड देने को सेना ले मेहता साहबचंद के साथ थे, आकर सोजत पर शत्रुपक्ष का अधिकार कराने में सहायक हो गये थे।

परबतसर में रहते समय महाराजा जगतसिंह के दीवान रायचंद ने उससे कहा कि अब आपकी इज्जत काफी रह गई है, अतएव अब आप उदयपुर में विवाह कर जयपुर चलें। जब इस सम्बन्ध में महाराजा ने सवाईसिंह से कहा तो उसने उत्तर दिया कि पहले आप जोधपुर [illegible] पहुंचते ही मानसिंह अपने परिवार सहित जालोर चला जायगा और इस प्रकार जोधपुर की गद्दी पर आप धोकलसिंह को बिठला सकेंगे जिससे आपके यश में वृद्धि होगी। फिर आप आराम से उदयपुर में विवाह कर जयपुर चले जाना। जगतसिंह ने उसका कहना मान लिया और सवाईसिंह को [illegible] जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान करने का [illegible] होता हुआ [illegible]

चैत्र वदि ७ (ता० ३० मार्च) को पर्याप्त फौज के साथ सवाईसिंह जोधपुर पहुंचा। अपना डेरा मंडोवर में रखकर उसने वहां घेरा लगाया। पीछे से भकरी, रीयां, कालू एवं मलूंदा के मार्ग से होते हुए महाराजा जगतसिंह और सूरतसिंह भी वि० सं० १८६४ चैत्र सुदि (ई० स० १८०७ अप्रेल) में जोधपुर पहुंचे और नगर के चारों तरफ मोर्चे लगाये गये। ऐसी परिस्थिति में महाराजा मानसिंह ने पहले के कैद किये हुए व्यक्तियों को मुक्तकर उनसे अपनी सेवा दिखलाने के लिए कहा। उनमें से सिंघवी जोरावरमल के पुत्र जीतमल तथा धायभाई शंभूदान नगर की रक्षा करते हुए सात दिन तक शत्रु से लड़ने के बाद सवाईसिंह के शामिल हो गये। फिर इन्द्रराज और गंगाराम तथा नथकरण को, जो उपर्युक्त व्यक्तियों के साथ ही कैदकर सलेमकोट में रक्खे गये थे, महाराजा ने मुक्त कर दिया। इन्द्रराज और गंगाराम ने महाराजा की आज्ञानुसार सवाईसिंह से मिलकर संधि के विषय में बातचीत की, पर उसने उसपर विशेष ध्यान न दिया और कहा कि महाजनों का बनाया हुआ राजा नहीं हो सकता। मानसिंह से कहो कि जालोर चला जाय जोधपुर पर भीमसिंह का पुत्र राज्य करेगा। इसपर इन्द्रराज और गंगाराम गढ तो नहीं, परन्तु नगर सौंप देने का वचन देकर लौट गये। मानसिंह के पास पहुंचकर उन्होंने उससे जोधपुर नगर विरोधियों को सौंप दुर्ग में स्थिर रहकर युद्ध का प्रबंध करने को कहा। तदनुसार इन्द्रराज के पुत्र फतहराज, भंडारी गंगाराम के पुत्र भानीराम, करणोत इन्द्रकरण (समदड़ी), महेचा जसवंतसिंह (जसोल), अनाड़सिंह राजसिंहोत (आहोर), चांपावत उदयराज (दासपा), आयस देवनाथ, सूरतनाथ तथा अन्य कितने ही व्यक्तियों के साथ महाराजा ने जोधपुर के दुर्ग में निवास रख उसकी रक्षा का प्रबंध कर युद्ध का आयोजन किया[1]। इन्द्रराज तथा गंगाराम वि० सं० १८६४ चैत्र सुदि ११ (ई० स० १८०७ ता० १८ अप्रेल) को नगर शत्रु के हवाले

(१) टॉड के अनुसार उस समय उसके पास पांच हज़ार सेना थी, जिसमें बिशन (विश्नु) स्वामी, चौहान, भट्टी आदि शामिल थे (जि० २, पृ० १०८५)।

कर केसरीसिंह (आसोप), बख्तावरसिंह (आउवा), सुरताणसिंह (नींवाज), शिवनाथसिंह (कुचामण), प्रतापसिंह (बूड़सू) और मानसिंह (लाखिया) तथा अन्य रिसाले के साथ बाहर निकल गये और नगर में धोकलसिंह के नाम की आन फिर गई[1]। महाराजा मानसिंह ने सवाईसिंह एवं रास के ठाकुर जवानसिंह के पास उस समय इस आशय के खास रुक्के भेजे कि आप अपने घरानों की चाल पर ध्यान रक्खें और उसी समय इन्द्रराज ने सवाईसिंह को कहा कि नागोर तो तुम्हारे कब्ज़े मे ही है, अब जो परगने कहो मैं धोकलसिंह को दिलाने को तैयार हूं। सवाईसिंह ने इसका उत्तर यह दिया कि महाराजा मानसिंह जोधपुर छोड़कर जालोर चले जायें तथा जगतसिंह का इस चढ़ाई में जो बाइस लाख रुपया खर्च हुआ है वह चुका दें तो सुलह हो सकती है। अनन्तर इन्द्रराज और गंगाराम—आउवा, आसोप और नींवाज के सरदारों-सहित—शेखावतों की सहायता से बाबरा गये, जहां से उन्होंने लोढ़ा कल्याणमल को दौलतराव(सिंधिया)को सहायतार्थ लाने के लिए भेजा। इसी बीच मीरखां तथा सवाईसिंह के बीच खर्च की बाबत कहा-सुनी हो गई, जिससे मीरखां उसका साथ छोड़कर चला गया। इस बात का पता मिलने पर इन्द्रराज ने मीरखां से बातचीत की और सवाईसिंह के पक्ष के बलूंदा के ठाकुर शिवसिंहकी प्रजा से ३०००० रुपया वसूलकर मीरखां को दे उसे अपने पक्ष में किया। तब भंडारी पृथ्वीराज के साथ मीरखां ने ढूंढाड़ की तरफ़ जाकर वहां लूट-मार शुरू की। उन्हीं दिनों भंडारी चतुर्भुज, उपाध्याय रामकरण, ठाकुर प्रतापसिंह आदि ने कुछ सेना एकत्रित कर परबतसर और डीडवाणा में पुनः मानसिंह का अधिकार स्थापित किया और इंद्रराज आदि ने बाबरा में

(१) उन्हीं दिनों उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के नाम भाद्रपदादि वि० सं० १८६३ (चैत्रादि १८६४) वैशाख वदि ६ (ई० स० १८०७ ता० १ मई) शुक्रवार को धोकलसिंह की तरफ़ से इस आशय का एक पत्र भेजा गया कि गोड़वाड़ पर अधिकार कर लिया जावे, पर वहां भी उस समय कब्ज़ा नहीं रहा था, इसलिए इस पत्र का कुछ भी परिणाम न निकला (वीरविनोद भाग २ पृ० १०३८)।

रहते हुए कई सरदारों को पुनः महाराजा के पक्ष में कर लिया। उधर उसी समय जयपुर के दीवान रायचंद ने खर्च भेजना बंद कर दिया और महाराजा जगतसिंह को लिखा कि फ़ौज का खर्च सवाईसिंह को देना चाहिये। इसका परिणाम यह हुआ कि खर्च के अभाव में जयपुर की सेना में दिन-दिन तंगी होने लगी। इतना होने पर भी जोधपुर के घेरे में कमी नहीं हुई। सीकर के शेखावत राव लक्ष्मणसिंह ने दौलतपुरा जाकर वहां के गढ़ को घेर लिया। पड़िहार अमरदास और लाड़खानी दौलतपुर के गढ़ मे चले गये तथा सामान इकट्ठा कर दो मास तक लड़ते रहे। तब लक्ष्मणसिंह वहां से लौट गया। उस समय जोधपुर, जालोर, सिवाणा, दौलतपुरा, बाली, शिव, उमरकोट आदि के गढ़ों पर महाराजा मानसिंह का अधिकार रहा और बाक़ी सारे मुल्क पर विपक्षियों का अधिकार हो गया तथा तहसील की आय वे लेने लगे। शत्रु-सेना ने लूट-मार कर राज्य का बहुत बिगाड़ किया[1]। उस समय जोधपुर नगर भी लूट-द्वारा बरबाद हो जाता, परंतु पंचोली गोपालदास ने सवाईसिंह को कहलाया कि नगर की क्यों बरबादी कराते हो। वाजिबी पैदाइश होगी, वह मैं देता ही रहूंगा। इसपर सवाईसिंह ने उसको वहां का कोतवाल बनाकर, हाकिम के पद का अधिकार और सायर का प्रबंध भी सौंप दिया।

वि० सं० १८६४ के श्रावण में शत्रुओं ने दुर्ग के फ़तहपोल दरवाज़े के पास सुरंग लगाई, जिसकी दुर्गवालों को सूचना मिलने पर उन्होंने जलता हुआ तेल शत्रु के सैनिकों पर डाला, जिससे कई आदमी जल गये और कई भाग गये। फ़तहपोल दरवाज़े की रक्षा का भार खेजड़ला के भाटी सरदार पर था। उसके सैनिकों ने दुर्ग के बाहिर निकलकर झगड़ा किया। राणीसर की बुर्ज की तरफ़ भी क़िले में सुरंग लगाई गई, जिससे वहां भी झगड़ा हुआ और तवर बहादुरसिंह काम आया, जिसकी छत्री

(१) "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि शत्रु-सेना ने लूट-मार करने के अतिरिक्त वहां की स्त्रियों को पकड़ पकड़ कर दो-दो पैसे में बेचा (चतुर्थ भाग, पृ० [illegible])। "वीरविनोद" से भी इसकी पुष्टि होती है (भाग २, पृ० [illegible])।

राणीसर में है। लखणपोल दरवाज़े के बाहर रासोलाई में जैपुर के दादू-पंथी साधुओं का मोरचा था। उनपर रात्रि के समय क़िले की खिड़की खोलकर जसोल के ठाकुर जसवंतसिंह आदि ने आक्रमण किया और वहां से उनका मोरचा उठा दिया। उस समय जसवंतसिंह का राजपूत लोढ़ा कीर्तिसिंह वीरतापूर्वक लड़कर काम आया। उसकी छत्री जय-पोल के बाहर बनी हुई है। इसी प्रकार राखी का चौहान श्यामसिंह भी उसी समय वहां काम आया। उसकी भी स्मारक छत्री जोधपुर के क़िले के जयपोल द्वार के बाहर बनी हुई है। इस रीति से शत्रु से निरंतर युद्ध होता रहा।

लोढ़ा कल्याणमल दौलतराव सिंधिया के पास से सेना लेकर आया। उसमें आंबा इंग्लिया[1] और जान बेप्टिस्ट[2] (Jean Baptiste) प्रमुख थे। उस समय ठाकुर सवाईसिंह (पोकरण), केसरीसिंह (बगड़ी), शिवसिंह (बलूंदा), ज्ञानसिंह (पाली) बख्शीराम (चंडावल) आदि सरदार दो हज़ार सेना के साथ वि० सं० १८६४ श्रावण वदि ११ (ई० स० १८०७ ता० २० जुलाई) को सिंधिया की सेना का सामना करने के लिए रवाना हुए और मेड़ता के गांव देवरिया में पहुंचे। उन लोगों ने सिंघवी इंद्रराज के पास समाचार भेजा कि तुम आकर हमसे मिलो ताकि कोई बात निश्चित की जाय। इसपर इंद्रराज ने भी कुड़की जाकर मुकाम किया। उस समय इंद्रराज ने नागोर, डीडवाणा, कोलिया, मेड़ता, परबतसर, मारोठ, सांभर और नावा के परगने धोकलसिंह को देने और जोधपुर, जालोर, सोजत, जैतारण, सिवाणा, पचपद्रा, पाली, देसूरी, शिव, उमरकोट तथा फलोधी के परगने मानसिंह के लिये रखने का प्रस्ताव किया। सवाईसिंह ने नागोर आदि मानसिंह को

(१) यह माधवराव और दौलतराव सिंधिया का सेनापति तथा राजनैतिक सलाहकार था।

(२) यह माइकेल फिलोज़ का छोटा पुत्र था और देशी लोगों में 'जान बतीसी' के नाम से प्रसिद्ध था। सिन्धिया की सेना में यह कप्तान था और इसने उनकी तरफ़ से कई बड़ी लड़ाइयां लड़ी थीं। यह सैंतालीस साल तक उनकी सेवा में रहा था।

और जोधपुर धोकलसिंह को दिलाने की बात कही, परन्तु कोई बात तय नहीं हुई और तीन-चार दिन तक बहस चलती रही[1]। इस बीच ठाकुर सवाईसिंह ने आंबा इंग्लिया और जान बेप्टिष्ट को अपनी तरफ़ मिला लिया। उन्होंने सवाईसिंह के शामिल जाकर मुकाम किया। इससे इंद्रराज के साथ की बातचीत रुक गई और सवाईसिंह ने सिंघवी चैनकरण को जान बेप्टिष्ट के साथ सोजत तथा जैतारण जाने का हुक्म दिया। उन्होंने लांबिया, नीबाज, आउवा आदि ठिकानों से रुपये वसूल किये और परबतसर, मारोठ, डीडवाणा आदि पर अधिकार कर लिया।

श्रावण सुदि ५ (ता० ८ अगस्त) को सवाईसिंह ने पुनः जोधपुर पहुंच वहां के घेरे को बढ़ाया। इंद्रराज उसके पास से रवाना होकर किशनगढ़ गया। वहां से उसकी तरफ से भंडारी पृथ्वीराज और कुचामण का

(१) दयालदास की ख्यात में इस संबंध में भिन्न वर्णन मिलता है। उसमें लिखा है—"सात मास तक जोधपुर के गढ़ पर तोपों की मार होने के पश्चात् गढ़ के भीतर से राणियों के कहलाने पर, सूरतसिंह ने मिघोरिया की भाखरी से अपनी तोपें हटवा दीं। मानसिंह भी इस लड़ाई से तंग आकर गढ़ का परित्याग करने के विचार में था। उसने अपने कुछ सरदारों को इस संबंध में शर्तें तय करने के लिए भेजा। महाराजा सूरतसिंह द्वारा छल न होने का आश्वासन मिलने पर माधोसिंह (आउवा), सुल्तानसिंह (नीवाज), केसरीसिंह (आसोप) शिवनाथसिंह (कुचामण) तथा इन्द्रराज सूरतसिंह के पास गये और उन्होंने उससे कहा कि यदि आप गढ़ के भीतर का हमारा सामान आदमी भेजकर जालोर भिजवा देंगे तथा मारवाड़ और [illegible]पुर का जो भी प्रबन्ध हो उसमें मानसिंह को भी शरीक रखने का वचन देंगे तो एक मास में गढ़ खाली कर दिया जायगा। इसपर सवाईसिंह ने उत्तर दिया कि हम यह शर्त स्वीकार है, पर साथ ही आपको सारा [illegible] देना होगा तथा जब तक [illegible] नाबालिग है तब तक जोधपुर का प्रबन्ध जयपुर नरेश के हाथ में रहेगा। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।"

ठाकुर शिवनाथसिंह मीरखां के पास गये। शिवनाथसिंह ने चार-पांच लाख रुपये देने का मीरखां को इकरार लिखकर कहा कि जयपुर से शिवलाल बख़्शी जोधपुर जाने के लिए रवाना हुआ है, उसको झगड़ाकर बिगाड़ने पर एक लाख रुपया दिया जायगा और बाकी रकम हमारे शामिल रहने पर अदा कर दी जायगी। यदि इसके विपरीत होगा तो मैं तुम्हारे शामिल भोजन कर मुसलमान हो जाऊंगा। इस प्रकार का वचन हो जाने पर महाराजा मानसिंह ने जोधपुर से रत्न, आभूषण आदि उसके पास भेजे। सरदारों ने भी ज़ेवर और रुपये भेजे। बलूंदा के ठाकुर शिवसिंह ने भी देवरिया के मुकाम से एक हज़ार रुपये और अपनी जमीयत के घोड़े इन्द्रराज के पास भेजे। फिर रत्न और आभूषण बेच तथा इधर-उधर से रकम वसूलकर एक लाख रुपया इकट्ठा कर इन्द्रराज ने मीरखां के पास भेज दिया। कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंह तथा बूडसू के प्रतापसिंह आदि को मिलाकर उस समय मानसिंह की अच्छी सेना बन गई और मीरखां को साथ लेकर इस सेना ने कूच किया। जयपुर के बख़्शी शिवलाल का मुकाम फागी में था। राठोड़ों ने वहां पहुंच उसका मुकाबला किया, जिसमें मानसिंह के सहायक राठोड़ों की विजय हुई और शिवलाल भाग गया। अनन्तर राठोड़ों ने उसके डेरे और माल-असबाब को लूट लिया[1]। उस समय भंडारी चतुर्भुज और उपाध्याय रामदान ने परबतसर, मारोठ, डीडवाणा आदि पर पुन: महाराजा मानसिंह का प्रभुत्व स्थापित किया। उस समय बडू के ठाकुर अजीतसिंह ने महाराजा के ५०० सैनिकों को दो मास तक अपने यहां रखकर उनका सारा खर्चा बर्दाश्त किया।

शिवलाल के साथ की सेना को नष्टकर मीरखां तथा शिवनाथसिंह ने जयपुर की सेना का पीछा कर ढूंढाड़ को लूटना आरंभ किया। उन्होंने जयपुर से तीन कोस दूर झुठवाड़ा गांव में अपने मुकाम रक्खे और वहां के

(१) मालकम-कृत "रिपोर्ट ऑन् दि प्राविन्स ऑव् मालवा एण्ड एड्ज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स" से पाया जाता है कि धर्मराजा के विरोधी हो जाने पर बख़्शी शिवलाल मानसिंह से लड़ाई करने के लिए भेजा गया (पृ० १४६), परन्तु यह कथन ठीक नहीं है।

बाग के सारे दरख़्त कटवा डाले। राठोड़ों की सेना के भय से जयपुर नगर के दरवाज़े बंद कर दिये गये। भंडारी पृथ्वीराज और शिवनाथसिंह ने जयपुर जाकर एक दिन गोलाबारी भी की[1]। तदनंतर मीरखां और शेरसिंह ने झुडवाड़े से कूच किया और किशनगढ़ से सिंघवी इंद्रराज, ठाकुर बख़्तावरसिंह (आउवा), केसरीसिंह (आसोप), सुरताणसिंह (नींबाज), भानसिंह (लाम्बिया), थानसिंह (सुमेल), तथा भाटी आदि और परबतसर की तरफ़ से भंडारी चतुर्भुज, उपाध्याय रामदान, अजीतसिंह (बडू), मंगलसिंह (बोड़ावड़), मोहकमसिंह (लालड़), जुझारसिंह (मन्नाणा), रघुनाथसिंह (तोसीणा), फ़तहसिंह (सरनावड़ा), प्रतापसिंह (कालियाटड़ा), बख़्तावरसिंह (पीह) आदि पांच हज़ार सेना के साथ जाकर इंद्रराज के शामिल हो गये। भाद्रपद महीने में मीरखां भी हरमाड़े में इंद्रराज के शामिल हुआ। वहीं ठाकुर शंभुसिंह (कंटालिया) और भारतसिंह (आलणियावास) भी उन लोगों के शामिल हुए। भंडारी पृथ्वीराज के साथवाले थांवले के ऊदावतों और गोविंददासोत मेड़तियों ने जयपुर के कई गांवों को लूटा[2]।

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में इससे भिन्न वर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि अमीरख़ां के जयपुर पर चढ़ाई करने पर महाराजा जगतसिंह ने जयपुर में रक्खे हुए अपने सेनाध्यक्ष को उसे सज़ा देने को लिखा। इसपर शिवलाल ने उसका आगे बढ़ना रोककर उसे लूणी की तरफ भगा दिया और गोविंदगढ़ एवं हरसूरी नामक स्थानों पर उसपर अचानक आक्रमण कर उसे फागी (फागी) नामक स्थान तक पीछे हटने पर मजबूर किया। इस प्रकार उसे जयपुर की सीमा के बाहर निकालकर शिवलाल ने पीछा जयपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। टोंक के निकट पीपला में पहुंचने पर जब अमीरख़ां को शिवलाल के वापस जाने का समाचार मिला तो उसने मुहम्मदशाहख़ां एवं राजाबहादुर को सहायतार्थ बुलाकर जयपुर की सेना पर हमला कर दिया और उसे हराकर वह जयपुर के द्वार तक जा पहुंचा (जि० २, पृ० १०८७)।

मालकम-कृत "रिपोर्ट ऑन् दि प्राविंस ऑव् मालवा एण्ड एड्ज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स" में भी लगभग ऐसा ही वर्णन है (पृ० १४६)।

(२) मीरख़ां और इन्द्रराज के साथ उस समय काफ़ी सेना हो गई थी।

फिर मीरखां ने इंद्रराज से सेना-व्यय मांगा, तब इंद्रराज ने परबतसर के मेड़तियों से अस्सी हज़ार रुपये तलब किये। इसपर बड्डू के महाजन चतुर्भुज ने एक लाख रुपये का बराड़ (कर) प्रजा पर डाला। चंडवाणी जोशी श्रीकिशन तथा घड़िया राजाराम अजमेर में व्यापार करते थे, उनको इंद्रराज ने बोहरा बनाकर एक लाख रुपया मीरखां को देने की ज़मानत दिलाई। फिर मीरखां और इंद्रराज के सेना के साथ जयपुर की तरफ़ बढ़ने का समाचार महाराजा जगतसिंह को मिला। इसपर उसने बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह और धोकलसिंह के पक्षपाती सवाईसिंह आदि को एकत्रित किया, परंतु एक दूसरे पर दोषारोपण करने के अतिरिक्त विशेष कुछ न हुआ। तब सवाईसिंह के बहुत कुछ रोकने पर भी महाराजा जगतसिंह ने कुछ ध्यान न दिया और भाद्रपद सुदि १३ (ता० १४ सितंबर) को उसने जोधपुर से कूच कर दिया[1]। इसी प्रकार महाराजा

उन्होंने भी ढूंढाड़ का मुल्क लूटा और वहां की औरतों को पकड़-पकड़ कर एक-एक रुपये में बेचा। इस लूट में उनके हाथ प्रचुर धन लगा (वंशभास्कर; चतुर्थ भाग, पृ० ३१७२)। "वीरविनोद" से भी इसकी पुष्टि होती है (भाग २, पृ० ८२४)।

(१) टॉड के अनुसार जगतसिंह, सूरतसिंह के बाद गया था। वह लिखता है कि पहले तो सवाईसिंह आदि ने अमीरख़ां की विजय का समाचार उसके पास कई दिन तक पहुंचाया ही नहीं। पीछे से जब एक विशेष हरकारे ने यह समाचार उसे दिया तो वह इतना घबरा गया कि उसने मरहटे सरदारों को बुलाकर सुरक्षित रूप से जयपुर पहुंचा देने के एवज़ में उन्हें १२ लाख रुपया देना ठहराया। यही नहीं उसने अमीरख़ां को भी नौ लाख रुपया देने का वायदा किया ताकि वह मार्ग में उसे रोके नहीं (राजस्थान; जि० २, पृ० १०८७-८)। मालकम-कृत 'रिपोर्ट ऑन् दि प्रॉविंस ऑव् मालवा एण्ड एड्जॉइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स' में भी जगतसिंह का अमीरख़ां आदि को रुपया देने का उल्लेख है (पृ० १४७)। दयालदास की ख्यात से भी पाया जाता है कि जगतसिंह सूरतसिंह के बाद गया था। घेरे के समय ही अचानक सूरतसिंह मोतीझिरा की बीमारी से ग्रस्त हुआ। तब उसने जगतसिंह से सलाहकर अपनी सेना वहीं छोड़ बीकानेर की तरफ़ प्रस्थान किया। वि० सं० १८६४ आश्विन वदि १२ (ई० स० १८०७ ता० २८ सितम्बर) को वह बात ज़ाहिर होता हुआ नगर पहुंचा, उसी दिन बाद ही जगतसिंह अपनी सारी सेना-सहित वहां से निकल गया। महाराजा सूरतसिंह ने जब जयपुर संघ से

सूरतसिंह भी बीकानेर की तरफ़ रवाना हुआ। सवाईसिंह आदि भी उसी रात्रि को अपने डेरे-डंडे उठाकर सेना-सहित चले गये[1]। जितना सामान वे साथ ले जा सके ले गये और बाक़ी जला दिया। अनंतर उन्होंने नागोर जाकर डेरे डाले।

भाद्रपद सुदि १४ (ता० १५ सितंबर) को प्रातःकाल महाराजा मानसिंह को जयपुर और बीकानेर के महाराजाओं के चले जाने तथा जोधपुर शत्रुओं से रहित होने का समाचार मिला। तब उसने नगर और दुर्ग के द्वार खुलवाये और स्वयं नगर मे जाकर आयस देवनाथ को महामंदिर में ठहराया। नागरिकों ने महाराजा के पास उपस्थित होकर पंचोली गोपालदास की प्रशंसा की, जिसपर महाराजा ने उसकी तसल्ली की।

मीरखां और इंद्रराज को महाराजा जगतसिंह के जयपुर की तरफ लौटने का समाचार मिलने पर उन्होंने उस तरफ़ कूच किया। मार्ग में जयपुर की सेना के ऊंट और घोड़ों को गोविंददासोत मेड़तियों ने दो-तीन मुक़ामों पर लूटा। उन्होंने कई जयपुरी सैनिकों के नाक-कान भी काटे। महाराजा जगतसिंह का नोसल (दांता) में मुक़ाम होने पर मीरखां और इंद्रराज भी वहां जा पहुंचे। यद्यपि महाराजा जगतसिंह के पास पर्याप्त सेना विद्यमान थी, परंतु सफ़र के कारण सैनिकों के थके हुए होने से वे युद्ध के अयोग्य थे तथापि उनमें से दस हज़ार सैनिकों से मीरखां और इंद्रराज ने मुक़ाबला किया। जयपुरी सेना के पैर उखड़ गये। अंत में जयपुर के दीवान रायचंद्र ने एक लाख रुपया इंद्रराज के पास भेजकर कुशलतापूर्वक महाराजा जगतसिंह को जयपुर पहुंचा दिया।

इस प्रकार मीरखां और इंद्रराज के सम्मिलित प्रयत्न से जोधपुर का घेरा तो उठ गया, परंतु नागोर में ठाकुर सवाईसिंह के साथ ठाकुर बख़्शीराम (चंडावल), ज्ञानसिंह (पाली), केसरीसिंह (बगड़ी),

---

अचानक घेरा उठाने का कारण पूछा तो उसने उत्तर दिया कि आपके जाते ही मेरा चित्त भी चढ़ाई से हट गया, इसीलिए मैं घेरा उठाकर चला आया हूं (जि० २, पत्र ६६)।

(१) दयालदास की ख्यात (जि० २, पत्र ६६) से भी इसकी पुष्टि होती है।

ज़ालिमसिंह (हरसोलाव), प्रतापसिंह (खींवसर), भाटी उम्मेदसिंह (लवेरा) आदि के अतिरिक्त नागोर और जैतारण पट्टी के लाडणू, दुगोली, लोटोती आदि के सरदारों का गिरोह था, जिनसे महाराजा को सदा आतंक रहता था। महाराजा ने उपर्युक्त लड़ाई में उत्तम सेवा करने के एवज़ में अपने अनेक कर्मचारियों एवं सरदारों आदि को इनाम इकराम और ओहदे आदि देकर सम्मानित किया[1]।

अमीरखां के जयपुर से जोधपुर लौटने पर महाराजा ने उसका बड़ा सम्मान किया और उसे अपना पगड़ी-बदल भाई बनाया तथा "नवाब" की उपाधि और बराबर बैठने का सम्मान दिया। गांव पाटवा तथा डांगावास का पट्टा और खर्च के एवज़ में दरीबा, नावां आदि गांव उसे दिये गये।

महाराजा का अमीरखां-द्वारा चूक करा सवाईसिंह आदि को मरवाना

अनन्तर एक दिवस महाराजा ने मीरखां से एकांत में कहा कि आपने मेरे राज्य की रक्षा की उसकी मैं प्रशंसा कहां तक करूं। अब सवाईसिंह ने जो मेरा अपमान किया है, उसका बदला किसी प्रकार लेना चाहिये। इसपर अमीरखां ने इस कार्य का भार अपने ऊपर लिया और थोड़े समय में ही उसे मार डालने का वायदा किया। इस संबंध में उसने सवाईसिंह तथा उसके साथियों को धोखा देने का एक कार्य-क्रम निश्चित किया। तदनुसार वि० सं० १८६४ के पौष तथा माघ मास में उसने जोधपुर से खर्च का तक़ाज़ा किया। उधर से पूर्व निश्चय के अनुसार कुछ टीला-हवाला किया गया तो वह जोधपुर का विरोधी बन आस-पास के गांवों में लूट-मार करने लगा। जोधपुर से कई व्यक्ति उसके पास सुलह करने के लिए भेजे गये, परंतु उसपर उनका कोई असर नहीं हुआ। यह समाचार जब नागोर में सवाईसिंह को मिला तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने अमीरखां को कहलाया कि तुम धर्म धर्मपूर्वक हमारी सहायता करने का क़रार कर हम से आकर मिलो तो तुम्हारा खर्चा हम दे देंगे।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० [illegible], पृ० [illegible] [illegible], पृ० ८६६-४। टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० [illegible]।

मुसलमान सैनिक तोपें लगाये बैठे थे। चारों सरदार उस शामियाने में बैठ गये और उनके साथ के एक सहस्र आदमी भी वहां मौजूद रहे। सवाईसिंह आदि सरदारों ने मुहम्मदखां को, जो वहां सिपाहियों के साथ विद्यमान था, कहा कि तुम्हारी चढ़ी हुई तनख्वाह हम चुका देंगे। इसपर मुहम्मदखां ने कहा कि मैं नवाब साहब को बुलाकर लाता हूं। फिर मुहम्मदखां, अमीरखां के पास गया। अमीरखां की पत्नी का भाई भी मुहम्मदखां के साथ सरदारों के पास से उठकर जाने लगा तो उसको सवाईसिंह ने बातचीत करने के निमित्त रोक लिया। सवाईसिंह आदि अमीरखां और मुहम्मदखां के आने की प्रतीक्षा में बैठे हुए थे। इतने में पूर्व निर्दिष्ट योजना के अनुसार उपर्युक्त चारों सरदारों का प्राणहरण करने के लिए अमीरखां की तरफ से संकेत पाते ही उसके सैनिकों ने शामियाने की रस्सियां काट डालीं, जिससे शामियाना गिर गया और ये चारों सरदार, जो शामियाने के भीतर बैठे हुए थे, दब गये। ऊपर से उनपर अमीरखां के सैनिकों ने तोपों से गोलों की वर्षा की, जिससे सब वहां के वहां ही भुन गये। सवाईसिंह आदि के साथ के सैनिकों का, जो शामियाने के आस-पास खड़े थे, तलवारों और बंदूकों की गोलियों से संहार किया गया। डेरे के लोगों में से कुछ तो तोप के गोलों से मारे गये और कुछ भाग गये। तदनन्तर चारों सरदारों के सिर कटवाकर अमीरखां ने महाराजा के पास भिजवाये, जिसपर महाराजा को बड़ी प्रसन्नता हुई। नागोर में इस घटना की खबर पहुंचने पर वहां रहे हुए सरदारों को निराशा हो गई। ठाकुर ज़ालिमसिंह (हरसोलाव), प्रतापसिंह ([illegible]सर), भाटी [illegible] तथा ठाकुर मदनसिंह बीकानेर चले गये। अन्य लोग जहां-तहां सुविधा हुई चले गये और कई सरदार नागोर से लौटकर पुनः महाराजा मानसिंह के पास उपस्थित हो गये। चैत्र सुदि ४ ([illegible]) को अमीरखां ने मूंडवे से नागोर पहुंच कर महाराजा मानसिंह का अधिकार स्थापित किया[1]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० [illegible], पृ० [illegible]

सवाईसिंह के मारे जाने की ख़बर पोकरण पहुंचने पर उसका पुत्र सालिमसिंह सेना एकत्रकर फलोधी पहुंचा और उधर के गांवों का

रिपोर्ट ऑन् दि प्रॉविन्स ऑव् मालवा एण्ड एडज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स, पृ० १३७-८। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०८९-९०। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८३४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सवाईसिंह आदि के मारे जाने की घटना चैत्र सुदि ३ (ता० ३० मार्च) को हुई। उस समय सवाईसिंह आदि सरदारों के साथ के छ-सात सौ आदमी मारे गये। "वंशभास्कर" में लिखा है कि अमीरखां ने सरदारों के साथ मंत्रणा करने के लिए एक शिविर तनवाया था, जिसके फ़र्श के नीचे बारूद बिछाया गया था (भाग ४, पृ० ३३०८)। सवाईसिंह आदि के मारे जाने के विषय में नीचे लिखा पद्य प्रसिद्ध है, जिससे पाया जाता है कि यदि अमीरखां ने उनके साथ विश्वासघात न किया होता तो उसको उनके बाहुबल का परिचय मिलता—

मियां जो दीधी मीरखां, कमधां बीच कुरान।
रह्या भरोसे रामरे, (नहीं तो) पड़ती ख़बर पठान॥

ख्यातों आदि में ठाकुर सवाईसिंह को प्रत्येक स्थल पर महाराजा मानसिंह के समय होनेवाले उपद्रवों का मूल कारण बतलाया है। वस्तुतः भूतपूर्व महाराजा भीमसिंह की मृत्यु के बाद उसकी देरावरी राणी के उदर से पुत्र उत्पन्न होने के कारण प्रधान के पद का दायित्व निबाहते हुए वह नवजात शिशु (धोकलसिंह) के राज्य का वास्तविक अधिकारी होने से ही उसके स्वत्वों की रक्षा के लिए मानसिंह का विरोधी हुआ होगा। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है। मानसिंह के गद्दी बैठने के पूर्व ही भीमसिंह की देरावरी राणी के गर्भ होने की बात प्रकट हो चुकी थी, जिसपर मानसिंह ने क़रार किया था कि देरावरी के उदर से पुत्र उत्पन्न होगा तो वही जोधपुर राज्य का स्वामी होगा और मैं जालोर चला जाऊंगा। राजपूत जाति के इतिहास में अपने स्वार्थों की हानि होने की अवस्था में इक़रार को तोड़ देने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। ऐसी अवस्था में भीमसिंह की राणियों का मानसिंह पर, जिसके साथ पहले से ही उनकी शत्रुता थी, विश्वास होना कठिन था। इस प्रकार संदेह के वशीभूत होकर वे चापासणी के गोस्वामी की शरण में चली गई और जब वहां से सरदारों के आग्रह से लौटीं तो जोधपुर के दुर्ग में न जाकर नगर के महलों में ठहरीं, जहां मानसिंह की तरफ़ से कड़ा प्रबंध कर दिया गया। फिर माघ वदि में देरावरी राणी के पुत्र उत्पन्न हुआ, जो मानसिंह-द्वारा मरवाये जाने के भय से गुप्त रूप से भाटी छत्रसिंह के

मानसिंह का सवाईसिंह के उत्तराधिकारी सालिमसिंह को गांव आदि देकर संतुष्ट करना

बिगाड़ करने लगा। तब सिंघवी जसवंतराय तथा पंचोली राधाकिशन ने राजकीय सेना के साथ जाकर उससे झगड़ा किया, जिसमें दोनों तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये और कई घायल हुए। अनन्तर सिंघवी इंद्रराज ने उसको लिखा कि अपनी भलाई चाहते हो तो पोकरण चले जाओ, नहीं तो वह ठिकाना हाथ से चला जायगा। इसपर वह पोकरण चला गया और हरियाडाणा के चांपावत बुधसिंह को जोधपुर भेज उसने रेखबाब, जमीयत के घोड़े आदि भेजने की आयस देवनाथ-द्वारा बातचीत तय की, जिसपर महाराजा ने मजल, दुनाड़ा तथा उधर के कुछ अन्य गांव भी उस(सालिमसिंह)के नाम लिख दिये[1]।

जोधपुर की सेना की बीकानेर पर चढ़ाई

बीकानेर का महाराजा, सवाईसिंह का पक्षपाती था, अतएव उससे बदला लेने के लिए वि० सं० १८६५ (ई० स० १८०८) में जोधपुर की तरफ़ से सिंघवी इन्द्रराज ने एक विशाल सेना[2] के साथ बीकानेर पर चढ़ाई की। उन्हीं दिनों सिंध, जैसलमेर, सीकर, चूरू आदि से भी अलग-अलग सेनाओं ने जाकर बीकानेर में जगह-जगह फ़साद करना शुरू कर

साथ खेतड़ी भेज दिया गया। सवाईसिंह के पक्षानुयायियों का तो कथन है कि सवाईसिंह उस समय जोधपुर में न था और पोकरण में था। अनुमान होता है कि मानसिंह का अपने राज्याभिषेक के समय भीमसिंह का नाम चारणों की ओर से पढ़ी जानेवाली आशीष में से हटवाना, भीमसिंह के कृपापात्रों को पदों से हटाकर उन लोगों को, जिन्होंने भीमसिंह की आज्ञा से सावतसिंह शेरसिंह आदि को मारा था, निर्दयता से मरवाना तथा भण्डारी गंगाराम तथा सिंघवी इन्द्रराज को, जिन्होंने उसे गद्दी पर बिठलाया था, कैद करवाना ही इस विरोध का मूल कारण हो सकता है।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ४४-५।

(२) दयालदास की ख्यात में इस सेना की संख्या ८० हज़ार दी है (जि० २, पत्र ९९)। टॉड केवल बारह हज़ार सेना लिखता है (राजस्थान; जि० २, पृ० १०९१)।

सवाईसिंह के मारे जाने की खबर पोकरण पहुंचने पर उसका पुत्र सालिमसिंह सेना एकत्रकर फलोधी पहुंचा और उधर के गावों का

रिपोर्ट ऑन् दि प्राविंस ऑव् मालवा एंड एडज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स, पृ० १४७-८। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०८६-६०। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८६४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सवाईसिंह आदि के मारे जाने की घटना चैत्र सुदि ३ (ता० ३० मार्च) को हुई। उस समय सवाईसिंह आदि सरदारों के साथ के छ-सात सौ आदमी मारे गये। "वंशभास्कर" में लिखा है कि अमीरखां ने सरदारों के साथ मंत्रणा करने के लिए एक शिविर तनवाया था, जिसके फ़र्श के नीचे बारूद बिछाया गया था (भाग ४, पृ० ३६७८)। सवाईसिंह आदि के मारे जाने के विषय में नीचे लिखा पद्य प्रसिद्ध है, जिससे पाया जाता है कि यदि अमीरख़ां ने उनके साथ विश्वासघात न किया होता तो उसको उनके बाहुबल का परिचय मिलता—

मियां जो दीधी मीरख़ां, कमधां बीच क़ुरान।
रखा भरोसे रामरे, (नहीं तो) पड़ती ख़बर पठान॥

ख्यातों आदि मे ठाकुर सवाईसिह को प्रत्येक स्थल पर महाराजा मानसिंह के समय होनेवाले उपद्रवों का मूल कारण बतलाया है। वस्तुतः भूतपूर्व महाराजा भीमसिह की मृत्यु के बाद उसकी देरावरी राणी के उदर से पुत्र उत्पन्न होने के कारण प्रधान के पद का दायित्व निबाहते हुए वह नवजात शिशु (धोकलसिह) के राज्य का वास्तविक अधिकारी होने से ही उसके स्वत्वों की रक्षा के लिए मानसिह का विरोधी हुआ होगा। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है। मानसिह के गद्दी बैठने के पूर्व ही भीमसिंह की देरावरी राणी के गर्भ होने की बात प्रकट हो चुकी थी, जिसपर मानसिह ने क़रार किया था कि देरावरी के उदर से पुत्र उत्पन्न होगा तो वही जोधपुर राज्य का स्वामी होगा और मैं जालोर चला जाऊंगा। राजपूत जाति के इतिहास में अपने स्वार्थों की हानि होने की अवस्था में इक़रार को तोड़ देने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। ऐसी अवस्था में भीमसिह की राणियों का मानसिह पर, जिसके साथ पहले से ही उनकी शत्रुता थी, विश्वास होना कठिन था। इस प्रकार संदेह के वशीभूत होकर वे चापासणी के गोस्वामी की शरण में चली गईं और जब वहां से सरदारों के आग्रह से लौटीं तो जोधपुर के दुर्ग में न जाकर नगर के महलों मे ठहरीं, जहां मानसिंह की तरफ़ से कड़ा प्रबंध कर दिया गया। फिर माघ वदि में देरावरी राणी के पुत्र उत्पन्न हुआ, जो मानसिंह-द्वारा मरवाये जाने के भय से गुप्त रूप से भाटी छत्रसिंह के

सवाईसिंह के मारे जाने की खबर पोकरण पहुंचने पर उसका पुत्र सालिमसिंह सेना एकत्रकर फलोधी पहुंचा और उधर के गांवों का

रिपोर्ट ऑन् दि प्राविंस ऑव् मालवा एंड एडज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स; पृ० १३७-८। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०८६-९०। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८३५।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सवाईसिंह आदि के मारे जाने की घटना चैत्र सुदि ३ (ता० ३० मार्च) को हुई। उस समय सवाईसिंह आदि सरदारों के साथ के छः-सात सौ आदमी मारे गये। "वंशभास्कर" में लिखा है कि अमीरखां ने सरदारों के साथ मन्त्रणा करने के लिए एक शिविर तनवाया था, जिसके फ़र्श के नीचे बारूद बिछाया गया था (भाग ४, पृ० ३६७८)। सवाईसिंह आदि के मारे जाने के विषय में नीचे लिखा पद्य प्रसिद्ध है, जिससे पाया जाता है कि यदि अमीरखां ने उनके साथ विश्वासघात न किया होता तो उसको उनके बाहुबल का परिचय मिलता—

मियां जो दीधी मीरखां, कमधां बीच क़ुरान ।
रखा भरोसे रामरे, (नहीं तो) पड़ती ख़बर पठान ॥

ख्यातों आदि में ठाकुर सवाईसिंह को प्रत्येक स्थल पर महाराजा मानसिंह के समय होनेवाले उपद्रवों का मूल कारण बतलाया है। वस्तुतः भूतपूर्व महाराजा भीमसिंह की मृत्यु के बाद उसकी देरावरी राणी के उदर से पुत्र उत्पन्न होने के कारण प्रधान के पद का दायित्व निबाहते हुए वह नवजात शिशु (धोंकलसिंह) के राज्य का वास्तविक अधिकारी होने से ही उसके स्वत्वों की रक्षा के लिए मानसिंह का विरोधी हुआ होगा। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है। मानसिंह के गद्दी बैठने के पूर्व ही भीमसिंह की देरावरी राणी के गर्भ होने की बात प्रकट हो चुकी थी, जिसपर मानसिंह ने क़रार किया था कि देरावरी के उदर से पुत्र उत्पन्न होगा तो वही जोधपुर राज्य का स्वामी होगा और मैं जालोर चला जाऊंगा। राजपूत जाति के इतिहास में अपने स्वार्थों की हानि होने की अवस्था में इक़रार को तोड़ देने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। ऐसी अवस्था में भीमसिंह की राणियों का मानसिंह पर, जिसके साथ पहले से ही उनकी शत्रुता थी, विश्वास होना कठिन था। इस प्रकार संदेह के वशीभूत होकर वे चापासणी के गोस्वामी की शरण में चली गई और जब वहां से सरदारों के आग्रह से लौटीं तो जोधपुर के दुर्ग में न जाकर नगर के महलों में ठहरीं, जहां मानसिंह की तरफ़ से कड़ा प्रबंध कर दिया गया। फिर माघ वदि में देरावरी राणी के पुत्र उत्पन्न हुआ, जो मानसिंह-द्वारा मरवाये जाने के भय से गुप्त रूप से भाटी छत्रसिंह के

मानसिंह का सवाईसिंह के उत्तराधिकारी सालिमसिंह को गांव आदि देकर संतुष्ट करना

बिगाड़ करने लगा। तब सिंघवी जसवंतराय तथा पंचोली राधाकिशन ने राजकीय सेना के साथ जाकर उससे झगड़ा किया, जिसमें दोनों तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये और कई घायल हुए। अनन्तर सिंघवी इंद्रराज ने उसको लिखा कि अपनी भलाई चाहते हो तो पोकरण चले जाओ, नहीं तो वह ठिकाना हाथ से चला जायगा। इसपर वह पोकरण चला गया और हरियाडाणा के चांपावत बुधसिंह को जोधपुर भेज उसने रेखवाब, जमीयत के घोड़े आदि भेजने की आयस देवनाथ-द्वारा बातचीत तय की, जिसपर महाराजा ने मजल, दुनाड़ा तथा उधर के कुछ अन्य गांव भी उस(सालिमसिंह)के नाम लिख दिये[1]।

जोधपुर की सेना की बीकानेर पर चढ़ाई

बीकानेर का महाराजा, सवाईसिंह का पक्षपाती था, अतएव उससे बदला लेने के लिए वि० सं० १८६५ (ई० स० १८०८) में जोधपुर की तरफ़ से सिंघवी इन्द्रराज ने एक विशाल सेना[2] के साथ बीकानेर पर चढ़ाई की। उन्हीं दिनों सिंध, जैसलमेर, सीकर, चूरू आदि से भी अलग-अलग सेनाओं ने जाकर बीकानेर में जगह-जगह फ़साद करना शुरू कर

साथ खेतड़ी भेज दिया गया। सवाईसिंह के क्रमानुयायियों का तो कथन है कि सवाई-सिंह उस समय जोधपुर में न था और पोकरण में था। अनुमान होता है कि मानसिंह का अपने राज्याभिषेक के समय भीमसिंह का नाम चारणों की ओर से पढ़ी जानेवाली आशीष में से हटवाना, भीमसिंह के कृपापात्रों को पदों से हटाकर उन लोगों को, जिन्होंने भीमसिंह की आज्ञा से सावतसिंह, शेरसिंह आदि को मारा था, निर्दयता से मरवाना तथा भंडारी गंगाराम तथा सिंघवी इंद्रराज को, जिन्होंने उसे गद्दी पर बिठलाया था, क़ैद करवाना ही इस विरोध का मूल कारण हो सकता है।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ४४-५।

(२) दयालदास की ख्यात में इस सेना की संख्या ८० हज़ार दी है (जि० २, पत्र ११)। टॉड केवल बारह हज़ार सेना लिखता है (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१)।

दिया[1]। इस प्रकार बीकानेर चारों तरफ़ से शत्रुओं से घिर गया। के निकट शत्रु सेना के पहुंचने पर पुरोहित जवानजी तथा मेहता ज्ञानजी ने वीरता-पूर्वक उसका सामना कर उसे पीछे हटा दिया। जिस समय जोधपुर की सेना की बीकानेर पर चढ़ाई हुई उस समय सांडवे का ठाकुर जैतसिंह, साह अमरचंद, दूसर दुर्जनसिंह आदि सीमाप्रान्त के प्रबंध के लिए नियुक्त थे। उन्होंने शत्रु सेना का सामना कर उसे रोकने का प्रबंध किया। अंत में जोधपुर का बहुत सा माल-असबाब अपने क़ब्ज़े में कर जैतसिंह, अमरचंद आदि बीकानेर चले गये[2]। दो मास तक जोधपुर की सेना गजनेर में पड़ी रही और रोज़ छोटी-मोटी लड़ाइयां होती रहीं, परन्तु नगर पर उसका अधिकार न हो सका[3]।

जोधपुर और बीकानेर में संधि होना

जब दो मास बीत जाने पर भी सिंघवी इन्द्रराज बीकानेर पर अधिकार करने में सफल न हुआ तो लोढ़ा कल्याणमल ने मानसिंह से निवेदन किया कि इतने समय में भी इन्द्रराज ने बीकानेर पर अधिकार नहीं किया है, इससे ज्ञात पड़ता है कि वह बीकानेरवालों से मिल गया है। यदि मुझे आज्ञा दी जाय तो मैं जाकर बीकानेर पर अधिकार करने का प्रयत्न करूं। मानसिंह के मन में भी उसकी बात जम गई और उसने तत्काल उसे जाने की आज्ञा दे दी तथा अपने हाथ का पत्र देकर ४००० फ़ौज के साथ उसे बीकानेर पर भेजा। मार्ग में देशणोक पहुंचने पर उसने करणीजी के सम्मुख जाकर कहा कि सुना जाता है कि तुम बीकानेर राज्य

(१) "वीरविनोद" में भी इस अवसर पर दाऊदपुत्रों एवं जोहियों आदि का बीकानेर में उत्पात करना लिखा है (भाग २, पृ० ५०८), परन्तु जोधपुर राज्य की ख्यात अथवा टॉड के ग्रन्थ में इसका उल्लेख नहीं है।

(२) टॉड लिखता है कि बीकानेर का राजा सूरतसिंह [illegible] को गया, परन्तु बापरी के युद्ध में उसे हारकर भागना पड़ा (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१)।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ९९-१००।

की रक्षा करनेवाली हो; मैं बीकानेर खाली करा लूंगा, तुमसे जो हो सके सो कर लेना। जब उसके आने की सूचना इन्द्रराज को मिली तो उसने इस आशय का एक पत्र महाराजा सूरतसिंह के पास भेजा—

"मेरे लिए मानसिंह और आप समान हैं। आपने जो जोधपुर में संधिवार्ता के समय मेरे प्राणों की रक्षा की थी, वह उपकार मैं भूला नहीं हूं। अब लोढ़ा (कल्याणमल) मेरी शिकायत कर बीकानेर पर अधिकार करने की प्रतिज्ञा कर आया है। उसे सज़ा देनी चाहिये।"

उपर्युक्त पत्र पाने पर महाराजा सूरतसिंह ने बीकावतों, बीदावतों, कांधलोतों, भाटियों, मंडलावतों तथा रूपावतों में से चुने-चुने वीरों के साथ सुराणा अमरचन्द को चार हज़ार सवार देकर कल्याणमल के विरुद्ध भेजा। उधर कल्याणमल ने गजनेर-स्थित जोधपुर की सेना को शीघ्र आने के लिए लिखा, परन्तु फ़ौज के सैनिकों ने यह विचार किया कि लड़ाई तो हम लड़ेंगे और सारा श्रेय लोढ़ा को मिलेगा, इसलिए उन्होंने ऊपर से तत्परता तो बहुत दिखलाई, परन्तु कूच न किया। तब लोढ़ा कल्याणमल स्वयं गजनेर गया। उसी समय सुराणा अमरचन्द भी सेना-सहित जा पहुंचा। दोनों फ़ौजों का सामना होने पर मारवाड़ के बहुत से सरदार काम आये तथा कल्याणमल अपनी सेना-सहित भाग गया। अमरचन्द ने उसका पीछा कर एक कोस की दूरी पर उसे जा पकड़ा और युद्ध करने पर बाध्य किया। थोड़ी देर की लड़ाई में ही अमरचन्द ने उसे बन्दी कर लिया। उसका सारा सामान लूट लिया गया तथा डड्डा शार्दूलसिंह और सुलतानसिंह का भी दो लाख रुपये का माल बीकानेरवालों के हाथ लगा। बाद में लोढ़ा कल्याणमल को महाराजा सूरतसिंह ने मुक्त कर दिया, जो अपमानित होकर लौट गया। यह समाचार मानसिंह को मिलने पर उसने इस कार्य पर पुनः इन्द्रराज को ही नियुक्त कर दिया। अनन्तर महाराजा सूरतसिंह ने भविष्य के कार्यक्रम के सम्बन्ध में अपने सरदारों से सलाह की। उन दिनों भूकरका का ठाकुर अभयसिंह क़ैद में था और वहां का अधिकार उसके पुत्र प्रतापसिंह के हाथ में था। उसने कहा कि मैं बीस हज़ार

की रक्षा करनेवाली हो; मैं बीकानेर खाली करा लूंगा, तुमसे जो हो सके सो कर लेना। जब उसके आने की सूचना इन्द्रराज को मिली तो उसने इस आशय का एक पत्र महाराजा सूरतसिंह के पास भेजा—

"मेरे लिए मानसिंह और आप समान हैं। आपने जो जोधपुर में संधिवार्ता के समय मेरे प्राणों की रक्षा की थी, वह उपकार मैं भूला नहीं हूं। अब लोढ़ा (कल्याणमल) मेरी शिकायत कर बीकानेर पर अधिकार करने की प्रतिज्ञा कर आया है। उसे सज़ा देनी चाहिये।"

उपर्युक्त पत्र पाने पर महाराजा सूरतसिंह ने बीकावतों, बीदावतों, कांधलोतों, भाटियों, मंडलावतों तथा रूपावतों में से चुने-चुने वीरों के साथ सुराणा अमरचन्द को चार हज़ार सवार देकर कल्याणमल के विरुद्ध भेजा। उधर कल्याणमल ने गजनेर-स्थित जोधपुर की सेना को शीघ्र आने के लिए लिखा; परन्तु फौज के सैनिकों ने यह विचार किया कि लड़ाई तो हम लड़ेंगे और सारा श्रेय लोढ़ा को मिलेगा, इसलिए उन्होंने ऊपर से तत्परता तो बहुत दिखलाई, परन्तु कूच न किया। तब लोढ़ा कल्याणमल स्वयं गजनेर गया। उसी समय सुराणा अमरचन्द भी सेना-सहित जा पहुंचा। दोनों फ़ौजों का सामना होने पर मारवाड़ के बहुत से सरदार काम आये तथा कल्याणमल अपनी सेना-सहित भाग गया। अमरचन्द ने उसका पीछा कर एक कोस की दूरी पर उसे जा पकड़ा और युद्ध करने पर बाध्य किया। थोड़ी देर की लड़ाई में ही अमरचन्द ने उसे बन्दी कर लिया। उसका सारा सामान लूट लिया गया तथा ढड्ढा शार्दूलसिंह और सुलतानसिंह का भी दो लाख रुपये का माल बीकानेरवालों के हाथ लगा। बाद में लोढ़ा कल्याणमल को महाराजा सूरतसिंह ने मुक्त कर दिया, जो अपमानित होकर लौट गया। यह समाचार मानसिंह को मिलने पर उसने इस कार्य पर पुनः इन्द्रराज को ही नियुक्त कर दिया। अनन्तर महाराजा सूरतसिंह ने भविष्य के कार्यक्रम के सम्बन्ध में अपने सरदारों से सलाह की। उन दिनों भूकरका का ठाकुर अभयसिंह कैद में था और वहां का अधिकार उसके पुत्र प्रतापसिंह के हाथ में था। उसने कहा कि मैं बीस हज़ार

भाटियों एवं जोहियों को सहायतार्थ ला सकता हूं। वाय के ठाकुर प्रेमसिंह ने इसके विरुद्ध राय दी। उसने कहा कि भाटियों के देश में आने से राज्य खतरे में पड़ जायगा। सूरतसिंह को भी उसकी बात पसन्द आई, अतएव उसने जोधपुर के सरदारों के साथ मेल के लिए बात-चीत की। फलोधी तथा सिंध के जीते हुए छः गढ़ और तीन लाख रुपये फ़ौज खर्च देने की शर्त पर परस्पर सन्धि हो गई। उपर्युक्त स्थानों से बीकानेरी सेना के वापस आ जाने पर तथा रुपयों के ओल में कई प्रतिष्ठित सरदारों को साथ ले जोधपुर की सेना वापस लौट गई। पीछे से सुराणा अमरचन्द रुपया भरकर ओल में सौंपे हुए व्यक्तियों को पीछा ले गया[1]।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १००-१। पाउलेट, गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट, पृ० ७६।

जोधपुर राज्य की ख्यात का कथन है कि वि० सं० १८६४ (ई० स० १८०७) में महाराजा मानसिंह ने सिंघवी इन्द्रराज के साथ बीकानेर पर सेना भेजी। उसमें कर्मचारियों में मेहता सूरजमल गया था। सरदारों में चांपावत ठाकुर बख़्तावरसिंह (आउवा), इन्द्रसिंह (रोयट), कूंपावत ठाकुर केसरीसिंह (आसोप), विशनसिंह (चंडावल), ऊदावत ठाकुर सुरताणसिंह (नींबाज), भानसिंह (लांबिया), अमरसिंह (धीणिया), मेड़तिया ठाकुर बिड़दसिंह (रीयां), शिवसिंह (बलूंदा), भाटी जसवंतसिंह (लेजाबला) तथा ईडवा, चांदारूण, नोखा एवं नींबड़ी के मेड़तिया, भाद्राजूण के जोधा और जालोर की तरफ़ के छोटे-बड़े कई सरदार इस सेना में थे, जिसकी संख्या दस हज़ार हो गई थी। उनके अतिरिक्त वैतनिक सेना के लगभग दस हज़ार आदमी थे और कुल सैन्य-संख्या बीस हज़ार तक जा पहुंची थी। बीकानेर की सीमा में जोधपुर की सेना के प्रवेश करने पर वहां के मुसाहिब और सरदारों ने सात हज़ार सैनिकों के साथ ऊदासर में जोधपुर की सेना का मुक़ाबला किया। दुतरफ़ी तोपख़ानों की लड़ाई हुई। बीकानेरवालों की तोपों का गोला जोधपुर के सरदार हणवंतसिंह (ईडवा) के लगा, जिससे वह मर गया। छापरी का चांदावत पहाड़सिंह भी इसी युद्ध में काम आया और भाद्राजूण के सैनिकों में से ऊदजी ऊदावत की आंख में गोली लगी। युद्ध का परिणाम बीकानेर के विरुद्ध में रहा। बीकानेरवालों ने जोधपुर राज्य की सेना का आगमन होने के पूर्व ही मार्ग में पड़नेवाले कुओं और नाडियों में गधे तथा ऊंट मरवाकर डलवा दिये थे। इसलिए

कृष्णकुमारी का विष पीकर मरना

बनी रहेगी, अतएव उसे भी हो उसे मरवा डालना ही ठीक है। महाराजा को भी उसकी बात पसंद आई और उसने उसे ही यह कार्य करने के लिए नियुक्त किया। अमीरखां ने उदयपुर जाकर अजीतसिंह चूंडावत के द्वारा, जो उसकी सेना में महाराणा की तरफ से वकील था, महाराणा से कहलाया—"या तो आप अपनी कन्या का विवाह महाराजा मानसिंह के साथ कर दें या उसे मरवा डालें, नहीं तो मैं आपके देश को बरबाद कर दूंगा।" मेवाड़ की दशा उस समय बड़ी निर्बल हो रही थी, जिससे उसे लाचार होकर अमीरखां की बात पर ध्यान देना पड़ा। उसने जवानदास (महाराणा अरिसिंह द्वितीय का पासवानिया पुत्र) को राजकुंवरी को मार डालने के लिए भेजा। जनानखाने के भीतर जाकर जब उसने राजकुमारी को देखा तो उससे यह कार्य न हो सका। अन्त में सारी बातें ज्ञात होने पर राजकुमारी स्वयं प्रसन्नतापूर्वक विष का प्याला पी गई। इस प्रकार वि० सं० १८६७ श्रावण वदि ५ (ई० स० १८१० ता० २१ जुलाई) को कृष्णकुमारी के जीवन का अंत हो गया[1]।

(१) वीरविनोद, भाग २, पृ० १७३८-९। टॉड, राजस्थान, जि० १, पृ० ५३९-४१।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि जयपुर की बात स्थिर हो जाने के पीछे अमीरखां मेवाड़ गया। जोधपुर से उसके साथ पृथ्वीराज भंडारी और अनोपराम पचोली वकील के रूप में गये। अमीरखां मेवाड़ के गावों को नष्ट-भ्रष्ट करता हुआ उदयपुर के समीप जा पहुंचा। इसपर महाराणा ने अपने कर्मचारियों को अमीरखां आदि के पास भेजकर कहलाया कि मेरा मुल्क क्यों बरबाद करते हो? अमीरखां ने उत्तर दिया कि कृष्णाकुमारी मानसिंह से विवाह दी जावे। पृथ्वीराज और अनोपराम ने उत्तर दिया कि राणाजी की तरफ से मानसिंह के नाम खरीता भेजा जावे, उसकी जैसी इच्छा हो, वैसा करेंगे। इसपर मानसिंह के नाम खरीता भेजा गया। मानसिंह ने अमीरखां को लिखा कि भीमसिंह के साथ सगाई की हुई कन्या को मैं नहीं ब्याह सकता, तुम्हें जैसा ध्यान में आवे करो। यह समाचार अमीरखां ने उदयपुरवालों को सुनाया, तब उन्होंने विचार किया कि राजकुमारी के रहते फिर किसी दिन बखेड़ा हो

वि० सं० १८६७-८ (ई० स० १८१०-११) में जोधपुर राज्य में अकाल सा ही रहा, परन्तु वि० सं० १८६९ (ई० स० १८१२) में जोधपुर में वर्षा का पूर्ण अभाव हो जाने से अकाल की भयंकरता बहुत बढ़ गई और अनाज तीन सेर तक महंगा बिका[1]।

जोधपुर राज्य में भयंकर अकाल पड़ना

महाराजा मानसिंह सिरोही राज्य को अपने राज्य में मिलाना चाहता था। इस दृष्टि से उसने वि० सं० १८६९ (ई० स० १८१२) में अपनी फ़ौज सिरोही पर भेजी। वह सेना सिरोही तथा अन्य कई इलाक़ों को लूटने के बाद जोधपुर लौट गई[2]।

सिरोही पर सेना भेजना

उसी वर्ष जयपुर के महाराजा का ख़ास रुक़्क़ा पहुंचने पर जोधपुर से सिंघवी इन्द्रराज और भंडारी शिवचंद जयपुर गये। इस अवसर पर आसोप का ठाकुर केसरीसिंह, आउवा का ठाकुर बख़्तावरसिंह तथा नींबाज का ठाकुर सुरतानसिंह और जोशी श्रीकिशन उनके साथ गये। वैशाख मास से लगाकर भाद्रपद मास तक वे वहां रहे। पहले के निश्चय के अनुसार जयपुर के महाराजा जगतसिंह की बहिन का विवाह मानसिंह के साथ और मानसिंह की कुंवरी का विवाह जगतसिंह के साथ होने के विषय में परस्पर सलाह होकर वि० सं० १८७० भाद्रपद सुदि ८ और ९ (ई० स०

जयपुर में महाराजा का विवाह होना

सकता है, इसलिए राजकुमारी को विष देकर मार डाला (जि० ४, पृ० ८८)।

कृष्णकुमारी के सम्बन्ध के झगड़ों को हम महाराजा मानसिंह की अविवेकता का ही परिणाम कहेंगे। मंगनी की हुई कन्या का भावी वर यदि विवाह के पूर्व ही मर जाय तो वह कन्या कुंवारी ही मानी जाती है और उसका विवाह उसके पिता माता की इच्छानुसार कहीं भी हो सकता है। यह सर्वमान्य और स्वाभाविक नियम है। ऐसी दशा में मानसिंह का तत्सम्बन्धी दावा किसी तरह उचित नहीं कहा जा सकता।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८९।

(२) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २६१।

१८६३ ता० ३ और ४ सितंबर) को क्रमशः मानसिंह का विवाह जयपुर राज्य की सीमा पर के मरवा गांव तथा जगतसिंह का विवाह किशनगढ़ के रूपनगर कस्बे में होना निश्चय हुआ। तदनन्तर महाराजा मानसिंह नागोर पहुंच महाराजा सूरतसिंह से मिला और वहां से रूपनगर गया। वहां उसकी बरात में किशनगढ़ का महाराजा कल्याणसिंह और मसूदे का ठाकुर देवीसिंह आदि भी शरीक हुए। अनन्तर पहले दिन महाराजा मानसिंह का मरवा गांव और दूसरे दिन महाराजा जगतसिंह का रूपनगर में बड़ी धूमधाम से विवाह हुआ। इस अवसर पर जयपुर के महाराजा के आश्रित हिंदी भाषा के प्रसिद्ध कवि पद्माकर और जोधपुर के कविराजा बांकीदास के बीच काव्यचर्चाएं भी हुईं[1]।

सिरोही के महाराव से धन वसूल करना

वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में सिरोही का महाराव उदयभाण अपने छोटे भाई शिवसिंह, राज्य के कुछ अहलकारों एवं सिपाहियों के साथ सोरों की यात्रा को गया। वहां से लौटते समय वह कुछ दिनों के लिए पाली में ठहरा, जहां नाच रंग, जिसका उसे बहुत शौक़ था, होने लगा। महाराजा मानसिंह सिरोही राज्य का कट्टर शत्रु था। पाली के हाकिम ने अपनी खैरख्वाही जतलाने के लिए महाराव के वहां ठहरने का हाल गुप्त रीति से महाराजा के पास भिजवा दिया। इसपर इसने तत्काल कुछ फौज रवाना कर दी। उस सेना ने उस स्थान को, जहां महाराव ठहरा हुआ था, घेर लिया और महाराव के कुल साथियों सहित उसको गिरफ़्तार कर जोधपुर भिजवा दिया। महाराजा ने तीन मास तक उसे अपने यहां रक्खा और गुप्त रीति से उससे जोधपुर की अधीनता स्वीकार करने के संबंध में एक तहरीर लिखवा ली। अनन्तर एक लाख पचीस हज़ार रुपये देने की शर्त पर महाराजा ने सदा के व्यवहार के अनुसार उससे मुलाकात की, जिसके बाद महाराव अपने साथियों-सहित सिरोही

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ६७-८।

चला गया[1]।

उमरकोट पर जोधपुर राज्य का क़ब्ज़ा स्थापित होने का उल्लेख ऊपर आ गया है[2]। जोधपुर राज्य में वि० सं० १८६९ (ई० स० १८१२) में भीषण अकाल हो जाने से उमरकोट के प्रबंध के लिए धन न भेजा जा सका और वहां की व्यवस्था में शीथिलता आ गई। इसका पता पाते ही टालपुरियों ने सेना एकत्र कर उमरकोट पर आक्रमण कर दिया। उस समय वहां का हाकिम भंडारी शिवचंद शोभाचंदोत था और कर्मचारी मोदी अजबनाथ। जोधपुर की सेना टालपुरियों का मुकाबला न कर सकी और वहां उनका पुनः अधिकार स्थापित हो गया[3]।

उमरकोट पर पुनः टालपुरियों का अधिकार होना

श्रावणादि वि० सं० १८७१ (चैत्रादि १८७२ = ई० स० १८१५) के वैशाख (मई) मास में नवाब मुहम्मदशाह[4] की फ़ौज रुपया वसूल करने के लिए जोधपुर गई और मेड़ते में ठहरी। उसने मेड़ते का बड़ा बिगाड़ किया, जिसपर वहां के हाकिम पंचोली गोपालदास का चाचा अभयमल, जो उस समय वहां था, भागकर जोधपुर चला गया। अनन्तर मुसलमान सेना जोधपुर की तरफ़ गई। तब सिंघवी इन्द्रराज ने तीन लाख रुपया देने का इक़रार कर उसे वापस लौटाया[5]।

नवाब की सेना का जोधपुर जाना

उसी वर्ष भाद्रपद (सितंबर) मास में अमीरखां भी जोधपुर पहुंचा।

---

(१) मेरा, सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २७९-८०।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है, परन्तु उसमें ५०-६० हज़ार रुपयों का रुक्का लिखा जाना दिया है। उसके अनुसार जोधपुर की फ़ौज के अध्यक्ष छुटेखां और कलन्दरखां नामक परदेशी थे (जि० ४, पृ० ९९)।

(२) देखो ऊपर पृ० ७२८-२९।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ३, पृ० ११८।

(४) संभवतः यह अमीरखां का पुत्र रहा हो, जो नवाब मुहम्मदशाह के नाम से प्रसिद्ध था।

(५) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १०-१।

को देना तय हुआ, जिसमें से आधा मेहता अखैचंद और आधा सेठ राजाराम तथा जोशी श्रीकृष्ण ने देना स्वीकार कर उसका प्रबंध कर दिया। तब वहां से रुपये लेकर अमीरखां ने प्रस्थान किया[1]। आयस देवनाथ और इन्द्रराज के मारे जाने का महाराजा को इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-कार्य करना और बाहर आना-जाना तक छोड़ दिया[2]।

सिंघवी गुलराज का दीवान बनाया जाना

अनन्तर आसोप के ठाकुर केसरीसिंह, नींवाज के ठाकुर सुरताणसिंह, आउवा के ठाकुर बख़्तावरसिंह, चंडावल के ठाकुर बिशनसिंह, कंटालिया के ठाकुर शंभूसिंह आदि की सलाह से राज्यकार्य-संचालन का भार मेहता अखैचंद को सौंपा गया एवं बख़्शीगीरी का कार्य भंडारी चतुर्भुज करता रहा। वे जो कुछ करते, महाराजा को उसका ज्ञान तो रहता, पर वह मुख से कुछ भी न कहता। सिंघवी गुलराज उस समय सोजत की तरफ़ था। वह यह खबर पाकर गांव कोट के ढाणा नामक स्थान में चला गया। वहां से उसने महाराजा के पास अर्ज़ी लिखी कि यह कार्य यदि आप की इच्छा के विरुद्ध हुआ हो तो मुझको आज्ञा दी जावे कि मैं दुश्मनों से बदला लूं। महाराजा ने इस विषय में गुलराज से गुप्तरूप से अपनी सहमति प्रकट की। तब उसने दो हज़ार आदमियों के साथ जोधपुर में प्रवेश किया और माघ सुदि ३ (ई० स० १८१६ ता० १ फरवरी) को वह राई का बाग़ में ठहरा। इसपर बख़्तावरसिंह, सुरताणसिंह, केसरीसिंह, बिशनसिंह, शंभुसिंह आदि तथा भंडारी चतुर्भुज अपनी-अपनी हवेलियों से निकलकर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ७०-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६५। टॉड, राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१।

(२) टॉड लिखता है कि महाराजा को लोगों की तरफ़ से इतना सन्देह हो गया था कि वह केवल अपनी राणी के हाथ का बनाया हुआ भोजन ही खाता था। उसने सब कार्य करना छोड़ दिया था। लोगों ने उसे बहुत समझाया, परन्तु व्यर्थ। वह ईश्वर-प्रार्थना और देवनाथ की मृत्यु पर शोक करने के अतिरिक्त और कुछ न करता (था राजस्थान; जि० २, पृ० ८२६)।

चांदपोल पहुंचे और वहां से अखयराज के तालाब से होते हुए चोपासणी (चांपासणी) चले गये। अखयचंद गढ़ में आत्माराम की समाधि में जा छिपा। दूसरे दिन गुलराज गढ़ पर गया तब दीवानगी की मोहर और बख्शीगीरी का कार्य गुलराज को सौंपा गया। उपर्युक्त आसोप, नींबाज, आउवा आदि के सरदार चोपासणी से चंडावल गये। महाराजा की आज्ञानुसार सिंघवी चैनकरण उनके पीछे चंडावल गया, जिसके दबाव डालने पर वे (सरदार) अपनी-अपनी जागीरों में चले गये[1]।

जोधपुर की सेना का सिरोही इलाके में लूट-मार करना

सिरोही के महाराव के क़ैद किये जाने और उसके सवा लाख रुपये देने का शर्तनामा लिख देने का उल्लेख ऊपर आ गया है[2]। महाराव ने शर्तनामा तो लिख दिया था, परन्तु उसकी दिली मंशा रुपया चुकाने की न थी। इसीसे जब कुछ समय बाद जोधपुर की तरफ़ से रुपयों की मांग की गई तो सिरोही के मुसाहिबों ने उसपर कोई ध्यान न दिया। फलतः वि० सं० १८७२ (ई० स० १८१६) में महाराजा मानसिंह ने मेहता साहबचंद की अध्यक्षता में सिरोही पर सेना भेजी, जो भीतरोट परगने को लूट और दूसरे कई ठिकानों से रुपये वसूलकर जोधपुर लौटी[3]।

महाराजा मानसिंह का अपने कुंवर छत्रसिंह को राज्याधिकार देना

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि महाराजा को आयस देवनाथ और सिंघवी इन्द्रराज के मारे जाने का इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-कार्य से हाथ खींच लिया, तो भी सिंघवी फतहराज और गुलराज निराश न हुए और राज्य-कार्य पूर्ववत् चलाते रहे। उस समय आत्माराम की समाधि की शरण में रहते हुए मेहता अखैचंद ने महामन्दिर के कार्य-कर्ता मेहता उत्तमचंद को अपनी तरफ़ मिलाकर आयस देवनाथ के भाई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ७३-४। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८६५-६।

(२) देखो ऊपर पृ० ८१२।

(३) मेरा, सिरोही राज्य का इतिहास, पृ० २८०।

भीमनाथ, कुंवर छत्रसिंह और उसकी माता को अपने पक्ष में कर लिया। उनके सिवाय उसने कई प्रमुख राजकर्मचारियों को भी अपने पक्ष में किया। अनन्तर भीमनाथ और उत्तमचंद गढ़ में गये। भीमनाथ ने महाराजा से कहा कि आप तो उदासीन रहते हैं, हमारी रक्षा कौन करेगा, अतएव अच्छा हो कि आप राज्य-कार्य अपने पुत्र छत्रसिंह को सौंप दें। महाराजा इसके विरुद्ध था, पर उसने उस समय सम्मति-सूचक उत्तर दे दिया। फिर श्रावणादि वि० सं० १८७३ (चैत्रादि १८७४) वैशाख वदि ३ (ई० स० १८१७ ता० ४ अप्रेल) को जब गुलराज महाराजा से मुलाकात करने के लिए क़िले पर गया तो अखैचंद के इशारे पर उसके आदमियों ने, जिन्होंने पहले से ही सारा प्रबंध कर रक्खा था, उस-(गुलराज)को महाराजा के पास से लौटते समय क़ैद कर लिया और रात्रि के समय मार डाला। फतहराज को यह समाचार मिलने पर जब वह किले पर जाने के लिए तैयार हुआ तो अमीरखां के आदमियों ने खर्च मांगने के बहाने उसको वहीं अटका दिया। मेड़ता के हाकिम पंडित गोपालदास ने पांच हज़ार रुपया देना ठहराकर जब उसको छुड़ाया तब वह अपने परिवार-सहित कुचामण चला गया। उधर इस घटना के तीसरे दिन अखैचंद के बुलाने पर भीमनाथ गढ़ पर गया। महाराजा ने यह देखकर कि विरोध करने का समय अब नहीं रहा, छत्रसिंह को युवराज का पद देना स्वीकार कर लिया और वैशाख सुदि २ (ता० १६ अप्रेल) को अपने हाथ से उसके तिलक कर दिया[1]।

इसके दूसरे दिन बड़े समारोह के साथ छत्रसिंह को राज्याधिकार मिलने का उत्सव मनाया गया। सारा नगर सजाया गया और पूरे लवाज़मे के साथ छत्रसिंह की सवारी निकाली गई। भीमनाथ के कहने का सारा कार्य [illegible] के सुपुर्द [illegible] ने किया। अखैचंद [illegible] का

[illegible]

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७४-८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२२। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ८४८।

अंग्रेज़ सरकार के साथ संधि होना

को अपने संरक्षण में लेने की ईस्ट इंडिया कम्पनी और उसकी तरफ़ से भारत में रहनेवाले गवर्नर जेनरल लॉर्ड हेस्टिंग्ज़ ने नीति स्वीकार कर ली थी। तदनुसार जोधपुर राज्य की तरफ से भी ईस्ट इंडिया कम्पनी के साथ संधि की बात चलाई गई। उसके तय होते ही निम्नलिखित दस शर्तों का एक सन्धिपत्र लिखा गया[1]—

अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी की ओर से श्रीमान् गवर्नर जेनरल हेस्टिंग्स-द्वारा दिये हुए पूरे अधिकारों के अनुसार मि० चार्ल्स थियाफ़िलास मेटकाफ़ के द्वारा तथा जोधपुर राज्य के महाराजा मानसिंह बहादुर-द्वारा अधिकार प्राप्त युवराज महाराजकुमार छत्रसिंह बहादुर, व्यास विशनराम एवं व्यास अभयराम-द्वारा किया हुआ अहदनामा।

शर्त पहली—ईस्ट इंडिया कम्पनी और महाराजा मानसिंह तथा उसके वंशजों के बीच मैत्री, सहकारिता तथा स्वार्थ की एकता सदा पुश्त दर पुश्त क़ायम रहेगी और एक के मित्र तथा शत्रु दोनों के मित्र एवं शत्रु होंगे।

शर्त दूसरी—अंग्रेज़ सरकार जोधपुर राज्य और मुल्क की रक्षा करने का ज़िम्मा लेती है।

शर्त तीसरी—महाराजा मानसिंह तथा उसके उत्तराधिकारी अंग्रेज़ सरकार का बड़प्पन स्वीकार करते हुए उसके अधीन रहकर उसका साथ देंगे और दूसरे राजाओं अथवा रियासतों से किसी प्रकार का संबंध न रक्खेंगे।

---

(१) एचिसन, ट्रीटीज़, एंगेजमेंट्स एण्ड सनद्ज़; जि० ३, पृ० १२८-३०। जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० ४, पृ० ८२-४) तथा वीरविनोद (भाग २, पृ० ८८८-९१) में इस अहदनामे का अनुवाद छपा है।

इसके पूर्व वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में भी एक अहदनामा तैयार हुआ था, परन्तु महाराजा के अस्वीकार करने के कारण वह रद्द कर दिया गया (देखो ऊपर पृ० ७७९-८०)।

की तारीख़ से छः सप्ताह के भीतर एक दूसरे को सौंप देंगे।

दिल्ली ता० ६ जनवरी ई० स० १८१८ (पौष वदि अमावास्या वि० सं० १८७४)।

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ़.

,, व्यास विशनराम

,, व्यास अभयराम

,, युवराज महाराजकुमार छत्रसिंह बहादुर.

,, महाराजा मानसिंह बहादुर.

,, हेस्टिंग्स

ता० १६ जनवरी ई० स० १८१८ (पौष सुदि १० वि० सं० १८७४) को ऊचार में श्रीमान् गवर्नर जेनरल ने इसकी तसदीक़ की।

(हस्ताक्षर) जे० एडम.

गवर्नर जेनरल का सेक्रेटरी.

खिराज सम्बन्धी इक़रारनामा

अजमेर के रुपये	१८००००)
बाद २० प्रतिशत के हिसाब से	३६०००)
जोधपुरी रुपये	१४४०००)
इसमें से आधा नकद	७२०००)
आधे का माल	७२०००)
जोड़	१४४०००)
नुक़सानी	३६०००)
जोधपुरी रुपये	१०८०००)

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ़.

(मुहर) वकील.

(हस्ताक्षर) जे० एडम.

गवर्नर जेनरल का सेक्रेटरी[1].

जोधपुर की सेना के सिरोही इलाके में लूट-मार करने से तंग आकर वहां के महाराव और उसके मुसाहिबों ने जोधपुर इलाके में लूट-मार करने का निश्चय किया। तदनुसार गुसांई रामदत्तपुरी और बोड़ा प्रेमा ने ससैन्य जाकर जालोर के काकुंदरा, बागरा, आकोली, धानपुरा, तातोली, सांड, नून, मांक, देलाद्री, बीलपुर, बुडतरा, सबरसा, सिपरवाड़ा, माडोली और भूतवा गांवों को लूटा और वहां से ३८५६ रुपये फौजबाब (खर्च) के वसूल किये। इसी तरह उन्होंने गोड़वाड़ इलाके के कानपुरा, पालड़ी, कोरटा, सलोद्रिया, ऊंदरी, धनापुरा, पोमावा और शानपुरा गावों को लूटा और वहां से १७८८ रुपये १४ आने फौजबाब के लिये। जब इस लूट की खबर जोधपुर पहुंची तो सिरोही को बरबाद करने के लिए वहां से मेहता साहबचंद एक बड़ी सेना के साथ भेजा गया। इस फौज ने सिरोही पहुंचकर वि० सं० १८७४ माघ वदि ८ (ई० स० १८१८ ता० २६ जनवरी) को सिरोही शहर

जोधपुर की सेना का सिरोही में लूट-मार करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस संधि के साथ साथ जोधपुर की तरफ से और भी कई विषयों पर अंग्रेज़ सरकार से लिखा पढ़ी हुई थी, जिनमें गोड़वाड़ और उमरकोट के सम्बन्ध के दावे उल्लेखनीय हैं। गोड़वाड़ के सम्बन्ध में जोधपुर की तरफ से कहा गया कि यह इलाका महाराणा अरिसिंह ने महाराजा विजयसिंह को सेना रखने के एवज़ में दिया था और इसको छत्रसिंह तक चार पीढ़ी हो गई है, अतएव महाराणा की तरफ से यदि इसके बारे में दावा किया जाय तो अंग्रेज़ सरकार उसकी सुनाई नहीं करेगी। इसके जवाब में अंग्रेज़ सरकार ने कहा कि जो मुल्क पीढ़ी-दर-पीढ़ी जोधपुर के क़ब्ज़े में है, वह उसी राज्य का समझा जायगा। उमरकोट के बारे में जोधपुर की तरफ से कहा गया कि यह इलाक़ा तीन साल हुए नौकरों की नमकहरामी की वजह से टालपुरियों के क़ब्ज़े में चला गया है, यदि वहां महाराजा अपनी सेना भेजे तो अंग्रेज़ सरकार किसी प्रकार का उज्र न करे। इसके उत्तर में अंग्रेज़ सरकार ने कहा कि यदि महाराजा अपनी तरफ से फ़ौज भेजेंगे तो अंग्रेज़ सरकार को कोई उज्र न होगा (जि० ४, पृ० ८४-५)।

पर आक्रमण कर दिया। महाराव ने इसपर शहर छोड़कर पहाड़ों में शरण ली। जोधपुर की सेना ने दस दिन तक शहर को लूटा और वहां से ढाई लाख रुपये का सामान लेकर वह लौटी। इसी सेना ने सिरोही राज्य का दफ़्तर भी जला दिया, जिससे वहां के सब पुराने पत्र आदि नष्ट हो गये। इस प्रकार मुल्क को बरबाद होता देखकर महाराव ने इधर-उधर से रुपया वसूल करना शुरू किया। इससे वहां और अव्यवस्था फैली। मीनों आदि के उपद्रव से पहले ही सिरोही निवासी तंग हो रहे थे, अब यह नई विपत्ति खड़ी हुई। ऐसी परिस्थिति देख सब सरदार महाराव उदयभाण के भाई शिवसिंह के पास गये और उन्होंने उससे राज्य के प्रबंध के विषय में बातचीत की। शिवसिंह ने उन्हें आश्वासन देकर विदा किया और स्वयं सिरोही आकर महाराव (उदयभाण) को नज़रबन्द कर उसने राज्य-कार्य अपने हाथ में ले लिया। महाराजा मानसिंह ने महाराव को छुड़ाने के लिए अपनी सेना रवाना की, परन्तु उसे सफलता न मिली[1]।

महाराजकुमार छत्रसिंह की मृत्यु

अंग्रेज़ सरकार के साथ संधि स्थापित होने के बाद अधिक दिनों तक कुंवर छत्रसिंह जीवित न रहा और उपदंश रोग से वि० सं० १८७४ चैत्र वदि ४ (ई० स० १८१८ ता० २६ मार्च) को उसका देहांत हो गया। प्रथम दिन तो यह खबर छिपाई गई और यह प्रयत्न किया गया कि छत्रसिंह की शक्ल-सूरत का कोई व्यक्ति मिल जाय तो उसे ही राजा बना दें, पर यह युक्ति न चलने पर अगले दिन उसकी उत्तर क्रिया की गई। महाराजा को यह समाचार मिलने पर उसको रंज तो बहुत हुआ, परन्तु उसने ऊपर से अपना भाव पूर्ववत् रक्खा[2]।

---

(१) मेरा, सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २८०-१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ८९-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६। टॉड; राजस्थान, जि० २, पृ० १०६१। टॉड लिखता है कि छत्रसिंह की मृत्यु के कई कारण कहे जाते हैं। कुछ का कहना है कि वह बहुत दुराचारी था, जिससे शीघ्र ही शारीरिक शक्ति क्षीण हो जाने के कारण वह मर गया और कुछ का

तदनन्तर सरदारों ने यह प्रकट किया कि छत्रसिंह की चौ० राणी के गर्भ है, पर थोड़े समय बाद ही जब उसका भी देहांत हो गया तो उन्होंने ईडर से गोद लाने का विचार किया। इस संबंध में महाराजा से निवेदन किये जाने पर उसने उसपर कोई ध्यान नहीं दिया। अन्य लोगों ने भी परिस्थिति की गम्भीरता बतलाकर उसे बाहर आकर कार्य संभालने के लिए कहा, परन्तु उसे किसी व्यक्ति पर भी भरोसा न था, जिससे वह मौन ही साधे रहा। यह खबर जब दिल्ली पहुंची तो वहां के अंग्रेज़ अफ़सरों की तरफ़ से मुंशी बरकतअली[1] महाराजा से मिलने के लिए भेजा गया। आश्विन मास में बरकतअली जोधपुर पहुंचा। मुसाहब, कार्यकर्ता आदि उसे साथ लेकर महाराजा के पास गये, पर उस दिन महाराजा कुछ भी न बोला। दूसरे दिन जब बरकतअली अकेला महाराजा के पास गया तो उसने उससे कहा कि सरदारों की मनमानी और मुझे मारने के षड्यंत्र से घबराकर ही मैंने यह हालत बना रक्खी है। यदि अंग्रेज़ सरकार मेरी सहायता करे तो मैं राज्य-प्रबंध हाथ में लेने को प्रस्तुत हूं। इसपर बरकतअली ने उसकी पूरी-पूरी दिलजमई कर उससे कहा कि आप प्रसन्नता से राज्य करें और बदमाशों को सज़ा दें। यहां सरकारी खबर-नवीस रहा करेगा, आपको जो भी कहना हो उससे कहें। अनंतर सरकार में भी रिपोर्ट होकर वहां से इस संबंध में खरीता आ गया। तबतक राज्य-कार्य पूर्ववत् होता रहा। इस बीच सरदारों ने पोकरण के कार्यकर्ता बुद्धसिंह को महाराजा के पास भेजकर यह जानना

महाराजा से मिलने के लिए अंग्रेज सरकार का एक अधिकारी भेजना

कहना है कि एक राजपूत ने, जिसकी पुत्री का उसने सतीत्वहरण करने का प्रयत्न किया था, उसे मार डाला (राजस्थान, भाग २, पृ० ८२६-३०)।

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में मुन्शी बरकतअली का नाम नहीं है। उसमें मि० वाइल्डर नाम दिया है (जि० २, पृ० १०६३ टि० २)। संभव है दोनों को ही अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा मानसिंह के पास भेजा हो। उसी पुस्तक से पाया जाता है कि उस समय अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा को सैनिक सहायता देनी चाही थी, परन्तु उसने अस्वीकार कर दिया।

चाहा कि महाराजा की वास्तविक दशा ही वैसी है अथवा वह बना हुआ है, परन्तु कुछ भी निर्णय न हो सका[1]।

जोधपुर की राजकुमारी का विवाह जयपुर होने पर व्यास फ़ौज़ीराम उसके साथ जयपुर भेजा गया था। धीरे-धीरे उसपर महाराजा जगतसिंह की विशेष कृपा हो गई और वह वहां का मुसाहब हो गया। उससे बातचीतकर सिंघवी फ़तहराज कुचामण से जयपुर गया और वहां का शासन-प्रबन्ध अपने हाथ में लेने का प्रपंच करने लगा। इसपर जयपुरवालों को उसकी तरफ़ से शङ्का हो गई। उन्होंने इस सम्बन्ध में महाराजा जगतसिंह से कहा, जिसपर उसने फ़ौजीराम को कैद करवा दिया। इसपर फ़तहराज भागकर कुचामण गया और वहां से जोधपुर की अव्यवस्था से लाभ उठाने के लिए वह अपने सारे साथवालों और कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंह के साथ वि० सं० १८७५ (ई० स० १८१८) के श्रावण मास में जोधपुर जाकर बालसमंद पर ठहरा[2]।

सिंघवी फ़तहराज का जयपुर और फिर वहां से जोधपुर जाना

जोधपुर के सरदार आदि बहुत पहले से ही महाराजा मानसिंह से एकांतवास छोड़कर राज्य-कार्य अपने हाथ में लेने का अनुरोध कर रहे थे। बहुत समय तक तो उसने उधर कोई ध्यान नहीं दिया, फिर वि० सं० १८७५ कार्तिक सुदि ५ (ई० स० १८१८ ता० ३ नवंबर) को उसने एकान्तवास का परित्याग करने के अनन्तर क्षौर-कर्म, स्नान आदि कर दरबार किया, जिसमें सरदारों ने उपस्थित होकर नज़रें आदि पेश कीं। फ़तहराज गढ़ में आया करता था पर उसका कार्य सधा नहीं[3]।

महाराजा का एकान्तवास त्यागना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ८६-७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ८७-८।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८८-६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६७।

उसी वर्ष [illegible] ने महाराजा को ठाकुरों [illegible]
राज्य के आस-पास का [illegible]
[illegible] देने के लिए कहा। इसपर [illegible], आउवा,
[illegible], आसोप, [illegible], कुचामण, [illegible],
पोकरण, भाद्राजूण आदि के ठाकुरों ने एक-एक
गांव देना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार आमदनी में तीन लाख रुपयों की वृद्धि हुई। उन्हीं दिनों राजकीय सेना ने जाकर [illegible] पर अधिकार कर लिया, जिसपर वहां का स्वामी [illegible] चला गया। उसी समय के आस-पास पोकरण का ठाकुर सालिमसिंह राज्य का प्रधान नियत हुआ[1]।

राज्य की आय बढ़ाने के लिए सरदारों से एक-एक गांव लेना

जब प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता कर्नल टॉड पश्चिमी राजपूताने का पोलिटिकल एजेंट नियत हुआ तो उदयपुर, हाड़ौती, कोटा, बूंदी, सिरोही, जैसलमेर तथा जोधपुर आदि रियासतों का प्रबंध भी उसी के सुपुर्द किया गया। ई० स० १८१६ (वि० स० १८७६) के अन्तिम दिनों में उसने जोधपुर का दौरा किया। ता० ११ अक्टोबर (कार्तिक वदि ८) को उदयपुर से प्रस्थान कर पलाणा, नाथद्वारा, केलवाड़ा, नाडोल, पाली, काकाणी तथा झालामंड होता हुआ नवंबर मास में वह जोधपुर पहुंचा। ता० ४ नवंबर (मार्गशीर्ष वदि २) को महाराजा मानसिंह उससे मिला। महाराजा ने उसका बड़ी शानोशौकत के साथ स्वागत किया। टॉड लिखता है कि जोधपुर का स्वागत दिल्ली के शाही ढंग का था। महाराजा ने उसे एक हाथी, एक घोड़ा, आभूषण, जरी का थान, दुशाला आदि भेंट में दिये। ता० ६ नवंबर (मार्गशीर्ष वदि ४) को वह पुनः महाराजा से मिला और उसने उससे राज्यशासन संबंधी बातचीत की[2]।

कर्नल टॉड का जोधपुर जाना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ८६-६०।

(२) टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० ८२२ तथा ८२४।

एकान्तवास का परित्याग करने के बाद महाराजा ने क्रमशः अपने पक्ष के लोगों की संख्या बढ़ाई। सिंघवी इन्द्रराज तथा आयस देवनाथ को मरवाने के षड्यन्त्र में शामिल रहने के कारण महाराजा अखैचंद तथा उसके साथियों से नाराज़ तो था ही, एक दिन उपयुक्त अवसर देख उसने मेहता लक्ष्मीचन्द, किलेदार नथकरण देवराजोत, व्यास विनोदीराम, मुन्शी पंचोली जीतमल, धांधल मूला, जीया, हरजी आदि ८४ आदमियों को क़ैद करवा दिया। यह घटना श्रावणादि वि० सं० १८५६ (चैत्रादि १८७७) वैशाख सुदि १४ (ई० स० १८२० ता० २७ अप्रेल) को हुई। उसी समय अखैचंद भी गिरफ्तार हुआ[1]। इसके बाद द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १३ (ता० २४ जून) को परिवार-सहित मेहता सूरजमल, व्यास चतुर्भुज के पुत्र शिवदास एवं लालचन्द, जोशी श्रीकिशन और पंचोली गोपालदास क़ैद किये गये। इस पकड़ा-धकड़ी से नींबाज का सुलतानसिंह बड़ा चिंतित हुआ और उसने द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १५ (ता० २६ जून) को इस सम्बन्ध में पोकरण के ठाकुर सालिमसिंह से बातचीत की। उसी रात राजकीय सेना के नींबाज पर आक्रमण करने की ख़बर पाकर सुलतानसिंह वहां से पोकरण की हवेली जाने के लिए निकला, परन्तु मार्ग में ही मोतीचौक में उसका राजकीय सेना से सामना हुआ, जिससे वह पीछा अपनी हवेली में चला गया। इसपर राज्य की सेना ने हवेली को घेर लिया। भीतर प्रवेश करने के लिए सुरंग खोदी गई। यह देखकर सुलतानसिंह अपने छोटे भाई सूरजसिंह और दूसरे १८ आदमियों सहित बाहर निकला, परन्तु तोपों के गोलों की मार से आषाढ वदि १ (ता० २७ जून) को अपने सब साथियों सहित मारा

(१) टॉड लिखता है कि अखैचंद ने [illegible] हस्ताक्षर था, जिनमें से अधिकांश [illegible] महाराजा ने उसे मरवा डाला। इससे यह भी पता लगता है कि महाराजा [illegible] था और उसे मरवा देने के लिए उपयुक्त अवसर की [illegible] राजकीय [illegible] जि० २, पृ० ८३१-३२।

बिहारीदास खीची[1] एवं एक दूसरे व्यक्ति को उनके सिर मुंडवाकर गढ़ के नीचे फिंकवाया गया। इससे मिलता-जुलता व्यवहार व्यास शिवदास तथा जोशी श्रीकिशन[2] के साथ भी हुआ[3]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार खीची बिहारीदास तलहटी में था। वह खेजड़ला के ठाकुर शार्दूलसिंह एवं सार्थाणा के ठाकुर शक्तिदान के साथ खेजड़ला की हवेली में चला गया। महाराजा को मालूम होने पर उसने आदमियों से कहा परन्तु बिहारीदास पकड़ा न गया। तब कलदरखाना भेजा गया, जिससे लड़ता हुआ बिहारीदास मारा गया (जि० ४, पृ० १२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार जोशी श्रीकिशन तथा मेहता सूरजमल विष देकर मारे गये (जि० ४, पृ० १६)। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा ने कुंवर छत्रसिंह की माता अर्थात् अपनी चावड़ी राणी को एकान्त महल में क़ैद करवा दिया, जहां अन्न-जल न मिलने से उसका देहांत हो गया। "वीरविनोद" में भी ऐसा ही लिखा है (भाग २, पृ० ८६८)।

(३) राजस्थान, जि० २, पृ० १०६७-८। एक दूसरे स्थल पर टॉड लिखता है कि नित्य कुछ आदमी मारे अथवा क़ैद किये जाते अथवा उनका धन अपहरण कर लिया जाता था। कहा जाता है कि इस प्रकार महाराजा ने एक करोड़ रुपया ज़ब्त किया (राजस्थान, जि० २, पृ० ८३२)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में क़ैद किये हुए व्यक्तियों के साथ ऐसा निर्दयतापूर्ण व्यवहार करने का उल्लेख तो कहीं नहीं है, परन्तु उसमें भी कई व्यक्तियों की नाक काटकर उनको मुक्त किया जाना लिखा है (जि० ४, पृ० १६)। जो भी हो महाराजा का इस प्रकार का आचरण अवश्य निंदनीय था। केवल कुछ व्यक्तियों के अपराध के कारण इतने आदमियों को बुरी तरह मरवाना किसी भी दशा में क्षम्य नहीं कहा जा सकता। अपने ई० स० १८२० ता० ७ जुलाई (वि० सं० १८७७ आषाढ़ सुदि १२) के अंग्रेज़ सरकार के नाम के पत्र में टॉड ने लिखा था—

"सच तो यह है कि अपनी सफलता से उन्मादित होकर वह (मानसिंह) न्याय पालन अथवा अपनी स्थिति दृढ़ करने के लिए नाना तरह के काम कर जाय। यदि वह ई० स० १८०६ (वि० सं० १८६३) के षड्यन्त्र में भाग लेने और उनके पुत्र को राज्य का उत्तराधिकारी बनानेवाले पोकरण के सरदार अथवा एक दो दूसरे निम्न श्रेणी के सरदारों एवं राज्य के कुछ ओहदेदारों को सज़ा देकर ही बस करते तो लोगों के विचार उसके चरित्र के सम्बन्ध में ऊंचे ही बने रहते, परन्तु यदि उसके व्यवहार के अनु-

मेहता अखैचन्द का घर लूटने में एक लाख छत्तीस हज़ार का सामान राज्य के क़ब्ज़े में आया। उसके पुत्र और पौत्र (क्रमशः लक्ष्मीचन्द तथा मुकुन्दचन्द) से तीस हज़ार रुपये दंड के ठहराकर महाराजा ने वि० सं० १८७६ में उन्हें मुक्त कर दिया और उसके भतीजे फ़तहचन्द पर सत्ताइस हज़ार रुपये दंड के लगाये। अखैचन्द की हवेली ज़ब्त कर बाभा (अनौरस पुत्र) लालसिंह को दे दी गई। इसी प्रकार मेहता सूरजमल के पुत्र बुधमल से २५०००, व्यास विनोदीराम के पुत्र गुमानीराम से १५०००, क़िलेदार नथकरण के पुत्र अमनदास कचीर से ५०००, पंचोली गोपालदास से २५००० तथा अन्य कई आदमियों से इसी हिसाब से रुपये ठहराये गये[1]।

महाराजा का अपने विरोधियों से रुपये वसूल करना

उन्हीं दिनों महाराजा ने नये सिरे से अपने ओहदेदारों की नियुक्ति की। सिंघवी फ़तहराज दीवान के पद पर नियुक्त हुआ और जालोर, पाली, परबतसर, मारोठ, नागोर, गोड़वाड़, फलोधी, डीडवाणा, नावा, पचपदरा आदि में नवीन हाकिम नियुक्त किये गये। जोधपुर का प्रबंध करने के लिए निम्नलिखित पांच व्यक्ति मुसाहब बनाये गये—

नये हाकिमों की नियुक्ति

१. दीवान फतहराज, २. भाटी गजसिंह, ३. छागाणी कचरदास, ४. धांधल गोरधन तथा ५ नाज़र इमरतराम[2]।

अनंतर नींबाज पर पुनः राज्य की तरफ से सेना भेजी गई। सुरताणसिंह के पुत्र ने वीरतापूर्वक गढ़ की रक्षा की। अन्त में महाराजा के

दार अथवा अन्य प्रमुख सरदारों को भी सजाएं दीं, तो ऐसे असन्तोष की उत्पत्ति होगी कि वह भी घबरा उठेगा। न्याय के लिए उसने अब तक जो किया वह काफी है और प्रतिशोध की दृष्टि से भी, क्योंकि सुरताणसिंह की मृत्यु (जिसका मुझे आन्तरिक खेद है) एक निरर्थक बलि के समान है।"

राजस्थान, जि० २, पृ० १०६६ टि० १।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ६६-७।

(२) वही; जि० ४, पृ० ६७-८।

नींबाज पर पुनः राजकीय सेना जाना

हस्ताक्षर-सहित माफी और जागीर बहाल होने का परवाना मिलने पर उसने आत्मसमर्पण कर दिया। उसके ऐसा करते ही महाराजा के अनुयायियों ने महाराजा का दूसरा परवाना दिखाकर उसे गिरफ्तार करना चाहा। जोधपुर का सेनापति उनके इस आचरण से बहुत अप्रसन्न हुआ, क्योंकि उसके वचन देने पर ही उसने आत्मसमर्पण करना स्वीकार किया था, अतएव उसने उसे हिफाज़त के साथ अर्वली की पहाड़ियों में भिजवा दिया, जहां से वह मेवाड़ में जा रहा[1]।

सन्धि के अनुसार दिल्ली में सवार सेना भेजना

वि० सं० १८७४ (ई० स० १८१८) में जोधपुर की अंग्रेज़ सरकार के साथ जो संधि हुई थी, उसमें एक शर्त यह भी थी कि महाराजा पन्द्रह सौ सवार अंग्रेज़ सरकार की सेवा में भेजेगा[2]। तदनुसार वि० सं० १८७८ (ई० स० १८२१) में महाराजा ने बख़्शी सिंघवी मेघराज, धांधल गोरधन, ठाकुर बख़्तावरसिंह (भाद्राजूण) आदि के साथ १५०० सवार दिल्ली भेजे। वे लोग कई मास तक दिल्ली में रहने के बाद वि० सं० १८७६ (ई० स० १८२२) में वापस जोधपुर लौटे[3]।

उदयमन्दिर की स्थापना

देवनाथ के मारे जाने के बाद महामन्दिर का अधिकार उसके भाई भीमनाथ ने अपने हाथ में ले लिया था और वह देवनाथ के पुत्र लाडूनाथ को बहुत तंग करता था। इसपर लाडूनाथ ने महाराजा के पास जाकर इस विषय में कहा तो उसने उसे महामन्दिर में रक्खा और भीमनाथ के लिए इमरतराम नाज़र के द्वारा उदयमन्दिर बनवाकर उसकी प्रतिष्ठा भी महामन्दिर के समान ही रक्खी[4]।

---

(१) टॉड, राजस्थान, जि० २, पृ० ११००।

(२) देखो ऊपर पृ० ८२४।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १८। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८६८।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १८। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८६८।

(ई० स० १८२३) में आसोप का कार्यकर्ता कूंपावत हरिसिंह, आउवा का पंचोली कानकरण, चंडावल का कूंपावत दौलतसिंह और नींवाज का कार्य-

---

हैं, और उनके साथ ऐसे कठोरता एवं निर्दयता के व्यवहार किये गये हैं, जो कभी सुने तक नहीं गये थे तथा जिनको हम लोग लिख भी नहीं सकते हैं। महाराजा के हृदय में ऐसा भाव उत्पन्न हुआ है, जैसा जोधपुर के किसी महाराजा में पहले देखा नहीं गया। उनके पूर्वजों ने पीढ़ी-दर पीढ़ी राज्य किया है। हम लोगों के पूर्वज उनके मंत्री और सलाहकार रहे हैं एवं जो कुछ किया जाता था, हमारी सरदारों की सभा की सम्मति से होता था। उनके पूर्वजों ने एवं हमारे पूर्वजों ने औरों के प्राण लिये और अपने दिये हैं तथा बादशाहों की सेवा कर जोधपुर राज्य को, जैसा वह इस समय है, बनाया है। जहां कहीं मारवाड़ के विषय का कार्य पड़ा वहीं हमारे पूर्वज पहुंचे और उन्होंने अपनी जान देकर देश की रक्षा की। कभी कभी हम लोगों के स्वामी नाबालिग भी रहे। उस समय भी हमारे पूर्वजों की बुद्धिमानी और सेवा से देश हमारे पैरों तले दबा रहा तथा इसी प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी वह भूमि [हमारे अधिकार में] चली आई है। इन्हीं महाराजा की आंखों के आगे हम लोगों ने अच्छी-अच्छी चाकरी की है। उस खतरनाक समय में जब कि जयपुर की सेना ने जोधपुर को घेर लिया था हम लोगों ने थोड़े जन से उनपर आक्रमण किया और अपने प्राण एवं धन जोखिम में डाले। ईश्वर ने हमको सफलता प्रदान की। इसका साक्षी सर्वशक्तिमान परमेश्वर है। अब छोटे बड़े मनुष्य महाराजा की हाज़िरी में रहते हैं। इसका ही यह उलटा फल है। जब हमारी सेवा स्वीकार की जाय तो वे हमारे स्वामी हैं। ऐसा न हो तो फिर हम लोग उनके भाई और सबंधी हैं, दावेदार हैं तथा भूमि का दावा रखते हैं।

वह हम लोगों को [हमारी जायदाद से] बेदखल करना चाहते हैं परन्तु क्या हम लोग अपने को बेदखल होने देंगे [illegible] सम्पूर्ण [illegible] के मालिक हैं। - [illegible] के सरदार ने अजमेर में अपना [illegible] था उस [illegible] कहा गया। इसलिए ठाकुर [illegible] वह [illegible] परन्तु [illegible] नहीं बनाया गया। यदि अंग्रेज हाकिम हम लोगों की न सुनेंगे न [illegible] सुनेंगा [illegible] किसी की भूमि को छीनने नहीं देंगे। हम लोगों का [illegible] है [illegible] मारवाड़ से ही हम लोगों को रोटी मिलना चाहिये। एक [illegible] है [illegible] हम लोग केवल अंग्रेज़ों के भय की दृष्टि से ही चुप हैं और [illegible] आपकी सरकार को हम अपने विचारों की सूचना न दें तो पीछे से आप [हमको] दोष लगावेंगे अतएव हम लोग इसको प्रकाशित करते हैं और इस तरह [illegible] जो कुछ

वि० सं० १८७४ (ई० स० १८१७) में महाराव उदयभाण को नज़रकैद कर सिरोही राज्य का प्रबन्ध उसके छोटे भाई नांदिया के स्वामी शिवसिंह ने अपने हाथ में ले लिया था। उसके बाद उसने राज्य की भीतरी दशा का सुधार करने के लिए अंग्रेज़ सरकार से संधिवार्ता आरम्भ की। महाराजा मानसिंह सिरोही राज्य को अपने राज्य में मिलाना चाहता था, इसलिए उसने सिरोही राज्य के साथ अंग्रेज़ सरकार की संधि होने की जो कार्रवाई चल रही थी उसमें बाधा डालनी चाही। उसने गवर्नमेंट के साथ इस आशय की लिखा पढ़ी की कि सिरोही का इलाका पहले से ही जोधपुर के आधीन है, इसलिए सिरोही के साथ अलग अहदनामा न होना चाहिये। इसपर अहदनामा होने की बात रुक गई और जोधपुर के दावे की तहकीक़ात का काम कप्तान टॉड के सुपुर्द हुआ, जो उन दिनों जोधपुर का पोलिटिकल एजेंट भी था। टॉड महाराजा मानसिंह का मित्र था, जिससे उसे अपना कार्य पूरा होने की पूरी आशा थी और जोधपुर का वकील उसके लिए बड़ी कोशिश कर रहा था; परन्तु टॉड ने, जो बड़ा ही निष्पक्ष अफसर था, पूरे सबूत के बिना जोधपुर का दावा स्वीकार करना न चाहा। जोधपुर के वकील ने यह बतलाने की कोशिश की कि महाराजा अभयसिंह के समय से ही सिरोहीवाले जोधपुर की चाकरी करते और खिराज देते हैं, जिसपर टॉड ने, जो दोनों राज्यों के इतिहास से परिचित था, यही उत्तर दिया कि 'महाराजा अभयसिंह बादशाही फ़ौज का सेनापति था और सिरोही की सेना भी बादशाही झंडे के नीचे रहकर लड़ती थी। इसी प्रकार उसने ख़िराज की बात भी निर्मूल सिद्ध कर दी। तब जोधपुर की तरफ से सिरोही के महाराव उदयभाण के हस्ताक्षरवाली एक तहरीर पेश की गई, जिसमें उसने कितनी-एक शर्तों के साथ जोधपुर

जोधपुर की सेना का सिरोही में बिगाड़ करना

पोलिटिकल एजेंट ने अपनी तरफ़ से लिखा-पढ़ी कर दी (एचिसन; ट्रीटीज़, एंगेजमेंट्स एंड सनद्ज़, जि० ३, पृ० १२०-१)।

महाराजा की पुत्री का बूंदी के रावराजा से विवाह

वि० सं० १८८१ फाल्गुन वदि ७ (ई० स० १८२५ ता० ६ फ़रवरी) को वहां से बारात जोधपुर गई। इसके अगले दिन विवाह-कार्य सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर बीकानेर और किशनगढ़ से क्रमशः पांच हज़ार और दो हज़ार रुपये तथा हाथी दहेज में दिये जाने के लिए आये। विवाह के खर्च के लिए रावराजा रामसिंह ने कोटा से दो लाख रुपया लेकर उस सम्बन्ध में एक रुक्का लिख दिया था। वह रुक्का रुपये चुकाकर महाराजा मानसिंह ने कोटा से मंगवा लिया और विवाह के समय बूंदीवालों को हथलेवे में दे दिया। रावराजा रामसिंह की एक सगाई सूरजगढ़ बिसाऊ के शेखावतों के यहां भी हुई थी। दुबारा बारात ले जाने का व्यय बचाने के लिए रावराजा ने वहां विवाह करने के लिए जाने की शीघ्र आज्ञा चाही। महाराजा को यह बात बहुत बुरी लगी; परन्तु अन्त में उसने बारात को सीख दे दी। तद्नुसार चैत्र वदि ६ (ता० १३ मार्च) को बारात जोधपुर से बिदा हुई। महाराजा स्वयं बारात को मेड़तिया दरवाज़े तक पहुंचाने गया। उसने नाज़िर इमरतराम तथा व्यास जेठमल को बहुत से आदमियों के साथ रावराजा के संग कर दिया, जिन्होंने उसके आदेशानुसार उसका विवाह बिसाऊ में उस समय न होने दिया[1]।

गत पांच वर्षों से सिंघवी फ़तहराज बड़ी अच्छी तरह राज्य-कार्य कर रहा था। इससे कई व्यक्ति उससे नाराज़ रहते थे। भंडारी गंगाराम

सिंघवी फ़तहराज का कैद किया जाना

के पुत्र भानीराम के कहने पर जालोर के महाजन बागा ने जो बड़ा जालसाज़ था, महाराजा के हस्ताक्षरयुक्त एक जाली चिट्ठी तैयार की और उसके सहारे कुचामण के फ़ौजराज से पांच हज़ार रुपये वसूल कर दोनों खा गये। अनन्तर उन्होंने फ़तहराज के हस्ताक्षर-सहित महाराजा के नाम इस आशय का पत्र बनाकर भेजा कि खर्च का रुपया भेजा है सो

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १००-१। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८१६।

महाराजा की पुत्री का बूंदी के रावराजा से विवाह

वि० सं० १८८१ फाल्गुन वदि ७ (ई० स० १८२५ ता० ६ फ़रवरी) को वहां से बारात जोधपुर गई। इसके अगले दिन विवाह-कार्य सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर बीकानेर और किशनगढ़ से क्रमशः पांच हज़ार और दो हज़ार रुपये तथा हाथी दहेज में दिये जाने के लिए आये। विवाह के खर्च के लिए रावराजा रामसिंह ने कोटा से दो लाख रुपया लेकर उस सम्बन्ध में एक रुक्क़ा लिख दिया था। वह रुक्क़ा रुपये चुकाकर महाराजा मानसिंह ने कोटा से मंगवा लिया और विवाह के समय बूंदीवालों को हथलेवे में दे दिया। रावराजा रामसिंह की एक सगाई सूरजगढ़ बिसाऊ के शेखावतों के यहां भी हुई थी। दुबारा बारात ले जाने का व्यय बचाने के लिए रावराजा ने वहां विवाह करने के लिए जाने की शीघ्र आज्ञा चाही। महाराजा को यह बात बहुत बुरी लगी, परन्तु अन्त में उसने बारात को सीख दे दी। तद्नुसार चैत्र वदि ६ (ता० १३ मार्च) को बारात जोधपुर से विदा हुई। महाराजा स्वयं बारात को मेड़तिया दरवाज़े तक पहुंचाने गया। उसने नाज़िर इमरतराम तथा व्यास जेठमल को बहुत से आदमियों के साथ रावराजा के संग कर दिया, जिन्होंने उसके आदेशानुसार उसका विवाह बिसाऊ में उस समय न होने दिया[1]।

सिंघवी फतहराज का कैद किया जाना

गत पांच वर्षों से सिंघवी फतहराज बड़ी अच्छी तरह राज्य-कार्य कर रहा था। इससे कई व्यक्ति उससे नाराज़ रहते थे। भंडारी गंगाराम के पुत्र भानीराम के कहने पर जालोर के महाजन बागा ने जो बड़ा जालसाज़ था, महाराजा के हस्ताक्षरयुक्त एक जाली चिट्ठी तैयार की और उसके सहारे कुचामण के फ़ौजराज से पांच हज़ार रुपये वसूल कर दोनों भाग गये। अनन्तर उन्होंने फ़तहराज के हस्ताक्षर-सहित महाराजा के नाम इस आशय का पत्र बनाकर भेजा कि खर्च का रुपया भेजा है सो

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १००-१। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८१६।

पहुंचेगा। महाराजा को यह जाली पत्र मिलते ही फ़तहराज पर गुस्सा हो गया। फलतः वि० सं० १८८१ (चैत्रादि १८८२) चैत्र सुदि ११ (ई० स० १८२५ ता० २८ मार्च) को महाराजा ने छल से उसे अपने पास बुलवाकर सपरिवार क़ैद कर लिया और उन्हें सलेमकोट में रक्खा तथा राज्य-कार्य चलाने का भार भंडारी भानीराम एवं फ़ौजराज के सुपुर्द किया गया। जालसाज़ी का भेद अधिक समय तक छिपा न रहा। दुबारा फिर जब भानीराम ने वही चाल चली तो सारा भेद खुल गया। इसपर महाराजा ने भानीराम और वागा दोनों को क़ैद करवा दिया। दस हज़ार रुपया देने पर भानीराम छोड़ दिया गया और वागा का दाहिना हाथ कटवा दिया गया[1]। इसके कुछ समय बाद दस लाख रुपया लेना ठहराकर महाराजा ने फ़तहराज को भी मुक्त कर दिया[2]।

[illegible] इन्द्रराज का दीवान [illegible]

भानीराम के हटाये जाने पर राज्य-कार्य फौजराज करता रहा। उसका कार्यकर्ता माणिकचन्द था, परन्तु दोनों मिलकर भी राज्य कार्य ठीक-ठीक नहीं करने पाते थे। तब महाराजा ने जोशी शम्भुदत्त को उसकी मदद के लिये नियुक्त किया, लेकिन जब फिर भी कार्य ठीक न चला तो [illegible] की माता के निवेदन करने पर सिंघवी इन्द्रराज दीवान के पद पर नियुक्त किया गया[3]।

[illegible]

वि० सं० १८८२ (ई० स० १८२५) से ही जोधपुर के राज्य कार्य में महाराजा के [illegible] का प्राबल्य बढ़ गया और प्रत्येक काम में आयस लाडूनाथ की आज्ञा प्रधान मानी जाने लगी। वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में महाराजा [illegible] के कार्यकर्ताओं की सलाह के अनुसार [illegible]

(१) [illegible]

(२) [illegible]

(३) [illegible]

(४) [illegible]

पर राजकीय सेना भेजी गई, पर उसका कोई विशेष नतीजा नहीं निकला। तब पंचोली कालूराम भेजा गया। उसने जाते ही आक्रमण किया, परन्तु इससे भी कोई ख़ास फ़ायदा नहीं हुआ और जोधपुर की तरफ़ के कई व्यक्ति काम आये। इस चढ़ाई के कारण राज्य का ख़र्च बहुत बढ़ गया था, जिसकी पूर्ति करने के लिए महामंदिर के कार्यकर्ताओं ने प्रति घर चार रुपया कर (बाब) लगाया। उधर अपने गढ़ की मज़बूती कर आउवा का ठाकुर बख़्तावरसिंह नींवाज के ठाकुर सावंतसिंह के पास गया। तब उसने तथा रास के ठाकुर भीमसिंह आदि ने एकत्र होकर धौंकलसिंह को डीडवाणा बुलाया और वहां उसका अधिकार करा दिया। महाराजा को इसका समाचार मिलने पर उसने आउवा से सेना वापस बुला ली और नींवाज, रास आदि के ठाकुरों को अपने पक्ष में कर लिया। ऐसी परिस्थिति में धौंकलसिंह के पक्ष की सेना बिखर गई[1]।

नागपुर के राजा का जोधपुर जाना

नागपुर में बहुत पहले से ही उदयपुर के राजवंश से निकले हुए भोंसलों का राज्य था। ई० स० १८१६ (वि० सं० १८७३) में वहां के स्वामी राघोजी (दूसरा) का देहांत होने पर उसका पुत्र परसोजी (दूसरा) उसका उत्तराधिकारी हुआ। वह बहुत कमज़ोर था। उसको उसके चाचा व्यंकोजी का पुत्र आपा साहब (मुधोजी) मारकर स्वयं नागपुर का स्वामी हो गया। उसने अंग्रेज़ों से सुलह की। ई० स० १७६६ (वि० सं० १८५६) से ही नागपुर में अंग्रेज़ रेज़िडेंट रहने लगा था। ई० स० १८१७ (वि० सं० १८७४) में अंग्रेज़ों और पेशवा के बीच लड़ाई छिड़ जाने पर उस(भोंसला)ने पेशवा का पक्ष लेकर अंग्रेज़ी सेना पर आक्रमण किया, परन्तु सीताबल्दी और नागपुर की लड़ाइयों में उसकी हार हुई, जिससे बरार का शेष भाग एवं नर्मदा के दक्षिण का प्रदेश उसे अंग्रेज़ों को सौंपना पड़ा। फिर वह नागपुर की गद्दी पर बिठाया गया, परन्तु अंग्रेज़ों के विरुद्ध षड्यन्त्र

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०३-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८११।

पहुंचेगा। महाराजा को यह जाली पत्र मिलते ही फ़तहराज पर
हो गया। फलतः वि० सं० १८८१ (चैत्रादि १८८२) चैत्र सुदि १६
(ई० स० १८२५ ता० २८ मार्च) को महाराजा ने छल से उसे अपने
बुलवाकर सपरिवार क़ैद कर लिया और उन्हें सलेमकोट में रक्खा तथा
राज्य-कार्य चलाने का भार भंडारी भानीराम एवं फ़ौजराज के सुपुर्द
किया गया। जालसाज़ी का भेद अधिक समय तक छिपा न रहा। दुबारा
फिर जब भानीराम ने वही चाल चली तो सारा भेद खुल गया। इसपर
महाराजा ने भानीराम और वागा दोनों को क़ैद करवा दिया। दस हज़ार
रुपया देने पर भानीराम छोड़ दिया गया और वागा का दाहिना हाथ
कटवा दिया गया[2]। इसके कुछ समय बाद दस लाख रुपया लेना ठहराकर
महाराजा ने फतहराज को भी मुक्त कर दिया[3]।

सिंघी इन्द्रमल का दीवान बनाया जाना

भानीराम के हटाये जाने पर राज्य-कार्य फ़ौजराज करता रहा। उसका कार्यकर्ता माणिकचंद था, परन्तु दोनों मिलकर भी राज्य कार्य ठीक-ठीक नहीं करने पाते थे। तब महाराजा ने जोशी शंभुदत्त को उसकी मदद के लिये नियुक्त किया, लेकिन जब फिर भी कार्य ठीक न चला तो फ़ौजराज की माता के निवेदन करने पर सिंघी इन्द्रमल दीवान के पद पर नियुक्त किया गया[4]।

[illegible]

वि० सं० १८८२ (ई० स० १८२५) से ही जोधपुर के राज्य कार्य में महामंदिर के [illegible] का प्रभुत्व बढ़ गया और प्रत्येक काम में आयस लाडूनाथ की आज्ञा प्रधान मानी जाने लगी। वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में महामंदिर के कार्यकर्त्ताओं की सलाह के अनुसार आयस

---

(१) "वीरविनोद" में [illegible] (भाग २, पृ० [illegible])।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० [illegible], पृ० [illegible]। वीरविनोद, भाग २, पृ० [illegible]।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० [illegible], पृ० [illegible])।

(४) वही, जि० [illegible], पृ० [illegible]।

पर राजकीय सेना भेजी गई, पर उसका कोई विशेष नतीजा नहीं निकला। तब पंचोली कालूराम भेजा गया। उसने जाते ही आक्रमण किया, परन्तु इससे भी कोई खास फ़ायदा नहीं हुआ और जोधपुर की तरफ़ के कई व्यक्ति काम आये। इस चढ़ाई के कारण राज्य का खर्च बहुत बढ़ गया था, जिसकी पूर्ति करने के लिए महामंदिर के कार्यकर्ताओं ने प्रति घर चार रुपया कर (बाब) लगाया। उधर अपने गढ़ की मज़बूती कर आउवा का ठाकुर बख़्तावरसिंह नींवाज के ठाकुर सावंतसिंह के पास गया। तब उसने तथा रास के ठाकुर भीमसिंह आदि ने एकत्र होकर धोंकलसिंह को डीडवाणा बुलाया और वहां उसका अधिकार करा दिया। महाराजा को इसका समाचार मिलने पर उसने आउवा से सेना वापस बुला ली और नींवाज, रास आदि के ठाकुरों को अपने पक्ष में कर लिया। ऐसी परिस्थिति में धोंकलसिंह के पक्ष की सेना बिखर गई[1]।

नागपुर के राजा का जोधपुर जाना

नागपुर में बहुत पहले से ही उदयपुर के राजवंश से निकले हुए भोंसलों का राज्य था। ई० स० १८१६ (वि० सं० १८७३) में वहां के स्वामी राघोजी (दूसरा) का देहांत होने पर उसका पुत्र परसोजी (दूसरा) उसका उत्तराधिकारी हुआ। वह बहुत कमज़ोर था। उसको उसके चाचा व्यंकोजी का पुत्र आपा साहब (मुधोजी) मारकर स्वयं नागपुर का स्वामी हो गया। उसने अंग्रेज़ों से सुलह की। ई० स० १७९९ (वि० सं० १८५६) से ही नागपुर में अंग्रेज़ रेज़िडेंट रहने लगा था। ई० स० १८१७ (वि० सं० १८७४) में अंग्रेज़ों और पेशवा के बीच लड़ाई छिड़ जाने पर उस (भोंसला) ने पेशवा का पक्ष लेकर अंग्रेज़ी सेना पर आक्रमण किया, परन्तु सीताबल्डी और नागपुर की लड़ाइयों में उसकी हार हुई, जिससे बरार का शेष भाग एवं नर्मदा के दक्षिण का प्रदेश उसे अंग्रेज़ों को सौंपना पड़ा। फिर वह नागपुर की गद्दी पर बिठाया गया, परन्तु अंग्रेज़ों के विरुद्ध षड्यन्त्र

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०३-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८९९।

रचने के अपराध में वह गद्दी से हटाया जाकर इलाहाबाद भेजा जानेवाला था, किन्तु मार्ग से ही भागकर महादेव की पहाड़ियों में होता हुआ वह पंजाब की तरफ़ चला गया[1]। वहां से वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में वह दो-चार व्यक्तियों के साथ गुप्त रूप से जोधपुर पहुंचकर महामन्दिर में ठहरा। इसकी ख़बर मिलने पर महाराजा ने उसको अपनी शरण में ले लिया और महामन्दिर के महलों में उसका डेरा कराया। अंग्रेज़ सरकार को इस घटना की ख़बर मिलने पर उसकी तरफ़ से उसे सुपुर्द कर देने को महाराजा को लिखा गया, परन्तु उसने ऐसा नहीं किया। कई वर्ष बाद वहीं उसकी मृत्यु हो गई[2]।

धोंकलसिंह के सम्बन्ध में रेजिडेंट का पड़ोसी राज्यों को लिखना

वि० सं० १८८५ ज्येष्ठ सुदि ३ (ई० स० १८२८ ता० १६ मई) को दिल्ली के रेज़िडेंट के पास से बीकानेर आदि राज्यों के पास इस आशय का ख़रीता भेजा गया कि वे जोधपुर राज्य में उत्पात करनेवाले धोंकलसिंह से किसी प्रकार का सम्पर्क न रक्खें। तदनुसार उन्होंने अपने अपने सरदारों को उसे राज्य में प्रवेश न करने देने की हिदायत कर दी[3]।

आयस लाडूनाथ की मृत्यु

वि० सं० १८८५ (ई० स० १८२८) के आश्विन मास में आयस लाडूनाथ गिरनार की यात्रा करने के लिए गया। महाराजा की आज्ञानुसार इस अवसर पर उसके साथ कई सरकारी आदमी गये। वहां से लौटते समय गांव बामनवाड़ा में वह ज्वर से पीड़ित हुआ और उसी रोग से वहां

(१) मेरा, उदयपुर राज्य का इतिहास, जि० २, पृ० १०८३-४। प्रयागदत्त शुक्ल, मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले, पृ० १६३-७२। इम्पीरियल गैज़ेटियर ऑव् इंडिया, जि० १८, पृ० ३०७-८।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १०४। प्रयागदत्त शुक्ल, मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले, पृ० १७२ और टिप्पण। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८६६।

(३) दयालदास की ख्यात, जि० २, पत्र ११४।

किशनगढ़ के महाराजा का जोधपुर जाना

दावा अंग्रेज़ सरकार-द्वारा खारिज किये जाने के कारण वहां का स्वामी उपद्रव करने लग गया था। अन्य सरदार भी उक्त राज्य के ख़िलाफ़ हो रहे थे, जिनका दमन करना आवश्यक था। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से कल्याणसिंह को शीघ्र उधर का प्रबंध करने को कहा गया। इसपर उसने दिल्ली से पांच छः हज़ार विदेशियों की सेना साथ ले ली। राज्य के ज़मींदार तथा कार्यकर्ता किशनगढ़ में एकत्र हुए। अनन्तर दूसरे दिन वे रूपनगर चले गये। तब कल्याणसिंह ने रूपनगर पर फ़ौज भेजी और दुतरफ़ा गोलों की लड़ाई हुई। अनंतर कल्याणसिंह अजमेर गया। इस बीच विरोधियों का उपद्रव बढ़ गया। अंग्रेज़ सरकार ने उनका समुचित प्रबंध कर रूपनगर खाली करा लिया। महाराजा और ज़मींदारों में कई दिन तक बातचीत होती रही, परन्तु अन्त में जब कुछ तय न हुआ और कल्याणसिंह ने अंग्रेज़ सरकार की बात नहीं मानी तो सरदारों को राज्य का प्रबंध करने को कहा गया, जिन्होंने राज्यकार्य अपने हाथ में ले लिया तथा कुंवर मोहकमसिंह को कर्ता-धर्ता नियत किया। ऐसी दशा में वि० सं० १८८५ (ई० स० १८२८) के भाद्रपद मास में महाराजा कल्याणसिंह, जिसका किशनगढ़ नगर एवं सरवाड़ के किले पर अधिकार रह गया था, जोधपुर चला गया और वहां वि० सं० १८८८ (ई० स० १८३१) तक रहा। महाराजा मानसिंह ने उसे उदयमन्दिर में रखकर उसके आतिथ्य का समुचित प्रबंध कर दिया। वि० सं० १८८८ में जब वाइसरॉय अजमेर गया तो जोधपुर से वहां जाकर कल्याणसिंह ने उसके सामने अपनी अर्ज़ी पेश की। तब किशनगढ़ राज्य की तरफ से उसका सौ रुपया रोज़ाना मुकर्रर कर उसे उक्त राज्य से बाहर रहने को कहा गया। इसपर वह दिल्ली जा रहा और वहीं वि० सं० १८९६ (चैत्रादि १८९७ = ई० स० १८४०) के वैशाख मास में उसकी मृत्यु हुई[1]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १०९-१। "वीरविनोद" में महाराजा कल्याणसिंह के जोधपुर जाकर रहने का उल्लेख नहीं है, परन्तु उसमें भी

इसके कुछ समय बाद अजमेर-स्थित एजेंट टु दि गवर्नर जेनरल कर्नल लॉकेट जोधपुर होता हुआ जैसलमेर गया। उस समय जोधपुर से व्यास कचरदास और मेहता हरखचंद उसे तिवरी के डेरे तक पहुंचाने गये[1]।

कर्नल लॉकेट का जोधपुर होते हुए जैसलमेर जाना

वि० सं० १८७५ (ई० स० १८१८) में मेड़तिया अखैसिंहोतों से बूड़सू का अधिकार छीन लिया गया था। कई वर्ष तक उक्त ठिकाना खालसा रहने के बाद वि० सं० १८८५ में वहां का अधिकार जवली के मेड़तिया शार्दूलसिंह रत्नसिंह पहाड़सिंहोत को दे दिया गया। इससे अप्रसन्न होकर अखैसिंहोत देश में इधर-उधर लूट-मार करने लगे। वि० सं० १८८८ (ई० स० १८३१) में बगड़ी का ठाकुर जैतावत शिवनाथसिंह केसरीसिंहोत अपना ठिकाना छोड़कर चला गया। तब बगड़ी को खालसे रखकर जोशी शंभुदत्त वहां का हाकिम नियत किया गया। इसपर बगड़ी-वाले भी अखैसिंहोतों के शामिल होकर देश में उत्पात करने लगे। वि० सं० १८८९ (ई० स० १८३२) में उन्होंने भावी, जैतारण और बगड़ी को लूटकर बहुत सा माल प्राप्त किया। तब श्रावणादि वि० सं० १८८९ (चैत्रादि १८९०) आषाढ वदि २ (ई० स० १८३३ ता० ५ जून) को सिंघवी कुशलराज को उनका दमन करने के लिए जाने की आज्ञा दी गई। आषाढ वदि १० (ता० १२ जून) को वह मेड़ते पहुंचा। पीछे से परबतसर से सिंघवी सुखराज आदि भी उससे शामिल हो गये। उस समय बगड़ीवाले और अखैसिंहोत कोटड़ा के पहाड़ों में थे। सरकार की सेना के मेड़ते पहुंचने की खबर मिलते ही वे भागकर मेवाड़ में चले

बगड़ी और बूड़सू के बागी सरदारों को सज़ा देना

सरदारों के विरोध करने [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ता० १०-३-१८

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० [illegible]

किशनगढ़ के महाराजा का जोधपुर जाना

द्वारा अंग्रेज़ सरकार-द्वारा स्थापित किये जाने के कारण वहां का स्वामी उपद्रव करने लग गया था। अन्य सरदार भी उक्त राज्य के खिलाफ़ हो रहे थे, जिनका दमन करना आवश्यक था। अंग्रेज सरकार की तरफ़ से कल्याणसिंह को शीघ्र उधर का प्रबंध करने को कहा गया। इसपर उसने दिल्ली से पांच छः हज़ार विदेशियों की सेना साथ ले ली। राज्य के ज़मींदार तथा कार्यकर्ता किशनगढ़ में एकत्र हुए। अनन्तर दूसरे दिन वे रूपनगर चले गये। तब कल्याणसिंह ने रूपनगर पर फ़ौज भेजी और दुतरफ़ा गोलों की लड़ाई हुई। अनंतर कल्याणसिंह अजमेर गया। इस बीच विरोधियों का उपद्रव बढ़ गया। अंग्रेज़ सरकार ने उनका समुचित प्रबंध कर रूपनगर खाली करा लिया। महाराजा और जमींदारों में कई दिन तक बातचीत होती रही, परन्तु अन्त में जब कुछ तय न हुआ और कल्याणसिंह ने अंग्रेज़ सरकार की बात नहीं मानी तो सरदारों को राज्य का प्रबंध करने को कहा गया, जिन्होंने राज्यकार्य अपने हाथ में ले लिया तथा कुंवर मोहकमसिंह को कर्ता धर्ता नियत किया। ऐसी दशा में वि० सं० १८८५ (ई० स० १८२८) के भाद्रपद मास में महाराजा कल्याणसिंह, जिसका किशनगढ़ नगर एवं सरवाड़ के क़िले पर अधिकार रह गया था, जोधपुर चला गया और वहा वि० स० १८८८ (ई० स० १८३१) तक रहा। महाराजा मानसिंह ने उसे उदयमन्दिर में रखकर उसके आतिथ्य का समुचित प्रबध कर दिया। वि० सं० १८८८ में जब वाइसरॉय अजमेर गया तो जोधपुर से वहां जाकर कल्याणसिंह ने उसके सामने अपनी अर्ज़ी पेश की। तब किशनगढ़ राज्य की तरफ से उसका सौ रुपया रोजाना मुकर्रर कर उसे उक्त राज्य से बाहर रहने को कहा गया। इसपर वह दिल्ली जा रहा और वहीं वि० सं० १८६६ (चैत्रादि १८६७ = ई० स० १८४०) के बैशाख मास में उसकी मृत्यु हुई[1]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १०६-७। "वीरविनोद" में महाराजा कल्याणसिंह के जोधपुर जाकर रहने का उल्लेख नहीं है, परन्तु उसमें भी

गये। महाराजा का खास रुक्का प्राप्त होने पर कुचामण का ठाकुर रणजीत-सिंह भी अजमेर गया। वह तथा अन्य जोधपुर के व्यक्ति पो० एजेंट से मिले। महाराजा के दरबार के समय उपस्थित न होने, शर्तों के जवाब बाक़ी रह जाने और नागपुर के राजा को जोधपुर में आश्रय दिये जाने के सम्बन्ध में उसने शिकायत की तो उन्होंने भरसक उसका समाधान कर दिया। अनन्तर ख़िराज एवं फ़ौज-खर्च की बक़ाया रक़म के बारे में बातचीत होने पर उन्होंने पांच लाख रुपया देना ठहराया और भविष्य में महाराजा के ठीक आचरण करने के सम्बन्ध में भी उसे आश्वासन दिया। उक्त रक़म की पूर्ति तक के लिए सांभर और नावां की आमद अंग्रेज़ सरकार को मिलना तय हुआ। इस एक़रारनामे के विषय में पूरा वृत्त ज्ञात होने पर महाराजा को ज़रा भी प्रसन्नता न हुई[1]।

भाड़ाजूण पर फ़ौजकशी करना

भीमनाथ ऊपर आये हुए पांचों कार्यकर्ताओं से नाराज़ था और वह उनकी शिकायतें महाराजा से किया करता था। जोशी शंभुदत्त, लक्ष्मी-चन्द एवं केसर पर महाराजा की विशेष कृपा होने से वे तो बच गये, परन्तु फ़तहराज, कृष्णराज एवं सिंघवी सुमेरमल फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १८३५ ता० ७ मार्च) को गिरफ़्तार कर लिये गये। फ़तहराज का कुचामण तथा भाड़ाजूणवालों के साथ अच्छा सम्बन्ध था। फ़तहराज की गिरफ़्तारी से भाड़ाजूण के ठाकुर बख़्तावरसिंह के मन में सन्देह उत्पन्न हो गया और वह तलहटी के महलों में आयस लक्ष्मीनाथ (लछमीनाथ) की शरण में जा रहा। तब फ़तहराज के कहने से भाड़ाजूण का पट्टा ज़ब्त कर वहां [illegible] की अध्यक्षता में राज्य की सेना भेजी गई। ऐसी परिस्थिति में ठाकुर बख़्तावरसिंह भाड़ाजूण चला गया तब राज्य की सेना ने भाड़ाजूण पर घेरा डाला तथा दोनों ओर से लड़ाइयां शुरू हुईं। भाड़ाजूणवालों ने [illegible] हुई पनहारियों की [illegible] लूट लिये जिनमें [illegible] उनके हाथ लगा। पनहारियों ने इसकी शिकायत [illegible]

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० [illegible]

जोधपुर स्थिर हुई और वह राज्य जोधपुर राज्य कहलाने लगा। उसके वंशजों ने समय-समय पर इसकी वृद्धि की[1]।

मालानी का इलाका स्वतन्त्र था, पर जोधपुरवालों का प्रभुत्व बढ़ने पर मालानी कभी उनके अधीन और कभी स्वतन्त्र रहा तथा वहां के स्वामी जोधपुर को खिराज भी देते रहे। विगत कई शताब्दियों से मालानी के इलाके में बड़ी अव्यवस्था हो रही थी और वहां के स्वामी मनमाना आचरण कर बाहर के पड़ोसी इलाकों में लूट-मार किया करते थे। जब जोधपुर-दरबार से अंग्रेज़ सरकार ने वहां का प्रबन्ध करने को कहा, तो वहां से इस सम्बन्ध में असमर्थता प्रकट की गई। ऐसी दशा में मालानी के निवासियों के विरुद्ध स्वयं अंग्रेज़ सरकार को अपनी सेना भेजनी पड़ी। उस सेना का सारा व्यय भी अंग्रेज़ सरकार को उठाना पड़ा, क्योंकि जोधपुर-दरबार ने जो थोड़ी-बहुत मदद पहुंचाने का वायदा किया था वह भी नहीं पहुंचाई। अंग्रेज़ सरकार ने मालानी इलाके पर कब्ज़ा करने के बाद वहां के प्रमुख सरदारों[2] को कैद कर कच्छ भिजवा दिया, जहां से पीछे से भविष्य में अच्छा आचरण करने की ज़मानत देने पर वे मुक्त कर दिये गये। बाड़मेर के सरदारों के साथ किए हुए इकरार के अनुसार अंग्रेज़ सरकार ने सब सरदारों को आश्वासन दिया कि जब तक उनका आचरण ठीक रहेगा, वे अंग्रेज़ सरकार के विशेष संरक्षण में समझे जायंगे। यद्यपि जोधपुर दरबार ने मालानी के उपद्रव करनेवालों का दमन करने में कोई सहायता नहीं पहुंचाई थी[3] तथापि अंग्रेज़ सरकार ने मालानी

---

(१) मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खंड, पृ० २८१-२९१।

(२) मालानी इलाके के अन्तर्गत बाड़मेर, जसोल, [illegible] प्रमुख ठिकाने हैं।

(३) इसके विपरीत जोधपुर राज्य की ख्यात में [illegible] जोधपुर [illegible]

सिरोही, गोड़वाड़ और जालोर में चोरियां बहुत हुआ करती थीं। इस संबंध में अंग्रेज़ सरकार के निकट शिकायत होने पर नीमच की छावनी से कर्नल स्पीयर्स सरहद पर गया। उस समय सिरोही से दीवान मयाचंद, जालोर से भंडारी लालचंद तथा गोड़वाड़ से जोशी सावंतराम उसके पास उपस्थित हो गये। कर्नल स्पीयर्स ने चोरी का बन्दोबस्त करने के लिए जोधपुर एवं सिरोही की सरहद पर उक्त राज्यों की सेनाएं रखने को कहा। सेना-व्यय से बचने के लिए उदयमन्दिरवालों ने वहां सेना न रक्खी। तब ऐरनपुरा में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से छावनी रक्खी गई। वहां पर जो सेना रक्खी गई उसका नाम "जोधपुर लीजियन" रक्खा गया।

(ऐरनपुरा में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से छावनी स्थापित होना)

वि० सं० १८९२ (ई० स० १८३५) की ग्रीष्म ऋतु में पाली में प्लेग की भयङ्कर बीमारी फैली, जिसका ज़ोर कई मास तक रहा। इससे वहां के [illegible] हो गये [illegible] जोधपुर में भी [illegible] आदमी मरे।

[illegible]

जोशी शम्भुदत्त [illegible] का काम महता उत्तमचंद [illegible]

[illegible]

दारों को वहां पहुंचने के लिए लिखे[1]।

श्रावणादि वि० सं० १८६५ (चैत्रादि १८६६ = ई० स० १८३६) प्रारम्भ में कर्नल सदरलैंड और कप्तान लडलो दो सौ सवारों एवं पांच पैदल सिपाहियों के साथ जोधपुर गये। उनके राजपूताने की प्रायः सब रियासतों के वकील थे। कई सरदार मार्ग में भी उनके शामिल हुए। उनका स्वागत करने के लिए दीवान सिंघवी गंभीरमल, बख़्शी सिंघवी फ़ौजराज तथा कुचामन, भाद्राजूण आदि के सरदार गांव डीगाडी तक गये। दोनों का डेरा राइ का बाग एवं सोजतिया दरवाज़े के बीच के मैदान में हुआ। उस अवसर पर पोकरण से बभूतसिंह भी जोधपुर जा पहुंचा। चैत्र सुदि ६ (ता० २० मार्च) को कर्नल सदरलैंड ने महाराजा से मुलाकात की। महाराजा लखणपोल तक उसका स्वागत करने के लिए गया। दूसरे दिन महाराजा सदरलैंड के डेरे पर जाकर उससे मिला। फिर राज्य का ठीक-ठीक प्रबंध करने, चोरी-धाड़ों का बन्दोबस्त करने, बक़ाया पड़े हुए मुकदमों का फ़ैसला करने, नाथों का जुल्म रोकने आदि के संबंध में उस (सदरलैंड) ने महाराजा से बातचीत की। अन्य बातें तो महाराजा ने स्वीकार कर लीं, परन्तु नाथों का प्रबंध करने की बात उसे पसंद न हुई, जिससे सदरलैंड अप्रसन्न होकर वापस लौट गया और ज्येष्ठ मास के प्रारम्भ में गांव झालामंड पहुंचा। महाराजा ने वहां जाकर उसे प्रसन्न करने की इच्छा प्रकट की, परन्तु मेहता जसरूप आदि के कहने से उसने वहां जाना स्थगित रक्खा और दूसरे कई कार्यकर्ताओं को कर्नल सदरलैंड के पास भेजा, परन्तु उसने उनकी बातों पर विशेष ध्यान न दिया[2]।

कर्नल सदरलैंड का जोधपुर जाना

महाराजा की भटियाणी राणी से श्रावणादि वि० सं० १८६४ (चैत्रादि १८६५) वैशाख सुदि ७ (ई० स० १८३८ ता० १ मई) को

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ११६-७।

(२) वही, जि० ४, पृ० ११७-८।

दारों को वहां पहुंचने के लिए लिखे[1]।

श्रावणादि वि० सं० १८६५ (चैत्रादि १८९६ = ई० स० १८३९) प्रारम्भ में कर्नल सदरलैंड और कप्तान लडलो दो सौ सवारों एवं पांच सौ पैदल सिपाहियों के साथ जोधपुर गये। उनके राजपूताने की प्रायः सब रियासतों के वकील थे कई सरदार मार्ग में भी उनके शामिल हुए। उनके स्वागत करने के लिए दीवान सिंघवी गंभीरमल, बख़्शी सिंघवी फौजराज तथा कुचामन, भाद्राजूण आदि के सरदार गांव डीगाडी तक गये। दोनों का डेरा राइ का बाग एवं सोजतिया दरवाज़े के बीच के मैदान में हुआ। उस अवसर पर पोकरण से बभूतसिंह भी जोधपुर जा पहुंचा। चैत्र सुदि ६ (ता० २० मार्च) को कर्नल सदरलैंड ने महाराजा से मुलाकात की। महाराजा लखणपोल तक उसका स्वागत करने के लिए गया। दूसरे दिन महाराजा सदरलैंड के डेरे पर जाकर उससे मिला। फिर राज्य का ठीक-ठीक प्रबंध करने, चोरी धाड़ों का बन्दोबस्त करने, बकाया पड़े हुए मुकदमों का फ़ैसला करने, नाथों का जुल्म रोकने आदि के संबंध में उस(सदरलैंड)ने महाराजा से बातचीत की। अन्य बातें तो महाराजा ने स्वीकार कर लीं, परन्तु नाथों का प्रबंध करने की बात उसे पसंद न हुई, जिससे सदरलैंड अप्रसन्न होकर वापस लौट गया और ज्येष्ठ मास के प्रारम्भ में गांव झालामंड पहुंचा। महाराजा ने वहां जाकर उसे प्रसन्न करने की इच्छा प्रकट की, परन्तु मेहता जसरूप आदि के कहने से उसने वहां जाना स्थगित रक्खा और दूसरे कई कार्यकर्ताओं को कर्नल सदरलैंड के पास भेजा, परन्तु उसने उनकी बातों पर विशेष ध्यान न दिया[2]।

> कर्नल सदरलैंड का जोधपुर जाना

महाराजा की भटियाणी राणी से श्रावणादि वि० सं० १८९४ (चैत्रादि १८९५) वैशाख सुदि ७ (ई० स० १८३८ ता० १ मई) को

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० ११६-७।

(२) वही, जि० ४, पृ० ११७-८।

बरकतअली के आश्वासन देने पर ही मैंने पीछा राज्य-कार्य हाथ में लिया है। मैं तो केवल अंग्रेज़ सरकार के भरोसे निश्चित हूं। इस राज्य की प्रतिष्ठा और उन्नति अंग्रेज़ सरकार की कृपा और आपकी सहायता पर ही निर्भर है। अभी मुझे मालुम हुआ है कि मारवाड़ पर सेना भेजने की तैयारी हो रही है। इससे मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। फ़ौजकशी तो उस व्यक्ति पर होनी चाहिये जो मुकाबले का इरादा रखता हो। मैं तो सरकार का कदीमी मित्र हूं और किस की शक्ति है जो अंग्रेज़ सरकार का मुक़ाबला कर सके? इसलिए इतना व्यय और कष्ट अंग्रेज़ सरकार क्यों उठाती है? ऐसी ही इच्छा हो तो एक अंग्रेज़ अधिकारी दस-बीस आदमियों के साथ मय सनद के भेज दें, ताकि मैं राज्य उन्हें सौंप दूं। इस बात की मुझको चिंता नहीं है। अंग्रेज़ सरकार से अलग रहकर मैं राज्य नहीं कर सकता। अंग्रेज़ सरकार की पूरी कृपा और आपकी सहायता रहेगी तभी मैं राज्य का तथा शिकायतों का बन्दोबस्त कर सकूंगा'।"

उसके इस पत्र का अंग्रेज़ अधिकारियों पर कोई असर न हुआ और श्रावण सुदि १५ (ता० २४ अगस्त) को सदरलैंड ने एक इश्तिहार जारी किया, जिसमें महाराजा के विरुद्ध निम्नलिखित शिकायतें दर्ज की गई थीं—

---

(१) इस पत्र में लिखे हुए आगूपरादि भिजवाने जाने की पुष्टि जोधपुर राज्य की ख्यात से भी होती है (जि० ४, पृ० ११६)। यह पत्र वि० सं० १८९६ श्रावण वदि १४ (ई० स० १८३९ ता० ८ अगस्त) का है और इसकी नक़ल मुझे अजमेर नगर के केसरीमल लोढा के यहां से प्राप्त हुई है। इसका ऊपरी भाग नष्ट हो गया है, फिर भी आशय स्पष्ट है। केसरीमल का पूर्वज कनकमल जुहारमल उस समय अजमेर का प्रतिष्ठित व्यापारी था, जिसके पूर्वजों को जोधपुर के महाराजाओं की तरफ से सायर का आधा महसूल माफ़ था। इस सम्बन्ध के महाराजा मानसिंह और तख़्तसिंह के परवाने और ख़ास रुक्के केसरीमल के पास मैंने देखे। महाराजा मानसिंह के परवानों में बड़ी गोलाकार मुद्रिका लगी है, जिसमें "श्रीनिदेश्वर श्रीजलंधरनाथ चरणारत राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराज श्रीमानसिंह मन्न मुद्रिका" लेख अंकित है। महाराजा तख़्तसिंह की मुद्रिका चौरस है। उसमें 'श्रीसिद्धेश्वर श्रीजलंधरनाथ चरणारत राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराज श्रीतख़्तसिंहजी मन्न मुद्रिका' लेख अंकित है।

भी, जो जोधपुर से सदरलैंड के साथ गये थे, अंग्रेज़ी फ़ौज के साथ थे, परन्तु उनका डेरा दूर ही दूर रहता था। उन्हीं दिनों जोधपुर में कई परदेशी मार डाले गये, जिसकी सूचना यथासमय एजेंट गवर्नर जेनरल के लश्कर में पहुंच गई। पुष्कर, मेड़ता तथा पीपाड़ होती हुई अंग्रेज़ी सेना दांतीवाड़ा पहुंची। इसपर महाराजा ने भी गांव बणाड जाकर उसके सामने डेरा किया। सदरलैंड के पास अपना वकील भेजने के बाद महाराजा स्वयं जाकर उससे तथा कप्तान लडलो से मिला। अनंतर सदरलैंड के उसके पास जाने पर महाराजा जोधपुर का गढ़ ख़ाली करने तथा वहां अंग्रेज़ी थाना रखने को राज़ी हो गया। तदनुसार गढ़ में से राणियां आदि हटाई जाकर अन्य स्थानों में भेज दी गईं तथा ख़ज़ाना एवं अन्य सामान आदि कोठार में रखा जाकर मोहरें लगा दी गईं। महाराजा ने रायपुर के ठाकुर माधोसिंह को गढ़ के प्रबंध के लिए नियुक्त किया था। उसने महाराजा के गढ़ में गये बिना वहां से हटने से इनकार कर दिया। तब महाराजा ने स्वयं जाकर उसे समझाया और उसे उसके आदमियों सहित गढ़ से नीचे हटाया। क़िला ख़ाली हो जाने की सूचना मिलने पर सदरलैंड तथा कप्तान लडलो पांच-सात सौ फ़ौज के साथ गढ़ में गये। महाराजा ने स्वयं साथ जाकर अंग्रेज़ों के आदमियों को जगह-जगह नियुक्त करने के साथ उनका अपने आदमियों से परिचय कराया। इसके बाद सदरलैंड और महाराजा गढ़ से नीचे गये तथा कप्तान लडलो ३०० सैनिकों के साथ प्रबंध के लिए वहीं रहा। उस समय जोधपुर के गढ़ के एक कार्यकर्ता—गांव भटनोया के करमसोत राठोड़ भोमजी—ने अपने मन में विचार किया कि आज गढ़ का प्रबंध बदल रहा है, अतएव मरना लाज़िम है। ऐसा निश्चय कर सूरजपोल के सामने उसने कप्तान लडलो पर तलवार का वार किया, जो मामूली ही लगा। इसपर कप्तान लडलो और उसके आदमियों ने हमला कर आक्रमणकारी को घायल कर दिया जिससे चार-पांच दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई। इस घटना के संबंध में महाराजा ने अपने वकील की मारफ़त कर्नल सदरलैंड से खेद प्रकट किया।

अनुसार, जो अब बनेंगे, अंग्रेज़ सरकार के बक़ाया ख़िराज तथा सवार-खर्च की नियमित अदायगी के लिए उपयुक्त प्रबंध करेंगे। नुक्सान की भरपाई उस पक्ष को करनी होगी, जिसपर कि वह साबित होगा और दूसरे राज्यों से मारवाड़ को जो कुछ लेना है, वह भी तभी वसूल होगा, जब कि पूरा-पूरा साबित हो जायगा।

शर्त दसवीं—महाराजा ने जिन सरदारों को जागीरें देकर उनसे चाकरी का वायदा कराया है और उन्हें पिछले अपराधों के लिए माफ़ कर दिया है, अंग्रेज़ सरकार भी उन्हें अपनी तरफ़ से क्षमा प्रदान करती है, यथा स्वरूप, जोगेश्वर, उमराव तथा अहलकार।

शर्त ग्यारहवीं—राजधानी में अंग्रेज़ सरकार की तरफ से पो० एजेंट की नियुक्ति हो जाने के कारण अब किसी भी व्यक्ति के प्रति अन्याय और अत्याचारपूर्ण व्यवहार न किया जायगा तथा धर्म के षट् दर्शनों में बाधा डालने का कोई कार्य न किया जायगा और न मारवाड़ के अन्तर्गत पवित्र माने जानेवाले पशुओं की हत्या ही की जायगी।

शर्त बारहवीं—महाराजा के राज्यशासन का सुप्रबंध यदि छः मास, एक वर्ष अथवा डेढ़ वर्ष में हो गया तो एजेंट तथा अंग्रेजी फ़ौज जोधपुर के गढ़ से हटा ली जायगी। यदि यह कार्य इससे भी जल्दी हो गया तो अंग्रेज़ सरकार को बड़ी खुशी होगी, क्योंकि इससे उसका सम्मान बढ़ेगा।

शर्त तेरहवीं—उपरिलिखित अहदनामा, जैसा कि ऊपर कहा गया है, जोधपुर में ता० २४ सितंबर ई० स० १८३९ (आश्विन वदि [illegible] वि० सं० १८९६) को तय होकर लेफ्टिनेंट कर्नल सदरलैंड द्वारा माननीय गवर्नर जनरल ऑव् इंडिया के पास स्वीकृति के लिए पेश किया जायगा और इस अहदनामे के [illegible] महाराजा के नाम का [illegible] श्रीमान गवर्नर जनरल से प्राप्त किया जायगा।

[illegible] अहदनामा भारत के गवर्नर जनरल श्रीमान लार्ड ऑक-लैंड जी० सी० बी० से अधिकार प्राप्त कर्नल जॉन सदरलैंड ने

क़रार पाया[१]।

रिधमल का हस्ताक्षर और मुहर	फौजमल का हस्ताक्षर और मुहर

उपर्युक्त अहदनामा हो जाने के बाद राज्यकार्य सुचारु रूप से चलाने के लिए सदरलैंड के कथनानुसार राज्य के जागीरदारों और ओहदेदारों की एक सूची तथा अन्य आवश्यक कार्यों के संबंध में ख़ास-ख़ास बातों की लिखावट गढ़ के भीतर रक्खे जानेवाले अंग्रेज़ अधिकारी के सुपुर्द की गई। साथ ही राज्यकार्य करने के लिए निम्नलिखित व्यक्तियों की एक पंचायत मुकर्रर की गई—

राज्य-प्रबन्ध के लिए पचायत मुक़र्रर होना

१. ठाकुर बभूतसिंह चांपावत — पोकरण का
२ ठाकुर कुशालसिंह चांपावत — आउवा का
३ ठाकुर सवाईसिंह ऊदावत — नींबाज का
४. ठाकुर शिवनाथसिंह मेड़तिया — रीयां का
५. ठाकुर बख़्तावरसिंह जोधा — भाद्राजूण का
६. ठाकुर जीतसिंह मेड़तिया — कुचामण का
७ ठाकुर भीमसिंह ऊदावत — रास का
८ आसोप के ठाकुर शिवनाथसिंह की नाबालिग़ अवस्था के कारण उसकी तरफ़ से कंटालिया का ठाकुर शंभुसिंह कूंपावत

उनके अतिरिक्त किलेदार, दीवान आदि पदों के लिए पांच अहलकार भी चुने गये। इस प्रकार सारा प्रबंध ठीक हो जाने पर वि० सं० १८९६ पौष सुदि १४ (ई० स० १८४० ता० १७ जनवरी) को सदरलैंड

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० १२०-२८। वीरविनोद भाग २, पृ० ८७१-२ तथा ८९६-८। एचिसन, ट्रीटीज़ एंगेज्मेंट्स एण्ड सनद्ज़, जि० ३, पृ० ११६ तथा १२५-७।

अजमेर के लिए रवाना हुआ। उस समय उसने महाराजा को विश्वास दिलाया कि मैं कलकत्ते पहुंचकर लाट साहब से आपको शीघ्र गढ़ वापस दिलाने के संबंध में सिफ़ारिश करूंगा[1]।

राज्य का यह प्रबंध केवल कुछ मास तक ही रहा। उसी वर्ष फाल्गुन वदि १२ (ई० स० १८४० ता० २६ फ़रवरी) को गढ़ वापस दिये जाने के संबंध में लाट साहब का आज्ञापत्र लेकर सदरलैंड जोधपुर पहुंचा। फाल्गुन सुदि ५ (ता० ८ मार्च) को गढ़ से अंग्रेज़ी थाना हटा लिया गया और अंग्रेज़ अधिकारियों के साथ महाराजा ने गढ़ में प्रवेश किया। महाराजा ने दरबार के अवसर पर वकील रिधमल को आभूषण आदि देने के साथ ही "रावराजा बहादुर" के ख़िताब से विभूषित किया। अनन्तर सदरलैंड तो वापस अजमेर गया और अपने अहलकारों के साथ महाराजा राज्यकार्य करने लगा[2]।

महाराजा को पीछा राज्याधिकार मिलना

इतना होने पर भी राज्य से नाथों का प्रभुत्व हटा नहीं। उनकी तथा कुचामण, रायपुर और भाद्राजूण के ठाकुरों की जागीरों में कमी करने के संबंध में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से लिखावट आने पर महाराजा ने उनमें कमी की। नाथ इस बात के लिए राज़ी न हुए और उनके ज़ुल्मों में भी किसी प्रकार की कमी न हुई। इस संबंध में अंग्रेज़ सरकार के पास शिकायतें होने पर वहां से इसका प्रबंध करने के लिए कई वार ताकीद की गई। वि० सं० १८९७ (ई० स० १८४०) के आश्विन मास में उपद्रवी सरदार आदि सिवाणा परगने की झीखा की पहाड़ी में एकत्र हुए और उन्होंने धोकलसिंह का पक्ष लेकर उपद्रव करने का प्रयत्न किया, परन्तु ठीक समय

नाथों आदि का राज्य में उपद्रव करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १२८-२०७। वीरविनोद, भाग २, पृ० ८७२।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० २०७-८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७२।

पर सिंघवी फ़ौजराज सेना-सहित पहुंच गया, जिससे वे भाग गये[1]।

उसी वर्ष नाथों के प्रबंध में महाराजा और कर्नल सदरलैंड के बीच पत्र-व्यवहार हुआ, जो कई मास तक जारी रहा, परन्तु कोई परिणाम न निकला। अगले वर्ष भाद्रपद मास में कर्नल सदरलैंड आबू से पाली होता हुआ जोधपुर गया, जहां केवल कुछ समय तक रहकर ही वह अजमेर लौट गया[2]।

कर्नल सदरलैंड का दुबारा जोधपुर जाना

उसी वर्ष पौष मास में जोगेश्वरों के पट्टे के गांव ज़ब्त किये गये तथा अंग्रेज़ अधिकारियों के आदेशानुसार आयस लक्ष्मीनाथ, आयस प्रयागनाथ, आयस रघुनाथ आदि राज्य के विभिन्न पदों से हटाये गये। इसके एक मास बाद पोकरण का ठाकुर बभूतसिंह राज्य का प्रधान नियुक्त हुआ और नींबाज के ठाकुर के चाचा तथा कूंपावत कर्णसिंह (बासणी) को जागीर में गांव मिले। उन्हीं दिनों कर्नल सदरलैंड ने तीन लाख की जागीर जोगेश्वरों को दिलाने के लिए प्रस्ताव किया, पर उन्होंने उसे स्वीकार न किया। सिंघवी कुशलराज कंटालिया में था। वहां से लौटने पर उसने ठाकुर कुशालसिंह (आउवा), भीमसिंह (रास), हिम्मतसिंह (खेजड़ला) आदि से महाराजा की मर्ज़ी के मुताबिक आचरण करने का वचन ले उन्हें वापस लौटाया[3]।

नाथों और कतिपय विरोधी सरदारों का प्रबंध होना

वि० सं० १८९९ भाद्रपद वदि १२ (ई० स० १८४२ ता० २ सितंबर) को पोलिटिकल एजेंट की सिफ़ारिश पर सिंघवी सुखराज राज्य का दीवान बनाया गया, जो मार्गशीर्ष मास तक उस पद पर रहा। उससे भी नाथों का प्रबन्ध न हो सका और नाथों को राज्य-कोष से पूर्ववत् धन

अंग्रेज़ सरकार के कहने से फिर नाथों का तिरस्कार होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० २०८।

(२) वहीं; जि० ४, पृ० २०९-१०।

(३) वहीं; जि० ४, पृ० २११।

मिलता रहा, जिसकी शिकायत पो० एजेंट के पास होने पर उसने महाराजा को सुखराज को दीवान के पद से अलग करने के लिये कहलाया। इसपर मार्गशीर्ष वदि ८ (ता० २५ नवंबर) को सुखराज ने दीवानगी की मोहर महाराजा को सौंप दी। अनन्तर महाराजा धन ले-लेकर लोगों को ओहदे देने लगा। उस समय बड़े-बड़े नाथ—लक्ष्मीनाथ, प्रयागनाथ आदि—तो बाहर थे, परन्तु छोटे-छोटे नाथों का, जो जोधपुर में थे, जुल्म[1] बहुत बढ़ा हुआ था। प्रतिदिन नये-नये व्यक्ति कानफड़ाकर नाथ बनते थे, जिनके भोजनादि का सब प्रबंध राज्य की तरफ़ से होता था। इससे राज्य में खर्च की बड़ी तंगी रहती थी और धन संग्रह करने के लिए प्रजा पर कर लगाया जाता था। इससे अंग्रेज़ अधिकारियों की महाराजा पर नाराज़गी थी। पो० एजेंट उन दिनों सिरोही की तरफ़ गया हुआ था। फाल्गुन मास में वहां से लौटने पर उसने खज़ाने का चार लाख रुपया नाथों को दे-देने आदि के संबंध में महाराजा से शिकायत की। अनन्तर अजमेर से डेढ़ सौ सवार बुलाकर उसने वैशाख वदि में सोजतिया दरवाज़े के बाहर नवनाथ, चौरासी सिद्धों के मन्दिर मे गोरखमंडी के मेहरनाथ तथा चांदपोल दरवाज़े के बाहर होशियारनाथ के चेले शीलनाथ को गिरफ़्तार कर अजमेर भिजवा दिया[2]।

---

(१) नाथों के ज़ुल्मों के सम्बन्ध में "वीरविनोद" का कर्त्ता कविराजा श्यामलदास लिखता है कि नाथ लोग ज़बर्दस्ती भले आदमियों के लड़कों को पकड़ लेते और चेला बनाते, अच्छे घराने की बहू-बेटियों को पकड़कर घरों में डाल लेते तथा लोगों का माल छीन लेते, जिनकी पुकार कोई नहीं सुनता था। जब वे लोग रुपये की मांग करते और देने में देर होती तो वे ज़मीन मे ज़िन्दा गड़ने को तैयार हो जाते। तब महाराजा रुपये देकर उन्हें खुश करता। वि० सं० १६०० (ई० स० १८४३) में दो नाथों ने एक ब्राह्मण की लड़की को पकड़ लिया और कहा कि रुपया दो तो छोड़ें। यह ख़बर कप्तान लडलो को मिलने पर उसने उन दोनों को गिरफ़्तार करा अजमेर भिजवा दिया (भाग २, पृ० ८७३-४)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० २१२-३।

इसपर महाराजा ने अपने वकील रिधमल को एजेंट के पास भेजा, परंतु वह बहुत नाराज़ था, जिससे कोई परिणाम न निकला और वकील भी महाराजा के पास वापस न गया। तब महाराजा ने, लाडणू के जोधा प्रतापसिंह को बुलाकर उससे स्वरूपों को छुड़ा लाने को कहा, परन्तु रिधमल ने इस कार्य की विफलता बतलाकर उसे रोक दिया। नाथों की गिरफ्तारी से महाराजा को इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-कार्य में भाग लेना छोड़ दिया। यही नहीं गेरुआ वस्त्र धारणकर और शरीर में भभूत (भस्मी) लगाकर वह स्वयं भी साधुओं की तरह बन गया और मेड़तिया दरवाज़े के बाहर की बावड़ी के निकट जा बैठा। एक रात वहां रहकर वह शेखावत राणी के बनवाये हुए तालाब पर गया। इस बीच उसके कई कार्यकर्ताओं ने भी भगवे वस्त्र पहन लिये, परन्तु रिधमल ने अंग्रेज़ सरकार का भय दिखलाकर उन्हें उनके निश्चय से हटाया। उस समय पोकरण, नींबाज, चांवसर आदि के ठाकुरों के कार्य-कर्ताओं ने महाराजा को समझाकर गढ़ में ले जाने का ज़िम्मा अपने ऊपर लिया, परन्तु उसने उनकी न सुनी और श्रावणादि वि० सं० १८९९ (चैत्रादि १९००) वैशाख सुदि १२ (ई० स० १८४३ ता० १२ मई) को जालंधरनाथ का दर्शन करने के लिए वह पाल गांव गया। जिस दिन से महाराजा ने साधु-वेष धारण किया उसी दिन से उसने एक प्रकार से खाना-पीना त्याग दिया था। वह केवल एक पेड़ा और दो पैसे भर दही खाता था[1]।

महाराजा का साधु का वेष धारण करना

उसके पाल गांव में रहते समय ही वहां हैज़े की भयंकर बीमारी फैली, जिससे प्रतिदिन अनेक व्यक्ति अकाल में ही काल-कवलित होने लगे। भाद्राजूण के ठाकुर [illegible] का उसी रोग से वहीं देहान्त हुआ। महाराजा का [illegible] था, परन्तु [illegible]

[illegible] हैज़े का प्रकोप होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० ४, पृ० [illegible]; वीरविनोद, भाग २, पृ० ८३१-४।

११०

श्रावण सुदि ३ (ता० २६ जुलाई) को महाराजा पीनस में बैठकर सूरसागर के पास से होता हुआ मंडोवर में दाखिल हुआ। वहां से आज्ञा प्राप्तकर ठाकुर बभूतसिंह पोकरण गया। मंडोवर पहुंचने के कुछ समय बाद ही भाद्रपद वदि ३० (ता० २५ अगस्त) को महाराजा को एकांतरा ज्वर आने लगा[1] और इसी बीमारी से भाद्रपद सुदि ११ (ता० ४ सितंबर) सोमवार को पिछली रात के समय उसका देहांत हो गया। उसके साथ उसकी देवड़ी राणी[2] सती हुई[3]।

महाराजा की मृत्यु

महाराजा मानसिंह के तेरह राणियां थीं, जिनसे उसके आठ पुत्र और तीन पुत्रियां हुईं। पुत्रों में से सभी उसके जीवन काल में मर गये। पुत्रियों में से एक जयपुर के महाराजा और दूसरी बूंदी के महाराव को ब्याही गई[4]।

राणियां तथा संतति

[illegible]सिंह

- पृथ्वीसिंह
  - एक पुत्र (बालक मरा)
- ८ [illegible]सिंह ([illegible] हुआ)

(१) 'वीरविनोद' से पाया जाता है कि [illegible] में सब सरदारों को अपने पास से हटाकर [illegible] सम्भालने की आज्ञा दी थी [illegible] पृ० ८३४)।

(२) देवड़ी राणी [illegible] की पुत्री थी। [illegible] जोधपुर [illegible] थी। [illegible]

(३) जोधपुर राज्य की [illegible] पृ० ८३५।

[illegible] जोधपुर के [illegible]

महाराजा मानसिंह का राज्यकाल आन्तरिक कलह से परिपूर्ण रहा और उसे निरन्तर बखेड़ों में फंसा रहना पड़ता था, परन्तु इतना होने पर भी वह साहित्यिकों का सम्मान करने में सदा तत्पर रहता था। वह कवियों, विद्वानों और गुणीजनों का पूरा-पूरा आदर करता था। यही कारण था कि उसके दरबार में उच्च-कोटि के विद्वान् और कवि बने रहते थे। वह स्वयं भी विद्याव्यसनी और ऊंचे दर्जे का कवि था। उसका रचा हुआ "कृष्णविलास" नामक काव्य-ग्रंथ राज्य की तरफ़ से प्रकाशित हो गया है। "मान-पद्य-संग्रह[1]" नामक एक दूसरा काव्यग्रन्थ भी छप गया है, जो उसी का बनाया हुआ माना जाता है। महाराजा के रचे हुए कितने ही पद्यों का उल्लेख "जोधपुर राज्य की ख्यात" तथा अन्यत्र भी मिलता है। महाराजा की नाथों पर विशेष आस्था थी, जिससे उसने उक्त सम्प्रदाय से संबंध रखनेवाले कई ग्रन्थों का निर्माण किया था। उनमें "जलंधरनाथजी रो चरित्र", "नाथचरित्र", "श्रीनाथजी रा दुहा", "श्रीनाथजी", 'नाथप्रशंसा", "नाथजी की वाणी", "नाथकीर्तन", "नाथमहिमा", "नाथपुराण", "नाथसंहिता" आदि उल्लेख-नीय हैं। इनके अतिरिक्त उसने "रागां रो जीलो", "बिहारी सतसई टीका", "रागसार", "कृष्णविलास", "महाराजा मानसिंह की वंशावली", "राम-विलास", "संयोग शृंगार का दोहा", "कवित्त सवैया दोहा", "सिद्धकाल" आदि विभिन्न विषयों की कितनी ही पुस्तकें रची थीं[2]। उसे इतिहास से भी बड़ा अनुराग था। उस समय मिलनेवाली प्राचीन बहियों, राजकीय पत्र-व्यवहारों, ख्यातों, सनदों आदि के आधार पर उसने अपने राज्य का एक बृहत्

महाराजा का विद्याप्रेम

---

(१) इस ग्रन्थ को प्रकाश में लाने का श्रेय बीकानेर के परम साहित्यानुरागी, दानवीर सेठ रामगोपाल मोहता को है। इसमें संगृहीत पद्य एक साधु को कंठस्थ थे, जिससे सुनकर ये प्रकाशित किये गये हैं। इसके अधिकांश छन्द नाथ सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखते हैं और कितने ही बड़े सुन्दर हैं।

(२) रायबहादुर श्यामसुन्दरदास; हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, पहला भाग, पृ० १२१। मिश्रबन्धु विनोद, भाग ३, पृ० ९२१ २।

इतिहास तैयार कराया था, जिसका "जोधपुर राज्य की ख्यात"[1] के नाम से मैंने इस ग्रन्थ में उल्लेख किया है। सुप्रसिद्ध इतिहास लेखक कविराजा बांकीदास उसका कृपापात्र था। वि० सं० १८७७ (ई० स० १८२०) में जब टॉड जोधपुर गया, उस समय वह महाराजा के इतिहास-प्रेम से बड़ा प्रभावित हुआ था। महाराजा न केवल अपने देश के बल्कि सारे भारतवर्ष के इतिहास की अच्छी जानकारी रखता था। उसका अध्ययन विशाल था। उसने कर्नल टॉड को अपने वंश के इतिहास की छः कविता-बद्ध पुस्तकों की नकलें करवाकर दी थीं, जिनके आधार पर उसने जोधपुर राज्य का इतिहास लिखा था और जो उसने पीछे से रायल एशियाटिक सोसाइटी को प्रदान कर दीं। महाराजा का हिन्दी और अपने देश की भाषा का ज्ञान तो बढ़ा चढ़ा था ही, साथ ही उसको फारसी भाषा का भी अच्छा ज्ञान था। ऊपर कही हुई छः पुस्तकों के एवज़ में कर्नल टॉड ने "तारीख़ फ़रिश्ता" और "खुलासतुत्तवारीख" की नकलें कराकर महाराजा को

---

(१) यह इतिहास चार बड़ी-बड़ी जिल्दों में है। इसमें दिया हुआ वि० सं० १६०० से पूर्व का वृत्तान्त अधिकांश विश्वास के योग्य नहीं है, क्योंकि कितनी ही घटनाओं के साथ साथ उसमें दिये हुए संवत् आदि बहुधा कल्पित हैं। राव जोधा की पुत्री शृङ्गारदेवी का विवाह मेवाड़ के महाराणा कुंभकर्ण (कुंभा) के पुत्र रायमल के साथ हुआ था, ऐसा शृङ्गार देवी की बनवाई हुई घोसूंडी गाव की बावड़ी की प्रशस्ति से पाया जाता है परन्तु इस ख्यात में अथवा अन्य किसी ख्यात में उस (शृङ्गारदेवी)-का नाम तक नहीं है। इसी प्रकार कोडमदेसर तालाब बनवानेवाली राव जोधा की माता कोडमदे का नाम भी इस ख्यात में नहीं है। उसका पता कोडमदेसर तालाब की प्रशस्ति से मिलता है। इससे स्पष्ट है कि वि० सं० १६०० से पूर्व का वृत्तान्त इसमें केवल जनश्रुति के आधार पर लिखा गया है। आगे का वृत्तान्त किसी कदर ठीक है, परन्तु वह भी पक्षपातदृष्टि से खाली नहीं है। कहते हैं कि लोगों ने मारवाड़-नरेशों-द्वारा मुसलमानों को बेटियां दी जाने की बात इसमें से हटा देने के लिए महाराजा मान-सिंह से निवेदन किया तो उसने इसके उत्तर में कहा कि छोटी मोटी बातों का ज़िक्र तो निकाल दिया जाय, परन्तु जो विवाह सम्बन्ध शाही घराने के साथ हुए उनका उल्लेख अवश्य रहे क्योंकि उससे हमारे घर का गौरव प्रकट होता है। साथ ही उससे हमारे वंशजों को यह मालूम होगा कि हमें भूमि रखने के लिए क्या क्या करना पड़ा है।

मिलता है। वह ज़िद्दी, कान का कच्चा, कृतघ्न और अविवेकी नरेश था। अपनी अविवेकता के कारण ही उसने जयपुर से विरोध खड़ा कर लिया, जिसका परिणाम दोनों राज्यों के लिए हानिकर ही हुआ। इन सब बखेड़ों का फल यह हुआ कि पीछे से सरदारों आदि की तरफ़ से विशेष दबाव पड़ने पर उसे राज्य-कार्य अपने पुत्र छत्रसिंह को सौंपना पड़ा।

नाथों पर महाराजा की विशेष आस्था होने से उसने उन्हें लाखों रुपयों की जागीरें दे रक्खी थीं। वे भी मन-माना आचरण किया करते थे। बड़े-बड़े सम्पन्न घरानों के बालकों को चेला बना लेने तथा भले घर की बहू-बेटियों को अपने घर में डाल लेने से भी वे नहीं चूकते थे। महाराजा को नाथों के इस आचरण का पता था, पर उनको अपना गुरु मान लेने के कारण वह उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं करता था। नाथों के प्रति उसकी अन्ध-भक्ति कितनी बढ़ी हुई थी, यह इसीसे स्पष्ट है कि आयस देवनाथ के मारे जाने पर उसने राज्य-कार्य से पूर्ण उदासीनता ग्रहण कर ली।

मानसिंह के समय उसके कुंवर छत्रसिंह के उद्योग से जोधपुर राज्य और अंग्रेज़ सरकार के बीच संधि स्थापित हुई, जो राज्य के लिए बड़ी हितकर सिद्ध हुई, क्योंकि आगे चलकर अंग्रेज सरकार के हस्तक्षेप करने पर नाथों एवं उपद्रवी सरदारों का दमन होकर राज्य में सुप्रबंध, शान्ति और सुख का प्रादुर्भाव हुआ। महाराजा अंग्रेज़ों के साथ की मैत्री का बड़ा महत्व समझता था और उसने कभी अंग्रेज़ सरकार को नाराज़ करने का कोई कार्य नहीं किया। नाथों का प्रबंध

पुरुष को तोप से उड़ाने की आज्ञा दी। दीवान को जब इस का पता चला तो उसने तुरन्त महाराजा के पास जाकर उससे निवेदन किया कि आपने जो आज्ञा दी वह ठीक है, परन्तु यदि ऐसा हुआ तो इसका परिणाम ठीक न होगा, क्योंकि बाहरी राज्य-वाले यही समझेंगे कि ज़नाने में कुछ गड़बड़ी हुई होगी। यह बात महाराजा की समझ में आगई और उसने अपनी आज्ञा रद्द कर दी।

यह बात मैंने कविराजा मुरारीदान से सुनी थी।

करने के लिए जब अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से राज्य में सेना भेजी गई तो उसने अविलंब गढ़ खाली कर दिया।

इन सब बातों के होते हुए भी महाराजा में कई प्रशंसनीय गुण थे। वह वीर, स्वाभिमानी, विद्वान्, दानी[1], गुणग्राहक[2] और उदार नरेश था।

---

(१) महाराजा की दानशीलता के संबध में एक बात मुझे "राजस्थान"-सम्पादक मुंशी समर्थदान ने सुनाई थी, जो इस प्रकार है—

महाराजा का अपने सरदारों के साथ बहुधा विरोध ही रहता था। उसके समान ही उसके कितने ही विरोधी सरदारों के यहां भी चारण, कवि आदि रहा करते थे। एक दिन जब एक विरोधी सरदार के यहां महाराजा की दानशीलता के संबध में बातें चल रही थीं, उस समय वहां उपस्थित किसी कवि ने महाराजा के जालोर में रहते समय उसके पास रहनेवाले कवि केसर की, जिसने उस समय महाराजा की अच्छी सेवा की थी, चर्चा करते हुए निम्नलिखित पद्य कहा—

केसरो हुतो मोटो कवि, गाम गाम करतो मुओ।

महाराजा को जब यह बात ज्ञात हुई तो उसे केसर की सेवा का स्मरण आया और उसने उसी समय उसके पुत्र की तलाश में अपने आदमी भिजवाये। पुत्र का पता चलते ही महाराजा ने उसे अपने पास बुलवाया और दरबार कर दो गांव दिये। दो गांव देने के बारे में महाराजा ने कहा कि मेरे शत्रु के कवि ने अपने पद्य में दो बार गांव शब्द का व्यवहार किया, इसलिए मैंने दो गांव दिये।

(२) महाराजा की गुणग्राहकता के विषय में एक बात यह भी सुनी है कि एक बार काशी का एक बड़ा पंडित उसके दरबार में गया और एक महाजन की हवेली के नीचे के भाग में ठहरा। उसका छः वर्ष का पुत्र भी उसके साथ था। महाजन के भी उतनी ही अवस्था का पुत्र था, परन्तु अंधा। जब पंडित अपने पुत्र को पढ़ाने बैठता तो महाजन का अंधा लड़का भी पास जा बैठता। तीन-चार वर्ष बाद पंडित को यह अनुभव हुआ कि जहां उसके पुत्र को सब पाठ याद नहीं हुए थे वहां उस अन्धे बालक को सब कुछ याद हो गया था। उसने जब परीक्षा ली तो उसे मालूम हुआ कि महाजन का पुत्र एक बार सुनकर ४०० अनुष्टुप् छन्दों के बराबर अंश याद कर लेता है। इसे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई और प्रसंगवशात् उसने महाराजा से उस बालक की आश्चर्यजनक प्रतिभा के बारे में ज़िक्र किया। महाराजा ने परीक्षा लेने के लिए उस बालक को दरबार में बुलवाया। उन दिनों महाराजा भाषा का एक ग्रंथ लिख रहा था। उसने ४०० अनुष्टुप् छन्दों के बराबर अंश उसमें स्नान कर अपने एक दरबारी को उसे

कई अवसरों पर उसने चारणों तथा अन्य व्यक्तियों को लाख पसाव दिये थे। उसकी देखा-देखी महामन्दिर के नाथ भी लाख-पसाव दिया करते थे। महाराजा की विद्वत्ता और साहित्यानुराग का उल्लेख ऊपर आ गया है। शरणागत की रक्षा करना राजपूतों का अटल नियम है। नागपुर के राजा को, उसके अंग्रेज़ सरकार का विरोधी होते हुए भी, उसने अपने यहां शरण देकर साहस का कार्य करने के साथ ही यह दिखा दिया कि राजपूत अपने धर्म और कर्तव्य का पालन करने में कितने तत्पर रहते हैं।

वि० सं० १८७६ (ई० स० १८१६) मे कर्नल टॉड स्वयं जोधपुर जाकर महाराजा से मिला था। वह उसके संबंध मे लिखता है—

"महाराजा साधारण व्यक्ति से कद में लम्बा है। उसके आचरण में शिष्टता है, परन्तु उसमें रूखापन विशेष रूप से है। उसकी चाल-ढाल प्रभावोत्पादक तथा राजसी है, पर उसमें उस स्वाभाविक गौरव और प्रभुता का अभाव है, जो उदयपुर के महाराणा में पाई जाती है। उसकी शक्ल-सूरत अच्छी है और उसकी आंखों से बुद्धिमानी टपकती है। उसकी मुखाकृति से उदारता का संदिग्ध भाव प्रकट होता है। उसके मस्तक की बनावट विचित्र है, जो उसकी द्वेष-भावना सूचित करती है। मानसिंह की जीवनी के अध्ययन से उसकी सहनशीलता, दृढ़ता और धैर्य का अभूतपूर्व परिचय मिलता है। वह बड़ा अत्याचारी है और अपने मनोभावों को छिपाना खूब जानता है। उसमें बाघ जैसी भयंकरता तो नहीं है, परन्तु उसका सबसे बड़ा अवगुण धूर्तता उसमें विद्यमान है[1]।"

सुनाने के लिए दिया। महाजन के अन्धे बालक ने सारा अंश सुनने के बाद ज्यों का त्यों सुना दिया। इससे महाराजा उसपर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उससे कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो मांगो। उस बालक ने उत्तर में निवेदन किया कि मुझे पण्डितों की सभा के समय एक कोने में बैठने की आज्ञा प्रदान की जाय। महाराजा ने उसकी यह प्रार्थना स्वीकार करने के साथ ही उसके विदा होने पर ४००० रुपये उसके घर भिजवाये।

यह बात मैंने कविराजा मुरारीदान से सुनी थी।

(१) राजस्थान, जि० २, पृ० ८२३।